संत सैन भगत

मध्यकाल में सामाजिक पुनरुत्थान के पुरोधा

डॉ. पूरन सहगल

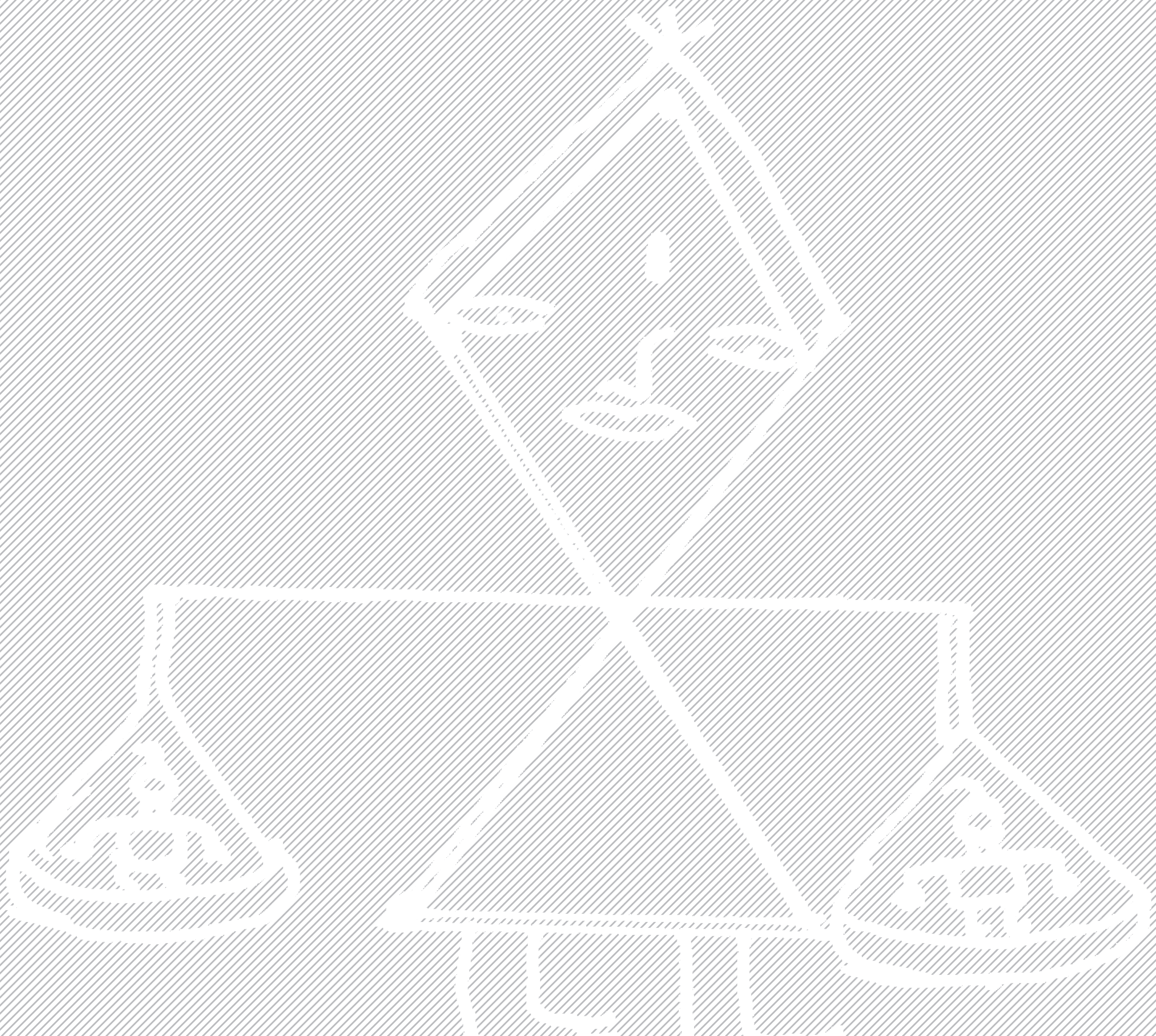

संत सैन भगत

मध्यकाल में सामाजिक पुनरुत्थान के पुरोधा

डॉ. पूरन सहगल

प्रधान सम्पादक
श्रीराम तिवारी

सम्पादक
अशोक मिश्र

आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद भोपाल का प्रकाशन

प्रकाशक – आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्
मध्यप्रदेश जनजातीय संग्रहालय, श्यामला हिल्स, भोपाल–462002
मध्यप्रदेश, भारत
फोन – 0755–2661948, 2661640
E-mail : mplokkala@rediffmail.com
mptribalmuseum@gmail.com
web. : www.mptribalmuseum.com

प्रकाशन वर्ष – वर्ष 2013 प्रथम संस्करण

सहयोग – स्वराज संस्थान संचालनालय, रवीन्द्र भवन परिसर, भोपाल

स्वत्वाधिकार – आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी

मुद्रण – मध्यप्रदेश माध्यम, भोपाल

मूल्य – 300/– (रुपये तीन सौ मात्र)

■ पुस्तक से सम्बन्धित समस्त विवादों का न्यायालयीन कार्य क्षेत्र भोपाल होगा।

■ पुस्तक में प्रकाशित समस्त सामग्री लेखक की है, आवश्यक नहीं कि प्रकाशक इससे सहमत हो।

ISBN - 978-93-83118-00-7

संत साहित्य और उससे निर्मित परम्परा के बहुवर्णी पक्षों पर काम पहले से ही किया जा रहा है। उसी श्रृँखला के विस्तार के तहत संत सैन भगत के लोक पदों को संकलित और अनूदित करने का यह उद्यम है।

भारतीय संस्कृति और साधना प्रणालियों में निर्गुण परम्परा का अहम योगदान है। संत कबीर और उनके समकालीन संतों से यह भक्ति धारा आरम्भ होकर पूरे देश के लोक समाजों में विस्तारित हुई है। स्थानीय प्रतीकों का अपनी बोली/ भाषा में प्रयोग कर संतों/ भक्तों ने लोक को जागृत करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। समाज में आप जहाँ भी है- और जो भी कर्म करते हैं, उससे आपका तादात्म्य गहनतम् हो, कर्त्ता और कर्म का एकमेक हो जाना ही परमात्म से साक्षात्कार है। उसी कर्म के आसपास के प्रतीकों को केन्द्र में रखकर, लोक मानस को समृद्ध करने का प्रयास संतों और भक्तों ने किया है।

लोक की ज्ञान परम्परा का आधार व्यावहारिक जीवन और आचरण है। उसी अनुभव से लोक की ज्ञान और सांस्कृतिक परम्परा निर्मित हुई है। संत कबीर की वाणी में कपड़े की बुनाई/ रंगाई से सम्बन्धित शब्दावली और उसकी कुशलता प्रतीक बनकर अभिव्यक्त हुई है। संत सैन भगत ने अपने आध्यात्मिक अनुभव को मानव सेवा और उससे सम्बन्धित प्रतीकों से व्यक्त किया है।

संत सैन भगत की लोक व्यापकता और उनके अवदान को समझने में यह ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रदान करेगा। पिछले पचास से अधिक वर्षों से संत सैन की वाणी के संकलन का काम वरिष्ठ अध्येता डॉ. पूरन सहगल जी कर रहे थे। हमारे अनुरोध पर उन्होंने यह पुस्तक तैयार की है, इसके लिए हम उनके आभारी हैं। संतों की वाणी में उत्सुक अध्येताओं/ पाठकों/ अनुयायियों के लिए यह कृति महत्त्वपूर्ण होगी-ऐसी आशा है।

- सम्पादक

प्रस्तावना

अध्याय-1
मध्यकाल में भक्ति आन्दोलन -19

अध्याय-2
रामानन्द एवं उनके द्वादश शिष्य -27

अध्याय-3
संत सैन भगत : परचई साहित्य - 53

अध्याय-4
संत सैन भगत : जीवन परिचय - 95

अध्याय-5
संत सैन भगत : कुछ प्रेरक प्रसंग - 117

अध्याय-6
संत सैन भगत : वाणी का संकलन एवं सम्पादन - 141
संत सैन भगत की लोकवाणी/ 155, सैन भगत साँची कहूँ.../204, सैन कहे.../225, सैना रखजो ध्यान.../ 253, संत सैन का प्रेमामृत कलश / 273, संत सैन भगत की पदावली / 293, संत सेना न्हावी : मराठी अभंग/ 335

अध्याय-7
संत सैन भगत : जीवन दर्शन - 371

परिशिष्ट - 391

एक सत्वंती सौगात

भारत संतों का देश है। संतों ने अपने–अपने समक्ष जुड़े, बैठे समूहों के सामने एक बात किसी न किसी रूप में ज़रूर कही है। वे कहते हैं– 'हर अशुभ में भी कोई न कोई शुभ छिपा बैठा है।' – 'हर अमंगल में भी एक मंगल होता है।' वे संत–सूत्र मानव जीवन की निराशा को उखाड़ फेंकने वाले आशा–सूत्र हैं। ऐसा ही एक अशुभ में छिपा शुभ, अमंगल में छिपा एक मंगल मेरी पितृ–भूमि या कि मेरी कर्मभूमि मनासा में प्रकट हो गया। कहूँ कि मिल गया। हमारे जीवन का सर्वोपरि अशुभ, सर्वोच्च अमंगल यह रहा कि अंग्रेज हमारे देश से जाते–जाते भारत के दो टुकड़े कर गये। वे भारत को खण्डित करके एक और देश बना गये। इस अशुभ, इस अमंगल में से एक शुभ एक मंगल यह निकला कि बँटवारे के बाद पंजाब से लुटे–पिटे सिर छिपाने के लिए जगह ढूँढते काफ़िलों में एक दस वर्षीय किशोर बालक अपने थके–हारे परिवार के साथ मेरे नगर मनासा में आ गया। मनासा उस समय तब के मध्यभारत में था। मन्दसौर हमारा जिला होता था और हम पुरानी होल्कर रियासत के निवासी होते हुए आज़ाद भारत के नागरिक हो चुके थे। कहिये कि हम एक राजा की 'प्रजा' से भारत की 'जनता' बन चुके थे। उस किशोर का नाम था– 'पूरन'। मैं नहीं जानता हूँ कि तब तक वह पूरनलाल था कि पूरनचन्द्र या कि पूरनलाल अथवा पूरन किशोर। वह तब भी पूरन था और आज भी पूरन ही है। मैं तब 16 बरस का था। पूरन से सात या छः बरस बड़ा। पूरन आज 76 में है और मैं 83 में। यह एक बरस का उतार–चढ़ाव आजीवन चलता रहेगा। खैर, पूरन का पारिवारिक उपनाम सहगल रहा। तब से आज तक बदलाव यह आया कि तब का 'पूरन' आज 'डॉ. पूरन सहगल' हो गया। यह पूरन की उम्र के पिछले 45–50 सालों का संघर्ष फलित होकर बोल रहा है।

इन पृष्ठों में पूरन से मेरे जुड़ाव या कहूँ कि मुझसे पूरन के जुड़ाव का भावनापूर्ण बखान का बयान करना नहीं है। खुला तथ्य यह है कि पूरन ने मुझे हमेशा 'बड़ा' माना और मुझमें बड़प्पन को देखा। मेरे भीतर दबे–छुपे छोटेपन पर पूरन ने कभी ध्यान नहीं दिया। वह मुझे बड़ा मानता रहा और बड़ा बनाता भी रहा। मैं पूरन का आभारी हूँ।

कलम पूरन ने मनासा में ही पकड़ी। पूरन के पिता एक संत प्रवृत्ति के किसान जैसे थे। उसकी माँ का आँचल सारस्वत था कि संत-सुधामय ममता और वात्सल्य से लबरेज था, यह जानकारी मुझे नहीं है, पर आज जब पूरन के पुत्र और पौत्र तक कलमकार बनकर अपनी पगडण्डियाँ बना रहे हैं तो मुझे लगता है- माँ के दूध और पिता के रक्त में सरस्वती अवश्य ही कहीं न कहीं रमत-गमत करती आ रही होगी। पता नहीं पूरन का प्रेरणा-पुरुष कौन है, पर एक समय था, जब पूरन अपना पूरा नाम 'पूरन सहगल' 'मधु' लिखता था। शनैः-शनैः यह 'मधु' पूरन ने खुद ही एक अज्ञात रबर से मिटा दिया। अब वह सर्वत्र 'डॉ. पूरन सहगल' के नाम से ही जाना जाता है।

समय के सारथी ने पूरन के जीवनरथ को अध्ययन और अध्यापन दोनों मुकामों से जोड़ा। अध्ययन में वह संत पीपाजी पर शोध करके डॉ. (स्व.) चिन्तामणिजी उपाध्याय के निर्देशन में पीएच.डी. कर चुका। विक्रम विश्वविद्यालय-उज्जैन से पूरन ने यह उपाधि डॉ. शिवमंगल सिंहजी सुमन की छत्रछाया में ली। पं. हजारीप्रसादजी द्विवेदी पूरन के परीक्षक रहे। पूरन का मौखिक उन्हीं ने लिया। पूरन का संत पीपा पर लिखा यह शोधग्रन्थ एक दो नहीं] पूरे चालीस साल बाद पिछले वर्ष सन् 2012 में छपा।

डॉ. पूरन के व्यक्तित्व को एक मोड़ देने का चुपचाप श्रेय आप मुझे दे सकते हैं। समय-समय पर मैंने उसे समझाया कि इधर-उधर के पोथी-पन्ने पलटने से बेहतर है वह स्वयं को लोक साहित्य, लोकगीत, लोकजीवन, लोककथा, लोकनाट्य, लोकमंच और लोक संतों की साखियों तथा वाणियों और शब्दों से जोड़ ले। और पूरन ने मेरी बात के मर्म को धर्म की तरह स्वीकार कर लिया। परिणति और परिणाम यह है कि आज डॉ. पूरन सहगल देश के इने-गिने लोकार्थियों तथा लोक अध्येताओं में उचित लोकासन पर बैठा है। मालवा और मालवी पर काम करने वाला कोई भी विद्यार्थी पूरन की कुण्डी ज़रूर खटखटायेगा। यह मनासा की मिट्टी का पुण्य है।

इसी सारस्वत भाग-दौड़ और संघर्षकाल में पूरन जब संत पीपाजी पर काम कर रहा था, तब उसकी चेतना में संत सैन भगत की सौरभ समा गई। काम कर रहा था, सुई और कैंची पर, हाथ में आ गया उस्तरा और कैंची। लेकिन पूरन में यह दम और यह प्यास थी कि वह दोनों 'संतों' पर साथ-साथ काम करता रहा। एक को लिखता रहा दूसरे को बटोरता रहा। पीपाजी उसके लक्ष्य थे तो सैन जी महाराज उसके प्रेरक और पथ-प्रदर्शक रहे। जहाँ-जहाँ सैन जी पर उसे खबर, साखियाँ, गीत और लोककथाएँ मिलीं, पूरन वहाँ-वहाँ अपने बाल-बच्चों की थाली को गिरवी रखकर पहुँचा। अपनी जीवन-संगिनी कृष्णा को बीमार छोड़कर भी सैन जी की 'एक पंक्ति' तक लेने निकल गया। इस उत्कटता की अलभ्य और दुर्लभ प्राप्ति है, यह ग्रन्थ जो आपके हाथ में है। मत पूछिये कि अपनी उम्र के कितने वर्ष पूरन ने इस 'सैन सरस्वती' पर न्यौछावर किये हैं। लोक

क्षेत्र का गणित एक से शुरू होकर दस तक नहीं पहुँचता है, वह शून्य से शुरू होकर एक से नौ तक को घेरकर फिर शून्य में घुल जाता है। लोक साहित्य में अपना स्थान बनाने वाली पूरन की 40 से 45 के बीच प्रकाशित जानी-पहचानी पुस्तकें इस समीकरण की गवाह हैं।

आप-हम जिसे सेन समाज के नाम से पहिचानते हैं, उसके इतिहास की गहराइयों में जाना आज अपना अभीष्ट नहीं है। विसंगति आप भी देख रहे हैं और चुप हैं। केश-कर्तन और केश-कल्प तथा केश-अलंकरण इस समाज का परम्परागत कलागत काम रहा है। भारतीय समाज में जरण-मरण और परण जैसे संस्कारों का प्रत्येक परिवार में 'प्रसंग-प्रबन्धक' यही समाज रहा है। विकसित अर्थ और समाज व्यवस्था के अर्थशास्त्र ने इस समाज से यह सांस्कृतिक और सामाजिक काम चुपचाप 'इव्हेन्ट मैनेजर' नामक चतुर संस्था ने छीन लिया है। प्रत्येक परिवार में जन्मोत्सव-विवाहोत्सव से लेकर मृत्यु-महोत्सव तक के सारे प्रबन्ध हज़ारों वर्षों से यही समाज करता आया है, लेकिन अब सारे काम 'इव्हेन्ट मैनेजर' नेपथ्य में रहकर करने लगे। विसंगति यह है कि भारत में सैन स्वयं को सैन नहीं कहकर 'बार्बर' कहता है। उसका सज्जा कक्ष, दूकान नहीं 'सेलून' है। सुतार स्वयं को 'कारपेन्टर' कहलाना शान की बात मानता है। रंग-कूची वाला कलाकार स्वयं को 'पेन्टर' लिखता और बोलता है। दर्ज़ी खुद को 'टेलर' बताता है। आज तक मैंने किसी दर्ज़ी की दूकान में संत पीपाजी की तस्वीर नहीं देखी। क्षत्रियों को सुई राव पीपा या पीपाराव ने ही थमाई थी। वे स्वयं भी क्षत्रिय थे। किसी भी केश-शिल्पी के कर्म-कक्ष में भगवान सैनजी महाराज की तस्वीर आप नहीं पायेंगे। इसके उलट अधनंगे और प्रायः नग्न ऊलजलूल लोगों की तस्वीरें आज इन दुकानों पर देख लेते हैं। यह हमारी एक सामाजिक और आध्यात्मिक विसंगति है। ऐसी और इतनी विसंगतियों वाले जनजीवन में पूरन ने सैन भगवान को जिस श्रद्धा और लगन के साथ ढूँढा है, उसकी वन्दना और सराहना करने का यह क्षण है।

लोक प्रचलित कहानियाँ और किंवदन्तियाँ बताती हैं कि सैन महाराज आज के मध्यप्रदेश के बुन्देलखण्ड अंचल में बाँधवगढ़ में जन्मे थे। पूरन ने अपने शोधश्रम से सिद्ध किया है कि सैन प्रभु पंजाब के किसी नगर या ग्राम में अपने ननिहाल में अवतरित होकर आठ या दस वर्ष की आयु में अपने पितृ नगर बाँधवगढ़ आये। वे गर्भ में ज़रूर बाँधवगढ़ में आ गये थे, लेकिन उनके मामा अपनी गर्भवती बहिन को जचकी के लिए पंजाब ले गये और भगवान सैन वहीं जन्मे। डॉ. पूरन ने उन सूत्रों को खँगाला तो पाया कि ननिहाल में किसी इस्लामी संत या सूफी ने उनके मामा को यह सलाह दी कि इस बच्चे का नाम ऐसा रखें, जिसमें 'हुसैन' संज्ञा की झंकार भी झनझनाए। परिवार ने सोच-समझ कर नाम रखा- 'सयन'। यही नाम कालान्तर में 'सैन' हो गया।

सैन प्रभु का बचपन और जीवन किस तरह बीता, उनकी शिक्षा–दीक्षा कैसे हुई। वे धर्म, अध्यात्म और आत्मा की तरफ कैसे मुड़े। उनका देशाटन, उनका भ्रमण, उनकी यायावरी, उनकी भाषा, उनकी वाणी, उनका दर्शन, उनका लेखन, उनका चिन्तन, उनकी संवेदना, उनकी प्रार्थना, उनकी तपस्या और मनुष्य जन्म तथा जीवन को उनका अवदान, इन सब पर पूरन ने प्रामाणिक शोध करके इस पुस्तक को आकार दिया है।

संतों पर काम करना बहुत कठिन काम है। संतों के साथ उनके अनुयायी होते हैं, उनके अनुगामी होते हैं और सबसे अधिक उनके भक्त होते हैं। वे विश्व मानव होते हैं और समूची मानवता के बारे में सोचते हैं। शुभ और सर्वमंगल उनका अभीष्ट होता है। वे मानव की मृत्यु को उद्धार में बदलने का संकल्प लेकर समाज से बात करते हैं। सैन महाराज की वाणी का कोई भी अंश लेकर आप विचार करें, आपको लगेगा कि अपनी शताब्दी के वे एक अतुल्य संत थे।

उनका अवतरण प्रभु का प्रसाद रहा। वे अन्तर्ध्यान होकर भी आज हमारे साथ हैं। सन् 1400 से 1490 तक पन्द्रहवीं शताब्दी का सारा आँचल सैन महाराज की साखियों और खबरों से धन्य और धनी है। इस पूरे समय–काल को पूरन ने अपनी ग्रन्थधरा पर सजा–धजा कर एक अमूल्य अमानत हमें सौंपी है। 'संत सैन भगत' का स्वागत हिन्दी संसार पूरी उमंग से करेगा, यह मेरा विश्वास है।

डॉ. पूरन सहगल को बधाई और उसकी साधना का अभिनन्दन। भगवान श्री सैन महाराज को प्रणाम। जो लोकजीवन के कण्ठ में आ जाते हैं, उनकी कण्ठियाँ नहीं पहनी जाती। वे कण्ठ से कागज़ पर आने में कई सदियाँ ले लेते हैं। कण्ठ उन्हें सुर में रखते हैं, कागज़ उन्हें अपने कलेजे में सुरक्षित रखने का दायित्व निबाहते हैं। सुर की सुरावट और कागज़ की काया इस ग्रन्थ में पृष्ठ–पृष्ठ पर व्याप्त है। ग्रन्थकार को एक बार फिर बधाई।

समझदार विश्वविद्यालय इस शोध को डॉ. पूरन को एक बार फिर से डॉक्टरेट दे दे तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा।

– बालकवि बैरागी

22 जुलाई, 2013
गुरू पूर्णिमा सं. 2070

संत सैन भगत की सैन:
दरपण साँच विवेक को, कैंची विरत विराम।

सैन भगत और पीपाजी एक ही समय, एक ही गुरू के शिष्य। आपस में गुरू भाई! एक ही भक्ति धारा के प्रमुख संत कवि। एक ही भाव भूमि पर खड़े सचेत दो पुरुष। सद्‌गुरू रामानंदाचार्य के द्वादश संत कवियों में महत्त्वपूर्ण और एक दूसरे को सबसे नजदीक महसूस करने वाले मित्र। रैदास, धना और कबीर, भवानंद, अनंतानंद आदि की पंक्ति में बैठने वाले प्रमुख संत। सभी उपलब्ध संत साधक। कोई एक दूसरे का सानी नहीं। सबकी एक ही अंतरधारा। निर्णुण भक्ति। पर सैन अलग-अलग।

आचार्य रामानंद का समय सगुण और निर्गुण भक्ति धारा की अलग-अलग पहचान बनने की सबसे अधिक सकारात्मक स्वीकृति का रहा है। यही कारण है कि उस समय के संत कवियों में दोनों भक्ति धाराओं का कहीं समन्वय समागम तो कहीं पृथक-पृथक समर्थन और समाधान दिखाई देता है। स्वामी रामानंद अपनी मूल अवधारणा में सर्वथा स्पष्ट और निर्गुण भक्तिधारा के संस्थापक और प्रबल समर्थक रहे। इस आन्दोलन में कबीर सबसे ऊपर जाज्वल्यमान नक्षत्र की तरह उभरे। बाद में उनके साथ अनेक क्षेत्रीय संत जुड़े। यद्यपि उन्होंने अपने लिये रामानंद जैसे आचार्यत्व पद को कभी स्वीकार नहीं किया। तथापि कबीर निर्गुण भक्तिधारा के सबसे शीर्ष संत कवि के रूप में स्थापित हुए।

संत पीपाजी और सैन भगत जहाँ भारत के पश्चिम और दक्षिण में संत नामदेव की पृष्ठभूमि में निर्गुणी अलख जगा रहे थे। वहीं कबीर, रैदास उत्तर पूर्वी भारत में निर्गुण भक्ति परम्परा की स्थापना कर रहे थे। पीपाजी के साथ सैन भगत राजस्थान के गागरोनगढ़ में साथ-साथ रहे। भ्रमण तो पीपाजी भी करते रहे, लेकिन सैन भगत सदैव घुमक्कड़ी में रहे। सैन भगत को दक्षिण जाने का आदेश सद्‌गुरू रामानंद ने ही दिया था। महाराष्ट्र में सैन भगत की छाप के अभंग मिलना, इसका सबसे बड़ा प्रमाण है। मालवा, निमाड़ और गुजरात भी सैन भगत से अछूते नहीं रहे।

संत पीपाजी राजघराने से आये थे, तो सैन भगत साधारण होते हुए भी असाधारण 'राज नाई' थे। वे बाँधवगढ़ (मध्यप्रदेश) के राजा के यहाँ हजामत का काम करते थे। उनका सम्बन्ध सर्वसाधारण से लगाकर एक राजा तक था। उनका जन्म पंजाब में हुआ, लेकिन पुंसवन बाँधवगढ़ में हो चुका था। वे जहाँ 'क्षौरकर्म' में निष्णात थे, वहीं मालिश विधा में पारंगत थे। उन्हें मालिश को वैद्यकी तक पहुँचाने का श्रेय है।

संत सैन भगत ने जातीय गौरव को स्थापित किया। उन्हें हजामत करने में कोई शर्म नहीं थी। हज्जाम उनका कर्म था और राम की भक्ति उनका धर्म था। उन्होंने कभी अपनी जाति नहीं छिपाई। बल्कि उन्होंने कर्म और भक्ति से नाई समाज का मान बढ़ाया। आजतक उनसे बड़ा कोई भक्त नाई समाज में नहीं हुआ। पूरे कृतज्ञ समाज ने उनके नाम पर 'सैन या सेन' उपनाम ग्रहण कर लिया। यह सैन भगत के आचरण की आध्यात्मिक शुचिता का प्रतीक है और सैन भगत के भक्ति और मुक्ति की चरम फलश्रुति भी। असल में सच का दर्पण दिखाने के लिये सैन भगत संत हुए।

ये सब बातें मुझे डॉ. पूरन सहगल की पुस्तक 'संत पीपाजी एवं भक्ति आंदोलन' और 'संत सैन भगत' की पाण्डुलिपि पढ़ने से ज्ञात हुई। पीपाजी और सैन भगत के बारे में इसके पहले इतना ही जानता था कि कि दोनों निर्गुण भक्ति धारा के प्रमुख संत कवियों में से हैं। जिन पर कबीरदास जैसी स्वामी रामानंद की महती कृपा रही है। मुझे भाई पूरन सहगल ने सैन भगत और पीपाजी के चरित्, विचार, दर्शन को सहेजकर समझने का सुअवसर और सौभाग्य दोनों प्रदान कर दिये। इसके लिये जितना कहा जाय कम है। डॉ. पूरन सहगल के पचास-पचपन वर्ष की कड़ी मेहनत, निष्ठा, लगन और धैर्य का फल 'संत सैन भगत' पुस्तक का छपना है। डॉ. सहगल ने यह दुर्लभ कार्य कर दिखाया। इसके लिये उन्होंने कहाँ -कहाँ की खाक छानी, यह तो उनका शरीर और रूह ही जान सकती है। पीपाजी के साथ सैन भगत भी उनकी संकलन की साँस में ऐसे समा गये थे कि एक सुर पीपाजी का चलता था, तो दूसरा संत सैन भगत का। पीपाजी और संत सैन पर इतना गम्भीर तथा विस्तृत कार्य कहीं और कभी नहीं हुआ था? इस कारण से साहित्य में न तो संत पीपाजी का और न संत सैन भगत का ठीक से मूल्यांकन हो पाया है। जबकि निर्गुण संत परम्परा के दोनों महत्त्वपूर्ण घटक हैं। ये अवसर साहित्य लोक को डॉ. सहगल ने उपलब्ध करवा दिये है, इसके लिये डॉ. पूरन सहगल सदैव याद किये जायेंगे। उनका श्रम सार्थक ही नहीं हुआ, बल्कि सम्पूर्ण साहित्य जगत भी उपकृत हुआ। इसके लिये आदिवासी लोककला एवं बोली अकादमी, भी साधुवाद की पात्र है, जिसने डॉ. पूरन सहगल की श्रमसाध्य कृति 'संत सैन भगत' को प्रकाशत करने का निर्णय लिया।

- वसन्त निरगुणे

22 अगस्त, 2013
भोपाल

सामाजिक पुनरुत्थान के पुरोधा : संत सैन भक्त

संतों-भक्तों पर लिखना बहुत कठिन काम है। मैंने सन् 1969 में संत पीपाजी पर शोध-कार्य प्रारम्भ किया था। विषय था- 'संत पीपा की कृतियों का संकलन और सम्पादन'। प्रथम दृष्टि में यह विषय बहुत सरल लग रहा है, किन्तु यदि यह शोध का विषय था तो सरल कैसे होता?

मेरे पास केवल एक पद था, जो गुरुग्रन्थ साहब में संकलित था। मैं एक विद्यार्थी था। न अर्थ, न परिचय। काम अर्थ-साध्य, श्रम-साध्य एवं समय-साध्य था। तब शिक्षकीय वेतन मात्र एक सौ रुपये मासिक था। पारिवारिक पृष्ठभूमि भी ऐसी नहीं थी कि कहीं से आर्थिक सहायता मिल पाती। माता-पिता, पत्नी, दो बेटे इनका भरण-पोषण। किसी समय पंजाब (अब पाकिस्तान) के सम्पन्न जमींदार मेरे पिता मुझ पर आश्रित हो चुके थे। एक छोटा-सा गाँव, न बिजली न पानी। कंदील और दीपक का प्रकाश। इसी स्थिति में 'कमाओ और पढ़ो' परिस्थिति में एम.ए. किया। फिर पीएच.डी. का पंजीयन। डॉ. चिन्तामणिजी का मार्गदर्शन, दादा बैरागीजी का सम्बल एवं पत्नी कृष्णा का सहयोग। यही पूँजी थी मेरे पास।

पूरा राजस्थान और वहाँ के शोध संस्थान मैंने खँगाल डाले, साधु-महात्मा, लोकगायक मेरे शोध के आधार थे। समय रहते संत पीपाजी की वाणी का संकलन तो हो गया, किन्तु कृष्णा की सारी संचित पूँजी गहने आदि चले गये। भौतिक सुख गया और आध्यात्मिक सुख प्राप्त हो गया। शोधग्रन्थ बन गया और उपाधि भी मिल गई।

मैंने अपनी पाण्डुलिपि की एक प्रति श्री साँवरलालजी तंवर-बीकानेर को सौजन्यावश दी थी। उनके देहान्त के पश्चात् वह प्रति साहित्यिक लुटेरों के हाथ पड़ गई और उन्होंने उसे अपने-अपने स्तर पर निर्लज्जतापूर्वक निस्संकोच छापने का व्यवसाय शुरू कर दिया। मेरा तो उल्लेख तक किसी ने नहीं किया। मैं कर भी क्या सकता था। श्रम से संचित पूँजी लुट रही थी और मैं निरीह बना मन मसोस रहा था। समय बहुत बलवान होता है। 43 वर्ष बाद उदयपुर के डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' ने मुझसे अचानक सम्पर्क किया और मुझसे संत पीपाजी की पाण्डुलिपि माँग ली। मैंने भी वह पाण्डुलिपि दधीची भाव से श्रीकृष्ण को सौंप दी। लेने वाला श्रीकृष्ण, देने वाला श्रीकृष्ण। जुगनू ने बिना मुझे बताये उस पाण्डुलिपि को कम्प्यूटर में डाला। मुझसे शोध के

पश्चात् की शोध-सामग्री का भी संकलन किया और दिल्ली के एक प्रकाशक गोविन्दजी से सम्पर्क कर उसे प्रकाशित करवाकर तथा उसे अद्यतन स्वरूप देकर नया शीर्षक 'संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन' नाम देकर मुझे वह ग्रन्थ भेंट कर दिया। जब मैं संत पीपाजी की वाणी का संकलन कर रहा था, तब साथ ही मैंने संत सैनजी की वाणी का संकलन जारी रखा। बूँद-बूँद से घट भरता गया। कभी सोचा भी नहीं था कि मैं इस संकलित सामग्री को ग्रन्थाकार दे भी सकूँगा।

डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित ने जब संत पीपाजी वाला ग्रन्थ देखा- पढ़ा, तब उन्होंने कहा आप संत सैन पर भी ऐसा ही ग्रन्थ तैयार कर दो। प्रकाशन की व्यवस्था हो जाएगी। यह एक ऋषि वाक्य था। ऋषि वाक्य वरदान कैसे बनता है, यह मैं आज समझ पा रहा हूँ। तभी डॉ. शैलेन्द्रकुमारजी शर्मा ने संत सैन जी सम्बन्धी कुछ पद-साखियाँ भेजने के लिए फोन किया। मैंने कुछ पद-साखियाँ उन्हें भेज दी। संत पीपा वाली पाण्डुलिपि की लूट से मैं डरा हुआ था। डॉ. शैलेन्द्र तो सदा मुझे प्रेरित करते रहे हैं। उन्होंने मुझसे अनेक लेख प्रेरित करके लिखवाये हैं। वे कहते तो मैं उन्हें अपने पास की सारी सामग्री भी भेज देता।

दाता केवल पूँजीपति ही नहीं होते। साहित्य में भी दाता होते हैं। उन्हें ऋषि कहा जाता है। मुझे श्री माँगीलाल सैन 'सुमन', श्री रमेशचन्द्र तोमर-दवाना, श्री बाबूलाल सैन-महेश्वर, डॉ. प्रह्लादचन्द्र जोशी-सांवेर एवं नानूराम नाई-रीछा लालमुँहा से संत सैन की जो वाणी मिली है, उससे मेरे पास की संचित संकलित वाणी प्रमाणित तो हुई ही है, सम्पन्न भी हुई है। श्री संवरलाल तंवर-बीकानेर से 'संत सयना भगत की परचई', कहीं धरमदासकान्त या डॉ. प्रह्लादचन्द्र जोशी से प्राप्त 'परचई सयना भगत री कथा सुरतराम की' प्राप्त हुई। इसे मैं इन ऋषियों का औदार्या नहीं कहूँ तो क्या कहूँ। मैंने यथास्थान उन सबसे प्राप्त सामग्री का सविस्तार वर्णन किया है।

डॉ. शैलेन्द्रकुमार शर्मा आचार्य एवं कलानुशासक विक्रम विश्वविद्यालय- उज्जैन से मराठी के 138 अभंग प्राप्त हुए हैं। उनमें से 100 अभंगों का हिन्दी काव्यानुवाद स्व. पाण्डुरंग लोहोकरे जी ने किया है। डॉ. शैलेन्द्रकुमार शर्मा ने वह मराठी अभंग मेरे माँगने पर नहीं, औदार्यतापूर्वक स्वैच्छिक भेंट के रूप में मुझे प्रेषित किये हैं, जो इसी ग्रन्थ में परिशिष्ट भाग में संकलित हैं।

डॉ. श्यामसुन्दर निगम-उज्जैन को जब यह सब शोध-कार्य ज्ञात हुआ, तब वे गद्गद् थे। सदा की भाँति फोन पर मैं उनकी आवाज में स्नेहातिरेक की ध्वनि पहचान रहा था। वह ठीक वैसी ही थी, जैसी एक माँ को अपने पुत्र के किसी शुभ कार्य करने में सफलता की ओर बढ़ने से होती है।

दादा बैरागी जी की उपस्थिति में कृति संस्था–नीमच द्वारा आयोजित मेरे अमृत महोत्सव एवं संत पीपाजी के ग्रन्थ के विमोचन अवसर पर मैंने घोषणा की थी कि मैं अपनी अगली जन्मतिथि तक संत पीपाजी के गुरुभाई संत सैन भगत पर अपना ग्रन्थ प्रस्तुत कर दूँगा।

संत सैन का भी केवल एक पद गुरुग्रन्थ साहब में संकलित है। शोध के पूर्व मेरे पास केवल वही पद था। आज मैं 794 साखियाँ और 193 पद तथा दो परचाइयाँ इस ग्रन्थ में संकलित कर लोकार्पित कर रहा हूँ। यह दादा बैरागीजी का आशीर्वाद एवं कई ऋषिजनों–स्नेहियों का स्नेह ही है। अपने इस शोध–ग्रन्थ को तैयार करने में मुझे सदा संलग्न बने रहने की प्रेरणा देने वाले डॉ. प्रद्युम्न भट्ट, श्री पी.एल. रांगोठा, श्री श्याम टेलर, श्री अग्रवाल एवं श्री देवीसिंह जी को मैं कैसे भूल सकता हूँ।

यह ग्रन्थ मैंने अपनी बीमार पत्नी कृष्णा सहगल की पीड़ाओं को झेलते हुए लिखा। अपनी पीड़ादायक बीमारी के बावजूद भी कृष्णा ने मुझे अपने लेखन को जारी रखने के लिए सदा प्रेरित किया। उसके बिस्तर के पास बैठकर, उसके कराहने की पीड़ा को सहन करते हुए, लेखन करते रहना कितना कठिन होगा, इसका अनुमान केवल मैं ही लगा सकता हूँ। जहाँ आग जलती है, वही जगह तपती है। मन में संत पीपाजी एवं संत सैनजी सदा विराजित रहे। उन्हीं की कृपा से यह कार्य सम्पन्न हो सका। अपने पात्र को जीना बहुत सहज नहीं होता। मैं संत सैन जी को 44 वर्षों से जी रहा हूँ। यह आवश्यक भी है। दादा बैरागीजी ने यही मंत्र बहुत पहले दिया था। उन्होंने कहा था– 'जब संझा पर लेख लिखो तो संझामय होकर लिखो। ऐसी कल्पना करो कि तुम एक कन्या हो और कन्याओं के साथ संझा माँडने और गीत गाने में प्रतिभागी हो।' बस, लोक साहित्य में काम करते समय यह मंत्र मुझे सदा प्रेरणा देता रहा है। दादा बैरागीजी ने मेरे 'संत सैन भगत' के इस ग्रन्थ को अपना आशीर्वाद देकर शुभ का तिलक लगाकर मुझे एवं मेरे शोधश्रम को धन्य किया है। मैं सदा की भाँति उपकृत हूँ।

पिता श्री जेठानन्दजी एवं माता जीबनीबाई गृहस्थ संत थे। संयोग से मेरी माता और संत सैनजी की माता का नाम एक जैसा ही है। पंजाब में जीबणीबाई, निक्की ऐसे नाम बहुतायत से पाये जाते हैं। पिता जीवित होते तो बहुत प्रसन्न होते। उनका प्रसन्न होना भी अद्‌भुत था। उनके मुख पर एक दिव्य आभा निखर आती थी। आज मैं उस दिव्य आभा को नहीं देख पा रहा हूँ।

यह ग्रन्थ प्रकाशन के तीर्थ तक जाने वाला ही था। 22 जुलाई को यह उदयपुर के श्रीकृष्ण 'जुगनू' को मैं देने वाला था। जितना तैयार था, वह कम्प्यूटर में जाना प्रारम्भ हो जाता। संत पीपा वाले ग्रन्थ के प्रकाशक इसे छापने को तत्पर थे। तभी 19 जुलाई, 2013 को श्री भाई अशोक मिश्र का भोपाल से फोन था– 'सैनजी पर पुस्तक छापना है, आप तत्काल पाण्डुलिपि लेकर भोपाल आ जाएँ।' मैं जान रहा था कि श्री मिश्रजी को मेरे संत सैनजी पर कार्य करने की

जानकारी श्री वसन्त निरगुणेजी ने ही दी होगी। निरगुणेजी मेरे आत्मीय हैं और मेरे हित में सदा तत्पर रहते हैं। इस बार भी उन्होंने वही किया। कोई भी शब्द ऐसा नहीं है, जो मैं उनके लिए कहूँ। उनका और डॉ. महेन्द्र भानावतजी–उदयपुर का स्नेह मेरे प्रति अहेतुक है। सैनजी पर मेरे काम की सुध भानावतजी सदा फोन पर तथा उदयपुर में कृष्णा के इलाज हेतु प्रवास के समय पूछते रहे और निर्देश भी देते रहे।

सैन समाज के लगभग पचास महानुभावों को मैंने पत्र लिखे, उनका कोई उत्तर आज तक नहीं मिला। एक सज्जन विजय भाटिया–भानपुरा तो मुझे समय देकर भी नहीं मिले, फोन पर कह दिया कि– 'मैं बाहर हूँ।' स्वामी अचलानन्दजी–जोधपुर से आशीर्वाद माँगा, आज तक नहीं मिला। ये सब शायद यह मानते रहे कि मैं उनसे कुछ अनुदान मागूँगा। फिर भी उनका आभार कि मैं समय रहते सचेत हो गया।

श्रीकृष्ण 'जुगनू' ने तो फोन पर भी और सामुख्य में भी मुझे संत सैन तथा भक्तिकाल सम्बन्धी कई जानकारियाँ देकर धन्य किया। कुछ ग्रन्थ भी उपलब्ध करवाये। यदि सहयोग नहीं करते तो 'मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन एवं तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ' वाला अध्याय नहीं लिखा जा सका होता। उन्हें साधुवाद देना भी परायापन जैसा लग रहा है। वे मेरे अनुजवत् हैं।

डॉ. विनोद तनेजा–पटियाला एवं डॉ. मनमोहन सहगल–अमृतसर का सहयोग न मिलता, तब डॉ. धर्मपाल सिंघल से चर्चा न हो पाती। यह बात अलग है कि धर्मपालजी अपनी पुस्तक 'संत सैण जी' नहीं भेज पाए। बार–बार आश्वासन अवश्य दिया। वैसे पंजाबी (गुरुमुखी) की उस पुस्तक में जानने जैसा कुछ विशेष था भी नहीं। धर्मपाल जैसे विद्वान और भी हैं, जो शोधार्थियों का सहयोग करने में संकोच करते हैं। उन्हें 'पैरीपौना' (चरण–स्पर्श) कहने में मैं क्यों कंजूसी करूँ? इसी प्रकार मन्दसौर के भगवतीप्रसाद जी गहलोत का सहयोग मुझे सदा याद रहेगा। उनका वंदन। मिश्रजी का आदेश टाल पाना मेरे वश में तो कभी भी नहीं रहा। अब कैसे होता? उदयपुर जाकर श्रीकृष्ण 'जुगनू' को सारी स्थिति बताकर सहमत किया और लगातार सात दिनों तक लेखन कार्य करते हुए पाण्डुलिपि तैयार की। यदि यह ग्रन्थ दिल्ली में छपता, तब दिसम्बर 2013 तक छपता और यदि भोपाल में छपता है तो सम्भवतः पहले छप जाएगा। दोनों स्थितियों में मेरी घोषणा सत्य हो जाएगी।

मैं श्री अशोक मिश्रजी, श्री वसन्त निरगुणेजी एवं आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी प्रकाशक–निदेशक श्री श्रीराम तिवारी, स्वराज संस्थान संचालनालय, भोपाल के सभी सहयोगी मित्रों के प्रति वन्दन! आभार!!

– डॉ. पूरन सहगल

अध्याय- 1

मध्यकाल में भक्ति आन्दोलन

राजनैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ

मध्यकाल भारतीय इतिहास एवं धार्मिक-सामाजिक त्रासदियों, विसंगतियों तथा संघर्षों का युग माना जाता है।

भारत में मुस्लिम शासकों की सत्ता स्थापित हो चुकी थी। उनका आतंक भारतीय जनजीवन को त्रस्त कर रहा था। भारतीय राजा प्रजा की तो क्या स्वयं की सुरक्षा करने में भी अक्षम सिद्ध हो चुके थे। वे परस्पर एक दूसरे से लड़ते रहे। भीतरघात करते रहे। यह भीतरघात आगे जाकर आत्मसघात् सिद्ध हुई।

'विक्रम संवत् 1263 के समय से ही शाहबुद्दीन गौरी द्वारा भारत में मुसलमानों का वर्चस्व स्थापित हो गया था। जिस राजा ने स्वार्थवश दूसरे राजा के पराभव के लिए मुस्लिम सत्ताधारियों का साथ दिया, उनका ही पराभव हो गया।'

'गौरी के गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक ने गुलाम वंश की स्थापना कर पठानी सल्तनत को और भी अधिक दृढ़ कर दिया। भारत की स्वर्णलक्ष्मी पर लुब्ध मुसलमानों का विकराल स्वरूप जिसे उनकी धर्मांधता ने और भी अधिक विकराल बना दिया था, अलाउद्दीन खिलजी के समय भलीभाँति प्रकट हो गया।'[1]

खेतों में खून और पसीना बहाकर फसल उगाने वाले किसानों की आधी कमाई भूमिकर के रूप में राजकोष के हवाले हो जाती थी। भारत की प्रजा विशेषकर हिन्दुओं के घरों में सोना-चाँदी तो क्या अनाज तक सुल्तान के कारिन्दों ने हरण कर लिया। लोग दाने-दाने को तरसने लगे थे।

मन्दिरों को तोड़कर मस्जिदें बनाने का सिलसिला शुरू हो गया था। मन्दिरों की लूट तो मोहम्मद गजनवी पहले ही कर चुका था। वह हाथियों और ऊँटों पर लादकर अपनी सम्पत्ति अपने साथ गजनी ले गया। देशी राजा महलों के भीतर आपस में तलवारें भाँजते रहे। इस कारण जिसने मुकाबला किया, वह अकेला पड़ा और अन्ततः वीरगति को प्राप्त हुआ। उसकी सत्ता, सम्पत्ति एवं मान-प्रतिष्ठा सब पर मुस्लिम शासकों ने कब्जा कर लिया। यह बात अलग है कि मोहम्मद गजनवी एक लुटेरे की तरह आया और अपार धन-सम्पत्ति लूटकर वापिस गजनी लौट गया। उसकी सरेआम लूट, मन्दिरों की मूर्तियों पर लदे गहने, भण्डारों तथा राजमहलों में संचित धन को लूटने में किसी भी राजा-महाराजा ने रोक लगाने की हिम्मत नहीं जुटाई।

भारतीय राजाओं की आपसी फूट, अक्षमता और प्रजा की निरीहता का नगाड़ा अन्य मुस्लिम देशों में बज गया। उसके बाद मोहम्मद गौरी ने रही-सही कमी पूरी कर दी और अपनी सत्ता स्थापित कर भारतीय जनमानस को अपंग और अस्त-व्यस्त कर दिया।

'सोमनाथ के मन्दिर की लूट भारत के इतिहास में यहाँ राजाओं, पण्डों एवं स्वयं मन्दिर के ठाकुरजी का विश्वास जनजीवन से डिगा गई।'

इस घटना ने सर्वशक्तिमान ईश्वर तक से भारतीय जनता का विश्वास डिगा दिया। उनके रहे-सहे विश्वास को मोहम्मद गौरी ने डिगा दिया। हिन्दू राजाओं के पराभव ने भारत में हिन्दू राज्य की पुनर्स्थापना के स्वरूप को सदा के लिए तोड़ दिया। मुसलमान शासकों की इस विजय के उपरान्त राजनीति में धर्मांधता का बोलबाला हो गया। हिन्दुओं, बौद्धों एवं अन्य धर्मावलम्बियों के साथ अत्यन्त निम्न कोटि का व्यवहार किया जाने लगा। धार्मिक स्वतंत्रता छीन ली गई। धर्मान्तरण का दौर प्रारम्भ हो गया। [2]

इन्हीं आक्रमणों में तैमूर का आक्रमण अत्यन्त दारुण तथा हृदय विदारक था। इस्लाम के नाम पर किए जाने वाले नरसंहार, बलात्कार, अपहरण, लूट-खसोट के ऐसे कँपा देने वाले दृश्य भारतीय लोगों ने पहली बार देखे थे। उससे पहले रामायण काल के सन्दर्भों में उन्होंने राक्षसों के नरसंहार तथा बलात्कार जैसी कथाएँ पढ़ी अवश्य थीं। लेकिन राजा और प्रजा इन राक्षसों के आतंक से अत्यन्त आतंकित हो उठी। कोई भी राजा-महाराजा अथवा मंदिर का भगवान उन्हें बचाने नहीं आ सका। सब अपने महलों मन्दिरों में दुबके बैठे रहे।[3]

धार्मिक परिस्थितियाँ

मध्यकाल में हिन्दू धर्म अनेक कुप्रथाओं, अंधविश्वासों, बाह्याडम्बरों और अंधानुकरण के कारण विकृत हो चुका था। यह विकृति इस सीमा तक पहुँच गई थी कि प्रतिक्रिया अनिवार्य हो गई। मुसलमानों के अत्याचारों तथा राजनैतिक प्रतिशोधों ने हिन्दू राजाओं की शक्ति को

पूर्णतया नकारा कर दिया था। एक भी राजा ऐसा नहीं बचा था, जो अपनी प्रतिष्ठा या प्रजा की प्रतिष्ठा की रक्षा कर सके। हिन्दुओं में न तो आत्मोन्नति की इच्छा बची थी, न स्वदेशोन्नति की और न स्वधर्मोन्नति की। सर्वत्र निराशा और हताशा व्याप्त थी। वे न तो हिन्दू रह पा रहे थे और न मुसलमान होना चाहते थे। भारतीय धर्म-साधना अत्यन्त अस्त-व्यस्त और विशृंखलित हो चुकी थी।

धार्मिक दृष्टि से संत साहित्य के सृजन के प्रमुख कारणों में इन विकृतियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है।[4]

मध्यकाल में हिन्दूधर्म प्रधानतः आचरण प्रवण हो गया था। तीर्थ, व्रत, उपवास आदि परम्पराएँ उसका केन्द्र बिन्दु हो गई थी। समाज में शूद्रों की स्थिति अत्यन्त हेय बनती जा रही थी। उनके हाथ से छुआ अन्न-जल तक ग्रहण नहीं किया जा रहा था।

'वैशस्य चान्नमेर्वान्न शूद्रान्न रुधिरं स्मृतं' एवं 'श्वपाक चाण्डाल परिग्रहे तु पीत्वा जलं पंच गवेन शुद्धिः' जैसी भावनाएँ समाज में प्रवेश पा रही थी।

वैदिक धर्म की मूलभूत आधार वर्णाश्रम व्यवस्था भी अस्त-व्यस्त स्थिति हो चुकी थी और धर्म को एक सूत्र में बाँधने वाली यह व्यवस्था उसे क्षत-विक्षत कर रही थी। धर्म में आडम्बर बढ़ रहा था। वह अपने मूल लक्ष्य से भ्रमित होकर भूल-भुलैया में फँसता जा रहा था।[5]

वैष्णव धर्म जिसकी संतों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। अपनी प्राचीन गौरव-गरिमा खो चुका था। इस प्राचीन धर्म का अपना गौरवशाली इतिहास है। अपना विशाल साहित्य है, जिसमें रामायण, महाभारत, नारायणीयोपाख्यान, गीता-भागवत, नारद भक्ति सूत्र, शाण्डिल्य भक्ति सूत्र विष्णु पुराण, पद्मसंहिता, सात्वत संहिता, विष्णु संहिता तथा लक्ष्मीतंत्र आदि अत्यन्त प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। जिन्हें भारतीय जनमानस अत्यन्त आदर के साथ मानता है तथा जो भारतीय धर्म के मूल आधार हैं। इन ग्रन्थों के आधार से वैष्णव धर्म की महानता, श्रेष्ठता तथा महत्त्व को सहज ही स्वीकारा जा सकता है। मध्ययुग आते-आते वैष्णव धर्म आडम्बरयुक्त होने के कारण अपने आदर्शों से विमुख होने लगा था।[6]

काल की कठोर आवश्यकताएँ, परिस्थितियाँ एवं विवशताएँ अवतारों का आह्वान करती हैं। भारतीय मानस अत्यन्त त्रस्त था। उसकी आर्त पुकारों से भी किसी देव का अवतार नहीं हुआ। कोई कृपाल प्रकट नहीं हुआ। ऐसे कठोर समय में संतों का आविर्भाव जनमानस को सांत्वना देने के लिए हुआ।

उस कठिन काल में संतों-भक्तों-महात्माओं का आविर्भाव समय की पुकार पर हुआ

था। अवसर के उचित उपयोग से अनभिज्ञ और कर्मठता से उदासीन रहने वाली हिन्दू जाति की धर्मजन्य दयालुता ने उसे दासता के गर्त में ढकेल दिया था। उसका शूरवीरत्व उसके किसी काम न आया।[7]

संतों ने इस धर्म के पुनरुत्थान में बहुत बड़ा योगदान दिया। संतों की यह परम्परा प्राचीनकाल से चली आ रही है। वस्तुत: मानवता के उदयकाल से ही संतों का भी आविर्भाव हुआ।

हर्षवर्धन के समय में वैष्णव धर्म क्षीण होने लगा था। हर्षवर्धन स्वयं शैव था, तथा शिव के अतिरिक्त सूर्य की उपासना करता था। उसके काल में शिवोपासना का महत्त्व बढ़ने लगा था। इसका प्रभाव वैष्णव धर्म के मतावलम्बियों पर पड़ा। शैव-वैष्णव विवाद तभी से शुरू हो गया था।

ब्राह्मणवाद के बढ़ते प्रभाव से विभिन्न प्रकार के आडम्बर बढ़ने लगे थे। विभिन्न प्रकार के भ्रमपूर्ण सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार होने लगा था।

मध्यकाल आते-आते शैवों का नाथ सम्प्रदाय, सिद्धमत, योगमत, अवधूत मत इत्यादि विभिन्न विभाजन स्पष्ट हो गया था। कापालिक सिद्धियों को प्राप्त करने के लिए भैरव शक्ति की ओर आकृष्ट हुए। इन कापालिकों की सिद्धि साधना होड़ पर थी। इस होड़ ने हिन्दू धर्म की जड़ें हिलाकर रख दीं।

इस सिद्धि चक्रों में सिद्धि प्राप्त करने के लिए सुरापान, मानवबलि, पशुबलि, शव साधना आदि तो आवश्यक थे ही, अनेक भयानक कृत्य भी कापालिक लोग सिद्धियों को प्राप्त करने के लिए करते थे। इनमें पंच मकारी साधना का महत्त्व बढ़ रहा था, जिसमें मत्स, माँस, मदिरा, मैथुन आदि की प्रमुखता थी।[8]

भक्ति लीलामृत, पुरातन प्रबन्ध तथा मध्यकाली धर्म साधना में इसका स्पष्ट उल्लेख किया गया है।[9]

भैरवी चक्र द्वारा गुप्त यौन स्वातंत्र्य का प्रभाव बढ़ रहा था। भक्ति लीलामृत के अनुसार कौल, कापालिक, कालामुख, अवधूत आदि विचित्र वेश-विन्यास धारण कर समाज में घूम-घूम कर जनसाधारण को भयाक्रान्त कर रहे थे और अबाध सुख भोग की प्राप्ति में प्रयत्नशील रहा करते थे।

वामे रामा रमण कुशला, दक्षिणे पान पात्रं।
कौलो धर्मः परम् गहनो, योगिनामध्य गम्यः।

पिव खाद च वामलोचने यदततं वरगात्रि तन्नते।
नहि भीरु गतं निवर्तते समुदयामात्रम्दिंक्लेवरं॥

इसका दुष्प्रभाव लोक पर बहुत बुरा हुआ और कौलमार्ग परम्परा के अनुरूप लोक में एक कांचलिया पंथ का जन्म हुआ। इसमें गुप्त रूप से सामूहिक मैथुन एवं मदिरा सेवन का चलन कुछ जातियों में प्रचलित हो गया। [10]

इन सम्प्रदायों ने साधना के वास्तविक अर्थ को नकार कर अपनी-अपनी सुविधाओं के मान से साधना मार्ग को भ्रष्ट कर दिया। ये आचरण भ्रष्ट साधकगण धर्म के नाम पर एक बाह्याडम्बर का निर्माण कर हिन्दू धर्म की जड़ें कमजोर करने एवं उसे नष्ट-भ्रष्ट करने में निरन्तर लगे थे। [11]

हिन्दू धर्म को इस संकट काल में जिस संगठित धर्म से होड़ लेना पड़ी, वह था इस्लाम धर्म। मुस्लिम धर्म साधना निर्गुणोपासक होकर भी एकेश्वरवादी है, जो ब्रह्मवाद की सूक्ष्मता से भिन्न है।

भारतीय धर्म साधना और सामाजिक संगठन ने जहाँ अन्य अनेक विजेताओं को उनकी सामाजिक तथा धार्मिक मान्यताओं सहित आत्मसात कर लिया था। वहीं वे इस्लाम धर्म को अपने में घुलाने-मिलाने में समर्थ नहीं रहे। अपितु उसे अपना सक्षम प्रतिद्वन्द्वी भी बना लिया। वह तत्कालीन धार्मिक धर्म-साधना की अक्षमता का ज्वलन्त उदाहरण कहा जा सकता है।

ऐसे समय में यदि संतों का आविर्भाव न हुआ होता, तब भारतीय धर्म साधना एवं वास्तविक धर्म अत्यन्त दुरावस्था में पहुँचकर विलुप्त हो गया होता और हिन्दू धर्म सगुण-निर्गुण के विवाद में उलझा रह जाता।

सगुण भक्ति के बीजरूप का प्रारम्भ वैदिककाल से माना जा सकता है। इस दृष्टि से भक्तिमार्ग का मूलतत्त्व उत्तर भारत में वैदिक धर्म की पृष्ठभूमि में अंकुरित हुआ और उसका विकास उत्तर वैदिककाल में नारायण अथवा वासुदेव की उपासना के रूप में प्रचलित हुआ, जिसको सूरसैन (सात्वत) क्षत्रियों के वंशज दक्षिण में ले गए। दक्षिण में ईसा की पाँचवीं शताब्दी से नवीं शताब्दी के मध्य आलवार संतों ने सगुण भक्ति का व्यापक प्रचार-प्रसार किया, जिसके फलस्वरूप दसवीं शताब्दी से चौदहवीं-पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य आचार्य रामानुज (1037-1137) ने श्री सम्प्रदाय, मध्वाचार्य (1230-1318) ने ब्रह्म सम्प्रदाय, निम्बार्काचार्य (11 वीं शताब्दी) ने सनक सम्प्रदाय और आचार्य विष्णुस्वामी (11 वीं शताब्दी) ने रुद्र सम्प्रदाय का प्रवर्तन कर सगुण भक्ति को उत्तर भारत में प्रवाहित किया।[12]

इस सम्बन्ध में डॉ. हजारीप्रसाद जी ने कहा है कि दक्षिण से उत्तर भारत में भक्ति का आगमन हुआ, जो बिजली की चमक के समान इस विशाल देश में कोने-कोने तक फैल गया।[13]

इस प्रकार भक्ति-भागीरथी निर्गुण-सगुण धारा में प्रस्फुटित होकर सम्पूर्ण देश में प्रवाहित होने लगी। इसका श्रेय हम रामानन्द के लोकव्यापी व्यक्तित्व एवं उनके द्वादश शिष्यों कबीर, पीपा, सैन, रैदास, धना आदि के भक्ति आन्दोलन को दे सकते हैं। कबीर के एक पद के अनुसार-

भक्ति द्राविड़ ऊपजी, लाए रामानन्द।
परगट किया कबीर ने, सप्तद्वीप नव खण्ड॥[14]

सामाजिक परिस्थितियाँ

भारतीय इतिहास का मध्यकाल हम 13वीं शताब्दी से 19वीं शताब्दी (1850 वीं) तक मान सकते हैं। यह काल जितना राजनैतिक रूप से तथा धार्मिक स्थितियों के मान से भारतीय जनमानस को विखण्डित कर रहा था, उसी प्रकार सामाजिक रूप से भी भारत का समाज अत्यन्त आडम्बरों एवं बुराईयों में जकड़ा जा चुका था। 'धार्मिक पाखण्ड, कर्मकाण्ड, छूआछूत, जातिगत वर्गभेद, बाल विवाह, कन्या हत्या, नरबलि, पशुबलि, विधवा विवाह, नारी प्रताड़ना, परस्पर धार्मिक भेदभाव, विलासिता, पर्दा-प्रथा, अस्पृश्यता आदि की बेड़ियों एवं कुप्रथाओं में भारतीय समाज जकड़ा जा चुका था। पारिवारिक रिश्तों की मर्यादाएँ विखण्डित हो चुकी थी। धर्मान्तरण के आतंक को हिन्दू समाज झेलने को विवश था। आर्थिक विपन्नता इतनी बढ़ गई थी कि अधिकतर परिवारों को दो समय रूखा-सूखा भोजन तक उपलब्ध नहीं था। सम्पन्न कहे जाने वाले परिवारों को भी अच्छा भोजन उपलब्ध नहीं था। अच्छे वस्त्र धारण करना लगभग वर्जित था। तीन भाग, लोगों के पास तो तन ढकने तक के वस्त्र नहीं थे।'

समाज धार्मिक आडम्बरों में इतना जकड़ा जा चुका था कि, वह न जी पाता था न मर पाता था। जनमानस अशान्त तथा असुरक्षित था। उसका आत्मविश्वास टूट चुका था।

दास प्रथा, नारी विक्रय, बच्चों का अपहरण तथा विक्रय बलात्कार, व्यभिचार सामान्य घटना हो चुकी थी।[15]

'ऐसे समय में संत कहे जाने वाले क्रान्ति के पोषक महात्माओं ने सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक उच्छृंखलता तथा अव्यवस्था के विरूद्ध क्रान्ति का बिगुल बजा दिया।'[16]

ये संत प्राय: स्वतंत्र विचारक थे और प्राचीन रूढ़ियों, आडम्बरों और पाखण्डों को समाप्त करने के लिए एक मिशन भावना से काम करते थे।

संत और भक्त चाहे उत्तर के हों अथवा दक्षिण के, पूर्व के हों या पश्चिम के, उनका लोक चिन्तन किसी प्रान्त, भाषा, काल, जाति अथवा धर्म-सम्प्रदाय तक सीमित नहीं रहा। वे 'सर्वजन हिताय एवं सर्वधर्म हिताय' अपना उपदेश देते थे। 'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामय:' उनका महनीय भाव था। भगवान आदि शंकराचार्य जी ने अपने अन्नपूर्णा स्त्रोत में कहा है—

माता च पार्वती, पिता देवो महेश्वरा
बांधव शिवभक्तश्च, स्वदेशो भुवनत्रयम॥

सारा भुवन इन संत-भक्तों का स्वदेश था। 'यह एक सुखद संयोग था कि जयदेव के संगीत से बंगाल में जिस मधुरा भक्ति का शंखनाद हुआ, उसको आधार बनाकर विद्यापति ने अपनी पदावलियों में माधुर्य भाव का प्रतिपादन किया। दक्षिण में निम्बार्काचार्य, कर्नाटक में शरणों, बंगाल एवं उत्तर-पूर्व में महाप्रभु चैतन्य एवं उनके गौड़ीय सम्प्रदाय, कश्मीर में ललद्यद एवं परमानन्द, असम में श्रीमन्त शंकरदेव एवं माधवदेव, महाराष्ट्र में नामदेव, ज्ञानदेव, तुकाराम आदि वारकरी संत, गुजरात में नृसिंह मेहता, पंजाब में गुरु नानकदेव, उत्तर भारत में रामानन्द एवं उनके अष्ठछाप के कवियों, राजस्थान में मीरा, दादू दयाल और उनके शिष्यों, निरंजनी सम्प्रदाय, जम्भोजी, जनसाथी संतों स्वामी रामचरण एवं उनके द्वारा प्रवर्तित रामस्नेही सम्प्रदाय चरणदासी सम्प्रदाय, राधावल्लभ सम्प्रदाय, हरिदासी सम्प्रदाय, मालवा की मीरा चन्द्रसखी, नवनिधि कुवैर, सूफी गुमनामी संत, सूफी अफजल, मिक्के साहब, दीन दरवेश, संत गुप्तानन्द, संत केश्वानन्द, संत सिंगाजी, सूफी सम्प्रदाय के अनेक संतों, भक्तों ने भारतीय जनमानस को चेतमान करने, उसका आत्मबल लौटाने, समाज को धार्मिक एवं सामाजिक आडम्बरों से मुक्त कर सहज जीवन जीने का आन्दोलन चलाकर सहजता प्रदान करने का सद्प्रयत्न किया।'[17]

इन संत भक्तों ने स्वयं का जीवन सहज एवं सदाचार युक्त बनाया। आदर्श बनकर वे लोक में गए और साधारण ढंग से लोकमय होकर उन्होंने भारतीय लोक को निकट से समझा-परखा और फिर सहज भाषा एवं शैली में लोक के समस्त सत्संग के माध्यम से अपने विचार रखे।

इन संतों-भक्तों के प्रयास से भारतीय जनमानस का टूटा हुआ आत्मविश्वास लौट आया। वे सगुण-निर्गुण भ्रम से मुक्त हो गए। एक आशा का संचार जनमानस में निखर कर आया।

इन संत भक्तों ने मानव-मूल्यों की पुनर्स्थापना करने एवं सामाजिक एवं पारिवारिक मर्यादाओं की रक्षा करने में गाँव-गाँव, घर-घर तथा द्वार-द्वार जाकर अपना संदेश दिया।

सन्दर्भ :

1. कबीर ग्रन्थावली, श्यामसुन्दर दास, प्रस्तावना भाग, पृ.-9.
2. (अ) संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-29-30.
   (ब) मध्यकालीन धर्म साधना, डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ.-10.
   (स) कबीर की विचारधारा, डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत,
   (द) इलियट एण्ड डाउसन वॉल्युम-थर्ड, पृ.-397
   (क) भक्तिकाल की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, डॉ. गुलाबराय.
   (ख) कबीर ग्रन्थावली, डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ.-130-31.
3. (अ) सल्तनत ऑफ देहली, एम.एल. श्रीवास्तव, पृ.-486 तथा 252.
   (ब) सिक्ख रिलीजन, मैकलिफ़, पृ.-44, इण्डियन इस्लाम टिट्स पृ.-11-12
   (स) संत साहित्य, डॉ. सुदर्शन सिंह मजीठिया.
   (द) संत पीपा एवं भक्ति आन्दोलन, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-30.
4. (अ) मध्यकालीन धर्म साधना, डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ.-93.
   (ब) कबीर साहित्य की परख एवं संत काव्य, डॉ. परशुराम चतुर्वेदी, पृ.-86.
   (स) मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-31.
5. संत पीपा एवं भक्ति आन्दोलन, पृ.-32.
6. (अ) वही, पृ.-32.
   (ब) मध्यकालीन धर्म साधना, डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ.-99 तथा 221.
   (स) ब्रह्मवैवर्त पुराण और स्कन्द पुराण का काल आते-आते धर्म अनेक पक्षों में विखण्डित हो चुका था तथा जातियों की संख्या निरन्तर बढ़ती चली जा रही थी.
7. कबीर ग्रन्थावली, श्यामसुन्दर दास, पृ.-9.
8. (अ) संत पीपा एवं भक्ति आन्दोलन, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-33.
   (ब) मध्यकालीन धर्म साधना, डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ.-50.
   (स) कबीर की विचारधारा, डॉ. त्रिगुणायत, पृ.-129-30.
9. भक्ति लीलामृत एवं पुरातन प्रबंध अध्याय-5, पृ.-300-02, कौल निर्णय-डॉ. बागची, भूमिका, पृ.-35.
10. कुण्डा पंथ एवं काँचली पंथ, लेख-डॉ. पूरन सहगल/ शोध संवेत, कावेरी शोध संस्थान, डॉ. श्यामसुन्दर निगम, पृ.-33 से 40
11. संत पीपा एवं भक्ति आन्दोलन, पृ.-34.
12. भक्तिकाल में मानव मूल्य : आदान-प्रदान, श्री सत्यनारायण समदानी का लेख, मीरायन, मार्च-2013, पृ.-7.
13. डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, मध्यकालीन धर्म साधना.
14. कबीर वाणी.
15. संत पीपा एवं भक्ति आन्दोलन, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-36-37.
16. संत कबीर, डॉ. रामकुमार वर्मा, पृ.-192 तथा भक्तमाल, नवलकिशोर प्रेस-लखनऊ, पृ.-300, 329-31.
17. मालवा के संत-भक्त, डॉ. पूरन सहगल एवं सत्यनारायण समदानी का लेख, भक्तिकाल में मानव मूल्य : मीरायन, मार्च-2013, पृ.-8.

अध्याय–2

रामानन्द एवं उनके द्वादश शिष्य

भक्तमालों एवं अन्य संत भक्तों के पदों में संत सैन भक्त

स्वामी रामानन्दजी दक्षिण से भक्ति लाए और उत्तर में उसे प्रचारित किया। 'दक्खन भक्ति ऊपजी, लाए रामानन्द' कहकर इस सत्य की पुष्टि की जाती है। इसका यह अर्थ नहीं है कि उत्तर भारत भक्तिविहीन था। उत्तर भारत में भक्ति का खूब प्रचार था। नारद से लेकर समस्त वैदिक और पौराणिक आख्यानों में भक्ति का विवरण मिलता है।

मध्यकाल आते–आते भक्ति भटकने लगी थी। उस पर ज्ञान का प्रभाव थोपा जाने लगा था। उसकी सहजता एवं माधुर्य समाप्तप्राय हो गया था। उसमें भटकाव और जटिलता आ गई थी।

स्वामी रामानन्दजी ने सहज भाव वाली भक्ति का प्रचार भारत में किया। समाज में व्याप्त अनेक आडम्बर सामान्य जन को पथ भ्रष्ट कर रहे थे। समाज अनेक कुप्रथाओं से त्रस्त हो चुका था। ऐसे समय में स्वामी रामानन्दजी ने सामाजिक पुनरुत्थान का शंख फूँककर सामाजिक क्रान्ति का उद्घोष किया। अपने उद्देश्य की सफलता के लिए उन्होंने योजनाबद्ध तरीके से अपने शिष्यों को आदेशित किया। उन्हें राम नाम का तारक मंत्र देकर सैनिक की भाँति तैयार कर संयम–नियम का पाठ पढ़ाकर समाज कल्याण के लिए चतुर्दिक प्रेषित कर दिया।

अपने समस्त शिष्यों को उन्होंने स्वविवेक से तथा पारख ज्ञान से सत्संग के माध्यम से लोक में घुल–मिलकर, लोक का अंग होकर सत्यमार्ग दिखाने का उपदेश दिया। यद्यपि उनके प्रमुख शिष्य बारह कहे गए हैं, किन्तु उनके शिष्य–प्रशिष्य भी बहुत हुए, जिन्होंने स्वामीजी के मत को सफल बनाने का प्रयत्न किया। उनके बारह शिष्यों का परिचय इस प्रकार है–

श्री रामानन्दाचार्यजी एवं द्वादश महाभागवतों का अवतार

श्री रामोपासना परायण अनादि वैदिक श्री सम्प्रदाय में मध्यवर्ती आचार्य के रूप में भगवान् श्रीराम ही हिन्दू धर्मोद्धारक जगद्गुरू श्री रामानन्दाचार्य के रूप में अपने परमप्रिय द्वादश महाभागवतों के साथ अवतरित हुए यथा—

(श्री) सीतानाथसमारम्भां (श्री) रामानन्दार्यमध्यमाम्।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे (श्री) गुरूपरम्पराम्॥

किसी समय जगद्गुरू की गुरुतर उपाधि से विभूषित भारत देश का मध्यकालिक इतिहास तात्कालिक जनता की भ्रान्त मान्यताओं के कारण दुर्दिनता को प्राप्त हुआ। उस समय ऊँच-नीच की भावनाएँ इतनी गहरी हो गयी थीं कि अधिकांश लोगों के बीच से सद्गुण-सदाचार पलायित हो चुके थे, जिसके परिणामस्वरूप विदेशी आक्रान्ताओं ने हिन्दू जनता एवं राजाओं की पारस्परिक फूट तथा संघाभाव का लाभ लेते हुए, इस सनातन धर्म तथा संस्कृति का समूलोच्छेदन करने का दुष्प्रयास किया। इन लोगों के द्वारा सनातन धर्म के ध्वजा-स्वरूप विविध मन्दिरों को विध्वंसित किया गया।

ऐसी विषम परिस्थिति में भक्तों की करुण पुकार से द्रवित हो घनघोर अंधकारमय वातावरण में त्रिवेणी संगम के पावन तट पर स्थित नगर प्रयागराज की शरण में निवास करने वाले मनु-शतरूपा के समान भक्तिभाव से पूरित अन्तःकरण वाले ब्राह्मण दम्पत्ति श्री पुण्यसदन एवं श्री सुशीला देवीजी के पुण्य पुञ्ज स्वरूप उनके पुण्य सदन में श्रीरामजी माघ कृष्ण सप्तमी विक्रम संवत् 1356 ई. में सूर्य के समान श्री रामानन्द के रूप में अवतरित हुए।

अध्ययनादि के कार्य को पूरा कर आपने पंचगंगा घाट स्थित श्रीमठ के आचार्य श्री वशिष्ठावतार श्री राघवानन्दाचार्य से विरक्त-दीक्षा ग्रहण कर श्री बोधायनाचार्य प्रभृति पूर्वाचार्यों के द्वारा प्रतिष्ठित श्री रामभक्ति एवं षडक्षर श्रीराम मंत्र की परम्परा का विशेष रूप से संवर्धन किया। जैसा कि श्री भक्तमालकार श्री नाभागोस्वामीजी लिखते हैं, यथा-

अनंतानंद कबीर सुरवा (सुरसुरा) पद्मावति नरहरि।
पीपा भावानंद रैदास धना सैन सुरसुर की घरहरि॥

औरौ सिष्य-प्रसिष्य एक ते एक उजागर।
बिस्वमंगल आधार सर्वानंद दसधा आगर॥
बहुत काल बपु धारि कै प्रनत जनन कौं पार दियो।
(श्री) रामानंद रघुनाथ ज्यों दुतिय सेतु जग तरन कियो॥

श्री रामानन्दाचार्य ने अपने वैष्णवमताब्जभास्कर में बताया है कि जगत्प्रभु के पादपद्मों में समर्थ असमर्थ सभी प्रपत्ति के अधिकारी हैं, इसमें न तो उत्तम कुल की, न पराक्रक की, न कालविशेष की और न शुद्धता की ही अपेक्षा है–

सर्वे प्रपत्तेरधिकारिणः सदा शक्ता अशक्ता अपि नित्यरङ्गिणः।
अपेक्ष्यते तत्र कुलं बलं च नो न चापि कालो न हि शुद्धता च॥

इस प्रकार आपने भगवत्पाद पद्मों में शरणापन्न होने के लिए समस्त जीवों को अर्हता प्रदान की।

भगवान् श्रीराम ने जैसे अपने अवतार काल में निषादराज गुह, केवट, शबरी, गीध एवं वानरों को गले से लगाया, उसी प्रकार उन्हीं के अवतार श्री रामानन्दजी ने घूम-घूम कर उपर्युक्त आदर्शों को कथा में नहीं, बल्कि यथार्थ में पल्लवित, पुष्पित एवं फलयुक्त किया। इसके लिए द्वादश महाभागवतों ने भी भगवदीय इच्छा का अनुसरण करने के लिए विभिन्न नाम और रूपों में जन्म लेकर श्री रामानन्दजी का शिष्यत्व ग्रहण किया और श्री रामानन्दाचार्य के मत 'प्रपत्ति' का प्रचार-प्रसार किया। भागवत धर्मवेत्ता द्वादश महाभागवतों का वर्णन श्रीमद्भागवत महापुराण (6/3/20-21) में श्री यमराज जी ने अपने दूतों से इस प्रकार किया है, यथा–

स्वयम्भूर्नारदः शम्भुः कुमारः कपिलो मनुः।
प्रह्लादो जनको भीष्मो बलिर्वैयासकिर्वयम्॥
द्वादशैते विजानीमो धर्मं भागवतं भटाः।
गुह्यं विशुद्धं दुर्बोधं यं ज्ञात्वामृतमश्नुते॥

अर्थात् भगवान् के द्वारा निर्मित भागवत धर्म परम शुद्ध और अत्यन्त गोपनीय है। उसे जानना बहुत ही कठिन है। जो उसे जान लेता है, वह भगवत्स्वरूप को प्राप्त हो जाता है। दूतों! भागवत धर्म का रहस्य हम बारह व्यक्ति ही जानते हैं- ब्रह्माजी, देवर्षि नारद, भगवान शंकर, सनत्कुमार, कपिलदेव, स्वायम्भुव मनु, प्रह्लाद, जनक, भीष्मपितामह, बलि, शुकदेवजी और मैं (धर्मराज)।

भागवत धर्मवेत्ता इन्हीं ब्रह्मादि द्वादश भागवतों ने भी भगवान् की आज्ञा को सानन्द शिरोधार्य कर विविध देशकाल एवं जातियों में अवतार लिया और फिर रामानन्दाचार्य से दीक्षा ग्रहण कर भगवद्धर्म का प्रचार किया। इन द्वादश महाभागवतों ने किस-किस नाम-रूम में अवतार लिया, इसका यहाँ संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है

श्री अनन्तानन्दाचार्य

आयुष्मन्कृत्तिकायुक्तपूर्णिमायां धने शनौ।
स्वयम्भूः कार्तिकस्याद्धाऽनन्तान्दो भविष्यति॥ (अगस्त्य संहिता)

श्री ब्रह्माजी ही योगनिष्ठ सदाचार परायण श्री अनन्तानन्दाचार्य जगदाचार्य श्री रामानन्दाचार्य जी के शिष्य हुए। आपका जन्म कृत्तिका नक्षत्रयुक्त कार्तिक पूर्णिमा शनिवार के दिन धनु लग्न में अयोध्या के निकट महेशपुर ग्राम निवासी श्री विश्वनाथ मणि त्रिपाठी के घर में विक्रम संवत् 1363 में हुआ। आपके शिष्य-प्रशिष्यों के द्वारा खूब भक्ति का प्रचार हुआ, जिसका विशद वर्णन भक्तमाल में उपलब्ध है।

श्री सुरसुरानन्दजी

जातः सुरसुरानन्दो नारदो मुनिसत्तमः।
वैशाखासितपक्षस्य नवम्यां स वृषे गुरौ॥

द्वितीय महाभागवत श्री नारद मुनि भी श्री सुरसुरानन्द के रूप में लखनऊ के निकट परखम ग्राम निवासी श्री सुरेश्वरजी शर्मा की परमभक्तिमती श्रीदेवीजी के गर्भ वैशाख कृष्ण नवमी गुरुवार के दिन वृष लग्न में अवतरित हुए। आप बड़े नामानुरागी थे। भगवत्प्रसाद किस प्रकार ग्रहण करना चाहिए, इस बारे में भक्तमालकार ने श्री सुरसुरानन्दजी की बात इस प्रकार लिखी है-

महिमा महा प्रसाद की सुरसुरानन्द सांची करी।

आपके प्रश्नों के उत्तर स्वरूप 'श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर' नामक ग्रन्थ रत्न का आविर्भाव हुआ, जो वैष्णवों का हृदयहार है।

श्री सुखानन्दजी

तस्यामेव तुलालग्ने तादृशीन्दुरिवोग्रधीः।
शम्भुरेव सुखानन्दः पूर्वाचार्यार्थनिष्ठकः॥

ऐसे ही भगवान् शंकर भी उज्जैन नगर के निकट किरीटपुर ग्राम के रहने वाले श्री त्रिपुरभट्टजी की गृहिणी श्री गोदावरीबाईजी के गर्भ से वैशाख शुक्ल नवमी को शतभिषा नक्षत्र शुक्रवार के दिन तुला लग्न में श्री सुखानन्द के रूप में अवतरित हुए। आप जन्मजात योगसिद्ध थे, आपने आचार्य जी से दीक्षा ग्रहण कर भक्ति को प्रचारित किया। इसके साथ आपने सुखसागर जैसे दिव्य ग्रन्थ का भी सृजन किया।

श्री नरहरियानन्दजी

व्यतीपातेऽनुराधाभे शुक्रे मेषे गुणाकरे।
वैशाखकृष्णपक्षस्य तृतीयां महामतिः॥
कुमारो नरहरियानन्दो जातधीर उदारधीः।
वर्णाश्रमकर्मनिष्ठः शुभकर्मरतः सदा॥ (अगस्त्यसंहिता, उत्तरार्ध, अ.-32)

श्री नरहरियानन्दजी श्री सनत्कुमार जी के अवतार हैं। वैशाख मास की कृष्ण तृतीया, व्यतिपात योग, अनुराधा नक्षत्र, मेष लग्न, शुक्रवार को श्रीनरहरियानन्दजी अवतरित हुए। इनके पिता का नाम श्री महेश्वर मिश्रजी एवं माता का नाम श्रीमती अम्बिकादेवी था। आपको श्री रामानन्दजी से दीक्षा मिली, बाद के संस्कार श्री अनन्तानन्दाचार्य ने किये। श्री नरहरियानन्दाचार्य ने अपनी दिव्य शक्तियों से संसार में भक्ति का खूब प्रचार किया। आपके जीवन-चरित्र का वर्णन भक्तमाल एवं द्वादश महाभागवत में विस्तारपूर्वक किया गया है।

श्री योगानन्द जी

वैशाखकृष्णसप्तम्यां मूले परिघसंयुते।
बुधे कर्कऽथ कपिलो योगानन्दो जनिष्यति॥

श्री कपिल जी का अवतार श्री योगानन्दजी के रूप में वैशाख कृष्णसप्तमी, परिघ योगयुक्त मूलनक्षत्रीय कर्क लग्न में बुधवार के दिन गुजरात प्रान्तीय सिद्धपुर क्षेत्र के निवासी मणिशंकर शर्मा के घर विक्रम संवत् 1456 में हुआ। आपके बारे में लिखा है-

योगनिष्ठो महायोगी सत्सेवितपदाम्बुजः।
सदा वैष्णवधर्माणामुपदेशपरायणः॥

आप महान् योगी थे और हमेशा योग में निरत रहते थे। सज्जन लोग आपके चरणों की पूजा किया करते थे। आपने हमेशा वैष्णव धर्म का उपदेश करते हुए वैष्णवता का खूब प्रचार किया। भक्तमालकार भी कहते हैं-

योग सुपथ उद्धार हित योगानन्द कपिल भये॥

श्री पीपा जी

मनुः पीपाभिधो जात उत्तराफाल्गुनी युजी।
पूर्णिमायां ध्रुवे चैत्र्यां धनवारे बुधस्य च॥

श्री मनुजी महाराज कलियुग में धर्म प्रचार के लिए राजस्थान प्रान्त के गांगरोनगढ़ के राजघराने में विक्रम संवत् 1416 की चैत्रीय पूर्णिमा उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र, ध्रुवसंज्ञक योग में बुधवार के दिन श्री पीपाजी के रूप में अवतरित हुए। श्री नाभाजी आपके बारे में कहते हैं–

श्री रामानन्द पद पाई भयो अति भक्ति की सींवा॥

श्री कबीरदास जी

नक्षत्रे शशिदैवत्ये चैत्रकृष्णाष्टमीतिथौ।
प्रह्लादोऽपि कबीरस्तु कुजे सिंहे च शोभने॥
जातो वेदान्तसंनिष्ठः क्षेत्रवासरतः सदा।

भक्त शिरोमणि श्री प्रह्लादजी के अवतार श्री कबीरदासजी के रूप में चैत्र कृष्ण अष्टमी, मंगलवार शोभन योग सिंह लग्न में हुआ। आपने अपनी वेदान्त निष्ठा के साथ विशेषरूप से काशी क्षेत्र निवासी होकर बहुत लोगों का सद्धर्म परायण किया।

श्री भावानन्दजी

भावानन्दोऽ जनको मूले परिघसंयुते।
वैशाखकृष्णषष्ठयां तु कर्के चन्द्र जनिष्यति।
रामसेवापरो नित्यं स महात्मा महामतिः॥

महात्मा श्री भावानन्दजी को जनकजी का अवतार कहा गया है। आपके पूर्वज मिथिला निवासी थे, जो कालान्तर में पण्ढरपुर के निकट आलिन्दी ग्राम निवासी हो गये। वहीं पर वैशाख कृष्ण षष्ठी, मूल नक्षत्र, परिघयोग, कर्क लग्न सोमवार के दिन श्री रघुनाथ मिश्र के घर आपका जन्म हुआ। आप सदा रामसेवा परायण रहे।

श्री सैन जी

भीष्मः सैनाभिधो नाम तुलायां रविवासरे।
द्वादश्यां माधवे कृष्णे पूर्वाभाद्रपदे शुभे।
तदीयाराधने सक्तो ब्रह्मयोगे जनिष्यति॥

श्री भीष्मजी का अवतार बघेलखण्ड मध्यप्रदेश के बाँधवगढ़ में सैनभक्त के रूप में हुआ। आपका जन्म वैशाख कृष्ण द्वादशी, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र, तुला लग्न शुभ योग रविवार को हुआ। आपने स्वामीजी की आज्ञा से भक्तों की सेवा को प्रधानता दी।

श्री धन्ना जी

वैशाखस्यासिताष्टम्यां वृश्चिके शनिवासरे।
धनाभिधो बलिः साक्षात्पूर्वाषाढ़युते शिवे।
वरो भक्तिमतां जातस्तदीयाराधने रतः॥

महाभागवत श्री बलिजी महाराज साक्षात् धन्नाजाट के रूप में वैशाख कृष्ण अष्टमी, पू.षा. नक्षत्र, शिवयोग, वृश्चिक लग्न, शनिवार के दिन अवतरित हुए। आप भक्ति-सेवा परायण हुए। आपका जन्म राजस्थान के टोंक इलाके के धुवन गाँव में हुआ था।

श्री गालवानन्दजी

वासवो गालवानन्दो जात एकादशीतिथौ।
चैत्रे वैयासकिश्चन्द्रे कृष्णे लग्ने वृषे शुभे॥
सर्वदा ज्ञाननिष्ठोऽयमुपदेशपरायणः।
वेदवेदान्तनिरतो महायोगी महामतिः॥

भगवत्स्वरूप श्री व्यासनन्दन श्री शुकदेवजी श्री गालवानन्द के रूप में सिन्धु प्रान्तीय पवाया नामक ग्राम में श्री साम्बमूर्ति शर्मा के घर में चैत्र कृष्ण एकादशी वृष लग्न, शुभ योग में सोमवार के दिन विक्रम संवत् 1375 को अवतरित हुए। आप परिपक्व ज्ञान की अवस्था से युक्त वेदवेदान्त निरत भगवद्रतियुक्त महान् योगी थे।

श्री रमादास (रैदास)

चैत्रशुक्लद्वितीयायां शुक्रे मेषेऽथ हर्षणे।
यम एव रमादासस्त्वाष्ट्रे प्रादुर्भविष्यति॥

काशीवासी रघुनायक के घर में श्री यमराज जी ही रमादास (रैदास) के रूप में चैत्र शुक्ल द्वितीया, मेष लग्न, हर्षण योग, शुक्रवार के दिन अवतरित हुए।

इस प्रकार श्री रामावतार श्री रामानन्दाचार्य के समय में उपर्युक्त महाभागवतों ने विभिन्न नामों से अवतरित होकर भगवान् की भक्ति का प्रचार किया, जिनका विस्तृत चरित्र संस्कृत एवं हिन्दी साहित्य में उपलब्ध है। संस्कृत एवं हिन्दी गद्य-पद्यात्मक महाकाव्य आचार्यश्री के वैशिष्ट्य का प्रमाण है। गद्य में श्री हरिकृष्ण शास्त्री कृत 'श्री आचार्य विजय' एवं पद्य में स्वामी भगवताचार्य कृत 'श्री रामानन्द दिग्विजय' आदि मुख्य हैं। आचार्य चरित्र के साथ-साथ द्वादश महाभागवतावतारों का उज्ज्वल चरित्र प्रकाशित होता है।[1]

रामानन्दजी ने अपने इन शिष्यों को भारत में चतुर्दिक भेजकर मानव कल्याण का संदेश दिलवाया- 'आपके शिष्य-प्रशिष्य भागवत वेशधारी वैष्णव धूप प्रकाश के सरीखा चारों धामों में स्थान-स्थान में भर गए एवं महात्मा संत समूह कमलों के सम विकासमान हुए।'

(श्री भक्तमाल नाभाजी, पृ.-291)

इसी सन्दर्भ में यह कवित्त दृष्टव्य है-

पूरब भयो रैदास कबीरा, सब काहूं को दीनी धीरा।
दक्खिन भक्ति राम दे राखी, जिसकी निस दिन दीजै साखी॥
पश्चिम पीपा परगट कीनी, भक्ति बताई सबन को दीनी।
उत्तर धना जाट अधिकारी, पायो परचौ भगति पसारी।
लघु बिट्ठल भयो अंतरवेदा, सब सू कह्यो भक्ति को भेदा।
बांधवगढ़ भयो सैना नाऊ, सो भागवत को भयो सहाऊ॥ [2]

इस प्रकार अपने द्वादश शिष्यों को रामानन्दजी ने भक्ति प्रचार हेतु पूरे देश में भेज दिया।

इन बारह शिष्यों में 'भये एक ते एक उजागर' किन्तु संत सैन भगत का महत्त्व इन बारह संतों में विशेष रूप से माना जाता है। हरि स्वयं सैन भक्त के सहायक बने और उन्हीं की प्रेरणा से वे भक्तिमार्ग की ओर प्रेरित हुए। भक्तमाल में नाभाजी ने कहा है-

विदित बात जग जानिये, हरि भये सहायक 'सैन के॥
प्रभु दास के काज रूप नापित कौ कीनो।
छिप्र छुड़हरी गही पानी दर्पन तहं लीनो॥
पतादृस ह्वै तिहिं काल भूप के तेल लगायौ।
उलटि राव भयौ शिष्य प्रगट परचौ जब पायो॥
स्याम रहत सनमुख सदा, ज्यौं वच्छा हित धेन के।
विदित वात जग जानियै, हरि भये सहायक सैन के॥[3] (63/151)

अन्य भक्तों, संतों ने भी संत सैन भक्त के विषय में अपने विचार व्यक्त किए हैं। संत वाणी कल्याण अंक -एक, वर्ष 1955, पृ.-193 पर संत सैन के विषय में संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है-

सैना नाई- एक

(अस्तित्व काल अनुमानत: पाँच-छ: सौ साल पूर्व, स्थान : बाँधवगढ़-बघेलखण्ड के राज नाई)

हम प्रतिवार बड़ी हजामत बनाते हैं, विवेक रूपी दर्पण दिखाते हैं और वैराग्य की कैंची चलाते हैं। सिर पर शाँति का उदक छिड़कते और अहंकार की चुटिया घुमाकर बाँधते हैं। भावार्थों की बगल साफ करते हैं और काम-क्रोध के नख काटते हैं। चारों वर्णों की सेवा करते हैं और निश्चिन्त रहते हैं।

धूप दीप घ्रित साजि आरती, जाऊँ वारने कमलापती॥
मंगला हरि मंगला। नित मंगलु राजा राम राइ को॥
उत्तम दिअरा निरमल बाती। तुही निरंजनु कमलापती॥
राम भगति रामानंदु जानै। पूरन परमानंदु बखाने॥
मदन मूरति मैं-तारि गोविंदे। सैन भणे भजु परमानंदै॥

टीप- (1) संतवाणी अंक में संत सैनजी के जिस पद का भाष्य दिया गया है, वह संग्रह के पद क्र.-33 पर अंकित है।

(2) श्री गुरुग्रन्थ साहिब में संत सैनजी का पद भी निश्चित रूप से वाचिक परम्परा से ही संग्रहीत किया गया होगा। इससे यह तो ज्ञात हो जाता है कि संत सैनजी की वाणी लोक कण्ठ पर विराजित रही और उसे किसी ने जिम्मेदारीपूर्वक संकलित नहीं किया। यदि किया, तब वह बस्तों में दबी रह गई। इस पद पर पंजाबी भाषा का प्रभाव स्पष्ट है। वस्तुत: सैनजी पंजाब में पैदा हुए थे। फिर युवा अवस्था में बाँधवगढ़ आ गए। इसके पश्चात् उन्होंने पूरे देश का भ्रमण किया। उनकी बोली-भाषा में अनेक भाषाओं के शब्दों का समावेश होता रहा। मराठी अभंग 41-42 इसी संग्रह में देखें। [4]

दो

सैना नाई थे। ये किसी राजा के आश्रित थे, उनकी रोज दाढ़ी बनाया करते थे। भगवन्नाम लिया करते थे। एक दिन भगवान ने एक लीला रची। सैना जब दाढ़ी बना रहा था और राजा अपना मुख दर्पण में देख रहे थे, तो दर्पण में शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी श्री विट्ठल उन्हें दिखायी देने लगे। सैना नाई अपना काम कर रहा था और मुख से नाम भी जप रहा है। राजा दर्पण का यह चमत्कार देखकर हैरान थे कि यह क्या बात है। दर्पण को उन्होंने नीचे रक्खा। पानी की कटोरी जो सामने थे, उस पर दृष्टि पड़ी। उसमें भी सकल पाप-ताप-संताप हारी श्रीहरि स्थिर खड़े दिख पड़े। राजा से अब न रहा गया, उन्होंने नाई से पूछा- 'यह क्या बात है?' सैना ने उत्तर दिया, मैं पामर क्या जानूँ! यह श्री रुक्मिणीवल्लभ की ही कोई लीला होगी। इस विचित्र घटना से राजा को अपने ऐश्वर्य और भोगविलास से पूर्ण वैराग्य हो गया और वे श्री विट्ठल के अनन्य भक्त हो गये। जिस सैना नाई के सत्संग से राजा को यह उपरति और भक्ति प्राप्त हुई, वे कोई असाधारण भक्त

ही रहे होंगे। ये ज्ञानेश्वर महाराज के समकालीन और उन्हीं के शिष्य थे। इन्होंने अपने अभंगों में यह बताया है कि मेरे घर में यह उपासना परम्परा से चली आयी है और मुझे अपने पिता से यह निधि मिली। ज्ञानेश्वर महाराज के समाधि लेने के पश्चात् और कई वर्ष ये संसार में रहे। ज्ञानेश्वर महाराज की समाधि पर इन्होंने कई अभंग रचे हैं।[5] इन्होंने यह कहकर अपना परिचय दिया है कि नाई के वंश में ऋषिकेश ने मुझे जन्म दिया है और अपनी जातिवालों को उपदेश दिया है कि 'जो लोग नाई का वंश कहलाते हैं, उन्हें चाहिए कि स्वधर्म का पालन करें। शास्त्रों ने जो नियम बना दिया है उसे छोड़कर कुछ करना अनाचार है।' सैना कहता है– 'प्रभु की यह आज्ञा है कि सचाई से स्वधर्म का पालन करो।... दिन के दो पहर अपना धंधा करो और फिर स्नान करके नारायण नाम जपो। फिर छुरे–उस्तरे को मत छुओ।... संतों और शास्त्रों की आज्ञा का पालन करो और श्री विट्ठल की शरण लो। इससे भगवान तुम्हारी रक्षा करेंगे।' हजामत पर उनके दो आध्यात्मिक अभंग भी है, देखें–

आम्ही बारीक करूँ हजामत बारीको।।
विवेक दर्पण आयना दावूँ। वैराग्य चिमटा हालवूँ।।
उदक शांति दोई धोळूँ। अहंकारा ची शैडी पिळूँ।।
भावनार्थाच्या बगला झांडू। काम क्रोध नखें काढूँ।।
चौवर्ण देऊंनि हात। सैना राहिला निवांत।।[7] (टीप : मराठी अभंग, 41–42)

संत सैन भक्त सम्बन्धी परचाइयों, उनके जीवनवृत्त का वर्णन अत्यन्त विस्तार एवं आदर के साथ गुरुमुखी वाली अनन्तदास एवं मालवी की परचई में सुरतराम ने किया है। अनन्तदास की परची का मालवी अनुवाद धरमदास ने किया है।[8]

संत साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान पण्डित परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार संत सैन भक्त संत ज्ञानदेव के समकालीन होकर उनके सत्संग मण्डल में शामिल रहे। वे वारकरी सम्प्रदाय में दीक्षित संत थे तथा महाराष्ट्र के बीदर राजा के राजखवास थे।[9] उन्होंने पंठरीनाथ को अपना आराध्य बनाया। उनके अभंग मराठी में पाए जाते हैं। इन मराठी अभंगों का अनुवाद स्व. श्री पाण्डुरंग लोहोकरे ने किया है।[10]

डॉ. शैलेन्द्रकुमार शर्मा, उज्जैन विश्वविद्यालय के संग्रह में भक्त सैनजी के मराठी मूल अभंग एवं उनका अनुवाद उपलब्ध है, जिन्हें उनके सौजन्य से इस ग्रन्थ के परिशिष्ट में संकलित किया गया है।

संत सैन भक्त के अन्त:साक्ष्य एवं भक्तमालों तथा अन्य संतों के प्रमाण उन्हें ज्ञानदेव का न तो शिष्य सिद्ध करते हैं और न ही उन्हें वारकरी सम्प्रदाय में दीक्षित होने का कोई प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

संत सैनजी ने बाँधवगढ़ में बाँधवगढ़ राज की राजसेवा में रहते हुए भक्ति का मार्ग अपनाया। और जब उन्हें स्वामी रामानन्दजी का आशीर्वाद प्राप्त हो गया, तब उन्होंने राज चाकरी त्याग दी और सद्‌गुरु साहिब की चाकरी और शिक्षा की चाकरी प्रारम्भ कर दी।

अब नी जाऊँ चाकरी, फैंक्या राछ अर पीछ।
सैन भगत चाकर हुओ, सद्‌गुरु साहिब सीछ॥

- इसी संग्रह का वाणी संग्रह, (लोकवाणी) साखी-9

तथा-

करी चाकरी राज की, जजमानी घर-दुवार।
सैना चाकर राम को, सतगुरु तारण हार॥

- इसी संग्रह की लोकवाणी, साखी-3

सद्‌गुरु के विषय में उन्होंने स्पष्ट कर दिया है-

रामानन्द पूरा गुरु, दियो परख को बोध।
सैन भगत हिरदै हुओ, साहिब रो परबोध॥

- उपरोक्त, साखी क्र.-6

इस प्रकार के अनेक पद एवं साखियाँ सैन भगत ने अपनी वाणी में कही हैं जिनसे यह प्रमाणित हो जाता है कि वे संत ज्ञानेश्वर के नहीं, अपितु स्वामी रामानन्द के शिष्य थे।

पंडित परशुराम संत साहित्य के मर्मज्ञ एवं प्रामाणिक विद्वान थे। उनके कथन में भी सत्यता प्रतीत होती है। उन्होंने संत सैनजी को ज्ञानेश्वर का शिष्य न बताते हुए उनकी सत्संग मण्डली का एक सदस्य कहा है। उनकी इस बात में भी सत्यता है।

जब सैनजी को स्वामी रामानन्दजी ने आशीर्वाद प्रदान कर दिया, तब उन्होंने सैनजी को दक्षिण में जाकर सत्संग करने का आदेश दिया।

सैनजी की साखी में स्पष्ट है कि वे बाँधवगढ़ से दक्षिण चले गए।

सैना सतगुरु के हुकुम, आयो दक्खन देस।
ना ठाकर की चाकरी, ना कोई कलह करेस॥ (लोकवाणी, साखी-18)

वे सद्‌गुरू का आदेश पाकर दक्षिण देश गए और वहाँ एक वर्ष से ऊपर रहकर खूब सत्संग किया।

सुरतराम की परचई में भी उनके दक्षिण जाने का प्रसंग है।

रामानन्द चरणा पड़्यो, आखाँ असरू धार।
सतगुरू री थापी लगी, वइ ग्यो बेड़ो पार॥ 74॥
सतगुरु ने आज्ञा करी, जाजो दक्खन देस।
सत्संगत करजो वठे, मीटे सकल करेस॥ 75॥
बरस एक के ऊपरां, रह्यो दक्खन देस।
खूब भजन गाया वठे, सुण्या सत उपदेस॥ 76॥
पाण्डुरंग किरपा करी, हिरदै आयो ज्ञान।
भजन भाव करतां वियो, सहज भक्ति रो ज्ञान॥ 77॥
दक्खन ती उत्तर गयो, सतगुरु जी रे धाम।
थोड़ा दन गुरु आसरम, सयने कर्‍यो मुकाम॥ 78॥

– (परचाई सयना भगत री, कथी सुरतराम री, साखी–74 से 78)

इसी आशय का प्रसंग अनन्तदास की परचई में भी उपलब्ध है–

सद्‌गुरू आज्ञा दक्खन आयो। रामनंद हरि चित्त धरायो॥ 150॥
एक बरस दक्खन में रह्यो। सत्संग सुण्यो अर कह्यो॥ 151॥
पाण्डुरंग का रसगुण गाया। भजन रचाया सरस सुणाया॥ 152॥

– (संत सैना भगत की परची, चौपाई 150 से 152, कही धरमदास की)

इन उल्लेखों से उनके प्रारम्भ में दक्षिण में जाने और सत्संगत करने, भजन (अभंग) रचने और सुनने–सुनाने का प्रमाण मिल जाता है। सैन भगत के इसी प्रसंग को शैलेन्द्रकुमार शर्मा ने अत्यन्त समाधानकारक बात कही है–

'संत सैनजी को हम एक ओर संत ज्ञानेश्वर, संत नामदेव द्वारा विकसित वारकरी–नाम संकीर्तन की भक्तिधारा से सम्पृक्त पाते हैं, तो दूसरी ओर उनका उल्लेख स्वामी रामानन्द के द्वादश भागवतों के मध्य प्रमुखता से लिया जाता है। वस्तुतः उन्होंने दोनों धाराओं के बीच सेतु की भूमिका निभाई थी। सैनजी एक ओर नामदेव और जनाबाई के जीवन प्रसंगों या अभंगों में उल्लिखित हैं, तो दूसरी ओर संत कबीर एवं रैदास की गोष्ठी–पदों में भी। वे संत कबीर एवं रैदास की गोष्ठी को लिपिबद्ध करने वाले दृष्टा भी नजर आते हैं।[11]

वे नर रूपी नारायण की पहचान करवाने वाले संत थे। उन्होंने एक अभंग में कहा है–

श्रेष्ठ सन्त वह, जो करवाता नर–नारायण से पहचान,
सुधा, सुरस हरिनाम बोल का, घोल पिलाता सुबह शाम,

सैन कह रहे न लगता हरिनाम में कोई दाम,
सेवक धर्म स्वीकारा हमने, सेवा हो लेकिन निष्काम।[12] (अभंग-18)

संत सैनजी का जन्म कहीं भी हुआ हो। (जीवनी प्रसंग देखें) उनका कार्यक्षेत्र बाँधवगढ़ ही था। वहीं उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ और सद्गुरु रामानन्दजी का आशीर्वाद भी प्राप्त हुआ। वहीं से वे दक्षिण गये और फिर काशी तथा बाद में पूरे भारत का भ्रमण उन्होंने किया। उनकी मातृभाषा पंजाबी थी। कर्मभाषा बाँधवगढ़ की लोकभाषा। यही भाषा उनके पूर्वजों की भी थी। वे बहुभाषी थे। बहुश्रुत भी।

गुजरात के संत ने जब अपने भगवान कृष्ण से आर्त प्रार्थना की, तब उन्हें उलाहना देते हुए गाया-

सैन भगत काईं सुसरो लागे, जिण रो कारज सार्‌यो रे।
बगल रछौनी बण गयो, नृप को शीश सँवार्‌यो रे॥

हे प्रभु! आपने सैन का रूप धर कर राजा की सेवकाई कर अपने भक्त का कारज तो सँवार दिया, किन्तु मेरे कारज सँवारने में विलम्ब क्यों? क्या सैन आपका ससुर लगता था?[13]

श्री गुरू ग्रन्थ में सैन भक्त की रचित आरती पद को शामिल कर उनके प्रति आदर प्रकट किया गया है।[14]

संत सैनजी के गुरु भाइयों ने भी उनके विषय में अपने पद साखियाँ कही हैं। संत रैदास जी की एक साखी देखें-

नामदेव कबीर अरु त्रिलोचन, सधना सेनु तरे।
कहि रविदास सुनहु रे सन्तहु, हरि जीउते सभै सरै॥

ऐसा ही एक पद स्वयं सैनजी का भी प्राप्त होता है-

पीपा धना तिरि गया, तिरेगा दास कबीर।
सैन भगत साँची कहूँ, म्हारे हिरदै धीर॥

इन दोनों साखियों से इतना तो अनुमान लग जाता है कि रविदास, कबीर और सैन के पूर्व ही पीपाजी और धना भगत तिर गये थे। अर्थात् स्वर्ग धाम सिधार गये थे।

संत पीपाजी ने सैन भक्त के विषय में दो साखियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण लिखी हैं। संत पीपा और संत सैन का साथ संवत् 1472 विक्रम सीता सती के देहावसान से संवत् 1477 विक्रम संत

पीपाजी के देहावसान तक 5 वर्ष तक रहा। वे टोडा रायसेन से गागरोन तक साथ रहे। खूब सत्संग किया और साथ-साथ रहकर साधना की। पीपाजी की साखी देखें-

पीपा सैनो सद्‌मतो, खूब कर्‌यो सत्संग।
केहणी करणी रेहणी, तीनई में एक रंग॥

तथा-

पीपा सैनो सूथरो, नहीं मैल रो नाम।
बाहर भीतर समथिरो, सिमरे निस दिन राम॥

सैना सद्‌मति वाला है। हमने खूब सत्संग किया है। सैन की कहनी, करनी और रहनी एक समान है। वह शुद्ध हृदय है। कहीं भी उसके मन में मैल (कषाय) नहीं है। वह समचित है तथा सदा राम नाम का भजन करता रहता है।[15]

संत रविदासजी की एक और साखी देखें। इस साखी में रैदासजी ने संत सैनजी का शब्द-चित्र प्रस्तुत किया है-

हाथ सहारो बाँस को, साँस सहारो राम।
रैदासा सैनो भगत, चलतो-फिरतो धाम॥

सैन के हाथों को बाँस का सहारा और साँसों को राम का सहारा है। वह चलता-फिरता तीर्थधाम है।[16]

अपने गुरूभाई के प्रति संत रविदास (रैदास) का यह वचन उनके प्रति महत्त्वपूर्ण सम्मान है।

उन्हीं के गुरुभाई संत धना ने अपनी एक साखी में कहा है-

पीपा अर सैना भगत, एक संगत एक धाम।
धना हिरदै सतगुरु, मुख सों सुमरे राम॥

धना कहते हैं- पीपा और सैना भगत एक संगत तथा एक धाम हैं। दोनों साथ-साथ सत्संग करते हैं। इनके हृदय में सद्‌गुरु तथा मुख में राम का स्मरण है।[17]

संत धना जी के ही एक और पद में सैनजी एवं अन्य गुरुभाइयों के विषय में एक पद महत्त्वपूर्ण है-

गोबिंद-गोबिंद-गोबिंद संगि नामदेऊ मनु लीणा।
आतु दाम को छीपरो, हाइओ, लारवीणा रहाउ॥
बुनना, तनना, तिआगि कै प्रीति चरन कबीरा।
नीच कुला जोलाहरा, भइओ गुनीय गहीरा॥ 1॥
रविदास ढुवंता ढोर नीति तिन्हिति आगी गाइआ।
परगटु होया साथ संगि हरि दरसनु पाईया॥ 2॥
सैनु नाई बुतकारीआ ओहू धरि-धरि सुनिआ।
हिरदै वसिआ पारब्रह्मु भगता मरि अनिआ॥ 3॥
इह बुधि सुनि के जाटरो, उठि भगति लागा।
मिले प्रतखि गुसाइआ धन्ना बड़ भागा॥ 4॥[18]

संत सैन भक्त के प्रति भगवान का अति स्नेहवश नाई रूप धारण कर राजा की सेवा करने का प्रसंग प्रकारान्तर में अनेक समकालीन एवं परवर्ती संत-भक्तों ने उद्धृत किया है। महाराष्ट्र की प्रसिद्ध संत जनाबाई ने अपने अभंग में इसका उल्लेख किया है-

सैना नावी भक्त भला। तेणें देव भुलविला॥
नित्य जपे नामावली। लावी बिट्ठलाची टाली॥
रूप पालटोनी गेला। विठ्ठल सैना नावल झाला॥
काखे होवोनी धोकरी। गेला रजियाचे भेटी॥
आपुले हातें भार घाली। रजियाची सेवा केली॥
राजा अयानियात पाटे। चतुर्भुज उभा राहे॥
सैना न्हावी गौरविला। रजियाने मान दिला॥[19]

इसी प्रसंग को मराठी के संत कवि बंका महार, निलोबा आदि मराठी संत-भक्तों ने भी किया है। नाभादास, प्रियादास के अतिरिक्त बाँधवगढ़ के राजा बघेल राजाराम कृत राम रसिकावली में भी किया गया है।

नाभादास कृत भक्तमाल का उद्धरण इसी अध्याय में दिया जा चुका है। प्रियादास का यह कवित्त भी दृष्टव्य है।

बाँधवगढ़ हरि हसाधु सेवा आस लगी,
पगी मति अति प्रभु, परचो दिखायो है।
करि नित नेम चल्या भूपके लगाउ तेल,
भयो मगमेल संत किरिघर आयो है।

धरि उर श्याम जाय भूपति रिझायो है,
पाछे सैन गयो पंथ पूदे हिये रंग छायो है।
फेरि कैसे आये, सुनि अति ही लजाय कही,
सदन पधारे सन्त भई यो अबार है।
आवन न पायो बहि सेवा उरझायो,
राजा दौरिशिर नायो देखि महिमा अपार है।
भीजी गयो हियो, दास संभव दृढ़ लिया,
पियो भक्तिरस शिष्य है कै जान्यो जोई सार है।
अबलो हूँ प्रीति सुत नीति उहि रीति चले,
होई जो प्रतीति प्रभु पावे निरधार है।[20]

भक्तमालों, संतों एवं प्रियादास के अतिरिक्त परचईकारों ने भी इस प्रसंग का उल्लेख किया है। उनके समकालीन भक्त कवियों एवं परवर्ती संत कवियों ने भी उनका उल्लेख किया है।[21]

जब सैनजी साधुजनों के साथ सत्संगत में लीन हो गए और राजमहल जाकर अपनी नित्य की सेवा का भान तक भूल गया। तब उनके स्थान पर स्वयं श्रीहरि नाई सैन का रूप धर राजसेवा में पहुँच नित्य की सेवा कर लौट गए। तभी सैन जी को बोध हुआ और वे औजारों का थैला उठाकर राजमहल की ओर भागे और राजा के समक्ष पहुँचकर विलम्ब के लिए क्षमा याचना करने लगे। इस प्रसंग का वर्णन समस्त भक्तमालों एवं परचइयों में किया गया है। यह प्रसंग इसलिए प्रेरक है कि इसी प्रसंग वाली घटना ने संत सैनजी का जीवन बदल दिया। वे सैना नाई से संत सैना बन गए। इसी प्रसंग में निम्नलिखित संवाद भी दृष्टव्य है। राजा ने सैनजी से पूछा–

फेरि कैसे आये, सुनि अति ही लजाए,
कही सदन पधारे संत, भई यों अबार है।
आवन न पायो, वाही सेवा अरुझायो,
राजा दौरि सिर नायो, देखी महिमा अपार है।
भीजि गयो हियो, दास भाव दृढ़ लियो,
पियो भक्ति रस, शिष्य है कै जान्यो कोई सार है।
अब लौं हूँ प्रीति, सुत-नाती ताही रीति चलै,
होय जो प्रतीति प्रभु पावै निरधार है॥

सारी घटना और प्रभु की लीला जानकर राजा धन्य हो गया। केवल राजा ही नहीं, उसके नाती-पोते तक धन्य हो गये।

कृष्ण भक्त सूरदास तक ने इस लीला प्रसंग को अपने एक पद में स्मरण किया है-

सबतें ऊँची प्रेम सगाई।
प्रेम के बस नृप सेवा कीन्हीं, आप बने हरि नाई।
सूर कूर इहि लायक नाहीं, कह लगि करौं बढ़ाई॥

इसी प्रकार संत दादूदयालजी के शिष्य बखनाजी ने भी अपने एक पद में संत सैन सहित उनके गुरू भाइयों का स्मरण किया है—

सौ-सौ सैन पीपो पखारियो, जन रैदास निषेदि खिड़ी।
वै अविनासी नगरि महूंता, बीजी परजा झूली पड़ी॥
जाकै नाम सैन कबीरा, पीपा धना अहीरा।
सूरदास रैदासा सगला की पूरे आसा॥[22]

संत रज्जबजी के प्रसिद्ध संत हरिदास ने अपनी वाणी में संत सैन समेत उनके गुरू भाइयों का स्मरण इस प्रकार किया है-

पीपा धना सैन रैदासा, सौझा सोम सुनो हरिदासा।
सब पर कृपा देहियो ग्यानू, तो कीजै सुद कथा बखानी॥[23]

इसी प्रकार अनेक संत-भक्तों, भक्तमालों और परचइयों में सैन भक्त को अपने गुरू भाइयों के साथ अत्यन्त आदर के साथ स्मरण किया गया है। परवर्ती संतों ने भी संत सैन का स्मरण आदर के साथ किया है।

संत बखनाजी

संत बखनाजी, दादूजी के शिष्य थे, उन्होंने संत सैन को अपने पदों में स्मरण किया है। एक पद देखें-

वो घर बोलगरी उलगाणों।
जिहिं ध्रुव प्रह्लाद विसरियो, बैकुण्ठ तणोदियो धाणों॥
वाके नाम सैन कबीरा, पीपा धना अहीरा।
सूरदास, रैदास, सगला की पूरे आसा॥[24]

संत जग्गा जी

ये भी दादूजी के शिष्य थे। इनका समय 1650-1680 ईस्वी तक रहा। इन्होंने अपने भक्तमाल में कहा है-

नामदेव कबीर तिलोचन धूरिस्वामी,
इन्हूँ कह्यो भज अन्तर्यामी।
रामानन्द सत श्रीरंगा, नानक कह्यो रहु हरि संगा।
पीपा सैना धना रैदासा, राम नाम की बँधई आसा।।[25]

संत सेवगदासजी

ये दयालदासजी के शिष्य थे। इनका समय 17वीं शताब्दी है। इनकी वाणी में संत सैनजी का नामोल्लेख रस पीकर आनन्द प्राप्त करने वालों में किया गया है-

राम नाम रस पीया, पीया ही आनन्द होय।
सौझे सैन पीपा रैदासा, मीरा प्रेम चढ़ाई रे।
पीयो पीपे घने धीरज्युं, शुकदेव तहाँ न तमाई रे।।[26]

संत सुन्दरदासजी

ये संत दादूदयालजी के शिष्य थे। इनका समय 1663-1746 ईस्वी मान्य है। अपने सुन्दर विलास में संत सैनाजी का उल्लेख किया है—

जन रैदास साध सूरा तन, विप्रनि मार मचाई रे।
सौंझा पीपा सैन धना तिन, जीति बहुत लराई रे।।[27]

श्री खेमदासजी

ये रज्जबदासजी के शिष्य थे।

पीपा धन सैन रैदासा। सोझा सोम सुनो हरिदासा।।
सब पर कृपा देहि ज्याग्यानूँ। तो कीजें सुख कथा बखानूँ।।[28]

श्री राघौदासजी

ये दादूदयाल जी के प्रशिष्य थे।

शूरवीर सरदार शिरोमणि, दल मांझी ददकार लड़े।
रामानन्द कबीर रामदेव, रहे फौज मघ जात पड़े।।

बाग उपाड़ि पर दल मधि, गढ़ कोटन सो जाई अड़े।
पीपा धन्ना सैन अरु सोझा, भवन परस प्रचण्ड लड़े॥
काम क्रोध मद मोह, मछर, मार तड़ातड़ गर्द किये।
दादूदास, हरिदास रूँ नानग, ये ग्यानी औगार हिये॥
अनन्य भक्त अष्टांग जोग करि, उलटि आप सूं आप लड़े।
'राघो' बंदि चरणि रज जिनकी, जो वि स्वामी रे काम पड़े॥[29]

श्री हरिदास जी

निरंजन नाई लागा हो।
भरम अंधारा मिटि गया, सूता जागा हो॥
अगम पियाला प्रेम का, तुम्ह दीया-पीया हो।
गोरखनाथ कबीर सा, अर्पण करि लीया हो॥
पीपा सोझा सैन सा, हरि लोक बसाया हो।
जन हरिदास हरि मौज सुणि, चरणा चलि आया हो॥[30]

श्री रूपदास जी

ये श्री अमर पुरुष के शिष्य थे। ये 18वीं शताब्दी में हुए।

पीपा जन रैदास पुनि सुमरे सुखदायी रे।
पीया पियाला प्रेम का, उर तपत बुझाई रे॥
नानम जन रैदास कबीरा, गोरखदत सुखदेवा।
गोपीचन्द भरथरी जोगी, लगे अलख की सेवा॥
पीपा सैन मिल सोझा, नानग रामानन्दा।
हरि पुरुष सेवा जन सागे, वह साहब का बंदा॥[31]

श्री गरीबदास

इनकी वाणी 'गरीबदास' की वाणी के नाम से प्रकाशित है। इन्होंने अपने पूर्ववर्ती संतों का परिचय अपनी वाणी में अनेक बार किया है। इन्हें कबीरजी का अवतार कहा जाता है।

दो कौड़ी का जीव था सैना जात गुलाम।
भक्ति हेतु गृह आइया, धरा स्वरूप हजाम॥
पीपा का परचा हुआ, मिले भगत भगवान।
सीता मग जोवत रही, द्वारावति निधान॥

धना भगत की धन लगी, बीज दिया जिन्ह आन।
सूखा खेत हरा हुआ, कंकर बोये जान।

श्री प्रियादास जी

इनका समय 17वीं शताब्दी है। संत प्रियादास ने नाभादास भक्तमाल की ब्रजभाषा में काव्यबद्ध टीका लिखी है। इन्होंने अपनी टीका में संत सैनजी का उल्लेख आदर के साथ किया है।[33]

संत भक्त लखमा जी

ये राजस्थान के प्रसिद्ध संत हैं। इनका खेती पर बड़ा सुन्दर रूपक है-

स्याऊ-स्याऊ सिट्टा घाल, झोड़ी में सखरी सी पूज बणाई।
धनो भगत अर पीपो नामदे सैन भगत बरसाई ॥
दास कबीरो लारण लाग्यो, जब सूँ आ साख सवाई।
पक्को खेत हेत कर निपज्यो, अब खेती रस आई ॥[34]

उपरोक्त संतों के अतिरिक्त चौरासी और दो सौ बावन वैष्णव वार्ता (संवत् 1625), गोकुलदास कृत, ध्रुवदास कृत भक्त नामावली (संवत् 1698), संत बानी संग्रह सम्पादक-अधमगी (संवत् 1972), मिश्र बंधु विनोद (संवत् 1970), राघवदास कृत भक्तमाल, चतुरदास कृत टीका, रज्जब जी सर्वंगी ग्रन्थ (संवत् 1624), जगन्नाथ जी का गुणगंगनामा, गोपालदास कृत सरह सर्वंग चिंतामणि, बुल्ला साहब का शब्द सागर का (संवत् 1683), बाबा धरणीदास की रतनावली (संवत् 1632), गुरुग्रन्थ साहब, आदिग्रन्थ भक्तिसुधा बिन्दुस्वाद (रूपकलाजी), भक्ति सुधा बिन्दुस्वाद (रूपकलाजी) हैं। उक्त ग्रन्थों में भी संत सैन भगत का उल्लेख किया गया है।

संतों, भक्तों, भक्तमालों और परचइयों के अतिरिक्त गृहस्थ भक्तों ने भी अपने गीतों-भजनों में सैन भक्त का स्मरण किया है।

श्री मोहनलालजी चौहान

श्री मोहनालालजी चौहान राजस्थान के अकोला के निवासी थे। भगवान कृष्ण के अनन्य भक्त एवं सरस कवि थे। वेदों, पुराणों, संस्कृत साहित्य के विज्ञपुरुष थे। उनके सुपुत्र डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' उदयपुर (राजस्थान) में चेतमान पत्रकार तथा शिक्षाविद् हैं। अपने पिता की परम्परा को अक्षुण्य रखते हुए श्रीकृष्णजी वेद-पुराण, साहित्य एवं वास्तुशास्त्र के प्रमाणिक

विद्वान हैं। उन्हीं के संग्रह से उनके पिताश्री मोहनलालजी चौहान का यह पद प्राप्त हुआ। इस प्रभाती पद में उन्होंने अन्य भक्तों के साथ सैनजी का भी स्मरण किया है-

अरजी सुणयो म्हाँकी।
प्रभु अरजी सुणयो म्हाँकी॥
तुम शरणागत के हो पालक, वेद पुराण हे साकी।
जुग-जुग में अवतार लियो तुम, पीर हरी भगतां की॥
सागर स्याही कागद धरणी, कलम करी रूखांकी।
बरस हजार लिख्या गुण सारद, तो पण लख-लख थाकी॥
सैना जी सरणा में आया, आसा पूरी वांकी।
नामदेव की छपरी छायी, खेती जाट धना की॥
चार छाप पीपा को दीनी, पीर हरी मीरां की।
अटकी नाव पार प्रभु कीजो, मोहन सरणे थांकी॥
अरजी सुणयो म्हाँकी, प्रभु अरजी सुण्यो म्हाँकी॥[35]

नवनिधि कुँवर-खांगारोत

नवनिधि कुँवर मनासा के निकट चन्द्रावत ठिकाने भाटखेड़ी की राजमाता थी। आप कृष्णभक्त कवयित्री थीं। उन्होंने अनेक गीत-भजन लिखे। वे कोकिल कण्ठा थीं। महिला भजन मण्डलियों में उनके भजन खूब गाए जाते थे। प्रभात में वे जब कृष्णभक्तिपरक गीतों पर घट्टी (हत्थ चक्की) पीसती थीं। उनका यह भजन संत सैन एवं अन्य भक्तों को आदर से स्मरण करता है-

विरद क्युँ भूलि गयो रे कान्हा॥
हेलो पाड़तां थाकी, भनक पड़ी नहीं करना।
कै तो बहरो वियो साँवरो, कै आरत नहीं जाना॥
भगतां को हेलो सुण आयो, क्युँ वा विरद भुलाना।
कै तो बदल दियो ब्रजनाथे, अपणो पतो ठिकाना॥
द्रुपद सुता की लाज बचावण, तुरतां आयो राना।
गज की सुणी पुकार श्याम थे, दौड़ पड़्या अरवाना॥
धन्ना की खेती निपजाई, वाया कंकर दाना।
पीपा ने झट परचो दीयो, हाथा झेल मुसकाना॥
सैन भगत की लाज बचावण, नाई बण आयो कान्हा।

रूप धरयो सैना को, तनक नहीं सकचाना॥
करी खवासी मालश करतां, करवायो असनाना।
बघेलराज की सेवा करतां, तनक न संशय आना॥
चन्द्रसखी मीरां की सुणली, करमा की मैं जाना।
राजा रंक सभी की सुणतां, नहीं हरदै भरमाना॥
वेद पुरान संत रिषि कह्यो, कवियाँ कर्‌यो बखाना।
म्हारी अरजी क्युँ नहीं वांची, केओ जसुदा का नाना।
लिख कंकोतरी कठे मोकलूँ, नहीं जाणू ठोर-ठिकाना।
नवनिधि की प्रभु सुणो वीनती, तन अर मन अकलाना॥[36]

सूफी संत गुमनामी

आप मन्दसौर के रहवासी थे। इन्होंने सूफी दर्शन के अतिरिक्त अन्य संत भक्तों के पद भी लिखे हैं। कृष्ण को भी इन्होंने अपनी साखियों में याद किया है। उन्हीं की एक साखी—

पीपा सैना हो चुके, पहुँचे संत फकीर।
गुमनामी रैदास जट] धना दास कबीर॥
अपणी करणी तर गए, हो गए सागर पार।
गुमनामी मुरशद मेहर, राम नाम आधार॥[37]

संत सैनजी द्वारा अपने समकालीन संतों के प्रति विचार

संत भक्त सैनजी के विषय में अनेक भक्तमालों, परचइयों और उनके समकालीन एवं परवर्ती संत कवियों ने बार-बार अपने पदों-भजनों में उन्हें स्मरण किया है। उसी प्रकार संत सैनजी ने भी अपने समकालीन विशेष रूप से अपने गुरुभाइयों के विषय में अपनी वाणी में उनका आदरपूर्वक स्मरण किया है।

संत पीपाजी के विषय में-

पीपो समदर कूदियो, तनक न राखी संक।
सैना मन चित थिर रहे, नाम भक्ति भगवंत॥[38]

× × ×

पीपो सीवे कापड़ा, रटे राम को नाम।
सैना सत्संग नी तजे, तजे न सूई काम॥[39]

× × ×

पीपे संग सीता रही, अजब निभाई रीत।
सैन भगत साँची कहूँ, अटल राम संग प्रीत।।[40]

× × ×

पीपो अपदीपो कहूँ, कर्‌यो भक्ति उजास।
सैना ऐसा संत के, चरण शरण को दास।।[41]

× × ×

पीपे ज्ञान दियो सूई को, कह दी मोटी बात।
सैना सूई सीव दे, खड़ कर झट घात।।[42]

अन्य गुरु भाई –

पुण्य भयो रैदास को, सद्‌गुरु रामानन्द।
सैना तारक मंत्र दे, लागी थाप आनन्द।।[43]

× × ×

ज्ञान मिल्यो सद्‌गुरु कृपा, दी कबीर ने बाट।
सैना पीपे संग दियो, बेटो धन्ने जाट।।[44]

× × ×

सीता सती सरगां गई, टोडे नगर मझार।
सैना राजा ने करी, पूरी सार सम्हार।।[45]

× × ×

कर समाध सीत सती, पीपे कर्‌यो प्रनाम।
सैना संगत साध की, अतरी तीखी राम।।[46]

× × ×

पीपा की संगत करी, टोडा ती गगरोन।
सैना संगम की गुफा, मिल्यो पौन में पौन।।[47]

× × ×

पहलो पागल हे कबीर, दूजो पीपो जाण।
सैना दोई के वई, राम प्रभु पेहचाण।।[48]

× × ×

पीपा धन्ना सदमता, सद्‌मत्यो रैदास।
सैन भगत साँची कहूँ, सद्‌गुरु की अरदास।।[49]

× × ×

पीपा धन्ना तिरि गया, तिरेगा दास कबीर।
सैन भगत साँची कहूँ, म्हारे हिरदै धीर॥[50]

वाल्मीकि

वाल्मीकि सुमरन कियो, मन चित ध्यान लगाय।
सैना उल्टो सुलट्यो, ऐसो हुओ उपाय॥ [51]

स्वामी रामानन्द

स्वामी रामानन्द सैनजी के सद्‌गुरु थे। अपनी वाणी में अनेक जगह उन्होंने अपने सद्‌गुरु रामानन्द का स्मरण किया है। यहाँ केवल तीन साखियाँ सन्दर्भित हैं-

रामानन्द पूरा गुरु, दियो परक को बोध।
सैन भगत हिरदै हुओ, साहिब को परबोध॥[52]

× × ×

सैना सद्‌गुरु थरपियो, सोई तीरथ धाम।
रामानन्द गुरु साँचला, साँचो साहिब नाम॥[53]

× × ×

दो कौड़ी को सैन थो, हाट बिके न बाट।
सैना सद्‌गुरु परस से, खुल्या ज्ञान कपाट॥[54]

× × ×

कै तो वंदू सद्‌गुरु, कै रैदास कबीर।
सैना सद्‌गुरु मंत्र दे, कै रैदास कबीर।
सैना तारक मंत्र दे, रिदै बँधाई धीर॥[55]

× × ×

मध्यकालीन युग भक्ति आन्दोलन का महत्त्वपूर्ण युग माना जाता है। ये संत सम्पूर्ण भारतवर्ष में विभिन्न अंचलों में भ्रमण कर सत्संग के माध्यम से सत् संदेश देते रहे। इनका अनेक बार परस्पर मिलाप भी होता रहा। तब से संत-भक्त परस्पर सत्संग कर अपने-अपने विचारों का आदान-प्रदान करते थे। यह परम्परा प्राचीन काल के शास्त्रार्थ का ही एक सहज लोक रूप था।

यही कारण है कि इन संत-भक्तों के विचारों में पर्याप्त साम्यता दृष्टिगोचर हो जाती है। भाषा-बोली में तथा भावों में यह साम्यता आन्दोलन की एकरूपता बनाए रखने में सहायक बनी रही।

इन संत-भक्तों ने अपने समकालीन, परवर्ती एवं पूर्ववर्ती संतों-भक्तों का उल्लेख भी उद्धरणों के मान से समय-समय पर किया है। इसका उद्देश्य अपने विचारों की पुष्टि करना भी था। इन संत भक्तों की वाणी आज भी लोककण्ठों पर जीवित है। उसे समझकर संकलित करने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ :

1. कल्याण अवतार कथांक, वर्ष-81, संख्या-1, पृ.-471-74.
2. सैन भक्त के पावन प्रसंगों में देखें प्रसंग क्र.-2.
3. देखें, भक्तमाल नाभाकृत-77, श्री सैनजी, पृ.-525.
4. कल्याण संत अंक, संवत्-2011, वर्ष-29, संख्या-1, पृ.- 193.
5. संतवाणी अंक, श्रावण 1994, वर्ष-12, संख्या-1, पृ.-498.
6. इसी आशय का एक पद भी उन्होंने लिखा है, जो इसी संग्रह के पद क्र.-33 पर संकलित है.
7. इस पद से यह तो ज्ञात हो जाता है कि वे अपने प्रारम्भिक संत काल में महाराष्ट्र में रहे थे। उनके अभंग भी महाराष्ट्र में पाए गए हैं। इसी आशय के अभंग मराठी में उपलब्ध हैं। इसी संग्रह सैन वाणी प्रसंग में देखें अभंग क्र.-41-42.
8. इसी संग्रह में सयना भगत की परची लिखी धरमदास की एवं परचई सुमना भगत री कथी सुरतराम की.
9. पण्डित परशुराम चतुर्वेदी, उत्तर भारत की संत परम्परा, प्रथम खण्ड, पृ.-230-31.
10. सैन भक्त अपने प्रारम्भिक काल में महाराष्ट्र में रहे और उन्होंने अभंग भी लिखे। देखें यही ग्रन्थ.
11. संत शिरोमणि सैनजी, ललित शर्मा, भूमिका भाग, पृ.-6.
12. वही, उपरोक्त, पृ.-6, अभंग-18, इसी संग्रह के परिशिष्ट में.
13. इस प्रसंग का कवित्त इसी अध्याय में देखें, टीप-3, भक्तमाल नाभादास, पृ.-525.
14. देखें इस प्रसंग का पद, टीप-4, कल्याण संत अंक, संवत् 2011, पृ.-193,
15. मालव लोक संस्कृति अनुष्ठान-मनासा के संग्रह में.
16. वही. 17. वही.
18. शास्त्री कौशलेन्द्रदास सम्पादित-गुरु मिल्या रामानन्द, पृ.-68 पर डॉ. अनिल जैन का शोध आलेख 'भक्ति के धनी धन्नाजी' से साभार.
19. संत शिरोमणि सैनजी, ललित शर्मा, भूमिका खण्ड, डॉ. शैलेन्द्रकुमार शर्मा, पृ.-10.
20. प्रियादास कृत भक्तमाल, पृ.-456-57.
21. सैन भगत की परची-अनन्तदास, चौपाई-121 से 140 एवं दोहा क्र.- 19 से 22 एवं परचई सयना भगत री- सुरतराम, दोहा क्र.-50 से 64.
22. संत शिरोमणि सैनजी, ललित शर्मा, पृ.- 80.
23. हरिदास की वाणी, छप्पय, पृ.-258.
24. बखनाजी की वाणी, भूमिका, पृ.-29.
25. हरिदास की वाणी, भूमिका, पृ.-29.
26. वही, उत्तराखण्ड, पृ.-138.
27. सुन्दर विलास, पृ.-882, पद-5.

28. शुक-रम्भा संवाद, वन्दना भाग का प्रारम्भ.
29. हरिदास की वाणी, पृ.-34 एवं राधो कृत भक्तमाल (चतुरादास कृत टीका).
30. वही, पृ.-239, पद-110.
31. वही, उत्तरार्द्ध, पृ.-260, पद-6.
32. गरीबदास की वाणी, पृ.-32.
33. देखें, इसी अध्याय की टीप-20.
34. डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' के संग्रह से एवं संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन, पृ.- 252.
35. डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू', उदयपुर के सौजन्य से.
36. मालव लोक संस्कृति अनुष्ठान, मनासा के संग्रह से.
37. कठिन शब्द- नाना = पुत्र, मुरशद = गुरु.
38. संत सैन की लोकवाणी भाग, इसी संग्रह में साखी-117, 81.
39. वही.
40. सैन भगत साँची कहूँ, साखी क्र.-55 भाग, इसी संग्रह से.
41. सैना रखजो ध्यान भाग, साखी क्र.-5.
42. प्रेमामृत प्रसंग, साखी क्र.-101.
43. सैन की लोकवाणी प्रसंग, यही संग्रह, साखी-256.
44. वही, साखी-258.
45. वही, साखी-257.
46. वही, साखी-259.
47. वही, साखी-260.
48. सैन की लोकवाणी प्रसंग, यही ग्रन्थ संग्रह, साखी क्र.-279.
49. सैन भगत की साँची कहूँ प्रसंग, यही ग्रन्थ संग्रह, साखी क्र.-2.
50. वही, साखी क्र.-3. 51. सैन की लोकवाणी प्रसंग, यही ग्रन्थ संग्रह, साखी क्र.-102.
52. वही, साखी क्र.-6.
53. वही, साखी क्र.-11.
54. सैन भगत साँची कहूँ, यही ग्रन्थ संग्रह, साखी क्र.-10.
55. सैना रखजो ध्यान, यही ग्रन्थ संग्रह, साखी क्र.-83.

अध्याय - 3

संत सैन भगत : परचई साहित्य

संत सयना भगत की परची (लिखी- धरमदास की)

'परची' शब्द 'परचई' का ही वाचक है। परचई अर्थात् परिचय। परचईकारों में विनोदी जी के शिष्य अनन्तदास का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। इसी प्रकार अग्रदासजी के शिष्य नाभाजी (नारायणदास) ने भी अपने भक्तमाल में संतों का परिचय लिखा है।

प्रस्तुत परचई के लेखक धरमदासजी हैं। धरमदास से पहले इस परचई को अनन्तदास ने लिखा। अनन्तदास ने यह परचई संवत् 1650 विक्रमी में लिखी। फिर सुखदास ने अनन्तदास की जूनी (जीर्ण हुई) परचई के आधार पर इसे गुरुमुखी में लिखा। उसी गुरुमुखी वाली पोथी की नकल धरमदास ने उतारी और संवत् 1700 विक्रमी के श्रावण मास में केदारेश्वर में रहते हुए धरमदास ने गुरुमुखी से यहाँ की लोक बोली (दशौरी मालवी) में उल्था (अनुवाद) किया, जिससे यहाँ के साधारण लोग भी इस परचई को पढ़-समझ सकें और रामानन्द शिष्य परम्परा के संत सयना (सैन) भगत का चरित्र जान सके।

वर्तमान रूप में आने से पहले अर्थात् अनन्तदास से धरमदास तक इस पोथी ने अपना भाषाई रूप बार-बार बदला। धरमदास का कथन है कि मैंने बहुत सावधानी से इसका अनुवाद किया है। एक शब्द की भी चूक नहीं की।

पूर्वकाल के रचनाकारों पर इतना विश्वास तो किया जा सकता है कि उन्होंने परचई के कथानक में उलट-फेर नहीं किया होगा। धर्मदास ने भी वही विश्वास दिलाया है।

परचई की भाषा-बोली पढ़कर यह तो लगता है कि धरमदास पंजाब का था। उसकी मूल भाषा पंजाबी थी। वह बीस बरस केदारेश्वर, सुखानन्द और शंखोद्धार अंचल में रहा, इस कारण यहाँ की बोली वह सीख गया होगा। अनुवाद में अभी भी पंजाबी के शब्दों को पढ़ा जा सकता है। सुखदास ने 'वाहे गुरु अरदास' के बाद अनन्तादास की परचई का गुरुमुखी में अनुवाद किया। यह संकेत उसके पंजाब का रहवासी होने का प्रमाण है। पंजाब में केवल सिख ही नहीं सनातन धर्म मानने वाले भी गुरुनानक देव को आदर से मानते हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या इस परचई का मूल रचनाकार अनन्तदास, रामानन्द शिष्य परम्परा में विनोदीजी के शिष्य हैं अथवा कोई अन्य? पहली चौपाई में रचनाकार ने लिखा है-

सद्गुरु रामानन्द सिर नाऊँ। चरण शरण में धोग लगाऊँ॥

इससे अनुमान यही लगता है कि अनन्तदास वही संत पुरुष हैं, जिन्होंने पीपा, कबीर, रैदास, धन्ना आदि संत भक्तों की परचियाँ लिखी हैं। यदि यही सत्य है, तब संत पीपाजी के बाद यह सयन (सैन) भक्त की परचई एक बड़ी परचई है, जिसमें संत सयन के जन्म से लेकर मृत्यु तक की प्रमुख घटनाओं का वर्णन किया गया है। इसके बावजूद भी पूरे दावे से यह नहीं कहा जा सकता कि पीपा परचई और इस सयना परचई वाले अनन्तदास एक ही हैं।

हमारे पास जो परचई है, वह धरमदास की रचना (अनुवाद) है। यही हमारे पास संत सयन को जानने-समझने का एक आधार भी है। इसमें 200 चौपाइयाँ एवं 51 दोहे हैं। प्रत्येक बीस चौपाइयों के पश्चात् दोहे हैं। दोहों का कोई संख्या नियम नहीं है।

इंटरनेट से संत सैन के विषय में जो जानकारी प्राप्त हुई है। उसके अनुसार सैन की माता को सूफी संत गुरियाजी के आशीर्वाद से संतान उत्पन्न हुई। उसका नाम 'सयन' रखा गया। सयन अर्थात् ईश्वर के लिए पैदा होना। अंग्रेजी में उनका नाम SAIN = सैन तथा SAYIAN = सयन लिखा है। नेट की मानें तो उसका मूल नाम सयन था, जो कालान्तर में सेन या सैन हो गया। गुरियाजी ने सैन की माता से वचन लिया था- तुम अपने बेटे का नाम हुसैन के उच्चारण पर रखना। तुम्हारा बेटा हुसैन की भाँति महान बनेगा।

यह परचई मुझे डॉ. प्रह्लादचन्द्रजी जोशी-सुसनेर, जिला-शाजापुर (म.प्र.) से प्राप्त हुई। उन्हीं से 'संत सैन का प्रेमामृत' की पाण्डुलिपि भी प्राप्त हुई। दोनों प्रतियों की नकल मैंने डॉ. प्रह्लादचन्द्र जोशीजी के सहयोग से उतारी और फिर इन्हें सुलेखित किया। मैं भी धरमदास की तरह कह रहा हूँ कि मैंने नकल उतारने या सुलेखित करने में भूल-चूक नहीं हो, ऐसी सावधानी बरती है। डॉ. जोशी तब बीमार थे। उन्हें ब्रेन ट्यूमर था। वे चाहते थे उनके श्रम का उपयोग हो

जाए। संत साहित्य पर उन्होंने काम किया था। संत सयन के कुछ पद उन्होंने आदिवासी लोककला परिषद को भेजे थे, किन्तु मर्यादा का निर्वाह करते हुए मुझे सौंपी गई सामग्री का कभी उपयोग नहीं किया। वे मेरे गुरुभाई थे। डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय हम दोनों के गुरु थे। उनके इस सौजन्य का आभार कहना छोटापन है। उन्हें वन्दन!

'मीरायन' चित्तौड़ के वर्ष-6, अंक-4, दिसम्बर 2012-फरवरी 2013 के अंक में संत साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान श्री ब्रजेन्द्रकुमार सिंहल द्वारा संकलित सम्पादित 'सेऊ सम्मन' की परचई छपी है। उन्होंने सिरि पैलेस-जयपुर के ग्रन्थांक-7830/5, राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी के ग्रन्थांक-95 व दादूधाम नारायणा-जयपुर के ग्रन्थांक-213, 259, 268, 337 तथा 634 के साथ स्वयं के संग्रह के आधार पर पाठ का सम्पादन किया है।

इस परचई में संत सयन के जीवन की केवल एक ही घटना का वर्णन किया गया है। भूल से अथवा उच्चारण सुविधा के कारण इसमें सयन के स्थान पर 'सम्मन' हो गया है। सेऊ यथावत है। मेरे संग्रह में परचई में सयन-सेऊ है तथा इस परचई में सैन (सयन) के जन्म से लेकर मृत्यु तक का वर्णन है। अत: यह स्वयं में पूर्ण परचई (गाथा) है। श्री सिंहल द्वारा सम्पादित प्रति में 36 चौपाइयाँ हैं। दोहा नहीं है। जबकि मेरे संग्रह में परचई में 200 चौपाइयाँ एवं 53 दोहे हैं। इसकी यही समग्रता एवं पूर्णता इसे महत्त्वपूर्ण बनाती है।

श्री सिंहल वाली परचई भी पंजाबी मूल प्रति का ही अनुवाद लगती है। इसका 11वीं चौपाई इसका संकेत देती है-

बीती रात घणेरिया, ए दुख पावे दास,
धिरक जिनां दा जीवणा, करे बिराणी आस।

यह भी सम्भव है यह घटना मौखिक (वाचिक) परम्परा से संग्रहीत की गई है। उसी प्रयास में सयन से सम्मन हो गया हो। जो भी हो, इतना सच है कि यह घटना सयन (सैन) के जीवन की है। इसी सन्दर्भ की एक कथा भी पारम्परिक लोक साहित्य में उपलब्ध है, जिसमें सैन-सेऊ (पिता-पुत्र) वर्णित है।

श्री सिंहल द्वारा सम्पादित प्रति में सेंध में फँसे सेऊ का सिर स्वयं सयन (सम्मन) काट डालते हैं (सेऊ के कहने पर)। क्या यह माना जाए कि सयन (सम्मन) सशस्त्र वहाँ गए थे? वैसे भी आटा-दाल की पोटली तो बाहर पड़ी थी। सयन (सम्मन) उसे ले जा सकते थे। सिर काटने की क्या आवश्यकता थी? यह कृत्य एक भक्त के लिए क्रूर एवं अव्यवहारिक लगता है। मेरे संग्रह वाली प्रति में शेष घटना समान है। सेऊ के कहने पर सयन आटा-दाल की पोटली लेकर घर चले जाते हैं। उसका सिर वहाँ का रखवाला काटता है, जो कि स्वाभाविक लगता है।

सयन (सैन) की यह परचई संत के जीवन संघर्ष की साक्षी मानी जा सकती है। वर्षों के कण्ठानुकण्ठ एवं लेखन-प्रतिलेखन के उपक्रम में भाषागत परिवर्तनों के बावजूद भी घटनाओं में साम्य का बना रहना सहज एवं स्वाभाविक ही है। हमें आभारी तो उन महानुभावों का होना चाहिए, जिन्होंने सैकड़ों वर्षों तक ऐसी अनेक रचनाओं को सुरक्षित रखने का महनीय कार्य किया है।

परची

श्री गुरु पद वन्दन करूँ, चरण कमल चित लाय।
सयना की परची लिखूँ, रहिजो सदा सहाय॥ 1॥
सयना नाई जात थो, भगताँ दा सिरमौर।
रामानंद कंठी दई, वियो होर दा होर॥ 2॥
ना गादी न आसरम, ना चेला ना चाह।
सयने सतगुरु दी क्रपा, सुथरी कर ली राह॥ 3॥
जो सुण्यो जो बांचयो, करी न बढ़ती घाट।
सतगुरु मेहर राखजो, सूधी करजो बाट॥ 4॥
जठे-जठे सयनो रह्यो, वठे गयो मैं खास।
भूल-चूक बक्शावजो, हे अतरी अरदास॥ 5॥

सद्‌गुरु रामानंद सिर नाऊँ। चरण-शरण में धोग लगाऊँ॥ 1॥
सतगुरु जी दी आज्ञा पाऊँ। सरसत माता सीस नमाऊँ॥ 2॥
वंदन करूँ सिद्धि के दाता। सिमरण करूँ जगत की माता॥ 3॥
मात-पिता की करूँ वंदना। धोकूँ हणुमत मात अँजना॥ 4॥
कथन न जाणू कहण न जाणूं। सरसत माता हिरदै आणू॥ 5॥
सबद-सबद में आय बिराजो। कवत लिखूँ सो सत्त सराजो॥ 6॥
भगति भाव ने हिरदै लाऊँ। सयन भगत की कथा सुणाऊँ॥ 7॥
भगतमाल परची सब बाँची। जतरी लिखी बात सब साँची॥ 8॥
सयनो भगत बड़ो बड़भागी। राम गुरु ती सुरती लागी॥ 9॥
नत दन जपे राम को नामो। करे हाथ सों नाई कामो॥ 10॥
बाँधवगढ़ को मूल रेहवासी। मात पिता दादा सुखरासी॥ 11॥
माता नाम जीवणी सुणयो। पिता मुकुंद नाम सब गुणयो॥ 12॥
जनमया पेहलां सुरग सिधाया। माता बाँधवगढ़ नहीं भाया॥ 13॥
अमरतसर दा पिण्ड सुहाला। जीवण माँ दा पीहर आला॥ 14॥

जीवण माता धीरज धर्‌यो। बाँधवगढ़ नूँ नमन कर्‌यो॥ 15॥
गाँव सुहाले रेहण लागी। गरभ मास ने सेहण लागी॥ 16॥
दसवें महीने बालक जायो। मामा दे घर भाणेज आयो॥ 17॥
सयन नाम राख्यो जोसी ने। पालन-पोख कर्‌यो मौसी ने॥ 18॥
जीवण माता सुरग सिधार्‌या। मामा-मामी ने गम पार्‌या॥ 19॥
पालण-पोषण कर्‌यो सुखालो। अपणो दूध पिलायो बालो॥ 20॥

मामा-मामी ने करी, पूरी सार सम्हाल।
अपण बेटा के समा, लियो सयन ने पाल॥ 6॥

सब तो जांदे रोज मदरसे। सयन बिचारो मन में तरसे॥ 21॥
सयन कह्यो मैं पोथी बाँचूँ। पढ़ूँ-लिखूँ सत-गत ने जाँचूँ॥ 22॥
मेरे रिदै ज्ञान की चाहा। सुगन सासतरी देवे राहा॥ 23॥
मामा कह्यो सुण रे सयना। तेरी नहीं माई कोई बहना॥ 24॥
नाई घर में जनम्यो जायो। पढ़वा मन किसतर आयो॥ 25॥
राछ-पीछ मन चित्त सम्हारो। काम खवासी मन में धारो॥ 26॥
शहर लहोरां रेहवे मासी। वा हे राजमहल में खासी॥ 27॥
राजमहल में पक्को पायो। तू हे वणकी बहना जायो॥ 28॥
शहर लहोरां थने पठाऊँ। नाई दा धंधा सिखवाऊँ॥ 29॥
काम सीख पक्को हो जावे। पिंड सुहाले थने ले आवे॥ 30॥
मासी दे घर पऊच्यो सयना। मान लिया मामा दा कहना॥ 31॥
नाई एक अजीम अलबेला। सूफी संत गुरिया दा चेला॥ 32॥
सयना दा उस्ताद बणायो। गुरु अजीम सब काम सिखायो॥ 33॥
छौर करम दा हुन्नर पायो। गुरियाजी दी संगत आयो॥ 34॥
मालिश दा उस्ताद सरधण्या। जड़ी-बूटियाँ ने पेहचाण्या॥ 35॥
गुरु अजीम दी मेहर होई। सयना तूँ उच्चा नहीं कोई॥ 36॥
सयना दे मन धीर बँधायो। गुरिया तूँ आसीस दिलाये॥ 37॥
मासी ने कह्यो सुन सयना। नहीं तेरे कोई भाई बहना॥ 38॥
मैं हाँ तेरी मासी-माता। तेरे सुख विच मेरी साता॥ 39॥
तेरा घर हिक बार बसाऊँ। ताँ दिल दे विच धीरज पाऊँ॥ 40॥

ब्याह करा देऊँ हाथ से, तां आवे दिल धीर।
कारज सँवरेगा अवस, सदमत गुरिया पीर॥ 7॥

फुल बरसावें सरग तूँ, तेरे माई-बाप।
ठार पड़ेगी आतमा, मिट जासी संताप॥ 8॥

पिंड एक छोटा-सा जानूँ। वीरो नाम नाई पहचानूँ॥ 41॥
रहनी करनी भगताँ जैसी। इल्लत बुरी नहीं कोई वैसी॥ 42॥
सत्त भिरावां दी हिक बहना। तेरे हाँण दी तोता-मयना॥ 43॥
पतरे दे विच सहबाँ आयो। घर विच निक्की नाम कहायो॥ 44॥
सबै भिरावाँ कोलूँ छोटी। सब तों निक्की तनकी मोटी॥ 45॥
तेरा ब्याह करा देऊँ सयना। सरगाँ दे विच हरसे बहना॥ 46॥
झटपट ब्याह करायो मोसी। आसीरवाद दे दियो जोसी॥ 47॥
थोड़ा दिन मासी घर रह्यो। पिंड सुहाले जावण कह्यो॥ 48॥
मासी ने झट आज्ञा कर दी। मोहर एक हत्थ विच धरदी॥ 49॥
सयनो मामा दे पिंड आयो। निक्की ने अपणे संग लायो॥ 50॥
मामा-मामी विया निहाला। भणीजा खट्टी कर लाया॥ 51॥
मामी बोली मधरी बानी। निक्की की कर ली अगवानी॥ 52॥
इक दिन मामा ने समझायो। बाँधवगढ़ को भान करायो॥ 53॥
राज नाई सन तेरे दादा। रखी बाप ने भी मरजादा॥ 54॥
सयना अब अपने घर जाओ। राजा नू जा अरज लगाओ॥ 55॥
राजमहल विच कर लो पाया। रहे सीस राजे दा साया॥ 56॥
बाँधवगढ़ जा गृहस्थी बसाओ। निक्की नू लारे ले जाओ॥ 57॥
प्रेम नाल रहियो जा दोई। बुरी बात नहीं केहवे कोई॥ 58॥
पुण्य कमाई करजो दोई। वाहे गुरु सहाई होई॥ 59॥
खूब कमाजो रज-रज खाजो। खर संगत विच कदां न जाजो॥ 60॥

सयना ने हरि नाम ले, बाँधव कर्‌यो पयान।
न घर जाणे बाप को, न कोई पेहचाण॥ 9॥
निक्की ने साथे लियाँ, लियाँ साज-सामान।
जिसतर तिसतर पौंच्या, बाँधवगढ़ रे भान॥ 10॥

बंद पड़यो घर झाड़ बुहार्‌यो। लीप-छाब सुथरो सँवार्‌यो॥ 61॥
दोइ जणा ने कर ली हिम्मत। हिम्मत की घण होवे किम्मत॥ 62॥
घर-आँगणो चानण होयो। झाड़-पूछ मैलो सब धोयो॥ 63॥
राज मेहल में जमयो पायो। हरसित होयो गढ़ को रायो॥ 64॥

चारी खूँट होयो सम्हेलो। असल दानकी दे बाघेलो॥ 65॥
सतसंग करे राम रस पीवे। सब दे हिरदै प्रेमरस नीवे॥ 66॥
मुलक-मुलक दा साध जन आवे। सत्संग कर परसादी पावे॥ 67॥
सयना सदा मगन मन रेहवे। दुख-सुख सब निक्की ने कहेवा॥ 68॥
सयन भगत को एक सपूता। सेवो नाम पंडा ने कूता॥ 69॥
घर में सेवू-सेऊ बुलावे। सेऊ सदा राम चित लावे॥ 70॥
मात-पिता की सेवा सेवे। साधू संगत में रत रेहवे॥ 71॥
एक दिवस साधू संग आयो। राम-नाम को नाद लगायो॥ 72॥
सयनो झट-पट बाहर आयो। चरण पखार घर भीतर लायो॥ 73॥
सांझ पड़यां झुरमुट्यो छायो। साधां ने घर में पधरायो॥ 74॥
घर में नहीं अन्न को दानो। सयनो चिंता में सकचानो॥ 75॥
साधू घर ती भूखा जावे। गृहस्थी अपणो धरम गँवावे॥ 76॥
सेऊ कह्यो सब चिंता छोड़ो। नहीं गाम में अन्न को तोड़ो॥ 77॥
सेऊ घर-घर भटक्यो, थाक्यो। कण ने भी घिरतो नी राख्यो॥ 78॥
सेऊ मन में कर्‌यो विचारा। चोरी को हिरदै निरधारा॥ 79॥
धरम सेठ के सेंध लगाऊँ। आटोदार काढ़ ले आऊँ॥ 80॥

साधू भूखा नी रहे, राखू अटल धरम्म।
साध जना के कारणे, धारूँ चोर करम्म॥ 11॥
सेऊ नाई चाल्यो, तुरत हाट का बाट।
चोरी में नी चाहिए, दाम ताकड़ी बाट॥ 12॥

हाट जाइ पुनि सेंध लगाऊँ। काम सधे वतरोले आऊँ॥ 81॥
लालच तनिकन मन बिचलाऊँ। सीधो ले झट पाछो आऊँ॥ 82॥
सेऊ गयो हाट के पारद। पिछवाड़ा तो कर दी गारद॥ 83॥
भीतर मधर दीपक परकासो। आटो दाल ढूँढ्यो खासो॥ 84॥
झट पछेवड़ी गाठण बाँधी। धीरप ती सब करनी साधी॥ 85॥
एक ऊँदरो सरपट भाग्यो। खटपट सुण सेठ सुत जाग्यो॥ 86॥
सेऊ दौड़यो सेंध मुख आड़ी। सेठ पूत ने धरी पिछाड़ी॥ 87॥
माथो बाहर धड़ फँस्यो भीतरे। सेऊ बाहर कढ़े की तरे॥ 88॥
सीधो बाहर फेंक्यो सेऊ। पग छुड़वा नी पायो केऊँ॥ 89॥
विलम्ब देख सयन अकलायो। हाट-बाट बल फौरन आयो॥ 90॥

हाट पिछाड़ी सीधो पड्यो। सेऊ को सिर बाहर कढ़यो॥ 91॥
सेऊ बोल्यो सुण लो राओ। उठा पोटल झट घर जाओ॥ 92॥
जिसतर-तिसतर पिंड छुड़ाऊँ। पाछे-पाछे घर जा आऊँ॥ 93॥
सीधो ले सयनो घर आयो। नीकी ने परसाद बणायो॥ 94॥
खटपट सुण रखवालो आयो। चोर देख हथियार चलायो॥ 95॥
माथो काट दियो सेऊ को। रखवालो मोको नहीं चूके॥ 96॥
ले मशाल जद परखण आयो। सेऊ सीस देख घबरायो॥ 97॥
माथो उठा दौड़्यो सरपट। घर आयो सयना के फाटक॥ 98॥
नीकी ने बाहर आ झाँक्यो। कर्‌यो देख मन साँक्यो॥ 99॥
सीस उठा घर भीतर लीयो। गुपत टोपला में धर दीयो॥ 100॥

ना रोई ना सीसकी, कर्‌यो न तनक विलाप।
धन्न-धन्न नीकी कहूँ, धन्न माई अर बार॥ 13॥
साधू भोजन नी करे, करे नहीं पय्यान।
अतरे तो चुप सी रहूँ, राखूँ घर का मान॥ 14॥

भाटो मेल लियो छाती पे। अंकुस लगा लियो धाती पे॥ 101॥
भोजन जीम लियो साधूआँ। आसीरवाद दियो मनसूआँ॥ 102॥
जद पयान को औसर आयो। संता ने सेऊ चितलायो॥ 103॥
सेऊ नजर नहीं क्युँ आयो। कौन काम पे दियो पठायो॥ 104॥
सयन कह्यो ऊ नदी सिधायो। कर असनान पाछो नहीं आयो॥ 105॥
सुभ-सुभ आप सब करो पयानो। सेऊ को नहीं लगे ठिकानो॥ 106॥
साधू कहें तुम हाँक लगाओ। सेऊ ने घर में बुलवाओ॥ 107॥
सेवा करी सेऊ ने पूरी। सेऊ से लेवा मंजूरी॥ 108॥
पाछे करां पयान हे सयना। सेऊ ने निरखाँ दो नयना॥ 109॥
सयना कहे आप बुलाओ। चारी दिसा आवाज लगाओ॥ 110॥
साधू कहें सुनो हे सयना। सेऊ सुणे बाप के बयना॥ 111॥
हाँक आपकी मर्‌यो जीवे। राम नाम को अमरत पीवे॥ 112॥
सयना ने एक हाँक लगाई। घर के फाटक तक जा पाई॥ 113॥
दूजी हाँक हाट के नीचे। धड़ आयो आँगणा बीचे॥ 114॥
तीजी हाँक सीस उड़ आयो। सेऊ को सवरूप बणायो॥ 115॥
सयन कह्यो सेऊ उठ जाओ। राम नाम की रटन लगाओ॥ 116॥
राम नाम अमरत धुन लाई। साध जना के धोग लगाई॥ 117॥

धन्न-धन्न हे सेऊ सपूतो। बड़ी देर निद्रा में सूतो॥ 118॥
सयना को परवार उजागर। तीनई उतरोगा भवसागर॥ 119॥
दे आसीस संत पयाना। राम नाम की सगत पिछाना॥ 120॥

धन्य-धन्य सेऊ कहूँ, जनम्यो पूत सपूत।
साँचो प्रेम निबाहवा, करली साँची कूत॥ 15॥
सयना ने आसीसियो, नीकी कर्‌यो लाड़।
सेऊ थें पत राखली, दूध, रगत की हाड़॥ 16॥
धन्य कर्‌यो दोई वंसने, जन्मयो सऊ पूत।
सिर दे होयो चानणो, सेऊ सदर सपूत॥ 17॥
सीस दियो जसनी दियो, सेऊ पूत सुजान।
साधू एवं पूत दा किस विध करूँ बखान॥ 18॥

राजमहल सयनो नित जावो। छौर करे असनान करावे॥ 121॥
मालिस करे हुनर की ऐसे। अंग-अंग पुरकावे जैसे॥ 122॥
एक दिना साधू संग आयो। सयना ने आसन लगवाये॥ 123॥
ब्रह्म काल असनान करायो। सतसंगत को धाम जमायो॥ 124॥
भजन भाव सत होवण लागा। सयनो वियो प्रेम अनुरागा॥ 125॥
राजमहल को भान भुलायो। राज चाकरी नी जा पायो॥ 126॥
धन्य-धन्य प्रभु कर्‌यो विचारा। सयना ने करम बिसारा॥ 127॥
राजदण्ड क्युँ भोगे सयना। मगन हुओ मेरे गुण गयना॥ 128॥
प्रभु ने रूप धर्‌यो सयना को। राममहल को साध्यो मौको॥ 129॥
बघेलराज की करी खवासी। धन्य-धन्य द्वारकावासी॥ 130॥
भगत काज नाई बण आया। सयना का कारज सरजाया॥ 131॥
सयनो सतसंग मगनो होयो। रामरसो पी तन-मन खोयो॥ 132॥
सयना नूं जद चेतो आयो। चार हाथ सूरज चढ़ आयो॥ 133॥
झोलो उठा महल पथ रपट्यो। राजा के खम्मण कर सटक्यो॥ 134॥
खम्मा-खम्मा भूल-चूक की। आगे करूँ नहीं अस चूकी॥ 135॥
राजा ने कह्यो रे सयना। करी खवासी अबहुँ गयना॥ 136॥
जैसी आज खवासी कीन्हीं। ऐसी तो कबहुँ नहीं चीन्हीं॥ 137॥
सयन भगत औ चक्यो होयो। हरि ने म्हारो कारज सोह्यो॥ 138॥
धन्य-धन्य हे कृसन मुरारी। धन्य-धन्य हे रसक बिहारी॥ 139॥
राज बघेला ने जद जाण्यो। सयना को महत्तम मन आण्यो॥ 140॥

सयना थोर कारणे, धन्य वियो मैं आज।
खुद आ दरसन दे गया, कृसन द्वारका राज॥ 19॥
राजा ने खम्मण करी, दी चरणा में धोग।
नाई बण सलटा गयो, कान्हा म्हारा रोग॥ 20॥
सयना तू साँचो भगत, साँचो थारो राम।
नाई बण सलटा गयो, हरिजू थारा काम॥ 21॥
नित-नित महलां आवजे, म्हारे मन आनंद।
थने देख दरसन करूँ, पूरण परमानंद॥ 22॥

एक बरस संत जन आए। मान-पान राजे पधराए॥ 141॥
राज बघेले दूत पठायो। सयन भगत ने झट बुलवायो॥ 142॥
सयनो आयो राज के महलाँ। बड़े संत नूँ धोक्यो पहलाँ॥ 143॥
झट महंत ने थापी मारी। माया दूर भगाई सारी॥ 144॥
थाप लगाई रामानंदा। सयना दे मन परमानंदा॥ 145॥
धन्य वई गयो नाई सयना। आँसू छलक-छलक उठ्या तिस नयना॥ 146॥
सद्गुरु कह्यो दक्खन दिस जाओ। दक्खन जा हरि भजन सुनाओ॥ 147॥
माया, मोह, गिरहस्थी त्यागी। संत हुओ सयनो बड़भागी॥ 148॥
पैंती बरस उमर जुव लागी। सयना की सुरती लिव लागी॥ 149॥
सद्गुरु आज्ञा दक्खन आयो। रामानन्द हरि चित्त धरायो॥ 150॥
एक बरस दक्खन में रह्यो। सतसंग सुण्यो अर कह्यो॥ 151॥
पाण्डुरंग का रसगुण गाया। भजन रचया सरस सुणाया॥ 152॥
चाल पड़्यो कासी के पंथा। सत संगत करतो सुभ संतां॥ 153॥
एक बरस में कासी पुगयो। सतगुरु दा दरसन कर सुगयो॥ 154॥

सतगुरु रामानंदजी, पहुँच्या बाँधव देस।
सात सिस्य साथे लियां, महलां कार्‌यो प्रवेश॥ 23॥
संवत चौदह सौ कहूँ, पैंतीसां को साल।
सैन भगत ने सिस्य कर, काट दिया भ्रम जाल॥ 24॥

सतगुरु रामानंद कृपालू। तारक मंत्र दे दियो कृपालू॥ 155॥
अन्तरघर में राम समाया। सतगुरु दुई भरम मिटाया॥ 156॥
सत संता ती भेंटा होई। भगत कबीर रैदासो सोई॥ 157॥
पीपा, धन्ना नेह जतायो। भगति को मारग दिखलायो॥ 158॥

सतगुरु धाम रज माथे धारी। मुलक भ्रमण दी करी तियारी॥ 159॥
सतगुरु रामानन्द चित्त लायो। देस भ्रमण के काज सिधायो॥ 160॥

देस-देस में घूमियो खूब कर्‌या सतसंग।
सबै रंग फीका पड़्या, चढ़यो राम रसरंग॥ 25॥
सयना की वाणी मधुर, ज्युँ मिसरी रसदार।
भजन सुणावे रस पगा, पड़े हृदय में ठार॥ 26॥
गाम-गाम ठहरो करे, मंदर कदै मसीत।
कढ़ै ओटलो गाम को, सुरतो राखे चीत॥ 27॥
मुलक-मुलक सत्संग कर्‌यो, खूब मिल्या सुभ साध।
सत्संगत ने सेवताँ, पायो ज्ञान परसाद॥ 28॥

(चौपाई क्र.-161 से 174 तक का पृष्ठ फट चुका है। 15 चौपाई उपलब्ध नहीं हो सकीं।)

देस-विदेसां सत्संग कर्‌यो। सतगुरु को हूकम अनुसर्‌यो॥ 175॥
एक समै टोडा में आयो। टोडा में मुक्काम लगायो॥ 176॥
चढ़यो जोर को जूड़ी तापो। मीटण आयो जग संतापो॥ 177॥
पीपा ने झट वैद बुलायो। भले भाव उपचार करायो॥ 178॥
सीता देवी सेवा साधे। समै औसध परबाधे॥ 179॥
उमर बहोतर वई लगभगी। राम रसायन छकी रस पगी॥ 180॥

सीता ने सेवा करी, मिट्यो ताप-संताप।
होवे चलण-फिरण नहीं, नहीं देह में दाप॥ 29॥
पीपा ने मिन्नत करी, अठेऽज करां विसराम।
कुटी छवा देवां उठे, आसरम करो मुकाम॥ 30॥
सयण तो सुरतो वियो, सीता के तन मांद।
राम-राम रसना रटे, नहीं देह में सांद॥ 31॥
बरस बहोत्तर विक्रमी, सीता सुरग सिधार।
करी समाधी राज ने, आसरम के मझधार॥ 32॥
तन थाक्यो मन थाक गयो, सुणो सयनजी साध।
गागरोन गढ़ गार में, करां नाम आराध॥ 33॥
पीपाजी की बात सुण, सयनो हुओ खुसाल।
ऐसी संगत जद मिले, सद्‌गुरु होय कृपाल॥ 34॥

हाथ जोड़ पीपे कर्‌यो, सीता सती समाध।
धन्य-धन्य हे सहचरी, धर्‌यो धरम अबाध॥ 35॥

पीपा ने सद् आसरम छोड्यो। गागरोन दिसा मुख मोड्यो॥ 181॥
सयना संग चल्या पीपा के। करे मुकाम जठे तन थाके॥ 182॥
मारग सत्संग करता जावे। तन-मन की थकान मिटावे॥ 183॥
गागरोन जा पौंच्या दोई। खीची राज अगवानी होई॥ 184॥
आहू, सिंध नदी के करड़े। कर्‌यो मकाम गढ़ी के भरड़े॥ 185॥
गुफा बीच मुक्काम लगायो। सयना को आसरम बणवायो॥ 186॥
बरस पाँच मुक्कामी रह्या। सत्संगी संग सुण्या, कह्या॥ 187॥
नित सत्संगत होवण लागी। संत जना को मन अनुरागी॥ 188॥
सयनो एक जगा नीथिरयो। मालव देस घूमतो फिर्‌यो॥ 189॥
बीच आसरम आ जावे। पीपाजी ने वचन सुणावे॥ 190॥
वेतां-वेतां बरस बीतया। तन-मन का सब ताप सीतया॥ 191॥
पीपाजी ने धरी समाधी। राम-राम रसना आराधी॥ 192॥
आतम परमानंद समाई। पीपे कर ली खरी कमाई॥ 193॥
बरस सितोत्तर विक्रम जाणू। पूरण परमानंद पिछाणू॥ 194॥
सयनो बैठ्यो आसरम बीचे। सोच-विचोर आखाँ मीचे॥ 195॥
सयना ने निरधारो कर्‌यो। सिद्ध समाध नूँ नमन कर्‌यो॥ 196॥
चाल पड़्यो ओंकेसर हामू। नरमद तट जा करूँ मुकामू॥ 197॥
ओंकारेसर जा कर्‌यो निवासो। थोड़ा दन होयो रहवासो॥ 198॥
गुरु दरसन की सुरती जागी। बार-बार एकहि धुन लागी॥ 199॥
पाकी ऊपर काही जाऊँ। गुरु चरणा जा धोक लगाऊँ॥ 200॥

संग जुड़ गयो साधको, सत्संगत गुणगान।
ओंकारेसर ती कर दियो, सयन भगत पयान॥ 36॥
उमर पाक अस्सी वई, पउँच गयो गुरुधाम।
सद्‌गुरु पगल्या धोक्या, कासी कर्‌यो मुकाम॥ 37॥
विक्रम चौदा सौ कहूँ, ऊपर नब्बे जान।
सयना ने गुरुधाम में, त्याग दिया निज प्रान॥ 38॥

सयना की पोथी लिखी, सुणी गुणी मन लाय।
नाम अनंतोदास हे, सतगुरु सदा सहाय॥ 39॥
भीसम को औतार थो, सयनो भगत सुनाम।
इच्छा मिरतू धार ली, सतगुरु जी दे धाम॥ 40॥
सयनो सरग सिधार्‌यो, सद्‌गुरु राम अराध।
गुरु आसरम के धाम में, संता करी समाध॥ 41॥
संवत सोला सै कहूँ, ऊपर कहूँ पच्चास।
सयना की परची लिखी, नाम अनन्तोदास॥ 42॥
परची जूणी जाणता, दुपट लिखी सुखदास।
जाण समझ गुरुमुख लिखी, वाहे गुरु अरदास॥ 43॥
बार-बार वाचन कर्‌यो, नकल उतारी जाण।
जस की तस लीखी समझ, नहीं सबद की हाण॥ 44॥
संत सरता के समे, रह्यो मालवे देस।
घर-गृहस्थी सब छोड़ दी, धर्‌यो साधू वेस॥ 45॥
सुखानन्द केदासरा, संखेसर सुखधाम।
केदारो मन रुचियो, पाको कर्‌यो मुकाम॥ 46॥
झर-झर झरना अरे, पंछी गावें गान।
वानर पेहरो दे अठे, करूँ नाम गुणगान॥ 47॥
गुरुमुख ती उलथा कर्‌यो, बोली बोले लोग।
सयना की परची लिखी, सबके समझण जोग॥ 48॥
संवत सतरा सै लिखी, सुभ सावन सिव मास।
चूक करी नहीं जाणता, सरसत हिरदै वास॥ 49॥
केदारा ती चालने, आयो नर्मद तीर।
धरमदास मन धार्‌यो, छोड़ूँ अठे सरीर॥ 50॥
मालव भूमि रस पगी, सीतल संत सुभाव।
बैर भाव राखे नहीं, नहीं कोई भेद दुराव॥ 51॥
बीस बरस गुजर्‌या अठे, सिव थल रह्या मुकाम।
सब नदियाँ असनानियो, दरस्या सब सिव धाम॥ 52॥
परची सयना भगत की, पढ़े-सुने जो कोय।
धरमदास सुख ऊपजे, तन-मन निरमल होय॥ 53॥

– लिखी– अनन्तदास की

भावार्थ

मैं सबसे पहले सद्गुरू के चरण कमल में वन्दन करता हूँ। सयना की परची (परिचय) लिख रहा हूँ। हे सद्गुरू! आप सदा मेरी सहायता करना।

सयना नाई जाति का था। भक्तों में वह श्रेष्ठ था। उसे रामानन्दजी ने कण्ठी प्रदान की। वह और का और हो गया। उसका जीवन बदल कर श्रेष्ठ हो गया। सयना की न तो गादी थी, न आश्रम था, न उसने किसी को शिष्य बनाया और न ही उसकी कोई अतृप्त इच्छा शेष रही। उसने सद्गुरू (रामानन्द) की कृपा से अपनी राह (जीवन-शैली) शुद्ध कर ली।

मैंने जैसा सयना भगत के बारे में सुना है, पढ़ा है, उसमें न तो कुछ अपनी ओर से जोड़ा है और न घटाया है। हे सद्गुरू! आप मुझ पर कृपा रखना और मेरे लेखन के मार्ग को सहज बना देना। जहाँ-जहाँ भी सयना रहा, मैं वहाँ गया और सारी जानकारी इकट्ठी की। हे सद्गुरु जी! यदि मुझसे कोई भूल-चूक हो जाये तो मुझे आप क्षमा कर देना। यह मेरी प्रार्थना है।

- (दोहा 1 से 5)

मैं सद्गुरू रामानन्दजी के चरणों में शीश नमाकर उनकी चरण-शरण में प्रणाम करता हूँ। सद्गुरू की आज्ञा प्राप्त करना चाहता हूँ। मैं सरस्वती माता, सिद्धि के दाता गणेशजी, जगतमाता दुर्गा-भवानी, माता-पिता, हनुमानजी व अंजना माता का स्मरण करता हुआ, सबका वन्दन करता हूँ।

मैं न रचना करना जानता हूँ, न कुछ कहना जानता हूँ। मैं सरस्वती माता को अपने हृदय में धारण कर यह प्रार्थना करता हूँ कि- हे सरस्वती माता! आप मेरे शब्द-शब्द में विराजो और जो कविता में लिखूँ, उसे सत्य बना देना।

मैं हृदय में भक्ति भाव को धारण करता हूँ और संत सयना भगत की कथा सुनाता हूँ।

मैंने भक्तमालों और पर्चियों (परचइयों) का अध्ययन किया है। जो कुछ भी मैंने लिखा है, वह सब सत्य है।

सयन भगत बहुत भाग्यवान थे। उनकी राम और सद्गुरु में अनन्य आस्था थी। वह नित्य प्रति राम नाम का जाप करते थे और हाथों से नाई का काम करते थे।

वे बाँधवगढ़ के मूल निवासी थे। उनके पिता, दादा भी बाँधवगढ़ के निवासी थे। उनकी माता का नाम जीवणीबाई तथा पिता का नाम मुकुन्द था।

उनके जन्म से पहले उनके पिता का देहान्त हो गया था। ऐसी स्थिति में माता को बाँधवगढ़ में रहना अच्छा नहीं लगा। माता का पीहर अमृतसर के सुहाला गाँव में था। माता ने मन में धैर्य धारण कर अपने पूर्वजों के नगर बाँधवगढ़ को प्रणाम किया और वहाँ से अपने पीहर सुहाला में आ गईं। वहीं रहकर माता ने अपने गर्भ के शेष माह पूर्ण किये। दसवें महीने एक बालक को जन्म दिया। मामा के घर में भाणेज का आगमन हुआ।

जोशी ने बालक का नाम 'सयन' रखा। सयन की मासी ने बालक का पालन-पोषण किया। सयन की माता का स्वर्गवास हो गया। मामा-मामी ने अपनी बहन का शोक मनाया। मामी ने बालक सयन का सुखपूर्वक पालन किया। उसे अपना दूध पिलाया।

– (साखी 1 से 20 तक)

मामा-मामी ने बालक सयना की पूरी साज सम्हाल की। उन्होंने सयना को अपने बेटे की तरह पाला।

– (दोहा 6)

सब बच्चे तो प्रतिदिन पाठशाला जाते थे। बिचारा सयना मन ही मन में तरसता रहता था। सयन ने कहा- मैं भी पोथी पढ़ना चाहता हूँ। पढ़-लिखकर सत्य की गति को जानना चाहता हूँ। मेरे हृदय में ज्ञान की इच्छा है। सुगन शास्त्री मुझे ज्ञान का मार्ग समझाएँगे।

मामा ने कहा- 'अरे सयन! तू मेरी बात सुन। तेरा न तो कोई भाई है और न बहन है। तुझे अपना पैतृक काम सम्हालना है।'

नाई के घर पैदा हुए हो। तुम्हारे मन में पढ़ने का विचार कैसे आ गया। अपने औजारों को मन से सम्हालो और खवासी के काम में मन लगाओ।

लाहौर में तेरी मासी रहती है। वह राजमहल की खास है। राजमहल में उसका बहुत प्रभाव है। तू उसकी बहन का जाया है। मैं तुझे लाहौर भेजकर नाई का काम सिखवाऊँगा। जब तू नाई के काम में प्रवीण हो जायेगा, तब तुझे वापिस सोहाले में ले आएँगे।

सयना मासी के घर लाहौर पहुँच गया। उसने मामा का कहना मान लिया।

लाहौर में एक नाई था, जिसका नाम अजीम अलबेला था। वह गुरिया संत का चेला था। (कहते हैं- सयन की माता ने गुरिया संत के आशीर्वाद से यह संतान प्राप्त की थी। इस प्रकार सयना भी गुरिया संत का ही मुरीद था। यह एक आध्यात्मिक संयोग ही था कि सयन का गुरु मुसलमान नाई अजीम बना, जो गुरिया का चेला था।)

उस अजीम नाई को सयन का उस्ताद बनाया गया। अजीम ने सयन को नाई का सारा काम सिखा दिया। हजामत का काम भी सीख लिया और संत गुरिया की संगत से ज्ञान भी प्राप्त कर लिया। अजीम ने सयन को मालिश करने की कला भी सिखाई और अनेक जड़ी-बूटियों की पहचान भी करवाई।

गुरु अजीम की ऐसी मैहर (कृपा) हुई कि सयन से अधिक जानकार और कोई नहीं बन सका। मासी ने सयन को खूब धैर्य बँधाया व गुरियाजी से आशीर्वाद दिलवा दिया।

मासी ने कहा- सयना! सुन, तेरा न तो कोई भाई है और न बहन। मैं तेरी मासी माँ हूँ। तेरे सुख में मुझे सुख है। मैं चाहती हूँ कि एक बार तेरा घर बसा दूँ। तब मुझे मन में धीरज मिलेगा।

- (साखी 21 से 40)

मैं तेरा विवाह करवा दूँ, तब मेरे मन में धैर्य होगा। तेरे सभी काम संत गुरिया पीर सँवारेंगे। स्वर्ग से तेरी माता और पिता फूलों की वर्षा करेंगे। उनकी आत्मा को शान्ति प्राप्त होगी। उनकी आत्मा के सभी संताप मिट जाएँगे।

- (दोहा 7- 8)

पास में ही एक छोटा-सा गाँव है। वहाँ वीरा नाम का नाई है। वह मेरी पहचान का है। उसका रहन-सहन भक्तों जैसा सात्त्विक है। कोई भी बुरी लत उसमें नहीं है। उसके सात बेटे हैं। सात भाइयों की एक बहन है। तेरी उम्र की है। ऐसी जोड़ी जमेगी जैसे तोता-मयना की। पतरे (पंचांग) में तो उसका नाम साहबाँ आया, किन्तु घर में और भाइयों में सबसे छोटी होने के कारण सब उसे निक्की (छोटी) पुकारते हैं।

सयना मैं उस लड़की से तेरा विवाह करवा देती हूँ। तेरे विवाह को देखकर स्वर्ग में तेरी माता, मेरी बहन बहुत हर्षित होगी।

मासी ने झटपट सयना और निक्की का विवाह करवा दिया। पण्डित ने आशीर्वाद दे दिया।

सयन थोड़े दिन मासी के घर रहा, फिर उसने मामा के गाँव सोहाला जाने की इच्छा प्रकट की।

मासी ने सयन को तत्काल आज्ञा दे दी तथा एक मोहर उसे देकर निक्की के साथ विदा कर दिया।

सयन निक्की को साथ लेकर मामा के घर सोहाला आ गया। दोनों को आया देखकर मामा-मामी बहुत प्रसन्न हुए। निक्की का स्वागत कर घर में लिवा ले गये।

एक दिन मामा ने सयन को समझाकर उसके पितृ-गाँव बाँधवगढ़ का भान करवाया। मामा ने बताया कि तेरे पिता और दादा बाँधवगढ़ महाराज के राज नाई थे। इसलिए तुम अपने बाप-दादा के घर (नगर) में जाओ। वहाँ जाकर राजा के पास अपनी अर्जी लगाओ और राजमहल में अपना स्थान बनाओ। इससे तुझ पर राजा की कृपा बनी रहेगी।

बाँधवगढ़ में अपनी गृहस्थी बसाओ। निक्की को साथ ले जाओ। दोनों वहाँ प्रेम से रहना। वाहेगुरु तुम्हारी सदा सहायता करेंगे। खूब कमाना और खूब रुचिकर भोजन करना। बुरे लोगों की संगत में मत जाना।

- (साखी 41 से 60)

सयन ने हरि का नाम लेकर बाँधवगढ़ के लिए प्रस्थान कर दिया। उसे न तो अपने घर का पता था और न किसी से पहचान थी।

निक्की को साथ लेकर तथा अपना सामान उठाकर सयना यात्रा पूरी कर जैसे-तैसे बाँधवगढ़ पहुँच गया।

- (दोहा 9-10)

कई बरस से बंद पड़े मकान को दोनों ने झाड़-बुहारकर और लीप-छाबकर सँवार लिया। दोनों ने खूब हिम्मत कर ली। हिम्मत तो अमूल्य होती है।

घर और आँगन सब स्वच्छ होकर चमक उठे। सारा मैल झाड़-पोंछकर धुल गया।

राजमहल में सयन का अच्छा प्रभाव जम गया। उसके काम और व्यवहार को देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ।

सयन का चारों तरफ खूब नाम और व्यवहार हो गया। राजमहल से भी अपनी मजदूरी मिलने लगी।

सयन का नाम सुनकर देश-देश के साधु-संत उसके घर पर आने लगे। खूब सत्संग होने लगा। सबको भोजन भी मिल जाता था। सयन भी सत्संग में मगन रहकर राम रसपान करने लगा। सयन सदा राम स्मरण में मगन रहते थे। अपना दुख-सुख निक्की के साथ बाँटते थे।

सयन का एक बेटा था, जिसका नाम पंडित ने 'सवा' रखा। उसे घर में 'सेवू' पुकारते थे। फिर 'सेऊ' पुकारने लगे। वही नाम पक्का हो गया। सेऊ भी राम नाम में लीन रहता था। वह माता-पिता और साधु-संतों की सेवा करता था।

एक दिन साधु संघ आया। उन्होंने सयना के घर के बाहर 'राम' नाम की पुकार लगाई।

राम नाम की पुकार सुनकर सयन तत्काल बाहर आए। उनके चरण पखार कर भीतर ले गये। तब तक साँझ का झुरमुटा हो गया था। सयन ने साधुओं को घर के भीतर बिठाया।

घर में तो अन्न का दाना भी नहीं था। सयन चिन्ता में संकुचित हो रहे थे। उन्होंने सोचा, यदि साधु घर से भूखे चले गये तो गृहस्थी का धर्म नष्ट हो जाएगा।

सेऊ ने कहा- आप सब चिन्ता छोड़ दीजिये। गाँव में अन्न की कमी नहीं है। सेऊ घर-घर गया। वह थक हार गया। कहीं से भी उसे अन्न नहीं मिला। किसी ने भी धैर्य नहीं बँधवाया।

सेऊ ने मन में विचार कर लिया, अब चोरी के अलावा कोई दूसरा उपाय नहीं रहा।

मैं धर्मचन्द्रजी की दूकान में सेंध लगाकर आटा-दाल लेकर आऊँगा।

- (साखी 61 से 80)

साधु भूखे नहीं रहें। यह अटल धर्म है। मैं इसका निर्वाह करूँगा। साधुओं के कारण मैं चोर धर्म धारण करूँगा।

सेऊ नाई हाट (बाजार, दूकान) के मार्ग पर चल दिया। चोरी करने के लिए न ताकड़ी-बाट चाहिए, न दाम चाहिए।

- (दोहा 11 - 12)

मैं दूकान में सेंध लगाकर जितना आटा-दाल चाहिए, उतना भर ले आता हूँ। इसमें थोड़ा-सा भी लालच नहीं करूँगा। ऐसे सोचकर सेऊ हाट में गया और एक दूकान में पिछवाड़े से सेंध लगाकर भीतर घुस गया। भीतर दीपक का मद्दम प्रकाश था। उसी प्रकाश में उसने आटा-दाल ढूँढ़ लिया। अपनी पछेवड़ी (दुपट्टे) में बिना आवाज किये गाँठ बाँध ली। उसने सारा काम धीरे से साध लिया। तभी एक चूहा सरपट दौड़ता हुआ भागा। उसके दौड़ने से जो खड़बड़ हुई उसे सुनकर दूकान के भीतर सो रहा सेठ का बेटा जाग गया। उसे जागा हुआ जानकर सेऊ सेंध की ओर दौड़ा। उसने आटा-दाल की पोटली बाहर फेंक दी और बाहर निकलने के लिए लेटकर सिर बाहर निकाला ही था कि सेठ-पुत्र ने उसके पाँव पकड़ लिये। सेऊ ने बहुत प्रयत्न किया, किन्तु बाहर नहीं निकल पाया। उसका सिर सेंध के बाहर और धड़ दूकान के भीतर फँसा था।

उधर सयना भगतजी ने सोचा सेऊ को गये बहुत विलम्ब हो गया है। वे तलाश करने हाट की ओर चले। सयना (सैन) जी जब उस दूकान के पिछवाड़े से गुजर रहे थे, तब उन्होंने वह दृश्य देखा। दृश्य देख वे झुककर देखने लगे। अरे! यह तो सेऊ है। सयन ने सेऊ को पुकारा।

सेऊ ने कहा– आप मेरी चिन्ता छोड़ो। बाहर आटा–दाल की पोटली पड़ी है। आप उसे उठाकर घर ले जाओ। मैं जैसे–तैसे छूटकर आ जाऊँगा।

सीधा लेकर सयना घर पहुँचे। निक्की ने भोजन–प्रसादी बना दी।

सेऊ के सेंध से बाहर निकलने के प्रयास से जो खटपट हुई, उसे सुनकर सेठ की दूकान का रखवाला दूकान के पिछवाड़े आया। सेंध एवं चोर को निकलकर भागने के प्रयास को देखकर उसने आव देखा न ताव और सेऊ पर हथियार का प्रहार कर दिया। प्रहार से सेऊ का सिर कट गया। सिर काट देने के बाद वह भागकर मशाल लाया। मशाल के प्रकाश में सेऊ का कटा सिर देखकर वह उसे पहचान गया। घबराकर उसने सिर उठाया और उसे सयना भगत के दरवाजे पर रखकर वापिस आ गया। दरवाजे के बाहर किसी के पाँव बजाने की आवाज सुनकर निक्की बाहर आई। उसने बाहर सेऊ का कटा सिर देखा। (उसे सेंध लगाने की घटना सयन ने अवश्य बतलाई होगी।) निक्की ने सेऊ का सिर उठाया और भीतर ले जाकर चुपचाप एक टोपले में रखकर ढँक दिया।

– (साखी 81 से 100)

निक्की न तो सिसकी न रोई। न विलाप किया। निक्की धन्य है। उसके माँ–बाप भी धन्य हैं। निक्की ने मन में तय कर लिया, जब तक साधु लोग भोजन करके नहीं चले जाते, तब तक चुप रहूँगी और घर की मर्यादा रखूँगी।

– (दोहा 13 – 14)

निक्की ने अपनी छाती पर पत्थर रख लिया। उसने अपनी धरती (धात्री) ममता पर अंकुश लगा लिया। साधुओं ने भोजन कर लिया और मनचाहा आशीर्वाद दे दिया। जब उनके विदा का अवसर आया, तब संतों ने सेऊ को याद किया। उन्होंने पूछा– सेऊ नजर नहीं आ रहा। उसे कहाँ भेजा है?

सयन जी ने कहा– वह स्नान करने नदी पर गया है। लौटा नहीं है। आप तो शुभ गमन करो। उसका कोई भरोसा नहीं कब लौटे। साधुओं ने कहा– सयन! तुम उसे पुकारो और घर में बुलवाओ। उसने हमारी खूब सेवा की है। उससे विदा लिए बिना हम कैसे चले जाएँ? उसे अपने नेत्रों से देखें, तब जाएँ।

सयना ने कहा– ठीक है। आप ही उसे पुकार कर बुलाओ। चारों दिशाओं में पुकारो। साधुओं ने कहा– सयन! आपके बुलाने पर ही वह आएगा। तुम ही पुकारो। आपकी पुकार सुनकर तो मरा हुआ भी जीवित होकर राम नाम का अमृत पीने लगेगा।

साधुओं के कहने पर सयनजी ने हाँक लगाई। उनकी हाँक घर के दरवाजे तक ही जा पाई। दूसरी हाँक (पुकार) बाजार की दूकान तक पहुँची। पुकार सुनकर सेऊ का धड़ आँगन में आ गया। तीसरी हाँक लगाने पर टोपले में रखा सिर धड़ के पास आ गया। सेऊ का स्वरूप बन गया। सयन ने तब कहा– 'सेऊ! उठ जाओ और राम नाम की धुन लगाओ।'

सेऊ ने राम नाम की अमृत धुन लगाई। साधुओं ने सेऊ को प्रणाम किया। साधुओं ने कहा– 'सेऊ! तू धन्य है। अरे! तू खूब देर तक नींद में सोया रहा। तूने तो सयन का परिवार उजागर कर दिया है। तुम तीनों भवसागर से पार होओगे।'आशीर्वाद देकर संतजन प्रयाण कर गये। उन्होंने राम नाम की शक्ति को जान–समझ लिया।

– (साखी 101 से 120)

हे सेऊ! तू धन्य है। तू सपूत के रूप में जन्मा है। तूने सत्य प्रेम का निर्वाह कर सच्चा मूल्यांकन किया है। सयनजी ने उसे आशीर्वाद दिया और निक्की ने खूब लाड़ किया। निक्की ने कहा– अरे सेऊ! तूने मेरे दूध और पिता के रक्त की मर्यादा रख ली है। तू हमारा सच्चा सपूत है।

सेऊ! तूने मेरे घर में जन्म लेकर दोनों वंश (पिता और माता) की लाज रख ली है। तूने सिर देकर वंश उजागर किया है। हे सेऊ! तूने सिर दे दिया, किन्तु घर का यश नहीं जाने दिया। ऐसे सपूत का बखान किस प्रकार करूँ?

– (दोहा 15 से 18)

सयन जी प्रतिदिन राजमहल जाते थे। राजा की हजामत करते तथा स्नान करवाते थे। मालिश ऐसी करते थे कि राजा का अंग–अंग पुलकित हो जाता था। एक दिन सयन जी के घर साधु संघ आया। सयनजी ने आसन लगवाया। ब्रह्मकाल में उन्हें स्नान करवाया और सत्संगत का आयोजन किया।

सत्संग होने लगा। सयनजी प्रेम मगन हो गये। उन्हें राजमहल जाने का भान नहीं रहा। वह राजा की चाकरी हेतु नहीं जा पाया। भगवान ने विचार किया। सयन मेरे गुणगान में मगन है। वह राजदण्ड क्यों भोगे? उन्होंने सयन का रूप धारण किया और राजमहल पहुँचकर सयनजी की चाकरी का समय साध लिया। उन्होंने बघेल राजा की खवासी की। हे द्वारकाधीश! आप धन्य हैं। आप अपने भक्त के कारण नाई बने और सयन भक्त का कारज सँवारा।

सयन तो भजन भाव और राम रस पीने में लीन थे। उन्हें जब चेत आया, तब एकदम उठे और झोला उठाकर राजमहल की ओर दौड़ने लगे। तब तक चार हाथ सूर्य आकाश में चढ़ आया था। राजा के सामने जाकर सयन ने क्षमा–प्रार्थना की। सयन ने कहा– आज की भूल माफ कर दें। भविष्य में ऐसी भूल नहीं होगी।

बघेल राजा आश्चर्य में पड़ गया। राजा ने कहा- अरे सयन! तुमने तो ठीक समय पर आकर नित्य नियम से खवासी की और खवासी करके तुम अभी थोड़ी देर पहले ही यहाँ से गये हो।

जैसी खवास तुमने आज की है, वैसी तो पहले कभी नहीं की। बघेल राजा की बात सुनकर सयन भगत आश्चर्यचकित हो गये। वे जान गये कि स्वयं ईश्वर ने मेरा कारज साधा है। हे कृष्ण मुरारी! आप धन्य हैं। हे रसिक बिहारी! आप धन्य हैं। जब राजा बघेला को सारी लीला समझ आई, तब उसे सयनजी के महत्त्व का बोध हुआ। वे बोले-

- (साखी 121 से 140)

हे सयन! तुम्हारे कारण आज मैं धन्य हो गया। स्वयं कृष्ण भगवान आकर मुझे दर्शन दे गये। राजा ने सयन जी के चरणों में नमन किया और क्षमा माँगी। कृष्ण भगवान तुम्हारे कारण नाई बनकर आए और मेरे सभी रोग दूर कर गये। हे सयन! तू सच्चा भक्त है। तेरा राम भी सत्य है। स्वयं हरिजी आकर तेरे कारज सँवार गये। हे सयन! तुम प्रतिदिन महलों में आते रहना। तुम्हारे दर्शन से मुझे पूर्ण परमानन्द के दर्शन जैसा आनन्द प्राप्त होगा।

- (दोहा 19 से 22)

एक वर्ष राजा बघेल के महल में संतों का आगमन हुआ। राजा ने संतों का खूब आदर-सत्कार किया। उन्हें आसन दे सम्मानित किया। राजा ने दूत भेजकर सयन भगत को तत्काल महल में बुलवा भेजा। सयन राजमहल में आया। संतों में श्रेष्ठ बड़े संत को नमन किया। महन्त जी ने सयन की पीठ पर थाप लगाकर उसकी सारी माया दूर कर धन्य कर दिया। सयन मोह-माया से मुक्त हुआ।

यह थाप सद्‌गुरू रामानन्दजी ने लगाई थी। सयन के मन में परमानन्द का बोध हो उठा।

हे देव! आज सयना नाई धन्य हो गया। सयनजी की आँखों से आँसू छलक उठे। सद्‌गुरू (रामानन्द) जी ने आदेश दिया कि दक्षिण की ओर जाओ और वहीं हरिभजन गाकर लोक में सुनाओ। धन्य भाग्य! सयन माया-मोह से मुक्त होकर धन्य हो गए। वे संत रूप हो गए। पैंतीस वर्ष की युवावस्था में सयनजी की सुरति ईश्वर में लग गई। सद्‌गुरू रामानन्द की आज्ञा पाकर सयन जी दक्षिण आए और सद्‌गुरू को चित्त में धारण कर खूब सत्संग किया।

सयन भक्त एक वर्ष तक दक्षिण में रहे। वहाँ उन्होंने खूब सत्संग किया। बहुत कुछ कहा और सुना। सयन भक्त ने पाण्डुरंग की भक्ति का बहुत सरस गुणगान किया। खूब भजन रचे और मधुर वाणी में सुनाये।

दक्षिण से सयनजी काशी के लिए चल पड़े। मार्ग के गाँवों में सत्संग करते संतों से भेंट करते हुए एक बरस में काशी पहुँचे। काशी में सद्गुरू के दर्शन कर धन्य हुए। कृपावन्त सद्गुरू रामानन्दजी ने सयन जी को तारक मंत्र दे दिया। सयन जी के मन में राम का वास हो गया। दुई (ब्रह्म और माया) का भ्रम दूर हो गया। काशी के गुरू आश्रम में सयन जी की भेंट सभी संतों से हुई। भक्त कबीर, रैदास, पीपा, धन्ना ने सयन (सैन) जी को खूब स्नेह दिया। सयन ने सद्गुरू-धाम की रज शीश (मस्तक) पर लगाई और मुल्क (देश) भ्रमण की तैयारी कर ली। सद्गुरू रामानन्द को चित्त में धारण कर सयन जी देश भ्रमण के लिए प्रस्थित हो गया।

- (साखी 141 से 160)

सयनजी ने देश-देश में घूमकर खूब सत्संग किया। उन पर राम का रसरंग चढ़ गया। शेष सभी रस फीके पड़ गए। सयनजी की वाणी मिश्री की भाँति मधुर थी। वे ऐसे सरस पद सुनाते थे कि हृदय में शीतलता आ जाती थी।

सयन गाँव-गाँव ठहरा (मुकाम) करते थे। कभी किसी मन्दिर में, कभी किसी मस्जिद में, कभी गाँव के किसी चबूतरे पर रुकते थे। अपने चित्त को सजग रखते थे। सत्संगत करते-करते उन्होंने खूब ज्ञान प्राप्त किया।

- (दोहा 23 से 26)

(साखी क्र.-161 से 174 तक का पृष्ठ फटा होकर नदारद था। 15 साखियाँ उपलब्ध नहीं हो पाईं।)

सयनजी ने देश-विदेश में खूब सत्संग किया और अपने गुरू की आज्ञा का पालन किया। (पहले छोटे-छोटे राज्य थे। उन्हें ही देश कहा जाता था। एक देश (राज्य) से दूसरे देश जाने को विदेश या परदेश कहा जाता था।)

देश भ्रमण करते हुए तथा सत्संग करते हुए सयन टोडा पहुँचे। उन्होंने टोडा में मुकाम कर लिया। वहाँ संत पीपाजी का आश्रम था।[1] वहाँ पहुँचते-पहुँचते उन्हें जूड़ी बुखार चढ़ आया। ऐसा लगा कि अब संसार का संताप मिटने वाला है।

पीपाजी ने वैद्य बुलवाकर उनका अच्छा उपचार करवाया। सीतादेवी ने उनकी खूब सेवा की। समय से औषधि दी। उस समय उनकी आयु बहत्तर वर्ष हो गई थी। उन्होंने राम रसायन का खूब पान किया था।

- (साखी 175 से 180)

सीताजी ने खूब सेवा की। उनके ताप का संताप मिट गया। चलना-फिरना कठिन हो गया था। देह में शक्ति नहीं रह गई थी। संत पीपाजी ने निवेदन किया कि- आप थोड़े दिन यहीं पर विश्राम करो। अलग से कुटिया बनवा देते हैं।

सयन तो ठीक हो गए, किन्तु सीताजी बीमार हो गईं। वे निरन्तर राम-राम रटती रहीं। देह की शक्ति क्षीण होती गई। विक्रम संवत् 1472 में सीताजी स्वर्ग सिधार गईं। राजा टोडा रायसिंह ने पीपाजी के आश्रम स्थल के मध्य सीताजी की समाधि बनवा दी। संत पीपाजी ने सयनजी से कहा- तन पक गया है तथा मन भी थक गया है। अब यहाँ से गागरोन के लिए प्रस्थान करते हैं। वहाँ मुकामी रहकर नाम की आराधना करेंगे।

संत पीपाजी की संगत कर सयन बहुत प्रसन्न हो गए। ऐसी संगत तो सद्गुरू की कृपा से ही प्राप्त हो पाती है। संत पीपाजी ने सती सीताजी की समाधि को प्रणाम किया- हे सहचरी! आप धन्य हुईं। आपने अबाध रूप से धर्म का निर्वाह किया।

- (दोहा 27 से 33)

पीपाजी ने टोडा का आश्रम छोड़कर गागरोन की दिशा में प्रस्थान कर दिया। सयनजी भी पीपाजी के साथ चले। जहाँ थक जाते, वहाँ मुकाम कर देते। मार्ग में परस्पर भी तथा गाँव-गाँव जहाँ मुकाम होता, वहाँ सत्संग करते। इससे उनकी तन-मन की थकान मिट जाती थी।

दोनों संत गागरोन पहुँच गए। खीचीराज (अचलसिंह) ने उनका खूब आदर-सत्कार किया। पीपाजी ने आहू और सिन्ध नदी के किनारे (संगम) पर गढ़ के पास गुफा में मुकाम लगाया। सयना का आश्रम (कुटिया) वहीं बनवाई। सयनजी वहाँ पाँच वर्ष तक रहे। सत्संगियों के साथ सत्संग करते रहे। सुनते और कहते रहे।

वहाँ प्रतिदिन सत्संग होता था। दोनों संतों का मन तृप्त रहता था। सयन जी एक स्थान पर टिककर नहीं रहे। पूरे मालवा देश में भ्रमण करते रहे। (तब झालावाड़ अंचल मालवा का ही भाग माना जाता था। गागरोन झालावाड़ का ही भाग है।)वे बीच-बीच में आश्रम आ जाते थे। पीपाजी को वचन सुनाते थे। होते-होते बरस बीत गए। तन और मन के सभी विकार समाप्त हो गए। पीपाजी ने समाधि धारण कर ली। राम-राम रटते हुए प्राण त्याग दिए। आत्मा परमानन्द में समा गई। पीपाजी ने खरी कमाई कर ली। तब विक्रमी संवत् 1477 था। तभी पूर्ण परमानन्द की पहचान हुई। सयनजी आश्रम में बैठे-बैठे विचार करने लगे। वे आँखें बंद करके सोचने लगे कि अब क्या निर्णय लें। यहीं गागरोन आश्रम में रहें अथवा प्रस्थान करें।

अन्तत: सयनजी ने निर्णय कर लिया। उन्होंने सिद्ध पीपाजी की समाधि को नमन किया और ओंकारेश्वर की ओर प्रस्थान कर दिया। थोड़े दिन वे ओंकारेश्वर रहे। उन्हें अचानक गुरुदर्शन की इच्छा हुई। वे बार-बार यही विचार करने लगे। वे सोचने लगे, आयु पक गयी है। अब काशी जाकर श्री गुरूचरणों में धोक (नमन) लगाना चाहिए।

- (साखी 181 से 200)

संयोग से साधु संगत जुड़ गई। सयनजी उन साधुजनों के साथ सत्संग करते हुए ओंकारेश्वर से काशी के लिए चल दिए। वे अस्सी वर्ष की उम्र में काशी पहुँचे। वहाँ उन्होंने सद्गुरू रामानन्दजी के (पगल्यों) समाधि चरणों में प्रणाम किया। वही काशी में ही मुकामी हो गए। विक्रम संवत् 1490 में गुरूधाम में ही देह त्याग दिया।

मैंने अच्छी तरह सुनकर, जानकर, समझकर सयनजी की यह पोथी लिखी है। मेरा नाम अनन्तदास है। सद्गुरु सदा मेरे सहायक हैं। सयनजी भीष्म के अवतार थे। उन्होंने सद्गुरूजी (रामानन्द) के धाम पर इच्छा मृत्यु धारण की। सयनजी सद्गुरू और राम की आराधना करते हुए गुरू आश्रय में ही संतों ने उनकी समाधि बनाई। संवत् 1625 में जगदीश सैन ने गुरूमुखी में सयना भगत की यह परचई लिखी थी। फिर गुरूमुखी से गुरुमुखी में ही सुखदास ने जूनी (पुरानी, जीर्ण) पोथी को दुबारा लिखा। मैंने उस पोथी का बार-बार वाचन किया। अच्छी तरह समझे बिना एक शब्द के परिवर्तन किए उसकी नकल उतारी। मैं संवत् 1700 के समय मालवा देश में रहा। घर-गृहस्थी छोड़कर साधुवेश धारण कर लिया।

सुखानन्द (जावद तहसील में) केदासरा (केदारेश्वर, रामपुरा के निकट) तथा शंखोद्धार (चम्बल तट पर रामपुरा अंचल में) सभी सुखधामों पर मैंने निवास किया। बाद में केदारेश्वर का शिवस्थान अधिक रुचिकर लगा, तब वहाँ पक्का मुकाम बना लिया। केदारेश्वर सुन्दर प्राकृतिक शिवस्थल है। यहाँ झरने झरते हैं। पक्षी गीत गाते हैं। बन्दर यहाँ पहरा देते हैं। मैं यहीं रहकर नाम स्मरण करता हूँ।

यहीं रहकर मैं गुरुमुखी की पोथी का यहाँ के लोगों की बोली (दशौरी मालवी) में उलथा (अनुवाद) किया है। यहाँ की बोली में इसलिए लिखा, जिससे यह सयना की परचई सबके समझने योग्य हो जाए।

यह परचई मैंने संवत् 1700 में श्रावण मास (शिव मास) में लिखी है। मैंने इसमें अपने जानते कोई चूक नहीं की है। सरस्वती माता को हृदय में स्थापित कर मैंने यह परचई लिखी है।

मैं केदारेश्वर से चलकर नर्मदा के तीर पर आया। अनन्त कहते हैं- मैंने यह तय किया है कि यहीं देह त्याग करूँ। मालव भूमि सरस भूमि है। शीतल, शान्त और संत स्वभाव वाली भूमि है। यहाँ कोई आपस में बैर-भाव या भेद-दुराव नहीं रखता।

मैंने मालवा के इस अंचल में बीस बरस बिताये हैं, जितने भी शिवस्थल हैं, मैं वहाँ-वहाँ रहकर समय सार्थक किया है। यहाँ की सभी नदियों में मैंने स्नान किया है। सभी शिव तीर्थों के दर्शन किये हैं। सयन भगत की इस परचई को जो भी पढ़े-सुनेगा। अनन्तदास कहते हैं- उसके जीवन में सुख का उदय होगा तथा तन-मन निर्मल हो जाएगा।

परचई सयना भगत री (कथी–सुरतराम री)

यह परचई संत (सैन) भगत जी की जीवन कथा का बखान करती हुई एक स्वतंत्र परचई होते हुए भी इससे पूर्व प्रचलित परचई या परचइयों के आधार पर लिखी गई है। इसे किसी सुरतराम ने साधु–समाज से सुन और समझकर संवत् 1750 (विक्रमी) में वैशाख मास की पूर्णिमा को पूरा किया। इसमें 100 दोहे हैं।

इसके पूर्व एक परचई धरमदास द्वारा लिखी गई थी, जो इसी संग्रह में संकलित है। इस परचई को संवत् 1625 विक्रम में जगदीश सैन ने गुरुमुखी में लिखी। फिर उस गुरुमुखी वाली जगदीश सैन की परचई को सुखदास ने दोबारा लिखा। दोबारा लिखने का कारण पूर्व उपलब्ध प्रति के जीर्ण–शीर्ण हो जाना था। फिर तीसरी बार धरमदास ने सुखदास की प्रति की जस–तस नकल उतारी (गुरुमुखी से गुरुमुखी)। धरमदास ने संवत् 1700 के समय संन्यास धारण किया और मालव देश में रहने लगा। इसी बीच वह सुखानन्द, केदारेश्वर तथा शंखोद्धार शिवस्थलों पर निवास किया। वह बीस वर्ष तक दशपुर जनपद के अंचल में अनेक शिवतीर्थों पर रहता रहा और अन्त में केदारेश्वर शिवतीर्थ पर यह मुकामी हो गया और यहाँ की बोली (दशौरी मालवी) में उसने गुरुमुखी वाली परचई का अनुवाद किया, जिससे वह सर्वसुलभ एवं सर्वगम्य हो सके।

इससे यह कहना पड़ेगा कि धरमदास की परचई चाहे संवत् 1700 विक्रम श्रावस मास में लिखी गई हो, किन्तु इसकी मूल प्रति संवत् 1625 विक्रमी अर्थात् संत सैनजी के देहावसान के 135 वर्ष पश्चात् लिखी गई थी। अत: उसकी प्रामाणिकता अधिक है।

प्रस्तुत सुरतराम वाली यह परचई धरमदास की परचई का अनुवाद तो नहीं है। लगता है वह धरमदास वाली परचई वाचिक परम्परा में गद्य या पद्य में ख्यात रही होगी, जिसे सुन–सुनकर सुरतराम ने अपने विवेक से इसका मौलिक सृजन किया। जितना विस्तृत वर्णन धरमदास की परचई में है, उतना सुरतराम की परचई में नहीं है, किन्तु कथानक छूटा नहीं। भटका भी नहीं। इसे हम धरमदास की परचई का संक्षेपीकरण भी कैसे कह सकते हैं। धरमदास की परचई चौपाई–दोहों में है तथा सुरतराम की परचई केवल दोहों में। केवल 100 दोहों में सुरतराम ने संत सैन भगत की कथा–गाथा बखान दी, जबकि धरमदास ने 200 चौपाइयों और 51 दोहों में उसी कथा का बखान किया है।

इन दोनों कथाओं का कथानक एक ही है। प्रसंग भी समान है। घटनाएँ भी समान हैं। इससे यह भान हो जाता है कि धरमदास वाली परचई लम्बे समय तक न सही कुछ वर्षों तक लोक चर्चित अवश्य रही। उसी को आधार बनाकर सुरतराम ने यह परचई लिख दी।

धरमदास की परचई पंजाबी (गुरुमुखी) वाली प्रति का अनुवाद है, यह उसे पढ़ने पर स्पष्ट लगता है। सुरतराम की परचई में ऐसा नहीं है। दोनों की भाषा में साम्यता अवश्य है।

मैंने यह सुरतराम वाली परचई बीकानेर में शोध-यात्रा के दौरान दि. 31 अक्टूबर, 1969 के दिन श्री साँवरलालजी तंवर के निवास पर रहकर उनके संग्रह की हस्तलिखित पाण्डुलिपि से नकल उतार कर प्राप्त की थी।

उन्हीं के संग्रह से मैंने 8 पद भी सैन भगत जी के प्राप्त किये थे।

यह परचई संत सैन भगत के जीवन परिचय एवं महत्त्वपूर्ण घटनाओं को पुष्टि प्रदान करती है। दोनों परचइयों के प्रमाणस्वरूप संत सैन भगत की वाणी में भी अन्त:साक्ष्य मौजूद हैं।

सिमरौ सतगुरु राम ने, सारद करौं जुहार।
वन्दौं गवरीनंद ने, संतन वंदौं लार॥ 1॥

मैं सबसे पहले सद्‌गुरू का और राम का नाम स्मरण करता हूँ। शारदा को वन्दन करता हूँ। साथ ही गौरीनन्द गणेश और सभी संतों को प्रणाम करता हूँ।

कथा बखाणू सयन री, संत जणा आधार।
नावी रे घर जलम्यो, भीसम रो औतार॥ 2॥

मैं सयन (सैन) भगत की कथा का बखान कर रहा हूँ। यह कथा मैं संतों से प्राप्त जानकारी के आधार पर कहता हूँ। सयन भगत ने भीष्म के अवतार के रूप में नाई के घर जन्म लिया।

बाँधवगढ़ तो मूल हे, पूरबजां रो वास।
नणियारों पंजाब रो, अमरतसर रेवास॥ 3॥

सयनजी का मूल निवास बाँधवगढ़ था। वहीं उनके पूर्वजों का रहवास था। उनका ननिहाल अमृतसर (पंजाब) था।

मामा रे घर जलम्यो, सोहालो एक गाम।
जोसी जी ने काढ़यो, सयन नाम सुनाम॥ 4॥

सैनजी का जन्म मामा के घर सोहाला गाँव में हुआ था। जोशी (पंडित) जी ने उनका नाम 'सयन' रखा।

सयन नाम जोसी धर्‌यो, सयन होयो सैन।
गुरिया जी रो हुकुम थो, रखजो नाम हुसैन॥ 5॥

जोशी ने सयन नाम रखा, किन्तु वह बाद में 'सैन' हो गया। गुरियाजी सूफीसंत के आशीर्वाद से उसका जन्म हुआ। इस कारण से इन्होंने आदेश दिया था कि लड़का पैदा होगा, उसका नाम हुसैन रखना।

हुकुम इलाही में रहे, बोले हक रा बैन।
हक रे खातर मरि मिटे, जण रो नाम हुसैन॥ 6॥

जो ईश्वर के आदेशों का पालन करे, सदा न्याय और सत्य के वचन बोले तथा जो न्याय और सत्य के लिए मर मिटने में भी तत्पर रहे। उसका नाम हुसैन होता है।

सयन नाम सुनाम हे, विस्वामित रो पूत।
धरम संवारन परगट्यो, राम-हरि रो दूत॥ 7॥

सयन नाम विश्वामित्र के पुत्र का भी था। सयन धर्म को सँवारने के लिए रामहरि के दूत के रूप में प्रकट हुआ।

गुरिया री मेहर बाणी, सूफी संत करार।
दूत बणा ने भेजियो, सयना ने करतार॥ 8॥

संत गुरियाजी की कृपा हुई। उनका आशीर्वाद वचन सार्थक हुआ। ईश्वर ने सयन को अपना दूत बनाकर पृथ्वी पर भेजा ।

सयन रो अरथो कहे, अग-जग तारणहार।
करम सुधारण परगट्या, सद्‌मत रा औतार॥ 9॥

सयन का अर्थ है- संसार का उद्धारक। सयन कर्मों में सुधार करने के उद्देश्य से सद्‌बुद्धि के अवतार रूप में प्रकट हुए।

संवत चवदा सौ रह्यो, सुभ तिथि अर सुभवार।
ब्रह्मकाल में धार्‌यो, सयना ने औतार॥ 10॥

संवत् चौदह सौ (विक्रमी) की शुभ तिथि और शुभ वार के ब्रह्मकाल में सयना का जन्म हुआ।

बुदि बारस वैसाख री, जस राखे दितवार।
माँ जीवणि रा कोख ती, सयन लियो औतार॥ 11॥

वैशाख माह की बारस बुदि दितवार के दिन सयन ने माता जीवणी की कोख से जन्म लिया।

थोड़ा दन में जीवणी, सरगाँ गई सिधार।
सयना रो पोखण कर्‌यो, मामी ने निरधार॥ 12॥

सयन को जन्म देकर जीवणी थोड़े दिनों बाद स्वर्ग सिधार गई। सयन की मामी ने उसका पालन-पोषण किया।

एक थान सयनो पिये, एक पिये निजपूत।
बेटो कर ने पार्‌यो, मामी सुगन सपूत॥ 13॥

मामी एक स्तन का दूध सयन को पिलाती थी और दूसरे स्तन का दूध अपने बेटे को। इस प्रकार शुभ विचारवान मामी ने सयन को अपने पुत्र की तरह पाला।

बारह री उम्मर वई, मामो करे विचार।
सयना तू वई जा तुरत, हुन्नर में हुसियार॥ 14॥

सयन की उम्र जब बारह बरस हो गई, तब मामा ने विचार कर कहा- 'सयन! अब तू शीघ्र ही हुनर (नाई का काम) में होशियार हो जा।

नानपणो मति जाणजे, मामा-मामीवेत।
नावी रे घर जलम्यो, तुरतां बणो सुचेत॥ 15॥

तू स्वयं पर नानपणा (जिसके बचपन में माता-पिता मर चुके हों) मत जानना। जब तक मामा-मामी हैं, चिन्ता मत करना। तू नाई का बेटा है, इस कारण शीघ्र सचेत हो जा।

मामो सिखलावे घणो, सयनो सीखे नाँहि।
मामो सोचे चित्त में, अणको कई कराहिं॥ 16॥

मामा सयन को सिखाने का बहुत प्रयत्न करता, किन्तु सयन नहीं सीख पा रहा था। मामा विचार करता कि इसका क्या उपाय करूँ?

सयना री मासी बसे, नगर लहोराँ देस।
वठे पठा देऊँ अणे, राम सहाई वेस॥ 17॥

मामा ने विचार किया कि सयना की मासी लाहौर नगर में रहती है। सयन को वहीं भेज देता हूँ। राम अच्छा करेंगे। वे ही सहायक होंगे।

मामो संग ले पौंच्यो, लाहोराँ रे देस।
मन चित्त धिरताँ सीखजो, करजो मति करेस॥ 18॥

मामा सयन को लाहौर ले गये। मासी के जिम्मे कर वे बोले- मन-चित्त में धैर्य रखकर सीखना। कलेश मत करना।

लाहोराँ का नगर में, (ठावो) नाम अजीम उस्ताद।
सयना ने चेलो कर्‌यो, पूरी करो मुराद॥ 19॥

लाहौर नगर में अजीम नाम का प्रसिद्ध उस्ताद (नाई) था। सयन को उसका चेला बना दिया। उससे कहा- इसकी इच्छा पूरी करना, अर्थात् इसे नाई के हुनर में पारंगत कर देना।

बिन माँ-बाप विचारड़ो, सयनो नावी नाम।
चेलो कर्‌यो आपको, खूब सिखाजो काम॥ 20॥

यह बिचारा बिना माँ-बाप का है। इसका नाम सयन नाई है। इसे आपका चेला बनाया है। इसे आप खूब काम सिखाना।

हगरा हुनर सिखाड़या, होयो सयन तियार।
मालिस में भी वईगयो, सयनो घण हुसियार॥ 21॥

उस्ताद अजीम ने सयन को सारा काम सिखाकर पक्का कर दिया। वह मालिश के काम में भी होशियार हो गया।

मासी ने परणा दियो, इक नानकड़े गाम।
हगराँ वीचे नानकी, जण ती निक्की नाम॥ 22॥

मासी ने सयन का विवाह निकट के एक छोटे-से गाँव में कर दिया। उसकी पत्नी सबसे छोटी थी, इसलिए सब उसे निक्की पुकारते थे। (अन्य परचाई में उसका मूल नाम 'साहिब देवी' कहा है। पंजाबी भाषा में निक्की अर्थात् छोटी होता है।)

कुछ दिन मासी घर रह्यो, फेर मामा रे गाम।
एक बरस मामा अठे, कर्‌यो खवासी काम॥ 23॥

कुछ दिन (विवाह के बाद) मासी के घर रहा और फिर मामा के गाँव लौट आया। एक बरस मामा के यहाँ खवासी (नाई) का काम किया।

एक दिन मामा ने कह्यो, सुण ले सयना बात।
जाओ अपणे देस में, बाँधवगढ़ कुसलात॥ 24॥

एक दिन मामा ने कहा– सयन! मेरी बात सुनो। अब तुम कुशलपूर्वक अपने देश बाँधवगढ़ जाओ।

बाँधवगढ़ जा पउँच्यो, नीकी ने ले लार।
जूनो घर सुथरो कर्‌यो, लीप्यो छाब-बुहार॥ 25॥

सयनजी निक्की को साथ लेकर अपने मूल गाँव बाँधवगढ़ पहुँच गये। अपने पुराने घर को बुहार कर तथा लीप-छाब कर साफ कर लिया।

अरज लगाड़ी सयन ने, बाँधवगढ़ दरबार।
मुकुन राम रो पूत हूँ, सेवा री दरकार॥ 26॥

सयन ने बाँधवगढ़ के राजा के दरबार में जाकर अर्जी लगाई और कहा– मैं मुकुनराम का पुत्र हूँ। सेवा (नौकरी) की इच्छा से आया हूँ।

मामा रे घर जलम्यो, हुनर लियो लाहोर।
बीस बरस रे बाद में, आयो बाँधव ठोर॥ 27॥

मेरा जन्म मामा के घर में हुआ। मैंने नाई का हुनर लाहौर में सीखा। बीस वर्षों के बाद अपने देश बाँधवगढ़ में आया हूँ।

आप सिरि रो राज हे, पूरबजाँ रो ठाम।
जणस ती आयो हूँ अठे, पलट आपणे गाम॥ 28॥

आप श्री के राज्य और अपने पूर्वजों के गाँव को जानकर मैं यहाँ अपने गाँव लौटा हूँ।

किरपा होवे राज री, मले खवासी काम।
पोखण वे परवार रो, पक्को करूँ मुकाम॥ 29॥

राज की कृपा से खवासी की सेवा मिल जाये तो मेरे परिवार का भरण-पोषण हो जाये। मैं यहाँ स्थाई निवास करूँगा।

राजखवासी बगस दी, बाँधवगढ़ी नरेस।
नित नेम मति चूकजे, हाजर रवो हमेस॥ 30॥

बाँधवगढ़ नरेश ने सयन जी को राजखवास की सेवा में रख लिया। राजा ने कहा- नित नियम मत चूकना और सदा उपस्थित रहना।

सयनो मन चित ती करे, राज खवासी रोज।
भूल-चूक राखे नहीं, हिरदै राखे होज॥ 31॥

सयनजी चित्त लगाकर राजखवासी करने लगे। मन में पूरी चिन्ता रखकर बिना भूल-चूक किए अपना काम करते रहे।

सयना को बेटो भगत, संत जना रो दास।
सेवो नावी नाम थो, केवे सेऊ खवास॥ 32॥

सयनजी का एक बेटा था, जिसका नाम सेवा नाई था। सब उसे सेऊ (सेवू - सेऊ) खवास कहते थे। वह संतों की सेवकाई करता था।

मात-पिता री सेवा राखे, आज्ञा को मजबूत।
सेऊ नाई खवासी सेवे, जन्मयो वंस सपूत॥ 33॥

सेऊ आज्ञाकारी था। माता-पिता की सेवा करता था। खवासी का काम करता था। वह सयन के वंश में सपूत पैदा हुआ था।

सयन राज खवासी सेवे, रटे राम रो नाम।
मालिश कर रोग मेटे, ना कोड़ी ना दाम॥ 34॥

सयन राजखवासी करते हुए राम का नाम रटते रहते थे। मालिश करके अनेक रोगों का उपचार करते थे।

साधू आए घर, एक दन ढलती साँज।
सयन घण आदर दियो, पण नहिं घर में नाज॥ 35॥

एक दिन संध्या समय सयन के घर साधु आए। सयन ने उनका खूब आदर किया, किन्तु घर में अनाज का एक दाना भी नहीं था।

सेऊ कह्यो भगत जी करो न फिकर विचार।
धान उधारो लेण ने, मूँ जाऊँ बाजार॥ 36॥

सेऊ ने कहा- भगत जी! आप चिन्ता मत करो। मैं बाजार से उधार अनाज लेने जा रहा हूँ।

सेऊ पउँच्यो हाट में, मिलियो नहीं उधार।
सेंध लगा ने काढ़साँ, आटो घीरत दार॥ 37॥

सेऊ बाजार में गया, किसी भी दूकान से उसे उधार नहीं मिला। उसने निर्णय कर लिया कि सेंध लगाकर आटा, घी और दाल निकालूँगा।

साध जना रे कारणे, करसाँ खोटो काम।
खम्मा-खम्मा हे सतगुरु, खम्मा भगत अर राम॥ 38॥

सेऊ ने निर्णय किया कि साधुजनों के भोजन हेतु मैं खोटा कर्म भी करूँगा। हे सद्गुरू! हे भगत जी (सयनजी)! हे राम प्रभु! आप सब मुझे क्षमा करना।

सेंध लगाड़ी हाट में, बाँध्यो सब सामान।
साध जना रे कारणे, दाँव लगाया प्रान॥ 39॥

सेऊ ने एक हाट (दूकान) में सेंध लगाई और भीतर घुसकर सारा आवश्यक सामान बाँध लिया। सेऊ ने साधुजनों के कारण अपने प्राण संकट में डाल दिए।

सीस दियो सत नी दियो, धन्न सयन रो पूत।
मान राख लियो बाप रो, करी न काची कूत॥ 40॥

सयन का सपूत सेऊ धन्य है। उसने शीश दे दिया, किन्तु सत्य नहीं दिया। अपने पिता का मान रखा। उसने कच्चा निर्णय नहीं लिया।

साध जग्या परभात में, खूब कर्‌या गुणगान।
नजराँ देखा सेऊ ने, फेर करां पय्यान॥ 41॥

साधुगण प्रभात में जग गये और सयन की गृहस्थी की खूब प्रशंसा की। उन्होंने कहा- सेऊ को देख लें, फिर प्रस्थान करें।

हाँक लगाओ सयन जी, सेऊ आवे गेह।
आसीसाँ घण चाव ती, देवाँ पूरो नेह॥ 42॥

हे सयनजी! आप सेऊ को आवाज लगाओ। सेऊ घर आ जाए। उसे खूब आशीर्वाद दें तथा खूब प्यार करें।

सयना रे मन हचकड़ो, कसतर करे पुकार।
सेऊ तो सिर दे गयो, कद रो सरग सिधार॥ 43॥

सयन के मन में संकोच हुआ कि किस प्रकार सेऊ को बुलाऊँ? वह तो सिर देकर स्वर्ग जा चुका है।

बार-बार साधु कह्याँ, सयने करी पुकार।
राम कृपा ऐसी बणी, सेऊ आयो द्वार॥ 44॥

साधुओं के बार-बार कहने पर सयनजी ने सेऊ को आवाज लगाई। राम की कृपा ऐसी हुई कि सेऊ घर के दरवाजे पर आ गया।

द्वार खोल झट आ पुगो, दी संता रे धोग।
निक्की सयनो अचक्या, कसतर होयो जोग॥ 45॥

सेऊ द्वार खोलकर आँगन में आ गया और संतों के धोक लगा दी। निक्की और सयनजी अचम्भे में पड़ गये। यह योग कैसे हुआ?

माया महिमा राम री, जाण सके नहिं कोय।
जैसा राम प्रभु राच ले, वेसी अवसाँ होय॥ 46॥

राम की महिमा-माया कोई नहीं जान सकता। वे जैसी रचना रच लें, वैसी अवश्य होकर रहती है।

साधुजन आसीस दे, करि गया तुरत पयान।
सयना के हिरदै जग्यो, मायापति रो भान॥ 47॥

साधुजन आशीर्वाद देकर तत्काल प्रस्ताथ कर गये। सयनजी को अपने हृदय में मायापति का भान हो गया।

लुट-लुट ने आसीसियो, धन्न-धन्न सेऊ सपूत।
अतिथि धरम ने पालतां, होयो सदर सबूत॥ 48॥

सयनजी ने बार-बार सेऊ सपूत को आशीर्वाद दिया। हे सुपुत्र! तुम धन्य हो। अतिथि-धर्म के पालन में तुम पूरे उतरे।

भगत बड़ो भगवान ती, कहि रह्यो संत समाज।
अरवाणे दौड़े तुरत, राम भगत के काज॥ 49॥

भक्त भगवान से भी बड़ा होता है। ऐसा संतों ने बार-बार कहा है। आज भी कह रहे हैं। भक्त का कारज सँवारने के लिए भगवान तत्काल नंगे पैर दौड़कर आते हैं। (यहाँ राम परब्रह्म और ईश्वर वाचक है।)

एक दना सयना घरे, आयो साध समाज।
सतसंगत एसी जुड़ी, भूलि गया सब काज॥ 50॥

एक दिन सयन के घर संत-समाज आया। सत्संग होने लगा। सत्संग ऐसा जुड़ा कि सब कामकाज भूल गये।

भजना रे रंग राच्यो, सयना साधु समाज।
राजखवासी महेल में, कौन करे ला आज॥ 51॥

सत्संगत में भजनों की तल्लीनता ऐसी हुई कि सयनजी और साधु-समाज सुधबुध भूल गये। राजमहल में खवासी कौन करेगा।

हरिजू ने चिन्ता लगी, सयन भगत रे काज।
सयनो नी पउँचे महेल, दंड देवसी राज॥ 52॥

भगवानजी चिन्ता करने लगे कि यदि सयन भगत आज राजमहल में खवासी करने नहीं पहुँच पाया, तब राजा उसे दण्ड देगा।

प्रभुजी ने झट धर लियो, सयन भगत रो रूप।
करी खवासी नेम री, हरसित होयो भूप॥ 53॥

प्रभुजी ने तत्काल सयन भगत का रूप धारण कर लिया। उन्होंने राजा के महल में जाकर राजा की नित नियमानुसार खवासी की। उस दिन की खवासी से राजा बहुत प्रसन्न हुआ।

धन्न-धन्न द्वारा पति, धन्न हे कृसन मुरार।
धन्न-धन्न निज भगत री, लजपत राखणहार॥ 54॥

हे द्वारिकापति कृष्ण मुरारी! आप धन्य हैं। हे भक्त की लाज और मान के रक्षक! आप धन्य हैं।

सत्संग सीतो पड़्यो, पड़्यो सयन रे चेत।
राजखवासी भूल ग्यो, सत्संगत रे हेत॥ 55॥

जब सत्संग ठण्डी पड़ी, तब सयनजी को भान हुआ। सत्संगत के कारण मैं आज राजा की सेवा भूल गया।

झटपट झोलो तोक्यो, रपट्यो राज महेल।
राजा रे हामू पहुँच, खम्मा सयन कहेल॥ 56॥

सयनजी ने झटपट हजामत के औजारों का झोला उठाया और राजमहल की ओर दौड़ चले। राजा के समक्ष पहुँचकर क्षमा माँगने लगे।

भूल-चूक भारी वई, छमा करो हे राज।
सेवा चूक्यो राज री, सतसंगत रे काज॥ 57॥

हे राजन! मैं सत्संगत के कारण आपकी सेवा में चूक कर गया। मेरी इस भूल-चूक के लिए मुझे क्षमा कर दें।

बाघेले राजा कह्यो, रे सयना भुलियार।
करी खवासी थूँ गयो, घर ने अतरेतार॥ 58॥

सयन जी की बात सुनकर बाघेले राजा ने कहा- अरे भुलक्कड़ सयन! तू अपनी नित की सेवा करके अभी तो घर गया था।

सयन भगत औचक वियो, धन्न-धन्न सुखदास।
म्हारी लाज बचावणे, बण आया खव्वास॥ 59॥

हे सुखदाता प्रभु! आप धन्य हैं। सयनजी प्रभु के अद्‌भुत कृपा-भाव को जानकर आश्चर्य में पड़ गये। हे प्रभु! आप मेरी लाज बचाने के लिए खवास (नाई) बने। आप धन्य हैं।

लजपत द्रुपदा री रखी, यू लाज राखी म्हार।
रगसा राखी भगत री, लजपत राखणहार॥ 60॥

हे प्रभु! आपने जिस प्रकार द्रौपदी की लाज बचाई, उसी प्रकार मेरी भी लाज बचा ली। आपने अपने भक्त की लाज रखी। हे भक्त वत्सल! आप धन्य हैं।

खबर पड़ी जद राज ने, आखाँ भर्‌यो नीर।
धन्न-धन्न सयना भगत, थूँ पीरां रो पीर॥ 61॥

जब इस प्रभु कृपा की खबर राजा को लगी, तब उनकी आँखों में आँसू छलक आये। उन्होंने कहा- हे सयना भक्त! आप धन्य हैं। आप पीरों के पीर हैं।

थारे खातर वई गया, दरसन प्रभु रा आज।
धन्न वंस म्हारो वियो, धन्न बघेला राज॥ 62॥

हे भक्तराज सयन! आपके कारण आज मुझे प्रभु के दर्शन हो गये। मेरा वंश धन्य हो गया। मेरा बाघेला राज्य धन्य हो गया।

सयन भगत ने छोड़ दी, राज महल की आस।
हिरदा में होयो अटल, राम हरि रो वास॥ 63॥

इस घटना के पश्चात् सयनजी ने राजमहल की सेवा छोड़ दी। उनका मन तो अब राम प्रभु की सेवा में रम चुका था। उनके हृदय में राम हरि का अटल निवास हो चुका था।

जण का हिरदा में रमे, राम हरि रो नाम।
सो जन निहचै वई रहे, संतोसी निहकाम॥ 64॥

जिसके हृदय में राम-हरि का नाम रमण करने लगता है, वह जन निश्चित रूप से सन्तोषी और निष्काम हो जाता है।

सेऊ जावे मेहल में, करे खवासी काम।
सयनो मन मगन्यो रहे, रटे राम रो नाम॥ 65॥

सयनजी के स्थान पर उनका पुत्र सेऊ महलों में खवासी करने के लिए जाने लगा। सयन जी तो राम नाम जपने में मगन रहने लगे।

सयन भगत री एवजी, सेऊ सँवरे काम।
करे खवासी राज री, मुख सों सिंवरे राम॥ 66॥

सयन भगत की एवजी उनका बेटा निभाने लगा। वह राज की खवासी करता था और मुख से राम भजता था।

निक्की साधणी पुण्य री, सय्यन सत्त रो दूत।
दोनई का संजोग ती, उपज्यो सेऊ सपूत॥ 67॥

निक्की पुण्य की साधक थी। सयन सत्य (ईश्वर) के दूत थे। दोनों के संयोग से सेऊ सपूत का जन्म हुआ।

जे हरि जू रे नेहड़े, हरि जू तिन रे पास।
अन्तरजामी राम जी, पूरें मन री आस॥ 68॥

जो जन हरिजी के निकट होते हैं, हरिजू सदा उनके निकट रहते हैं। अन्तर्यामी रामजी अपने भगत की इच्छाएँ अवश्य पूरी करते हैं।

हरिजू आपणा भगत री, जाणे मन री चाह।
मंजिल ने हामू करे, सहजी करदे राह॥ 69॥

हरिजी अपने भक्त के मन की चाह को जानते हैं। वे उसकी मंजिल सामने ले आते हैं तथा राह सहज बना देते हैं।

एक बरस एसो वियो, बदल गयो सब रंग।
साधू आया राज में, सतगुरु लाया संग॥ 70॥

एक बरस ऐसा सुयोग हुआ कि सारी रंगत ही बदल गई। बाँधवगढ़ के बाघेलों के राजमहल में एक संत आए। उनके साथ कुछ साधु भी थे, जिन्हें सद्गुरू अपने साथ लाये थे।

रामानंद पधार्या, बाघेलां रे राज।
राजा ने सेवा करी, छोड़ राज रा काज॥ 71॥

स्वामी रामानन्दजी स्वयं बाघेलों के राज में पधारे थे। राजा ने सभी राजकाज छोड़कर उनकी सेवा की।

दूत भेज बुलवा लियो, सयन भगत महराज।
राजमहल धन्यो वियो, पुण्य परगट्या आज॥ 72॥

राजा ने दूत भेजकर सयन महाराज को बुलवा भेजा। उन्होंने संत समाज से कहा- आज मेरे पुण्य प्रकट हुए हैं। मेरा राजमहल धन्य हो गया है।

सयनो चल्यो उतावरो, साधू दरस उछाह।
संत चरण झट धोक लूँ, उमगी हिरदै चाह॥ 73॥

राजमहल में साधु-समाज की सूचना मिलते ही सयनजी तेज गति से राजमहल की ओर चल पड़े। वे झटपट संत-चरणों को धोक लेना चाहते थे। यही उमंग उन्हें राजमहल की ओर तीव्रता से बढ़ा रही थी।

रामानंद चरणा पड़्यो, आँखाँ असरू धार।
सतगुरु री थापी लगी, वह ग्यो बेड़ो पार॥ 74॥

राजमहल पहुँचकर सयनजी ने रामानन्दजी के चरणों में पड़कर धोक लगाई। उनकी आँखों से हर्ष जल बह रहा था। सद्गुरू रामानन्दजी ने उनकी पीठ पर आशीर्वाद की थापी लगाकर मानो सयन का उद्धार ही कर दिया।

सतगुरु ने आज्ञा करी, जाजो दक्खन देस।
सत्संगत करजो वठे, मीटे सकल करेस॥ 75॥

आशीर्वाद की थापी देकर सद्गुरू रामानन्दजी ने सयन को आदेश दिया कि दक्षिण देश जाकर सत्संगत करो। वहाँ से सभी क्लेश दूर करो।

बरस एक रे ऊपराँ, रह्यो दक्खन देस।
खूब भजन गाया वठे, सुण्या सत उपदेस॥ 76॥

सयनजी दक्षिण देश में एक वर्ष से भी ऊपर रहे। वहाँ उन्होंने खूब भजन गाए (रचे) और खूब सत-उपदेश (सत्संग) सुना।

पाण्डुरंग किरपा करी, हिरदै आयो ज्ञान।
भजन भाव करताँ वियो, सहज भक्ति रो भान॥ 77॥

सयनजी पर पाण्डुरंग की कृपा हुई। उनकी कृपा से सयन के हृदय में ज्ञान उदित हुआ। भजन भाव करते (उन्होंने पाण्डुरंग के अभंग भी रचे और गाए। उनके अभंगों का संग्रह इसी ग्रन्थ में संकलित है।) उन्हें सहज भक्ति का बोध हो गया।

दक्खन ती उत्तर गयो, सतगुरु जी रे धाम।
थोड़ा दन गुरु आसरम, सयने कर्‌यो मुकाम॥ 78॥

सयनजी दक्षिण में एक वर्ष से भी ऊपर रहे और फिर वहाँ से उत्तर को लौटे। वे सद्गुरू रामानन्दजी के आश्रम काशी पहुँचे और वहाँ थोड़े दिन मुकाम किया।

सतगुरु तारक मंत्र दे, दियो साँच उपदेस।
दुई मिटाड़ी भरम री, मिट्या सकल करेस॥ 79॥

सद्गुरू (रामानन्द) जी ने सयन को तारक मंत्र दिया। सत्य का बोध कराया और द्वेत का भ्रम दूर कर मन और मस्तिष्क के सभी क्लेश दूर कर दिए।

रामानंद गुरु मीलिया, भवनद तारणहार।
कूड़ो करकट चित्त रो, कढ़्यो तुरत बुहार॥ 80॥

सयनजी को स्वामी रामानन्द जी के रूप में सच्चे गुरू मिल गये, जो भवनद से तैराकर पार उतारने में सक्षम थे। उन्होंने सयनजी के चित्त में जमा (काम-क्रोधादि) सभी कूड़ा करकट (कषाय) बुहार कर बाहर निकालकर चित्त को शुद्ध कर दिया।

देस-देस भरमण कह्यो, गाम-गाम विसराम।
राम रटे सत्संग करे, होवे जठे मुकाम॥ 81॥

सयनजी ने समस्त देशों (राज्यों) का भ्रमण किया। वे गाँवों में विश्राम करते थे। जहाँ भी वे विश्राम करते वहाँ वे राम नाम का कीर्तन और सत्संग करते तथा-

उम्मर वई बहोतरी, आयो टोडे देस।
जूड़ी रो तापो चढ़यो, सगत बची नहिं सेस॥ 82॥

बहत्तर वर्ष की आयु में सयनजी टोडे पहुँचे। उन्हें जूड़ी ताप (मलेरिया) हो गया था, वे अशक्त हो गए थे।

पीपा ने उपचारियो, तुरतां वेद बुलाय।
सीताजी सेवा करी, मन-चित्त राम बसाय॥ 83॥

संत पीपाजी ने तुरन्त वैद्य बुलवाकर सयनजी का उपचार करवाया तथा सीताजी ने राम को चित्त में बसाकर खूब सेवा की।

संवत चवदा सौ कहूँ, बरस बहोत्तर जाण।
सीता सति ने कर दियो, सरगाँ देस पयाण॥ 84॥

संवत् (विक्रमी) चौदह सौ बहत्तर में सती सीता ने स्वर्ग प्रयाण किया।

पीपे संग सयनो गयो, गागरोन रे ठाम।
हलमल सत्संगत करे, भजे राम रो नाम॥ 85॥

सीताजी के स्वर्गधाम सिधारने के पश्चात् पीपाजी ने टोडा से प्रस्थान कर दिया। सयन एवं पीपाजी गागरोन पहुँचे। दोनों मिलकर सत्संग करते एवं राम नाम भजते थे।

संवत् चवदा सौ रह्यो, बरस सितोत्तर जाण।
पीपाजी ने तज दिया, सहज भाव निज प्राण॥ 86॥

संवत् चौदह सौ सतहत्तर में संत पीपाजी ने सहज भाव से अपने प्राण त्याग दिये।

चित्त उचट गयो सयन रो, राख चित्त में धीर।
उमर सितोत्तर पाक गी, थाकण लग्यो सरीर॥ 87॥

संत पीपाजी के महाप्रयाण के पश्चात् सयनजी का मन गागरोन से उचट गया। उनकी आयु सतहत्तर वर्ष हो चुकी थी। देह थकने लगी थी। उन्होंने झोला बगल में (कन्धे पर) टाँगा और नर्मदा तट की ओर प्रस्थान कर दिया। उन्होंने विचार किया कि वहाँ शरीर का त्याग करूँगा। अर्थात् शेष जीवन वहीं बिताऊँगा।

ओंकारेसर रा धाम में, रह्यो बरस मुकाम।
हिरदा में रेह-रेह उठे, जाऊँ सतगुरु धाम॥ 88॥

सयनजी एक बरस तक ओंकारेश्वर में रहे। उनके मन में बार-बार गुरूधाम (काशी) जाने का विचार आने लगा।

साधाँ री संगत जुड़ी, सयन चाल्यो संग।
दरसन सतगुरु रा करूँ, एसी बढ़ी उमंग॥ 89॥

संयोग से साधुजनों का एक संग काशी के लिए प्रस्थान करने वाला था। सयनजी भी उनके साथ चलने को तत्पर हुए। सद्गुरू के दर्शन करने की उमंग बढ़ने लगी।

कासी पउँच्या सयनजी, दी गुरु पगल्याँ धोग।
जसतर-तसतर आ पुग्यो, था दरसन रा जोग॥ 90॥

सयनजी काशी पहुँच गये। श्री गुरू पगल्यों में धोक लगायी। वे जैसे-तैसे काशी पहुँच गये। सद्गुरू के दर्शन का योग नहीं था।

गुरु भाइयाँ वीसासियो, कासी करो मुकाम।
उमर थाग जर-जर वई, भजो राम रो नाम॥ 91॥

गुरु भाइयों ने उन्हें धैर्य बँधाया और कहा कि अब यहीं काशी में मुकाम कर लो। उमर थक चुकी है। यहाँ रहकर राम भजन करो।

चवदा सौ नब्बे रह्यो, सयना रे चित्त धीर।
राम नाम रटना लगी, सहजाँ तज्यो सरीर॥ 92॥

संवत् चौदह सौ नब्बे के वर्ष सयनजी एकदम शान्त चित्त हो गये। राम नाम की रटना जिह्वा पर निरन्तर हो गई और सहज भाव से उन्होंने देह त्याग दिया।

ना तो कोई चेलो कर्‌यो, ना आसरम मठ धाम।
जठे-जठे दन आत्मयो, कर्‌यो वठे मुकाम॥ 93॥

संत सयन भगत जी ने न तो कोई चेला बनाया, न आश्रम अथवा मठ, धाम बनाया। रमतेराम रहे। जहाँ दिन अस्त हुआ, वहीं मुकाम कर लिया।

मधरी वाणी सयन री, खूब कर्‌या गुणगान।
भजन सुणा उपदेसियो, सतगुरु ने चित्त आन॥ 94॥

संत सयनजी की वाणी बहुत मधुर थी। उन्होंने भगवान का खूब गुणगान किया। भजनों के माध्यम से तथा गुरूकृपा से (सत्य का) उपदेश दिया।

इच्छा मिरतु वरण रो, दोई ने अधकार।
कै तो कोई संत जन, कै कोई औतार॥ 95॥

इच्छा मृत्यु वरण करने का अधिकार केवल दो जनों को ही है। या तो संत को या अवतार को।

सयनजी सरगाँ गया, पउँचि गया सिरि धाम।
प्रभुजी जतरो होंपयो, करि गया वतरो काम॥ 96॥

सयनजी स्वर्ग सिधार गये। वे श्रीधाम पहुँच गये। प्रभुजी ने उन्हें उनके अवतार अवधि में जितना काम सौंपा था। उतना उन्होंने पूरा कर दिया।

कर्‌यो इच्छा ती वरण, मिरतू रो निरधार।
जण ती वाज्या जगत में, भीसम रा औतार॥ 97॥

संत सयनजी ने अपनी इच्छा से मृत्यु का वरण किया। इसी कारण वे संसार में भीष्म के अवतार कहलाए।

एसो भगत न होवसी, सुण्यो नहीं त्रिकाल।
मुकनराम रो बेटड़ो, मां जीवणी रे लाल॥ 98॥

संत सयन जैसा भक्त न तो तीनों काल में हुआ है, न होगा। वह मुकुनराम का पुत्र था एवं माता जीवणी का लाल था।

सुरत राम परची लिखी, सुणगुण साध-समाज।
भूल-चूक चेतावजो, करूँ नहीं एतराज॥ 99॥

सुरतराम ने यह परची साधु-संतों से सयन की कथाएँ सुनने और समझने के पश्चात् लिखी है। इसमें भूल-चूक हो तो मुझे चेता देना। मैं एतराज नहीं मानूँगा।

संवत सतरा सौ रह्यो, ऊपर बरस पच्चास।
पूरनमासी पुण्य री, हे वैसाखो मास॥ 100॥

संवत् (विक्रमी) सत्रह सौ पचास में वैशाख पुण्यमास की पूर्णिमा के शुभ दिन यह परचई पूर्ण हुई।

सौजन्य : श्री साँवरलालजी तंवर-बीकानेर, दि. 31 अक्टूबर, 1969, उनके निजी निवास पर उनके संग्रह की हस्तलिखित पाण्डुलिपि से नकल उतारी।

सन्दर्भ :

1. सयन (सैन) जी ने 35 वर्ष की आयु में संन्यास लिया। एक वर्ष दक्षिण में रहे और एक वर्ष दक्षिण से चलकर काशी गुरुधाम पहुँचे, तब उनकी आयु 37 वर्ष थी।

अध्याय-4

संत सैन भगत

जीवन परिचय

संतों-भक्तों को किसी देश, काल में घेरना बहुत विचित्र-सा लगता है। वे तो सर्वकालिक सत्य के उद्घोषक होते हैं। उन्होंने अपना जीवन परिचय लिखने का भी कभी प्रयत्न नहीं किया। जितना भी तथा जो भी उनके विषय में लिखा-अलिखा, जो कुछ भी प्राप्त होता है, वही उनके जीवन परिचय का आधार है। उसी पर संतोष करना पड़ेगा।

आज तक विद्वान किसी भी संत-भक्त का सर्वमान्य जीवन परिचय निर्धारित नहीं कर सके। कृष्णभक्त मीरा राजरानी थी। इसके बावजूद भी आज तक उनका जन्म, जन्मस्थान, चित्तौड़ त्याग, महाप्राण- यहाँ तक कि पति तक में विद्वान सहमत-असहमत होते देखे गये हैं। कई सेमीनार इस बहस की भेंट चढ़ चुके हैं।

संत सैन भक्त का जीवन परिचय जानने के लिए हमारे पास जो सूत्र हैं, उनमें प्रमुख हैं—

1. स्वयं की वाणी में निहित अन्त:साक्ष्य
2. संत सैन भगत के जीवन चरित्र पर रचित परचई साहित्य
3. समकालीन संत-भक्तों के जीवन चरित्र से तालमेल

जन्म

संत सैन का जन्म निर्धारित करने के लिए हम दो संतों के जीवन चरित्र को आधार बना सकते हैं- स्वामी रामानन्दजी और संत पीपाजी।

स्वामी रामानन्दजी का जन्म

नाभादास कृत भक्तमाल में स्वामी रामानन्दजी का जन्म विक्रमी संवत् 1356 बताया गया है। भक्तमाल में उनके जन्म सम्बन्धी श्लोक भी उद्धृत है

रामानन्द महामुनिस्सम भवद्रागेषु रामावनी (1356)
युक्ते विक्रमवत्सरे घटतनौ माघासिते त्वराष्ट्रथे
सप्तभ्यां गुरुवासरे युजि तथा सिद्धौ प्रयागाश्रमा-
च्छ्रीमद् भूसुरराजपुण्यसदनाद्रामावतारः कृती॥[1]

इस श्लोक के अनुसार उनका जन्म (अवतार) संवत् 1356 विक्रमी मान्य है।

इसी क्रम में चौपाई भी उद्धृत है-

वपु बुधि विमल बढ़ै केहि भाँती। जस शीश पाइ पक्षसित राती॥
आठ वर्ष के भे मतिवाना। भयो यज्ञ उपवीत विधाना॥[2]

आप पहले एक दण्डी स्वामी के शिष्य हुए, वहाँ उन्होंने ब्रह्मचर्य युक्त विद्या सीखी। पश्चात् स्वामी राघवानन्दजी का शिष्यत्व स्वीकारा और उनसे श्रीरामषड़ाक्षर मंत्र प्राप्त कर साधना में लीन हो गये। राघवानन्दजी ने इनके मूल नाम रामदत्त से रामानन्द नाम प्रदान किया। इनकी विधि द्वारा 12 वर्ष की ही आयु थी। श्रीरामषड़ाक्षर मंत्र की साधना से काल ने इन्हें छोड़ दिया और आपको दीर्घायु का आशीर्वाद दिया।

इसके पश्चात् इन्होंने स्वामी राघवानन्दजी के साथ बहुत समय तक सत्संग किया। इन्होंने बहुत तीर्थाटन किया और 'श्रीकृष्ण चैतन्य-चिरजीवी' कृपा से इन्हें अष्टसिद्धि योग प्राप्त हुआ।

स्वामीजी ने अपने गुरू राघवानन्दजी की आज्ञा पाकर अपना स्वतंत्र समुदाय चलाया। आपके द्वारा प्रवृत्त सम्प्रदाय रामावत एवं श्री रामनन्दीय सम्प्रदाय प्रसिद्ध हैं।

इसी क्रम में आपने जिस भक्ति आन्दोलन का सूत्रपात किया।[3] उसमें अनेक शिष्यों को आपने दीक्षित किया। आपके शिष्य-प्रशिष्य 'एक ते एक उजागर' हुए, किन्तु भक्ति आन्दोलन में जिन द्वादश शिष्यों का योगदान रहा, वे जगत प्रसिद्ध हुए। उन्हीं द्वादश शिष्यों में कबीर, पीपा, रैदास, सैन, धन्ना आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इन्हीं एक से एक उजागर द्वादश शिष्यों में संत भक्त सैनजी का नाम पूरे आदर के साथ लिया जाता है। भक्तमाल नाभादास के अनुसार ये सभी बारह 'शिष्य-प्रशिष्य भागवत वेशधारी वैष्णव धूप-प्रकाश के सरीखा चारों धामों में स्थान-स्थान में भर गये एवं महात्मा संत समूह कमलों के सम विकासमान हुए। ऐसे सूर्य रूपी श्रीरामानन्द स्वामी उदित हुए।'[4]

रामानन्दजी ने जब अपना पृथक् सम्प्रदाय चलाया और अपने शिष्यों को दीक्षित कर भक्ति भाव की स्थापना हेतु देश में चहुँदिश प्रेषित किया, तब निश्चित रूप से युवावस्था में प्रवेश कर चुके होंगे। वे दीर्घजीवी थे। साधक थे। संयमी थे। इस कारण स्वस्थ भी थे। भक्तमाल के अनुसार उनका महाप्रयाण संवत् 1467 विक्रमी को हुआ, तब वे 111 वर्ष के थे।[5]

स्वामी रामानन्दजी गागरोन पहुँचे, तब संवत् 1455 था।[6] उस समय रामानन्द जी की आयु 99 वर्ष ठहरती है। यदि इस आयु पर आश्चर्य नहीं किया जाये, तब यह माना जायेगा कि पीपाजी को दीक्षा देने के 12 वर्ष पश्चात् रामानन्दजी का महाप्रयाण हो गया। इसी प्रकार जब वे बाँधवगढ़ पहुँचे, तब संवत् 1435 था। धरमदास कृत परचई में दो साखियाँ इसका उल्लेख करती हैं–

सद्‌गुरु रामानंदजी, पहुँच्या बाँधव देस।
सात सिस्य साथे लियां, महलां कर्‌यो प्रवेस॥
संवत चौदा सौ कहूँ, पैंतीस को साल।
सैनभगत ने सिस्य कर, काट दिया भ्रमजाल॥[7]

इसी परचई में चौपाई कहती है–

झट महंत ने थापी मारी। माया दूर भगाई सारी॥
थाप लगाई रामानंदा। सयना दे मन परमानंदा॥
पैंतीस बरस उमर जुव लागी। सयना की सुरती लिव लागी॥

उस समय संत सैनजी की आयु 35 वर्ष थी एवं गणना के अनुसार[8] स्वामी रामानन्दजी की आयु 79 वर्ष थी। यदि हम रामानन्दजी और सैन जी की आयु के अनुसार गणना करें, तब यह ज्ञात होता है कि जब स्वामीजी अत्यन्त वृद्ध हो चुके थे, तब सैन जी पूर्ण युवा थे। सैन को दीक्षित करने के पश्चात् वे 32 वर्ष तक जीवित रहे। इस प्रकार अनुमान हो सकता है कि पीपाजी की दीक्षा संत सैनजी के बीस वर्ष पश्चात् हुई।

संत सैनजी का जन्म

संतों के जन्म के विषय में किसी भी अभिलेख में प्रामाणिक तथ्य प्राप्त नहीं होते।

अगस्त संहिता के अनुसार सैन जी का जन्म विक्रम संवत् 1357 रविवार पूर्वा भाद्र नक्षत्र तुला ब्रह्म लग्न मान्य है।[9]

अगस्त संहिता पन्द्रहवीं शताब्दी के बाद का ग्रन्थ है। अगस्त संहिताकार के पास भी संत भक्तों की जन्म कुण्डलियाँ तो नहीं रही होंगी। उनकी गणना भी लोकश्रुत ही मानी जा सकती है।

यदि हम अगस्त संहिता को प्रामाणिक मान भी लें, तब भी रामानन्द और सैनजी में केवल एक वर्ष का अन्तर बैठता है।

श्यामसुन्दरदासजी ने कबीर का जन्म संवत् 1455 माना है। इसी अनुच्छेद में वे गणना के अनुसार संवत् 1456 कहते हैं। इसी प्रकार उनका परलोक वास संवत् 1505 तथा 1575 विक्रमी कहा है। इसके प्रमाण में उन्होंने दो साखियाँ भी प्रस्तुत की हैं।[10]

दोनों तिथियों में 70 वर्ष का अन्तर है। यदि हम कबीर का जन्म 1455 मानते हैं, तब संत पीपा और संत सैनजी लगभग समकालीन माने जा सकते हैं। यही उचित एवं तर्कसंगत भी है।

स्वयं संत सैनजी ने अपने जन्म का उल्लेख कहीं नहीं किया है। फिर भी कुछ प्रसंगों में उन्होंने कुछ साखियाँ ऐसी लिखी हैं, जिनके आधार पर उनका जन्म समय ज्ञात किया जा सकता है। इन साखियों को हम इसलिए प्रामाणिक मान सकते हैं कि ये साखियाँ स्वयं सैनजी ने ही कही हैं-

पीपा ने सति सीता के संग मुझ पे कृपा करी।
सति सीता सरग सिधार्‌या, टोडा में छतरी॥
सति सीता की करी परकमा, सरधा अरज करी।
सयना जतरी संगत लिक्खी, सत्त नेम गुजरी॥

× × ×

कर परनाम छोड़ दियो, सिद्ध टोडा को धाम।
सत संगत करता चल्या, मारग गामोगाम॥
छै महीना में पौंच्या, गागरोन सुखधाम।
आहू कालसिंध के, संगम कर्‌यो मुकाम॥[11]

जब सीताजी की मृत्यु हुई, तब संत सैन टोडा में पीपा के आश्रम में मौजूद थे। सीताजी की मृत्यु संवत् 1472 विक्रमी में हुई।[12]

संत सैनजी और संत पीपाजी साथ-साथ टोडा से चलकर सत्संग करते हुए गागरोनगढ़ पहुँचे। वहाँ खूब सत्संग हुआ और सैनजी गागरौन तथा उसके आसपास के अंचल में पाँच बरस तक रहे। वहाँ उन्होंने खूब भजन गाए। उसी मध्य संत पीपाजी का देहान्त हो गया।

संगम की खोह ताड़ो लागी, पीपे देह छरी।
मिल्यो पौन में पौन, देह धरती पे रही धरी॥[13]

उसी पद में वे कहते हैं– अब गागरोन में रहने का क्या औचित्य है। संगत छूट गई है। यहाँ से चल पड़ना ही उचित है।

साधू तो चलता भला, बहता सुच्चा नीर।
सयना माया मोह तजे, साधू-संत-फकीर॥
ठाँव ठौर मुक्काम को, छूट गयो सब मोह।
सयना सतगुरु की कृपा, रह्यो नहीं कोई भोह।
राम धर्‌यो घट भीतरां, सुमरूँ साँस-उसाँस।
सयना झोलो खांदके, हाथां धर्‌यो बाँस॥
सरधा राखी हिरदा भीतर, सतगुरु साख भरी।
धोग लगाई साध समाधी, उबी वाट पकरी॥
साँत सुवानी मालव माटी, चीतूँ घरी-घरी।
पाकी उमर सितोत्तर होई, देह हुई जजरी॥[14]

संत पीपाजी का देहान्त संवत् 1477 विक्रमी को हुआ। तब संत सैन की उम्र (साखी के आधार पर) 77 वर्ष की थी। अर्थात् उनका जन्म 77 वर्ष पूर्व संवत् 1440 विक्रमी को हुआ था। ऐसा अन्त:साक्ष्य कहता है।

इसी सन्दर्भ में हमारे पास दो परचइयाँ हैं– एक धरमदास की परचई। इस परचई का विवरण परचईकार ने भी दिया है तथा मैंने भी यथास्थान लिखा है।

इस परचई में संत सैन के जन्म से महाप्रयाण की कथा-गाथा वर्णित है। इस परचईकार ने सैनजी को बाँधवगढ़ का वासी (निवासी) बताया है। उनके पूर्वज भी बाँधवगढ़ के थे। उनकी माता का नाम जीवनी था और पिता का नाम मुकुन्दराम था। पिता का स्वर्गवास हुआ, तब सैन गर्भ में थे। जीवनीबाई अपने मायके सोहाल, अमृतसर (पंजाब) चली गई। वहीं मामा के घर इनका जन्म हुआ।[15]

संत माता ने सूफी संत गुरियाजी से पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद लिया था। तब गुरियाजी ने कहा था– 'तुम्हारे पुत्र होगा। उसका नाम हुसैन के आधार पर रखना। वह खुदा का खास बंदा होगा और नेकी के रास्ते चलकर हुसैन की तरह सत्य (हक) न्याय की रक्षा करेगा।'

संयोग से जीवनीबाई के पुत्र का नाम जोशी ने 'सयन' रखा। सयन विश्वामित्र के पुत्र का भी नाम था। जीवनीबाई ने कहा– 'सयन' नाम ठीक है। इससे गुरियाजी की बात भी रह जाएगी। हुसैन का उच्चारण 'सयन' रह जाएगा।

सैनजी के जन्म के थोड़े दिन बाद जीवनीबाई का देहान्त हो गया। बालक सयन का पालन–पोषण उसकी मामी ने किया।[16] सुरतरामजी की परचई में एक साखी ने कहा है–

एक थान सयनो पिये, एक पिये निजपूत।
बेटो करने पार्‌यो, मामी सुगन सपूत॥[17]

अपने नाम सयन के विषय में स्वयं सैन जी ने एक साखी कही है–

सयना सैना सैनया, सुणता पाक्या कान।
सैन वई सद्‌गुरु कृपा, होयो सत को भान॥[18]

बारह वर्ष की उम्र में मामा ने सैनजी को नाई का काम सीखने के लिए अमृतसर उसकी मौसी के यहाँ भेज दिया। यह संवत् 1412 विक्रम का साल था।

सैन भगत के जन्म के विषय में सुरतरामजी ने अपनी परचई में लिखा है–

संवत चवदा सौ रह्यो, सुभ तिथि अर सुभवार।
ब्रह्मकाल में धार्‌यो, सयना ने औतार॥
बुदि बारस वैसाख री, जस राखे दितवार।
माँ जीवणि रा कोख ती, सयन लियो औतार॥[19]

सयन (सैन) जी के नाम और अवतार का स्पष्टीकरण सुरतराम ने अपनी परचई में किया है–

बाँधवगढ़ तो मूल हे, पूरबजां रो वास।
नणियारो पंजाब रो, अमरतसर रेवास॥
मामा के घर जलमयो, सोहालो एक गाम।
जोसी जी ने काढ़्यो, सयन नाम सुनाम॥
सयन नाम जोसी धर्‌यो, सयन होयो सैन।
गुरियाजी को हुकुम थो, रखजो नाम हुसैन॥
हुकुम इलाही में रहे, बोले हक रा बैन।
हक रे खातर मरि मिटे, जण रो नाम सुनाम॥
सयना नाम सुनाम हे, विस्वामित रो पूत।
धाम सँवारन परगट्यो, राम हरि रो दूत॥
गुरिया री मेहर बणी, सूफी संत करार।

दूत बणा ने भेजियो, सयना ने करतार॥
सयन रो अरथो कहे, अग जग तारणहार।
करम सुधारण परगट्या, सदमत रा औतार॥[20]

अमृतसर में सयन ने अजीम नामक मुसलमान नाई के पास रहकर हजामत तथा मालिश का हुनर सीखा। वहीं निकट के गाँव में मौसी ने सैन का विवाह साहबाँ से करवा दिया। वह सब भाइयों में छोटी थी, इस कारण उसे 'निक्की' पुकारा जाता था। पंजाबी भाषा में निक्की अर्थात् 'छोटी'। मालवी, राजस्थानी में यही अर्थ 'नानी' का होता है।[21] यहीं पर सैन का सम्पर्क संत गुरिया जी से हुआ। उनके सत्संग से उनमें अध्यात्म के भाव जागने लगे।

सैनजी निक्की को साथ लेकर वापिस सोहाल मामा के घर लौट आए। कुछ दिन मामा के घर रहे। नाई का काम किया। एक दिन मामा ने कहा– 'सैन, अब तुम अपने मूल ठिकाने बाँधवगढ़ जाओ। वहाँ अपना घर सुधारो और राजा को अर्जी देकर राज नाई बनो। वह तुम्हारा अधिकार है।'

सैनजी निक्की के साथ बाँधवगढ़ पहुँचे। वहाँ उन्हें राज नाई की सेवा मिल गई। उनके जीवन में अनेक घटनाएँ हैं, जो बहुत प्रेरक हैं, यथा– संतों के भोजन के लिए सेऊ को अपना सिर कटवाना। फिर जीवित हो जाना। सेऊ उनका पुत्र था। इसका नाम सेवाराम था। सेवा से सेवू तथा फिर 'सेऊ' कहलाया।

उनके जीवन की सबसे विशेष घटना थी– उनकी उपस्थिति में स्वयं हरि का सैन रूप धारण कर राजा की खवासी करना। इस घटना ने सैनजी का जीवन बदल दिया और वे राजचाकरी से मुक्त हो गये। स्वयं राजा बाँधवगढ़ बघेला उनका भक्त हो गया।[22]

गुरू

एक दिन बाँधवगढ़ में स्वामी रामानन्दजी पधारे। उनके साथ उनके सात शिष्य भी थे। राजा ने खूब आवभगत की। सैनजी को यहीं पर संवत् 1435 में स्वामीजी ने अपना शिष्य स्वीकार किया।

सतगुरु रामानन्दजी, पहुँच्या बाँधव देस।
सात सिस्य साथे लियां, महलां कर्‌यो प्रवेस॥
संवत चौदह सौ कहूँ, पैतीसां को साल।
सैन भगत ने सिस्य कर, काट दिया भ्रम जाल॥[23]

स्वामीजी ने थापी लगाकर सैनजी को दक्षिण देश जाने का आदेश दिया। वे गुरू आज्ञा पाकर दक्षिण चले गये।

सद्‌गुरु आज्ञा दक्खन आयो। रामानंद हरि चित्त धरायो।
पाण्डुरंग का रसगुण गाया। भजन रचा सरस सुणायो॥[25]

वे एक बरस दक्षिण में रहे-

एक बरस दक्खन में रह्यो। सतसंग सुण्यो अर कह्यो॥[26]

स्वयं सैनजी ने भी सद्‌गुरू की आज्ञा पाकर दक्षिण जाने का उल्लेख किया है।[27]

सैना सद्‌गुरु हुकुम हुओ, आयो दक्खन देस।
ना ठाकर की चाकरी, ना कोई कलह करेस॥[28]

सैनजी ने दक्षिण में रहकर मराठी में अभंग लिखे हैं। वे अभंग इसी ग्रन्थ में हिन्दी अर्थ सहित परिशिष्ट में संकलित हैं।

कुछ विद्वानों ने तथा कल्याण के संतवाणी अंक में उन्हें संत ज्ञानेश्वर का समकालीन बताकर उनका शिष्य कहा गया है। यह सही नहीं है। वे जब तक बीदर क्षेत्र में रहे, उन्होंने पाण्डुरंग की भक्ति के अभंग लिखे, किन्तु न तो वे संत ज्ञानेश्वर के शिष्य थे और न वारकरी सम्प्रदाय में दीक्षित थे। वे स्वामी रामानन्दजी के शिष्य थे। सैनजी ने अपनी वाणी में बार-बार स्वामी रामानन्दजी को अपने सद्‌गुरू के रूप में वन्दन किया है तथा अपने गुरू भाइयों - कबीर, रैदास, धना एवं पीपा- का स्मरण किया है। संत पीपा के साथ तो वे टोडा (रायसेन) से गागरोन में सीता सती के महाप्रयाण से लगाकर संत पीपाजी के महाप्रयाण तक साथ रहे।

वे संत पीपाजी के महाप्रयाण के पश्चात् गागरोन से ओंकारेश्वर नर्मदा तट की ओर चल दिये। वह 'कुछ काल' रहे। फिर उन्हें गुरूधाम की याद आने लगी। वे साधुसंग के साथ काशी की ओर चल दिये। जब वे काशी पहुँचे, तब उनकी आयु अस्सी वर्ष हो चुकी थी। उन्होंने गुरूधाम पहुँचकर गुरू रामानन्द की समाधि पर स्थित पगलियों पर धोक लगाई। वहाँ उपस्थित गुरू-शिष्यों ने उन्हें वहीं काशी में रहकर शेष जीवन बिताने का आग्रह किया। सैनजी ने शेष जीवन काशी में बिताया और संवत् 1490 विक्रमी में उन्होंने संसार से विदा ले ली।

पीपाजी ने धरी समाधी। राम नाम रसना आराधी॥
आतम परमानंद समाई। पीपे कर ली खरी कमाई॥
बरस सित्तोत्तर विक्रम जाणू। पूरण परमानंद पिछाणू॥
सयनो बैठ्यो आसरम बीचे। सोच-विचारे आँखाँ मीचे॥

सोच-विचार के पश्चात् वे ओंकारेश्वर गये और वहाँ से काशी पहुँचे।[29]

संग जुड़यो साध को, सत्संगत गुणगान।
ओंकारेश्वर ती कर दियो, सयन भगत पयान॥
उमर पाक अस्सी वई, पऊँच गयो गुरुधाम।
सद्गुरु पगल्या धोक्या, कासी कर्‌यो मुकाम॥
विक्रम चौदा सौ कहूँ, ऊपर नब्बे जान।
सयना ने गुरु धाम में, त्याग दिया निज प्रान॥[30]

सुरतरामजी ने भी अपनी परचई में लिखा है-

साधां री संगत जुड़ी, सयन चाल्यो संग।
दरसन सतगुरु रा करूँ, ऐसी बढ़ी उमंग॥
कासी पउँच्या सयनजी, दी गुरु पगल्याँ धोग।
जसतर-तसतर आ पुग्यो, था दरसन रा जोण॥
गुरु भाइयाँ वीसासियो, कासी करो मुकाम।
उमर थाग जर-जर वई, भजो राम रो नाम॥
चवदा सौ नब्बे रह्यो, सयना रे चित धीर।
राम नाम रटना लगी, सहजां तज्यो सरीर॥
ना तो कोई चेलो कर्‌यो, ना आसरम मठ धाम।
जठे-जठे दन आत्मयो, कर्‌यो वठे मुकाम॥
मधरी वाणी सयन री, खूब कर्‌या गुणगान।
भजन सुणा उपदेसियो, सतगुरु ने चित आन॥
इच्छा मिरतु वरण रो, दोई ने अधकार।
कै तो कोई संतजन, कै कोई औतार॥
सयनजी सरगां गया, पऊँचि गया सिरिधाम।
प्रभुजी जतरो होंवियो, करिगया वतरो काम॥
कर्‌यो इच्छा ती वरण, मिरतु रो निरधार।
जणती वाज्या जगत में, भीसम रा औतार॥
ऐसो संत न होवसी, सुण्यो नहीं त्रिकाल।
मुकनराम रो बेटड़ो, माँ जीवणी रो लाल॥[31]

संक्षेप में–

जन्म : पंजाब, अमृतसर, मामा के घर, गाँव सोहाल, संवत् 1400 विक्रम.
माता–जीवणीबाई, पिता–मुकनराम, पत्नी–निक्की, पुत्र–सेऊ
हुनरगुरू : अजीम नाई, लाहौर
मूल निवास : बाँधवगढ़, राजनाई
सद्गुरू : स्वामी रामानन्दजी
संन्यास : विक्रमी संवत् 1435
पीपाजी का संग : संवत् 1472 से 1477
ओंकारेश्वर प्रस्थान : 1477 विक्रम संवत्
ओंकारेश्वर से काशी प्रस्थान : 1478–79 विक्रम संवत्
महाप्रयाग : काशी 1490 विक्रम संवत्

संत सैनजी का जीवन बाल्यकाल से ही संघर्षमय रहा। युवा आयु में ही उन्होंने संन्यास ले लिया। बाद में उनके पुत्र सेवा (सेवू–सेऊ) ने भी संन्यास ले लिया।

सैनजी के मानने वालों की संख्या का विस्तार पूरे भारत में है। उन्हें भिन्न–भिन्न नाम से भी पुकारा जाता है। नाई जाति समग्र सैनजी को अपना आराध्य मानती है।

सैन समाज एवं उसकी यथास्थिति

इतिहास इस बात का साक्षी है कि भारत में नायी समाज की अपनी गौरवपूर्ण स्थिति रही है। इसका इतिहास इतना उज्ज्वल रहा है कि भारत भूमि के सारे समाज, धर्म दर्शन और प्रतिष्ठित राजवंशों सभी में इस समाज का महान योगदान रहा है। भारतीय इतिहास और संस्कृति इस समाज की ऋणी है। इतिहास, पुराण, शास्त्रों के अध्ययन से जो ज्ञात होता है, वह इस प्रकार है– प्राचीन वैदिक कालीन समाजों के साथ नायी समाज का उल्लेख मिलता है।

संसार के प्राचीनतम धर्मग्रन्थों की रचना करने वाले महान महर्षियों में इस समाज के महान महर्षि हुए हैं।

भारत भूमि के अनेक महान धर्मों में जैसे शैव, वैष्णव भक्ति सम्प्रदाय बौद्ध धर्म, सिक्ख धर्म और जैन धर्म इत्यादि में इस समाज के महान संत और प्रवर्तक हुए हैं।

नाई ठाकुर समाज भारत की धरती के प्राचीनतम क्षत्रियधर्मा समाजों में प्रतिष्ठित राजवंशी हैं (आज भी कुछ प्रदेशों में नाई समाज के व्यक्तियों को 'ठाकुर' नाई–ठाकुर नाम से पुकारते हैं और गोत्र भी हैं।)

भारतीय इतिहास का प्रथम विशाल मगध साम्राज्य नाई समाज द्वारा स्थापित किया गया था। इस प्रकार का गौरव और यश भारत–भूमि में अन्य किसी भी समाज को प्राप्त नहीं है। इस समाज की अनेक शाखाओं और गोत्रों के राजे–महाराजे और जागीरदार अधिपतियों ने भारत–भूमि पर राज्यों की स्थापना की है और राज्यसत्ता भोगी है।

भारतीय इतिहास इन बातों का साक्षी है। अति प्राचीनकाल से नाई जाति एक ही जाति और समाज है। इसमें कोई भेद कहीं किसी भी शास्त्र में नहीं बताये गये हैं। जब से इस जाति समाज में एकता और संगठन शक्ति उत्पन्न हुई, शक्ति से सत्ता हासिल हुई। उनके अनेक राज्य एवं जागीरदारियाँ स्थापित हुईं। लेकिन जैसा अक्सर राजनीति में होता है, समाज के ठेकेदारों ने इस समाज को क्षीण करने के लिए इसे टुकड़ों में बाँटना शुरू कर दिया और अनेक प्रकार की कहानियाँ बना–बनाकर इस समाज में भेद उत्पन्न किया गया और यह कोशिश की गई कि इस समाज की उत्पत्ति कथाएँ ऐसी लिखी जाएँ, जिससे इस जाति को हीन बताया जाए, ताकि इस समाज के लोगों में हीन भावना भर जाये, वे अपने आपको हीन समझने लगें और मानसिक गुलामी का शिकार हो जायें और पिछले हजार वर्षों से यही होता चला आया, किन्तु आज भी इसकी स्थिति मांगलिक–पारिवारिक कार्यों में ब्राह्मण पौरोहित्य कार्य के समान है। मानव समाज के अन्य लोगों की स्वार्थपरता वश इसके प्रति दृष्टिकोण को बदला जाने लगा, ताकि इन्हें नीचा दिखाकर इनसे सेवा और बेगार ली जा सके।

भारत की सामाजिक सभ्यता सिन्धु घाटी की सभ्यता से प्रारम्भ होती है, जिसकी समयावधि 3000 ईसा पूर्व से 1500 ईसापूर्व तक मानी जाती है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो सिन्धु सभ्यता की राजधानियाँ थीं। डॉ. विमलचन्द पाण्डेय के अनुसार सैंधव समाज व्यक्तियों के कर्मानुसार चार वर्गों में विभाजित था– (1) विद्वान, (2) योद्धा, (3) व्यापारी, (4) कारीगर एवं श्रमिक। इसी प्रकार ऋग्वैदिक काल में भी समाज को व्यक्तियों के कर्मानुसार विभाजित किया हुआ था। वैदिक काल में वर्ण–व्यवस्था उदार थी एवं व्यक्तियों के कर्मों पर आधारित थी। किसी भी विशेष वर्ण वाला व्यक्ति अपने कर्मानुसार दूसरे वर्ण में परिवर्तित हो जाया करता था। इसके पश्चात् जब उत्तर वैदिक काल, जिसका समय लगभग 1000 ईसा पूर्व से 600 ईसा पूर्व तक माना जाता है। डॉ. एस.एल. नागोरी एवं श्रीमती कान्ता नागोरी के अनुसार वैदिक काल में अनेक कर्मकाण्डों एवं आडम्बरों का प्रवेश हो जाने के कारण सामाजिक एवं धार्मिक व्यवस्था बहुत जटिल होती गई। सामाजिक वर्णों का विभाजन व्यक्ति के जन्म के आधार पर शुरू हो गया। इसके बाद से वर्ण व्यवस्थाएँ जटिल होती गई और जो वर्ण सेवा कार्यों में लगे होते थे, शिक्षा उनसे दूर होती गई। धर्म, यज्ञ, संस्कार, सीमित व्यक्तियों के हाथों में केन्द्रित होते चले गये। इसके पश्चात् जाति व्यवस्था को लेकर मानव सभ्यता में जो बातें सामने आईं, वे आज सब देख–भुगत रहे हैं।

जहाँ तक बात नाई जाति की है, तो इसका भूतकाल अति पुष्ट रहा है, नेतृत्वकारक रहा है। क्योंकि वर्तमान नाई शब्द अपभ्रंश है, जो 'नाय' से बना। नाय का अर्थ नेता है। नाम शब्द नेता के अर्थ में आता है। नाय से नायी शब्द की 'नी' धातु की वृद्धि प्राप्त होकर 'नै' हुआ, फिर इसमें 'घञ' प्रत्यय लगा। 'घञ' प्रत्यय में 'घ्' और 'ञ्' का लोप होकर 'अ' रह गया। फिर 'नै' – 'अ' को संधि प्राप्त होकर नाम पद सिद्ध हुआ, जिसका अर्थ 'नेता' होता है। नेता का अर्थ 'नेतृत्व' करने वाला है। जो न्यायपूर्वक 'नेतृत्व' करे, उसी को 'न्यायी' या 'नायी' कहते हैं। यही नायी जातिवाचक शब्द बिगड़कर नाई हो गया, जिसे कृषि के औजार नाई अर्थात् दूफन कहा जाता है। मुख सुख की दृष्टि से न्यायी का नायी और नायी का नाई हो गया और फिर प्रचलित अर्थ शब्दकोशों में नायी के साथ नाई को भी सम्मिलित कर लिया गया, जैसे वर्तमान में 'सैन' को। इस बात का उल्लेख करना यहाँ इसलिए जरूरी हो गया कि हम जातीय व्यवस्था के वास्तविक स्वरूप को समझें और जाति व्यवस्था को लेकर जो भेद व नफरत, हीनता बोध आता है वह दूर करें। क्योंकि ये बात भी समझ लेना चाहिए कि वेदों, उपनिषदों और मनुस्मृति में जाति शब्द कहीं इस रूप में नहीं आया है, जैसी प्रचलित प्रथा है। केवल वर्ण–व्यवस्था रही है। जाति के वर्तमान शब्द केवल कार्यों के द्योतक हैं (वे आज के जाति के अर्थ में कभी प्रयुक्त नहीं हुए)।

नाई समाज की प्राचीन काल से स्थिति का आकलन करें, इसकी सामाजिक स्थिति व कार्यों के बारे में, तो वह संक्षेप में इस प्रकार प्राप्त होती है—

नायियों के आद्य पुरुष 'वायु' और 'सविता' ऋषि हैं। (सामवेद के उद्‌गाता सविता ऋषि), देवर्षि नारद (मुम्बई के पुरन्दर एण्ड क. के मुद्रणालय में शकाब्द 1818 सन् 1896 ईस्वी में एक मराठी ग्रन्थ 'मूल स्तम्भ' के पृष्ठ संख्या–94, अध्याय–13, पद–36 पर 'न्हावी वंश नारदा च' अर्थात् नायी वंश नारद का है।) वायुपुत्र हनुमानजी, कोंडुकोपनिषद् के रचयिता महर्षि कोंडिल्य जिनको अपनी तपस्या व ब्रह्मज्ञान से महर्षि पद प्राप्त हुआ था, नवधा भक्ति के उपदेशक महर्षि मातंग (महाभारत अनुशासन पर्व, अध्याय–27), दक्षिण में वैष्णव मत के प्रवचनकार जो दार्शनिक व धर्मोपदेशक रहे 'संत हड़प्पण', महाराष्ट्र की उज्ज्वल संत परम्परा में वारकरी सम्प्रदाय के श्री समर्थ नागाजी महाराज, पंजाब में गुरूनानक के शिष्य 'मरदाना' जो नापित पुत्र थे। गुरु गोविन्द सिंहजी के पंज प्यारों में एक रत्न भाई साहिबचन्द्र नाई जो 37 वर्ष के बिदर (कर्नाटक) के थे, जिनका नाम गुरू ने साहिब सिंह रखा। संत सैनजी सैनाचार्य स्वामी अचलानन्दजी महाराज, उप सैनाचार्य–वैष्णव सैनाचार्य धर्मधाम गीता भवन–मन्दसौर के संस्थापक रामकुमाराचार्य अनुरागी बापु, विश्व सैनाचार्य महामण्डलेश्वर आचार्य स्वामी देवेन्द्रानन्द गिरिजी महाराज बहादुरगढ़ (हरियाणा), बोरी (प्रतापगढ़, राजस्थान) में चमत्कारिक संत कारूबावजी का स्थान जहाँ वर्तमान में मंगलाचार्यजी भगत विराजमान हैं।

भारत के चक्रवर्ती सम्राटों में नाई समाज के चक्रवर्ती सम्राट व राजवंश हुए हैं, जिनका संक्षेप में उल्लेख करना समीचीन प्रतीत होता है। इसमें सर्वप्रथम केन्द्रीय शासन पद्धति के जनक प्रथम चक्रवर्ती सम्राट महापद्मनन्द का विशेष उल्लेखनीय अवदान है। 364 ईसा पूर्व मगध (आधुनिक बिहार) में एक ऐसे महान सम्राट का उदय हुआ, जिसने तत्कालीन समाज के सर्वाधिक परिश्रमी और उपेक्षित लोगों के जीवन जीने की पद्धति को ही परिवर्तित कर दिया और उनको आत्म सम्मान के उच्च स्थान पर लाकर आसीन कर दिया। उस प्रकाश पुंज का नाम महापद्मनन्द था, जो विश्व इतिहास में एक कुशल साम्राज्य निर्माता, प्रशासक तथा राजनीतिज्ञ के नाम से आज भी प्रसिद्ध है। यह महान सम्राट नाई थे। इन्होंने भारत में विस्तृत सभी षोडश महाजनपदों को सुसंगठित कर प्रथम बार सुदृढ़ केन्द्रीय शासन की नींव डाली तथा आगे आने वाली पीढ़ी के शासकों को शासन करने की उत्कृष्ट पद्धति सिखलायी। इनके काल में वर्ष, उपवर्ष, पाणिनी, कात्यायन, वररुचि, ब्यादि आदि महान विद्वान हुए।

महापद्मनन्द की मृत्यु के बाद उसका योग्य पुत्र धननन्द 336 ईसा पूर्व राजसिंहासन पर आसीन हुआ। परम्परावादी व्यवस्थाकारों ने षड़यंत्रों, प्रतिषड़यंत्रों के माध्यम से नन्द शासकों को अपदस्थ करने का प्रयास किया। चाणक्य ने सम्राट नन्द की उपपत्नी मुरा के पुत्र चन्द्रगुप्त को चुना। चन्द्रगुप्त के रूप में उसे एक योग्य राजकुमार मिल गया। युद्ध में अपने पिता की हत्या के बाद 322 ईसा पूर्व वह सम्राट बना। चन्द्रगुप्त के बाद उसका पुत्र बिन्दुसार, बिन्दुसार के बाद अशोक ने सत्ता सँभाली। अशोक महान सम्राट था, यह सर्वविदित है। इस वंश का अन्तिम शासक बृहद्रथ हुआ। बृहद्रथ परम्परावादी व्यवस्थाकारों की रणनीति का शिकार हुआ और 184 ईसा पूर्व एक षड़यंत्र के तहत उसकी हत्या कर दी गई। इस प्रकार 364 ईसा पूर्व से 184 ईसा पूर्व तक अबाध रूप से यह शासन चला। पुराणों में नन्द शासकों के उत्थान को निम्न वर्ग के उत्कर्ष का प्रतीक माना गया है। इस प्रकार नन्द वंशीय महान सम्राटों ने समानतावादी, नैतिकवादी, करुणामयी, न्यायप्रिय, जातिविहीन, समतावादी विचारधारा को समाज में प्रवाहमान बनाया। ऐसे रहे हैं ये अखण्ड भारत के निर्माता।

इसी प्रकार अन्य छोटे-छोटे राजवंश भी हुए हैं। इसी के साथ गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, भुज प्रदेशों में भी नाई राजवंश रहे हैं। गुजरात के राज्य हलवद के राजा रायसिंह के व्यक्तिगत सलाहकार और राज्याधिकारी एक मशहूर अजाजी खवास थे (1750 ईस्वी)। अजाजी खवास के पुत्र चतुर व बुद्धिमान थे। अजाजी के तीन पुत्रों में से मेहरामा को नावा नगर का प्रमुख बना दिया (1768 ईस्वी)। वीर मेहरामा अधिपति ने ओखा, पोरबन्दर, जूनागढ़ पर आक्रमण कर जीत लिया। कच्छ के वजीर फतेह मोहम्मद से संधि की। 1792 ईस्वी में काठियावाड़ पर आक्रमण कर उसे अपने राज्य में मिला लिया। माण्डवी का अधिपति भी उस समय रामजी खवास थे (1782 ईस्वी)। इस प्रकार मेहरामा गुजरात, काठियावाड़ का एक छत्र शक्तिशाली

राजा बन गया था। ईस्वी सन् 1800 में मेहरामा की मृत्यु हुई। इस प्रकार भारतीय इतिहास में गुजरात, काठियावाड़, कच्छ, भुज का यह सैन/नाई/खवास राजवंश अपने इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा हुआ है। नाई जाति में कई राजवंशों में वीर योद्धा भी हुए हैं, जैसे किसना नाई, कुंभा नाई आदि स्वतंत्रता संग्राम सैनानी हुए हैं।

भारतीय नाई समाज एवं यथास्थिति में उसकी गौरवशाली परम्परा का उल्लेख करना भी जरूरी हो गया था। समय परिवर्तनशील है और समय के मान से परिस्थितियाँ बदलती हैं। भारत में जब से विदेशी आक्रान्ताओं का प्रवेश हुआ और भारतीयों को आपस में तोड़ने, पद दलित, अपमानित, अत्याचारों के दौर ने नाई समाज की स्थिति को भी जर्जर कर दिया। क्षौर कार्य जैसे पौरोहित्य कार्य को यजमान वृत्ति में बाँधकर रख दिया। फलत: भारत के कुछ प्रदेशों, प्रदेशों के कुछ क्षेत्रों में आजीविका के लिए सेवा कार्य अपनाने से दोयम दर्जे का समझा जाने लगा।

भूतकाल तो अच्छा रहा, किन्तु बाद में शिक्षा के क्षेत्र में आर्थिक व राजनीतिक स्थिति में गिरावट आती गयी। यह जाति पिछड़ती गयी। जो भी कोई आगे बढ़े हैं, तो वे अपने दम पर। राजनीति में बिहार के मुख्यमंत्री कर्पूरी ठाकुर का नाम भुलाया नहीं जा सकता। कई सैन बन्धु विदेशों में भी अपनी सेवाएँ दे रहे हैं। अच्छे पदों पर हैं। ब्रिटेन में भारत मूल के लार्ड नवनीत ढोलकिया जैसे व्यक्तित्व इसके उदाहरण हैं।

भारतीय सभ्यता में उत्तर वैदिक काल से जब वर्ण व्यवस्था बलवती होती गई, तब से हिन्दू धर्म व संस्कृति में परम्परा को पल्लवित किया जाने लगा। हिन्दी जातियों में गोत्र उपजातियाँ अपने निवास के क्षेत्र, कार्य, व्यवसाय के अनुसार पुकारी जाने लगी। इसीलिए आप देखते हैं कि कई जातियों में एक-सी गोत्र पाई जाती हैं। सभी जातियों में विशेषकर हिन्दू धर्म की सभी जातियों में गोत्र प्रचलित हैं। एक ही गोत्र, एक ही देवी की पूजा, एक ही भेरू बाबजी, एक ही देराणी, वृक्ष की पूजा करने वाले आपस में भाई-बन्धु माने जाते हैं। अत: एक ही जाति में व्यक्ति अपने गोत्र टालकर विवाह सम्बन्ध तय करते हैं। विद्वानों का निष्कर्ष है कि गोत्रों की उत्पत्ति किसी जाति, वंश के स्थान विशेष या मातृभूमि के जुड़ने से हुई है। सभी गोत्रों की उत्पत्ति स्थान विशेष से हुई हो, ऐसा नहीं है। जिसमें गौतम, कश्यप, वसिष्ठ, पुलत्स्य, पुलह, भारद्वाज, अत्री शांडिल्य आदि शामिल हैं। नायी समाज में कई जगह ये गोत्रें बहुतायत में मिलती हैं। धर्म की दृष्टि से देखें तो सम्पूर्ण सृष्टि की रचना ब्रह्मा ने की, इसलिए हम सभी चराचर जीव उस परब्रह्म की संतानें हुईं। इस तरह मानव की पहचान गोत्र ऋषियों के नामों पर आधारित है। कालान्तर में यह ऋषि-वंश परम्परा कर्म के कारण जाति उत्पत्ति के साथ बिखण्डित होती चली गई। हिन्दू विवाह नियम परम्परा का यही नियम गोत्र व वंशावली परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने में कारगर सिद्ध हुआ है।

नाई समाज में गोत्रों की संख्या काफी है। आज समाज में कहीं गोत्र मिलते ही भाई–बन्धु या अन्य रिश्ते बन जाते हैं और एक ही जाति में गोत्र न मिलने पर शादी सम्बन्ध तय हो जाते हैं। समस्त भारत में नाई शब्द व्यापक और प्रचलित है, तथापि विभिन्न राज्यों में विभिन्न नाम इस जाति के लिए प्रयोग किए जाते हैं, यथा— मध्यप्रदेश–छत्तीसगढ़ में– सैन, नाई, सविता, वसा। उत्तरप्रदेश में– नायी, नायी पांडे, पांडे ब्राह्मण, नायी ब्राह्मण, सैन, सविता। राजस्थान में– नाई, सैन, नाई–ठाकुर, खवास, वेद्यनाई। दिल्ली–पंजाब–हरियाणा में– नाई, सविता, सैन, नायी–ब्राह्मण, बारबर, राजा, महता, ठाकुर आदि। बिहार में– नायी, नापित, हज्जाम, ठाकुर, नायी ब्राह्मण। बंगाल में– नापित, हज्जाम, नाऊ, नायी, सवितृ ब्राह्मण। मैसूर– नामिन्द। कश्मीर में– हज्जाम, नापित, भण्डारी, नायी, नायी ब्राह्मण। उड़ीसा– भद्री, वरिक, भण्डारी। आसाम– नायी, चन्द्र वैद्य। गुजरात में– वाणन्द, बालन्द, नाडिग, केलसी, नायी–ब्राह्म, नाभिक। कोचीन में– अम्बटन, मारायन, नायर, बेलकिहल। हैदराबाद में– न्हावी, मंगल, केलसी, नायी, हज्जाम, सविता। मद्रास में– मरुथवर, कसूवन, भण्डारी, कबूरियन, बारवर, नायी, नायी–ब्राह्मण, मंगल, अम्बटन। महाराष्ट्र में– खवास, नामिन्दा, कैलासी, नायड़े, महाल, मंगला, नामिन्दा। आन्ध्र में– चित्तूर, कडाया, गुंटूर, कृष्णा, नैलौर, नायी–ब्राह्मण। गुरुदासपुर में– याजक, याज्ञिक, नायी–ब्राह्मण। कहीं–कहीं शीलवन्त, मोरासु, उप्पिना, मारू–नायी, केकुलम नेविनि, डोगरा आदि अनेक नाम है।

संस्कृत ग्रन्थों में– कुन्तल, क्षुरौ, मुन्डी, दिवाकीर्ति, अन्तवसायी, ग्रामणी ये छः नाम हैं।

ऋग्वेद में– ग्रामणी, नेता, नय, नाय नाम है। क्षौरकार को सविता कहा गया है।

अमरकोष में– 'ग्रामणीर्नापिते पुंसी' – ग्रामणी का अर्थ नापित कहा है।

जब से 'सैन परिचय' मासिक जैसी पत्रिका 1977 से निरन्तर प्रकाशित हो रही है, तब से व सैन भक्ति पीठ की स्थापना आदि से सम्पूर्ण भारतवर्ष में संत सैन जी के नाम से 'सैन' नाम नाई/नायी जाति का पर्याय बन चुका है, सर्वाधिक प्रयोग में लिया जाने लगा है। अब प्रमुखता से पूरे भारत वर्ष में नाई–नायी, सैन, सयन, सविता, नायी–ठाकुर, ठाकुर, खवास, बालद बहुतायत में प्रचलित हो गए हैं। यहाँ हम विभिन्न प्रकार के गोत्रों व उनके नाम प्रदर्शित कर रहे हैं।

विभिन्न गोत्र और नाम

अगरवाल, अंगारकुण्ड, अठासिया, अढाणीवाल, आचोरिया, अतकर, अजाडीवाल, अवूरिया, अजा,आजोरिया, अजमेरा, अमि,अमलावद, अमियां, अजमेरिया, अनार्थे, आमेरिया, अभूरिया, अभूरियां/पंवार, अभूरिया/भाटी, अरिरिया, असवाल, आसोदिया, आसोडिया, आस्कर, औलिया, आवल्या, अहिरे, अत्री, आत्रैय, ओझा, ओमरे, ओरनल, इगोले, इटोनिया, इन्दौरिया,

इन्द्राणी, इनाणियां, उडलिया, उच्चाहार, उज्जा, उतर, उदयी, उदयीवाल, उदसइयां, उमरे, उमाले, उरकुडे, इसरेठे, कंकवाल, कालडिया, काउमा, कश्यप, कागर, केलसी, कौली, कटारिया, कनिया, कुलताज, किराड, कारभान, कौशयल, कल्ले, कुतिणिया, कानोडिया, कारोलिया, कनोजिया, कावरी, कालकुडी, कुशवाहा, कपूर, कौशिक, काणेकर, कावले, किमसरा, कालोया, कच्छावा, कडुस्कर, किनारकर, कडवे, कादियां, काले, किरोड़वाल, कुडका, कालीधाड़, कुकर, कालोरिया, कोपवा, कोटिया, कोठारी, काशिव, कोकई, कूप, कपासिया, कंकवाल, केलवा, केरोलसिंग, कायथवाल,कोरडे, कडोले, कायस्तवाल, कोडिन्या, कनीनिया, केशकर, ककरिया, केलझरकर, कानेटकर, खण्डेलवाल, गौतम, गोरेकर,गोरूलाल, गहलोत/सिसौदिया, गोसालिया, गर्णोकर, घई,घड़ीयाणा, ढाई, ढिल्ली, चन्देल, चपरवाल, चांगिल, चितोशिया, चौहान/ गडेचा, चौहान/किदरिया,चवके,चन्ने, चौहान/किथरिया, चौहान/सेवरिया,चन्द्रिल, चादोलियां,चतुभज, चव्हाण, चायल, चादोरियां, चौहान, चौहान/गोगाणी,छयी, छानीवाल, चन्देरेया, चौधरी, चौहान/ जाहोरियां, चांदवाल,चौहान/रणतभंवर, छापरवाल, छोकर,छिनीवाल, छोटड़भाटी, छिछोलिया, छाजेड, जाजम, जायलवाल, जाखड़, जाडीवाल,जलवाण्यां, जसोरिया, जेवरिया, जागड़ीबाल, जैसाभाट, जसोटिया, जोया, जहारिया, तुंदवाल, तंवर, तोमर, तस्सीवार, तेनगूरिया, तोनगर, तलवारिया, तिहाडिया, तेनेरिया, त्यागी, तम्बौली, निभोरी, नितोडिया, दिनोदिया, देवड़ा, दिलड़िया, दिनेरिया, दव्या, देरावरिया, दुहरिया, दत्त, दिवानीवाल, देसाई, देवलकर,दलाल, दोदग्यिा, धांधल, धुकड़/भाटी, धुधारा, धुहारिया, धांदु,,धनेलिया, धारवां, नागर, नादपुरे, नसीरकादिया, नांगलिया, नागो, नागेश, नंदनशी, नयनवाल, नरवल्या, नाडिगुर, नारोलिया, नागौ, नाग–मठी, निर्वाण, निबोरिया, निमबन्या, नारौलिया, नरेड़िया, नालावत, नाडोलिया, नरौयिमा, नायसराणियां, नैमास्या, निजोडिया, नेंगी, नागतरे, नाडोलधवान, पंवार, पारीख, पंवार/सोडा, पचेवरिया, पचेवाडिया, परिहार/सूरज, पनारा, पवाक/रहिया, पगरहट, परमार, परमार/दायिमां, परमार/धार, पवार/अखल्या, पंवार/मनोहरिया, पंवार/आवल्या, पिचौनियां, पूर्वगोला, पुरी, पाटोदिया, पाल, पड़िहार, पंवा/ भेसानिया, पाठक, पंवार, पाटील, पिवाक, पटेल, पंवार/जगदेवा, परागी, पिंगोरिया, पित्ती, पाटौदी, पडवधि, पंचेरिया, पपड़कर, पारेसरा, नवारिया, पहाड़िवाल, पुरकनिया, पछगईया, पंवार/ जगदेश, परारिया, परमार/घोड़ा, पोड़भाटी, परिहार/हल्दानी, फुलबागे, फुलभाटी, फलरेणीवाल, फुलडालिया, फुलतंवर, फुलबाग, भागवत, भरतवाल, भारद्वाज, भूराभाटी, भोलनिया, भाटलिया, भिड़कमल, भाटिया, भमिल, भाटी/जस्सा, भाटी/भूरा, भाटी/गौड़, भाटी/शेरा, भाटी/वीरा, भाटी/ गया,भैरुआ, भौसल्या, बधावइया, बढैख्य्या, बाछील, बादशाह, बोरलिया, बीवल्या, बजाज, बांगेर, बदलिया, बिल्खीवाल, बंसल, बागोरिया, बांका, बशीर, बिलखा, बनवीर, बिचुरकर, बीरा, बिसपदरिया, बिसारीवाल, बिसलपुरिया, बनैकडिया, बरोड़, बिन्दावडे, बागमारी, बाघ, ब्रेनिया, भूरमाधौ, लीलडियां, बागड़ी, बनेखेड़ा, बालावत, बटोलिया, बांधोरिया, बारोडिया, बिसारीलाल, बियरिवाल, बड़गुजर, बणभेरू, बणभेरू, बणभेरू, बछगइया, बोहरा, बराडिया, हरमपुरिया।

नोट – उल्लेखित गोत्रों के अलावा और नाम हैं। समय पर प्राप्त न होने के कारण उनका नाम उल्लेखित नहीं किया जा सका है।

संस्कारों में भूमिका

सनातन धर्म में आध्यात्म की दृष्टि से जीवन को व्यवस्थित व संस्कारित, शुद्ध और उन्नत करने के लिए कुछ विशिष्ट कृत्य या प्रक्रिया निर्धारित की गई है, जिसे सोलह संस्कारों के नाम से जाना जाता है, जैसे- गर्भाधान, पुंसवन, सीमतोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म या मुंडन, यज्ञोपवीत, विवाह आदि। सोलह संस्कारों का विधान इसलिए किया गया है कि मन, रुचि, आचार-विचार आदि परिष्कृत तथा उन्नत होते रहें। इन सोलह संस्कारों में नायी जाति की भूमिका विशेष रूप से रहती है। कहीं वह प्रमुख सलाहकार, मार्गदर्शक के रूप में, वैद्यक के रूप में, ब्राह्मण या पुरोहित के रूप में, पारिवारिक कार्यों में, धार्मिक मांगलिक कार्यों में प्रमुख सहयोगी व नेतृत्वकर्ता के रूप में। संस्कारों को सम्पन्न कराने में इसकी प्रमुख भूमिका रहती है, जिसे ये 'यजमान' मानकर करता आया है। इसलिए अपने परम्परागत व्यवसाय में लगे नयी जाति बन्धुओं के कार्यों की विशिष्टता व महत्त्व को सिद्ध करने के लिए लोक में इनके लिए यह उक्ति प्रचलित है- 'नायी, जन्म परण व मरण तक के कार्यों को रीतिरिवाज पूर्वक सम्पन्न कराने में प्रमुख रूप में सहयोगी रहता है।'

यदि हम सोलह संस्कारों में से संक्षेप में यहाँ नायी/संन/सेन/सयन/समाज की चर्चा करें तो इस जाति का महत्त्व स्पष्ट हो जाएगा। गर्भवती स्त्रियों को अनुभवी दाइयाँ, उनके रहन-सहन, खान-पान, उठने-बैठने, पहरावे के तरीकों में मार्गदर्शन करती रही है। अनुभव से, बाह्य परीक्षण से, अवलोकन से गर्भस्थ बच्चे की स्थिति, जन्म का समय आदि विश्वसनीय रूप से बता दिया करती थी, जो कि एक प्रकार से स्त्री चिकित्सक का कार्य होता है। उसके बाद सुरक्षित प्रसव करवाने व जन्म के बाद जच्चा-बच्चा की सुरक्षा के लिए किन जड़ी-बूटियों से युक्त दवा मिलाकर मोदक के रूप में खिलाना, यह निश्चित करती है, मार्गदर्शन देती है। शैशव अवस्था में बच्चे की देखभाल कैसे करना, यह नवप्रसूता सद्य:प्रसूता को बताती है। इतना ही नहीं, सप्ताह, पाक्षिक या माहभर नायी जाति की महिला को ही उसकी देखभाल व चर्या के लिए बुलाया जाता है, ताकि जच्चा और बच्चा दोनों स्वस्थ रह सकें। ये एक उदाहरण है। सोलह संस्कारों में इसकी भूमिका कहाँ-कहाँ महत्त्वपूर्ण है, ये सब जानते हैं। नाई कहने से क्षौरकार का बोध होता है, आजकल फैशन बढ़ जाने से केश सज्जा का महत्त्व बढ़ गया है। केवल क्षौरकर्म कभी जीवन-यापन का मुख्य साधन नहीं रहा। यह आनुषांगिक व्यवसाय रहा। धार्मिक कृत्यों में तथा सूतक, प्रेतक और पातक में शुद्धि के लिए मुण्डन और भद्रीकरण को आवश्यक माना जाता रहा है। पंजाब आदि प्रदेशों में प्रसूता के सूतक से 10वें दिन शुद्ध हो जाने पर नायी बालक को गोद में लेकर प्रसूता के आगे-आगे चलता है। विवाह संस्कार में मुख्य नेता 'नायी' होता है, जो कन्या के लिए वर ढूँढता है, वर की योग्यता की बहुविध परीक्षा करता है। वाग्दान सगाई करवाता है और

परिवारों के प्रत्येक कार्य में उसी की सम्मति से कार्य होता है और इसी कारण सबसे प्रथम नायी को पंचवस्त्र पहिनाये जाते हैं। इत्यादि बीते समय के कई प्रमाण हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि सम्पूर्ण पवित्र कृत्यों में नायी का सर्वत्र ही प्रवेश है। जहाँ कहीं भी ब्राह्मण का भाग होता है, वहीं-वहीं नायी का भी साथ-साथ रहता है। कोई ऐसा शुभ कार्य (यज्ञादि), कथा श्रवण व्यवस्था आदि नहीं है, जिसमें ब्राह्मण का हो अथवा दूसरे शब्दों में यों कहें कि यज्ञ में जो ब्रह्मा, होता, उद्गाता और अध्वर्यु ये चार ऋत्विक होते हैं, उनमें अध्वर्यु के कार्य का उत्तरदायित्व नायी पर होता है। अध्वर्यु का अर्थ है यज्ञ को मुक्त करने वाला - यज्ञ का नेता कहा है। नेता और नायी एकार्थवाची शब्द हैं। प्रत्येक शुभ कर्म में ब्राह्मण के समान नायी भी दक्षिणा प्राप्त करता है। बालक का एक संस्कार 'चौल' या 'मुंडन' कहलाता है, जिसका सर्वत्र सूत्र ग्रन्थों में वर्णन है। यह स्रोत कर्म है, क्योंकि इसका मूल वेदों में है। (अथर्व, का.-8, सू.-2, म.-17 को देखिए) नायी का यह कर्म वैदिक कर्म है।

विवाह कार्य में संतानों के सम्बन्ध कराने से लेकर परिणय कार्य सम्पन्न करने तक के कार्यों में सैन या नाई समाज के बन्धु की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। विवाह के लिए 'नाता (निमंत्रण) देना, विवाह का मण्डप तानना, माणक थम्ब रोपना, कलश-पूजन के लिए कुम्भकार के घर से मंगल गान करती महिलाओं के साथ नायी महिला मंगल थाली लिए (जिसमें कंकु, अक्षत्, अवीर-गुलाल, पंच मेवा, रक्षा सूत्र, मंगल कलश अर्थात् पूजा का सामान रखा रहता) घर की महिलाओं के साथ आगे-आगे चलती व चँवरिया नोतने लाने में सहयोग करती है। घर में गणेश पूजा की तैयारी करवाकर उसमें सहयोग करती। दूल्हे की वर निकासी के पहले 'तेलवाण' उतारने में उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। उसके बाद विवाह के लिए घोड़ी चढ़ (अश्वारोहण) में नायी का नेतृत्व होता है। वर निकासी, बारात में जाना व मार्गदर्शक की प्रमुख भूमिका निभाना। बारात आ गई, इसकी सूचना सर्वप्रथम वधू पक्ष को देने के लिए नाई को ही भेजा जाता है, जिसे ग्रामीण बोली में 'बड़वदऊ' कहते हैं। प्रथम बार जनवासे से वधू पक्ष के लिए 'पउरा' (वस्त्रादि) ले जाता है, जिसे वधू पहनकर शादी के मण्डप में बैठती है। वधू पक्ष की महिलाएँ उस सैन/नायी बंधु का पीठ पर हल्दी के छापे (हाथ से) लगाकर, केसरिया रंग डालकर स्वागत करती है और थालियों को खाली कर उसमें दक्षिणा देकर नायी को पुनः जनवासे की ओर रवाना करती है।

शादी के मण्डप में दूल्हा-दुल्हन के हाथ मिलाप पर अन्तःवासा (पीला-सफेद वस्त्र) डालता है। विवाह सम्पन्न होने पर वर-वधू के माता-पिता को विवाह सम्पन्न होने की खुशखबरी देता है। यही नहीं विवाह के पूर्व लग्न पत्रिका ले जाने का काम भी नायी ही करता है। विवाह या मांगलिक कार्यों में रसोई के कार्यों की तैयारी में भी इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। रसोई

के लिए भट्टियाँ तैयार करना, उसमें मुहूर्त्त से अग्नि प्रज्ज्वलित करना, पत्तल-दोने की व्यवस्था करना, रसोई के स्थान पर रातभर रहना व्यवस्था देखना- है ना महत्त्वपूर्ण कार्य। किसी के बच्चा जन्म लेता है तो गृह स्वामी अपने रिश्तेदारों के यहाँ बच्चे की सूचना पहुँचाने के 'पगलिए' लेकर नायी को भेजता है। 'पगलिए' भी स्वयं नायी बन्धु ही चित्रांकित करता और बताशे के साथ ले जाता। यजमानी जो करते हैं, उनके कार्यों में ये कार्य सम्मिलित होते हैं। धार्मिक कार्यों में सम्मिलित होने के लिए बुलावा देने का कार्य नायी महिला-पुरुष करते हैं। मंगलगीत व प्रभातिए गाने का बुलावा नायी महिला देती है।

अब हम चलें सीधे अन्तिम संस्कार पर। अन्तिम संस्कार के पूर्व मृत शरीर को शृंगारित किया जाता है। परिवार के लोग नहलाते-धुलाते हैं, नवीन वस्त्र पहनाते हैं, ओढ़ाते हैं तो कहीं-कहीं क्षौर कार्य के लिए नायी बन्धु को बुलाते हैं। यह कार्य परिवारजनों के समक्ष होता है। घाटे पर मुण्डन और धूपादि कार्य सम्पन्न करवाता है।

सोलह संस्कारों में सैन/नायी बन्धु की महत्त्वपूर्ण और पवित्र भूमिका के कुछ उदाहरण हैं। इन्हें भुलाया नहीं जा सकता। इन सब बातों से समाज के महत्त्वपूर्ण कार्यों में उसकी भूमिका स्वयंसिद्ध है। इसके अतिरिक्त प्राचीन समय से ही नायी उपदेशक, गुरु, राजा, पुरोहित, प्रधान सचिव रह चुके हैं। आज भी बहुत सारे अध्यापक, उपदेशक, वैद्य, ज्योतिषी, वकील, डाक्टर, इंजीनियर, सेठ, दुकानदार, कारखानेदार, उद्योगपति आदि हैं, जो उन्होंने अपने बुद्धि-कौशल से अर्जन किया। जो अन्य कार्यों में लगे हैं, वे यजमानी कार्य नहीं करते।

अलग-अलग प्रदेशों में अन्य वर्गों के समाजों में नाई समाज का स्थान भिन्न है। अन्य समाजों में नायी का स्थान उसके पौरोहित्य, ब्राह्मण व ठाकुर सदृश्य कार्यों में अपने आप सिद्ध हो जाता है।

नायी/ सैन बन्धु राजपरिवारों में विश्वसनीय, प्रमुख सलाहकार, संचेतक होने के कारण इन्हें राजकोष का प्रभारी, दीवान आदि पदों पर नियुक्त किया जाता। राज्य व्यवस्था संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका होने के कारण खवास की उपाधि धारण की। कई प्रदेशों के विशेषकर मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात में ग्रामीण क्षेत्रों में खवास नाम से भी पुकारे जाते हैं। कहीं पर पूरी तरह यजमानी कार्य पर ही निर्भर हैं।

नाई समाज के पुरुष ही नहीं महिलाओं का भी अन्य समाज के कार्यों में महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है, इसकी चर्चा ऊपर के उदाहरणों से स्पष्ट हो जाती है। जच्चा-बच्चा को मार्गदर्शन देना, मंगलगीतों में सहयोग करना, दुल्हन को सोलह शृँगार से सजाना व नये परिवार में समायोजन करना, इसका मार्गदर्शन देना, प्रसव के पश्चात् निर्धारित दिनों के बाद (जरमा पूजन),

सूरज स्नान आदि कार्यों में उसका मार्गदर्शन व भूमिका रहती है। अन्य समाज के परिवार की महिलाओं में नाई समाज की महिला की भूमिका भी विश्वसनीय, खास मार्गदर्शक, महत्त्वपूर्ण रही है। सद्य:प्रसूत बच्चे-बच्चियों के उबटन से लेकर महिलाओं के केशों को सँवारने, महावर रचने आदि कार्यों में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

नाई पुरुष ही नहीं, महिलाओं की भी अन्य समाज की महिलाओं के कार्यों में सहयोगी भूमिका रही है।

धार्मिक स्थल और धरोहरें

भारतवर्ष में सैन नाई/ समाज के कई स्थानों पर धार्मिक स्थल हैं, किन्तु अभाव है तो सैन जन्मस्थली बाँधवगढ़ में। जो हमें ज्ञात है उन धार्मिक स्थलों की चर्चा करते हैं। सैन समाज के कर्मठ कार्यकर्ता, हमारे बुजुर्ग, पूर्वज जिनके कठिन परिश्रम से सैन मन्दिरों, धर्मशालाओं, गुरुद्वारों का निर्माण हुआ है जो धर्म, अध्यात्म, शिक्षा और यात्रियों के लिए सुखकर और प्रेरक हैं।

मन्दिर श्री सैन भगतजी मनीमाजरा, चण्डीगढ़
आदर्श धर्मशाला, गली नं.-11, ब्रह्मपुरी, दिल्ली
श्री नंदा शिव मन्दिर व धर्मशाला, विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली
सैन धर्मशाला, दरियांगज, दिल्ली
सैन भगत धर्मशाला, कालका मन्दिर परिसर, नेहरू पैलेस टर्मिनल के पास, नई दिल्ली
श्री सैन भक्त शिव मन्दिर, नारायणी धाम, हरिनगर, दिल्ली
नारायणी माता मन्दिर, शास्त्री नगर, दिल्ली
छप्पर वाली धर्मशाला गली- आर्य समाज, सीताराम बाजार, दिल्ली
धर्मशाला सविता समाज, विजयगढ़, अलीगढ़ (उ.प्र.)
सविता समाज धर्मशाला, कानपुर (उ.प्र.)
नाई-याज्ञिक धर्मशाला, बरेली (उ.प्र.)
सविता सैन धर्मशाला, मथुरा (उ.प्र.)
श्री सविता समाज धर्मशाला, भेंसा बहोरा, मथुरा (उ.प्र.)
सैन धर्मशाला, रेल्वे स्टेशन के सामने, बड़ौत, बागपत (उ.प्र.)
अखिल भारतीय सैन समाज धर्मशाला, हरिद्वार (उ.प्र.)
सैन छात्रावास, अलवर (राज.)

मन्दिर नारायणी धाम एवं सैन भगत मन्दिर, अलवर (राज.)

मन्दिर सैन भगतजी महाराज, अजमेर (राज.)

कर्मावती धाम तथा मन्दिर श्री सैन भगत जी, गटमोरा (राज.)

मन्दिर श्री सैन भक्त व श्री गंगाजी मन्दिर, अलवर (राज.)

सैन भक्त व नारायणी माता मन्दिर, किशनगढ़ (राज.)
संत सैन मन्दिर, जोधपुर (राज.)
मन्दिर नारायणी माता एवं सैन भवन, टोंक (राज.)
श्री गंगा महारानी सैन मन्दिर, महवा, दौसा (राज.)

मन्दिर-धर्मशाला

हरियाणा में -6, पंजाब में-16, हिमाचल में-1, महाराष्ट्र में-2, मध्यप्रदेश में-6, छत्तीसगढ़ में-2, आन्ध्रप्रदेश में-1, राजस्थान में 10 है। इनका संचालन स्थानीय नायी (सैन) समाज करता है और भी अनेक महत्त्वपूर्ण धार्मिक स्थल एवं धर्मशालाएँ, जिन्हें नाई समाज संचालित करता है। नायी समाज की जितनी गोत्रें हैं, उनके पृथक कुल भैरव एवं सतियाँ हैं। इनकी पूजा तथा रातीजगा शुभ रीति-रिवाजों एवं शुभ अवसरों पर दिया जाता है।

यह समाज भारतीय समाज का महत्त्वपूर्ण अंग है, बल्कि ऐसा संयोजक है कि इसके बिना कोई भी सामाजिक-पारिवारिक कार्य पूर्ण नहीं हो सकता, यह लोक में कहा गया है-

परण मरण में नायी को, सब ती पहलो नाम।
आँख कान खुल्ला रखे, नायी चतर सुजान॥

परम्परानुसार विवाह की निमंत्रण पत्रिका सबसे पहले गणपति को दी जाती है, किन्तु गणपति से भी पूर्व परिवार के नायी को मौखिक निमंत्रण देना पड़ता है। यदि नायी नहीं आया, तब गणपति भी कैसे आएँगे।

इसीलिए प्रत्येक घर-परिवार में नायी को सदा साधकर रखना पड़ता है-

घर-परवाराँ में नायी खासम-खास।
रीत-भाँत सँवरी करे, नायी जात खवास॥

वह हर घर की अच्छी-बुरी, गुप्त या जगजाहिर हर बात की सूचना रखता है-

घर-घर की राखे खबर, करे खवासी काम।
मधरी वाणी नमतयो, चतरी जात हजाम॥

यदि नायी चतुर, सयाना और सुजान नहीं हो तो वह समाज का संचालन और रीति-रस्म का संयोजन कैसे करेगा। नायी की चतुराई रीति भाँत को सँवारती है। वह सूचना-तंत्र का भी संयोजक होता है।

यदि परिवार के नायी को विवाह का समूचा आयोजक बना दिया जाये तो वह निमंत्रण पत्र बाँटने से लेकर भोज तक की व्यवस्था भलीभाँति कर सकेगा।

संत सैन भक्त इस समाज के सर्वमान्य आराध्य हैं। अभी भी इस समाज में शिक्षा का पर्याप्त प्रचार-प्रसार नहीं है। वैसे अनेक पदों पर सैन समाज के लोग योग्यतापूर्वक अपना कर्त्तव्य निर्वाह कर रहे हैं। तथापि इस समाज में बालक और बालिकाओं को सर्वोच्च शिक्षा के लिए प्रेरित करना आवश्यक है।

सौजन्य : सैन्य समाज एवं उसकी यथास्थिति का लेखन सहयोग पूर्णरूपेण श्री भगवतीप्रसाद जी गहलोद, व्याख्याता 'डाइट', मन्दसौर हैं। उनका हार्दिक आभार।

सन्दर्भ :

1. भक्तमाल, नाभादास कृत, पृ.-288. **2.** वही, पृ.-289. **3.** वही, पृ.-290. **4.** वही, पृ.-291.

5. वही, पृ.-293. **6.** संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन, पृ.-42 एवं 48-49. **7.** धरमदास की परचई, साखी क्र.-23-24.

8. वही, चौपाई क्र.-44-45, 149.

9. अगस्त संहिता, अध्याय-132 एवं अखिल भारतीय सैन समाज स्मारिका, अक्टूबर 1983, पृ.-13, सैन समाज के मसीहा प्रसंग.

10. कबीर ग्रन्थावली, श्यामसुन्दरदास, पृ.-19. **11.** यही ग्रन्थ, पद क्र.-35 एवं साखी क्र.-7-8.

12. देखें, संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन, पृ.-57. **13.** यही संग्रह, वाणी प्रसंग, पद क्र.-35.

14. वही, पद क्र.-35 का दोहा क्र.-14 से 18. **15.** देखें, धरमदास की परचई, साखी क्र.-11 से 17.

16. वही, साखी क्र.-19-20, दोहा क्र.-20. **17.** सुरतराम की परचई, साखी क्र.-13.

18. इसी ग्रन्थ में लोकवाणी प्रसंग साखी क्र.-15. **19.** परचई सायन री, सुरतराम, साखी क्र.-10-11.

20. परचई सयन री, सुरतराम, साखी क्र.-3-10. **21.** दोनों परचइयों में यह उल्लेख सविस्तार है।

22. दोनों परचइयों में तथा उनकी स्वयं की वाणी में इन घटनाओं का वर्णन सविस्तार है तथा उनके जीवन की घटनाओं पर आधारित लोककथाएँ इसी संग्रह के प्रेरक प्रसंग अध्याय-6 में संकलित हैं।

23. धरमदास की परचई, साखी क्र.-23-24. **24.** परसराम जी ने भी अपनी परचई में यह उल्लेख किया है।

25. संत सैना भगत की परची, धरमदास, चौपाई क्र.-150-152.

26. वही, चौपाई क्र.-151. **27.** संत सयना भगत री परची, सुरतराम, साखी क्र.-75-77.

28. इसी ग्रन्थ में संग्रहीत लोकवाणी प्रसंग, साखी क्र.-8.

29. संत सयना भगत की परचई, चौपाई क्र.-192 से 200.

30. वही, दोहा क्र.-36 से 39. **31.** परचई सयना भगत री, सुरतराम कृत, साखी क्र.-89-98.

अध्याय-5

संत सैन भगत

कुछ प्रेरक प्रसंग

संत सैन भगत ने निरन्तर यायावरी की। वे अपने प्रारम्भिक दिनों (1400 से 1480 ईस्वी) तक निरन्तर भ्रमण करते रहे। वे जहाँ भी दिन नमता वहाँ मुकाम कर देते थे। अगले दिन फिर चल पड़ते अगले गाँव।

एक परचईकार सुरतराम ने अपनी परचई में कहा भी है-

ना तो कोई चेलो कर्‌यो, ना आसरम मठ धाम।
जठे-जठे दन आत्मयो, कर्‌यो वठे मुकाम॥

वे जहाँ भी मुकाम करते, वहाँ के लोगों के साथ संगत करते एवं उनकी बाधाओं का निवारण भी करते थे। उन्हीं यात्राओं में कुछ प्रसंग ऐसे भी आए, जो उनकी आध्यात्मिक शक्ति को प्रकट करते हैं। उनका सामना संतों, असंतों, राजाओं, पीरों, फकीरों तथा तांत्रिकों-मात्रिकों से भी हुआ।

उनके पूरे जीवन में घटित कुछ प्रसंग यहाँ प्रस्तुत हैं-

1. सैना भगत और सेऊ की संत सेवा।
2. भगवान ने सैन भगत का रूप धर राज खवासी की।
3. गमेरा भील जी उठा।
4. तांत्रिक के भय से मुक्ति दिलाई।
5. साँपों के भय से मुक्ति दिलाई।
6. अकाल को सुकाल कर दिया।

7. राजा का कोढ़ मिटाया।
8. सरवर जल निर्मल हुआ।
9. ईश्वर और अल्हा एक है।

सैना भगत और सेऊ की संत सेवा

एक बार बाँधवगढ़ में कुछ संतजनों का आगमन हुआ। सैनजी का नाम बहुत चर्चित था। सब बखानते थे कि सैनजी साधु-संतों की आवभगत और सत्संग में कभी कमी नहीं आने देते। इस यश को सुनकर संतजन सैनजी के घर पहुँचे। संध्या हो चुकी थी। अंधेरा घिरने लगा था। सैनजी अपनी पत्नी साहिबां और पुत्र सेवाराम (सेऊ) के साथ बैठकर भजन गा रहे थे, तभी संतों ने द्वार पर आवाज लगाई।

सैनजी उठकर बाहर आए। संतों को आया देख हर्षित हुए। उन्हें आदर सहित घर के भीतर लिवा ले गए। साहिबां जल भर लाई। सैनजी और सेऊ ने संतों के चरण धोए। उन्हें आदर से आसन पर बैठाया। जलपान करवाया। हालचाल पूछा। सब प्रसन्न। संतों का आगमन तो बड़े भाग्य से होता है। जहाँ संतों का वास होता है, वहाँ भगवान स्वयं उपस्थित रहते हैं। जहाँ संत और भगवान उपस्थित हों, वहाँ तो तीर्थ होता है।

सैनजी संतों को आसन देकर घर के भीतर गए और साहिबां से संतों के लिए भोजन बनाने के लिए कहा। साहिबां ने कहा- स्वामी! घर में तो न आटा है, न दाल है। भोजन कैसे बनेगा? तब तक वहाँ सेऊ भी आ गया। सेऊ ने कहा- पिताजी! आप संतों के पास रहें, मैं बाजार जाकर सेठजी के यहाँ से आटा-दाल लेकर आता हूँ।

ऐसा कहकर सेऊ बाजार गया। अँधेरा घिर चुका था। जब सेऊ सेठ की दूकान पर पहुँचा तब तक सेठ ने दूकान बढ़ा दी थी। सेऊ ने विचार किया- यदि मैं आटा-दाल लेकर नहीं पहुँचा तब संतों के लिए भोजन नहीं बन पाएगा। भोजन नहीं बन सका तो संतजन भूखे रह जाएँगे। पिताजी का यश खोटा हो जाएगा। मैं कुछ भी करके आटा-दाल लेकर ही घर जाऊँगा। दूकान के सामने चौकीदार खड़ा था। सेऊ दूकान के पिछवाड़े गया और दीवाल में सेंध लगाकर भीतर घुस गया। उसने दीपक के प्रकाश में आटा-दाल ढूँढ़ ली। आटा-दाल अपने गले में पड़े अंगोछे में बाँधकर जैसे ही वह सेंध में से निकलने लगा, तभी सेठ का लड़का जाग गया और उसने लपक कर सेऊ के पैर पकड़ लिये। अब सेऊ का सिर बाहर और धड़ भीतर था। आटा-दाल की पोटली भी बाहर थी।

सैनजी ने सोचा- सेऊ को गये बहुत देर हो गयी। तब वे उसे खोजने घर से निकल पड़े। संयोग से उनके घर का मार्ग सेठ की दूकान के पिछवाड़े होकर ही था। सैनजी ने जब किसी को

दीवाल की सेंध में से सिर बाहर निकाले देखा, तब उन्होंने उसे आवाज लगाई– 'कौन हो?' सेऊ ने सैन जी की आवाज पहचान कर कहा– 'पिताजी! मैं हूँ। आप यह आटा–दाल की पोटली लेकर घर जाओ। मैं छूटकर आ जाऊँगा। सेठ के छोरे ने मेरे पाँव पकड़ रखे हैं। आप तत्काल चले जाओ, अन्यथा चौकीदार आ जाएगा। तब सारा श्रम व्यर्थ हो जाएगा।'

सैन जी आटे–दाल की पोटली लेकर घर चले गये। साहिबां ने भोजन बनाना शुरू कर दिया।

उधर सेऊ और सेठ के लड़के में खींचतान चल रही थी। खड़बड़ की आवाज सुनकर चौकीदार वहाँ आ पहुँचा और चोर जानकर उसने अपनी तलवार से सेऊ का सिर काट डाला। सेऊ का सिर बाहर और धड़ भीतर दूकान में था। चौकीदार ने सिर उठाया और दूकान के अगवाड़े प्रकाश में देखा तो उसने पहचान लिया। यह तो राजनाई सैन के पुत्र सेवाराम का सिर है। वह घबरा गया और भागकर उसने वह सिर सैनजी के दरवाजे पर रख दिया। वापिस आकर उसने दूकान का दरवाजा खुलवाया। सेठ सेऊ का धड़ लिये खड़ा था। वह भी घबराया हुआ था। हत्या किसने की? सबेरे राजा को पता चलेगा तो राजदण्ड भोगना होगा। तभी वहाँ चौकीदार को आया देखकर वह और भी घबरा गया। चौकीदार ने सभी घटना सुना दी। अब तो चिन्ता और भी बढ़ गई। धड़ को एक कोने में ओढ़ा कर रख दिया।

सैनजी की पत्नी साहिबां ने घर के बाहर कुत्तों के भौंकने की आवाज सुनी तो दरवाजा खोलकर बाहर निकली। बाहर देखा तो कटा सिर पड़ा था। वह दौड़कर मशाल लाई और सिर को पहचाना। पहचानते ही उसका कलेजा धक हो उठा। उसने स्वयं को संयत किया और सिर को उठाकर भीतर ले गई। सिर को उसने टोपले में रख दिया। उस पर एक टोपला और ढाँक दिया। उसने सोचा– रुदन करूँगी तो संतों का भोजन छूट जाएगा। कोहराम मचेगा। संत भूखे रह जाएँगे।

तभी सैनजी भोजन लेने भीतर रसोई की तरफ आए। साहिबां ने सारी बात बताई। सैन समझ गए कि सेऊ सेंध में फँसा था। पहरेदार ने सिर काट दिया। सैन जी ने साहिबां से कहा– 'रुदन मत करना। पहले संतों को भोजन करवा दें। फिर विचार करेंगे।'

संतों का भोजन हो गया। सब सो गए। सैनजी और साहिबां टोपले के पास रातभर बैठे रहे। प्रभात में संत उठ गये। उन्होंने सैनजी को आवाज लगाई। सैनजी ने संतों को नमोनारायण कहा। संतों ने कहा– सैनजी! हम प्रस्थान करेंगे। मार्ग में किसी नदी–ताल पर नित्यक्रिया से निवृत्त होकर आगे बढ़ जाएँगे। आपने और आपके परिवार ने हमारी खूब आवभगत की। जैसा आपका जस जाना था, वैसा ही आपका व्यवहार जाना।

आप सेऊ को बुला दो, हम उसे भी आशीर्वाद देकर फिर प्रस्थान करेंगे। सैनजी ने कहा– सेऊ तो कहीं गया है। वह होता, तो स्वयं ही आपके चरण-स्पर्श करने आ जाता।

संतों ने कहा– 'सैनजी! आप उसे पुकारो तो सही। कहीं आसपास होगा तो सुनकर आ जाएगा।' सैनजी कैसे आवाज लगाते? यदि वे आवाज लगाते तो उनका निर्मोही मन मोहग्रस्त हो जाता। उनकी पत्नी, जो सारी पीड़ा को रोककर बैठी थी, उसका बाँध टूट जाता। रुदन सुनकर संत सभी स्थिति जान जाते। सेऊ का बलिदान व्यर्थ हो जाता। सैनजी ने कहा– 'महात्मन्! आप ही आवाज लगाएँ। मेरी आवाज उस तक नहीं पहुँचेगी।'

संतों ने कहा– 'सैनजी! सेऊ तो आपकी आवाज सुनकर ही आ सकेगा। आपकी आवाज में जो शक्ति है, वह हमारी आवाज में नहीं है। आपकी आवाज सुनकर तो मृत शरीर भी जीवित होकर आ सकता है। आप सच्चे मन से आवाज तो लगाइये।'

संतों की बात सुनकर सैनजी ने सेऊ को आवाज लगाई। संतों ने कहा– 'सैनजी! जोर की आवाज लगाइये।' सैनजी ने जोर की आवाज लगाई। तभी सेऊ का धड़ आँगन में आ गिरा। सैन जी और जोर की आवाज लगाओ। सैनजी ने और भी जोर की आवाज लगाई। टोपले में पड़ा सिर धड़ से जुड़ गया।

अपने पुत्र का शव सामने देखकर सैनजी और साहिबां भावुक हो उठे। साहिबां बिलखकर सेऊ के शव से लिपट गई।

तभी संतों ने कहा– 'सैनजी! भावुक मत होइए, आप अपने नींद में गाफिल पुत्र को जगाइये। जोर की आवाज लगाइए।' सैनजी ने एक आवाज और लगाई, तभी सेऊ राम-राम कहता उठ बैठा।

उसने संतों को प्रणाम किया। माता-पिता को प्रणाम किया।

संतों ने कहा– 'सैनजी! आप और आपका परिवार धन्य है, जिसने संतों की सेवा के लिए अपने पुत्र की भी बली चढ़ा दी। सबसे धन्य तो आपका पुत्र है, जिसने अपने प्राणों की परवाह किये बिना संतों के लिए भोजन की व्यवस्था की। उससे भी धन्य आपकी पत्नी है, जिसने पुत्र का कटा सिर देखकर भी संयम रखा और संतों के भोजन में विघ्न नहीं पड़े, इस कारण अपने हृदय पर पत्थर रख लिया।'

सैनजी मौन खड़े प्रभु की लीला देख-देखकर चकित थे। वे सोच रहे थे, क्या यह सारी लीला प्रभु ने जानबूझकर रचाई है? क्या यह मेरी परीक्षा थी? सैन जी ने एक साखी में कहा है—

सीस दियो जस नी दियो, सेऊ पूत सुजान।
सैना ऐसा पूत को, किसतर करूँ बखान॥

सैन भगत के लिये राजखवासी

सैनजी बाँधवगढ़ राजा के राज नाई थे। वे प्रतिदिन प्रातःकाल राजा के महल में जाकर राजा की हजामत करते थे। मालिश करते तथा उन्हें स्नान करवाते थे। यह उनका नित्यकर्म था। मालिश करने की कला में वे प्रवीण थे। औषधियाँ मिलाकर तेल-मालिश से वे कई रोगों का निदान करते थे। इसके लिए दूर-दूर तक उनकी ख्याति थी। सवेरे से शाम तक अनेक रोगी उनके पास उपचार के लिए आते थे। वे सबकी निःशुल्क सेवा करते थे। उनकी पत्नी व उनका एक पुत्र सेवाराम भी उन्हीं की भाँति परोपकारी स्वभाव के थे। सेवाराम को वे 'सेऊ' कहकर पुकारते थे। साधु-संतों की आवभगत से सेऊ सदा तत्पर रहता था।

एक बार संध्या समय कुछ संत सैन जी के घर पर आ गये। सैन परिवार ने संतों की खूब आवभगत की। भोजन के बाद सत्संग जुड़ा। सब लोग आराम से सो गये। प्रातःकाल संत जागे। उन्होंने नित्य क्रिया पूर्ण की। सैनजी ने उन्हें सत्तू का कलेवा करवाया। संत कलेवा के बाद भजन-कीर्तन करने लगे। सैन तथा उनका परिवार भी सत्संग में जुड़ गया।

सैन सत्संग में इतने रम गये कि उन्हें समय का भान ही नहीं रहा। राजमहल में राजा की नित्य सेवा में जाना वे भूल गए।

भगवान ने सोचा- सैन तो सत्संग में लीन होकर मेरे गुणगान करने में व्यस्त है। इसे भान ही नहीं है कि राजसेवा में नहीं पहुँचने पर राजा के कोप का भाजन बनना पड़ेगा। मेरे कारण मेरे भक्त का अपमान हो, यह तो उचित नहीं है।

भगवान ने सैनजी का रूप धरा और राजमहल जा पहुँचे। राजमहल पहुँचकर उन्होंने सैनजी के नित्य सेवा कार्य को पूर्ण किया और वहाँ से विदा होने लगे। राजा ने उन्हें आवाज लगाकर रोका। राजा ने कहा- 'सैन! आज तो तुमने बहुत बढ़िया मालिश की है। पहले तो ऐसी कभी नहीं की। सारा शरीर पुलक उठा है। रातभर की थकान समाप्त हो गई। स्नान भी ऐसा करवाया कि पूरी देह चमक उठी है और हजामत तो ऐसी कभी तुमने की ही नहीं। वाह! हम आज तुमसे बहुत खुश हैं। माँगो क्या पुरस्कार दें।'

भगवान क्या कहते! दाता से याचक पुरस्कार माँगने की बात कह रहा था। भगवान मुस्कराकर बोले- 'महाराज! आपकी प्रसन्नता ही मेरा पुरस्कार है। आपका दिया बहुत है।' ऐसा कहकर भगवान राजमहल से बाहर आ गये और अन्तर्ध्यान हो गये।

उधर जब सत्संग समाप्त हुआ, तब सैनजी को राजचाकरी का ध्यान आया। दिन चढ़ आया था। वे घबरा उठे। संतों की सेवा अपने पुत्र सेऊ को सौंपकर वे अपना सामान उठाकर राजमहल की ओर चल दिये। जब राजमहल पहुँचे, तब उन्होंने देखा, महाराज तो नहा-धोकर तथा राजसी वस्त्र पहनकर आसन पर विराजित हैं। उनके सिर पर बँधा फेंटा ठीक वैसा ही बँधा था, जैसा सैनजी बाँधा करते थे।

सैन असमंजस में पड़ गये। उन्हें असमंजस में पड़ा देखकर राजा ने पूछा- 'सैन! तुम वापिस क्यों लौट आये? क्या कुछ भूल गये या फिर पुरस्कार लेने की इच्छा जाग गई?'

सैनजी ने कहा- 'महाराज! मैं क्षमा चाहता हूँ। मैं साधु-संतों के साथ सत्संग में इतना रम गया था कि आपकी सेवा का भान नहीं रहा। भविष्य में ऐसी भूल नहीं होगी। आज की भूल क्षमा कर दें।'

राजा स्वयं आश्चर्य में पड़ गये। उन्होंने सोचा लगता है सैन बावला हो गया। दिन-रात नाम जपता रहता है। काम में भी राम का जाप नहीं भूलता। उसी धुन में सब भूल गया। उन्होंने कहा- 'सैन! तू बावला हो गया है। थोड़ी देर पहले तू अपना सेवा कार्य पूर्ण कर यहाँ से लौटा है। आज तो तुमने सेवा कार्य भी बहुत कुशलता से पूरा किया है। देखो, हमारी पाग तुमने ही बाँधी है। ऐसी पाग तुम्हारे सिवा और कोई नहीं बाँध सकता।'

सैन जी समझ गये! यह लीला तो भगवान की है। मेरे कारण उन्हें नाई बनना पड़ा। धन्य हैं वे जिन्होंने भक्त की साख बचाने के लिए नाई धर्म निभाया। धिक्कार तो मुझे है कि मेरे कारण उन्हें ऐसा छोटा काम करना पड़ा। सैनजी की आँखों से अश्रु प्रवाहित हो उठे। वे परमात्मा से बार-बार क्षमा माँगने लगे।

राजा ने जब सारी स्थिति जानी, तब वह भी भाव-विभोर हो उठा। उसने अपने राज नाई सैन भगत जी के चरणों में वन्दन किया और अब तक जो सेवा करवाई, उसके लिए क्षमा माँगी। राजा ने कहा- 'सैनजी! आप धन्य हैं, जिनके कारण मुझे भगवान के दर्शन हो गए। आज से आप चाकरी से मुक्त हुए। कल से आपके स्थान पर आपका पुत्र सेवाराम राजखवास रहेगा। उसे हम चार गाँव की जागीर उपहार में देते हैं।'

सैनजी ने कहा- 'महाराज! धन्य तो आप हैं, जिन्हें भगवान के साक्षात् दर्शन हो गए। मैं अभागा उन्हें कष्ट के सिवा क्या दे सका?'

सैनजी भगवान तो सदा आपके घर में विराजते हैं। आपको साक्षात् दर्शन प्रतिपल होते हैं। आज आपकी कृपा से मैं सपरिवार धन्य हुआ।

इसी घटना के कारण सैनजी ने अपनी वाणी में कहा है–

राम नाम की ताड़ी लागी, नी पौंच्यो सेवकाई।
भेस बणा राम खुद पौंच्यो, धन रे सैनो नाई॥
राछ-पीछ सब परमा फैंक्या, राम नाम चित लाई।
सैन भगत हिरदै पट खुल्या, सद्गुरु की करुनाई॥

उस दिन के बाद सैनजी का मन संसार से विरक्त हो गया। वे अपने सद्गुरू रामानन्दजी के दर्शन हेतु बाँधवगढ़ छोड़कर निकल पड़े। फिर लौटकर बाँधवगढ़ नहीं लौटे। कहते हैं उनके पुत्र सेवाराम (सेऊ) ने भी हरिभक्ति करते हुए राजसेवा की और सदा साधु-संतों की आवभगत करने में तत्पर रहा।

गमेरा भील जी उठा

एक बार संत सैन भगत सत्संग कराते-कराते एक गाँव में पहुँचे। यह भील समुदाय का छोटा-सा गाँव था। उस गाँव में सैनजी का एक सत्संगी मित्र रहता था। उसका नाम था- गमेरा। गाँव के बाहर ही उसका छोटा-सा कच्चा कवेलूदार घर था। गाँव के किनारे चम्बल नदी बहती थी। गाँव में हरियाली खूब थी। गाँव के आसपास आमों के बाग-बगीचे। गाँव के भीतर भी वृक्षों की खूब भरमार। भीलों का व्यवसाय मुख्य रूप से गायें पालना और थोड़ी-सी खेती भी थी। यद्यपि गाँव छोटा था। अधिक सम्पन्न भी नहीं था, फिर भी था बहुत सुन्दर। मन्दिर के नाम पर एक हिंगलाज माता का मन्दिर था। वही उनकी इष्टदेवी थी। एक हनुमानजी का चबूतरा, जिसे सब लोग घोटेवाले बाबा पुकारते थे।

सत्संगी गाँव था। प्रत्येक संध्या गाँव में कहीं न कहीं सत्संग होता था। सैन जी को वह गाँव बहुत प्रिय था। यहाँ वे पाँच साल बाद आए थे। पाँच साल के बाद गाँव वैसा का वैसा ही था। कुछ भी नहीं बदला था।

सैनजी जब अपने सत्संगी मित्र गमेरा के घर पहुँचे, तब तक कुछ-कुछ अँधेरा घिर आया था। वैशाख महीना। दिन ठण्डा हो चला था। हवा में ठण्डक थी। सैनजी ने देखा, गमेरा के घर के सामने आँगन में दस-बारह व्यक्ति चुपचाप बैठे हैं। कुछ औरतें भी बैठी हैं। सैनजी स्थिति को समझ नहीं पाये। ऐसा तो तब होता है, जब किसी की मृत्यु हो गई हो। गमेरा तो जीवित है। उसने मेरे ध्यान में आकर दो घड़ी पहले बात की है। यदि कुछ अघट हुआ होता, तब वह मुझे अवश्य बताता। उसने तो सत्संग के लिए मुझे बुलाया है।

सैनजी ने वहाँ पहुँचकर सबको कुशल आशीर्वाद दिया। सबने उठकर उनके चरण स्पर्श किये। उनमें से कुछ उन्हें पहचानते भी थे। उन्हें एक चटाई पर बिठला दिया गया।

बैठने के बाद सैनजी ने पूछा कि- 'भई ! आप सब इस प्रकार चुपचाप क्यों बैठे हैं? क्या कोई अघट हुआ है?' सबने बताया गमेरा भाई का देहान्त हो गया। सैनजी आश्चर्य में पड़ गये। उन्होंने कहा- कब देहान्त हुआ? दो घड़ी पहले। सैनजी ने कहा- दो घड़ी पहले तो मेरे ध्यान में आकर मुझसे बात कर रहे थे। उन्होंने मुझे सत्संग का निमंत्रण दिया। उन्हीं के निमंत्रण पर मैं आज यहाँ आया हूँ। लगता है, आप सबको भ्रम हो गया है। आप लोग ठीक से देखो। लोगों ने बताया पास के गाँव के वैद्यजी ने देख-परखकर उन्हें मरा हुआ बताया है। वे यहाँ से अभी गये हैं। सोजापुर के जागीरदार साहब की तबीयत ठीक नहीं होने से वे वहाँ गये हैं।

सैनजी ने कहा- तुम लोग एक बार अन्दर जाओ और मेरे कमण्डल का जल उनके मुँह पर छींटो। वे नींद में हैं, जाग जाएँगे। उन लोगों में से दो लोग भीतर गये। सैनजी के कमण्डल में जल लेकर उनके मुँह पर दो-तीन छींटे लगाये। गमेरा ने आँखें खोल दी। उन्होंने दोनों को पहचाना और कुछ बोलने का प्रयत्न किया, किन्तु फिर से आँखें बंद कर लीं। बहुत प्रयत्न करने पर भी गमेरा ने दोबारा आँखें नहीं खोलीं। निराश होकर दोनों व्यक्ति बाहर आ गये और सैनजी से पूरी बात बताई।

सैनजी ने कहा- 'वे मुझे ढूँढ रहे हैं। रास्ता भटक गये हैं। मैं उन्हें आवाज लगाता हूँ।' सैन जी ने जोर से गमेरा को पुकारा। पहली पुकार में गमेरा ने आँखें खोली। दूसरी आवाज में करवट बदली और तीसरी आवाज में वह उठकर बैठ गया। चौथी आवाज में राम-राम करता हुआ बाहर आ गया। सब ओर खूब आनन्द छा गया।

रातभर खूब सत्संग हुआ। सुबह सैनजी चम्बल में स्नान कर भोजन करने के बाद वहाँ से रवाना हो गए। गाँव तो अभी जागा ही था। गमेरा ने खूब निवेदन किया कि एक-दो दिन और रुक जाओ। सैन जी ने कहा- रुकने पर पानी और संत में मैल आ जाता है। पानी पर काई जम जाती है, संत मोह-माया में फँसकर संत मार्ग से भटक जाता है।

पशु रक्षा हेतु कच्चे सूत का द्वार

एक बार संत सैन भगत गाँव-गाँव सत्संग करते एक गाँव में पहुँचे। संध्या हो आई थी। सैन भगत ने सोचा- आज इसी गाँव में मुकाम कर लेना उचित है। गाँव के मध्य एक चबूतरे पर वे बैठ गये। तभी भीतर से घर का मुखिया बाहर आया। संत को अपने चबूतरे पर बैठा देख प्रसन्न हुआ और उनके पास जाकर चरण-स्पर्श कर निवेदन किया कि- 'महाराज! आप तनिक उठ जाएँ तो मैं चबूतरे पर सफाई कर आसन बिछा दूँ।' संत सैन चबूतरे से उठकर नीचे खड़े हो गए। मुखिया ने चबूतरे की सफाई कर उस पर बिछात कर दी। सैन भगत को आदर सहित बैठाकर घर के भीतर से पानी लाकर उनके चरण धोये। ठण्डा जल पिलाया और गाँव में पधारने

और उसका अतिथि बनने पर धन्यवाद दिया। इस बीच घर के भीतर तथा आसपास के महिला-पुरुष और बच्चों ने आकर सैन भगत को प्रणाम कर आशीर्वाद प्राप्त किया।

थोड़ी देर में मुखिया ने कहा- 'महाराज भगत! भोजन तैयार है। आप भोजन प्राप्त कर लें तो परिवार के लोगों को प्रसाद मिले।' सैन भगत ने कहा- 'मुखिया जी! मुझे तो भूख नहीं है। यदि हो सके तो एक कटोरा दूध और एक डली गुड़ भेज दीजिये।'

सैन भगत की बात सुनकर मुखिया का मुँह उदास हो गया। उसने विनीत होकर कहा- 'महाराज! हम जाति के गुर्जर हैं। पूरा गाँव गुर्जर समाज का है। हमारा व्यवसाय गाय पालना ही है। पूरे गाँव में भी चार-पाँच हजार गायें हैं। अच्छी-अच्छी नस्ल की गायें हैं। हमारे गाँव का नाम ही 'दूधखेड़ी' है।

कुछ दिनों से कुछ दुष्ट व्यापारियों ने आतंक मचा रखा है। नदी किनारे दूर-दूर तक हमारी गायें चरने जाती हैं। हरी-हरी दूब-घास की कमी नहीं है। ये व्यापारी दूब-घास पर कोई विषैली औषधि छिड़क देते हैं। गायें जब वह दूब-घास खाती हैं, तब वह विष उनके पेट में चला जाता है, उनके गले सूज जाते हैं, घास चरना बंद कर देती हैं और दूध सूख जाता है। गायों का जीवन खतरे में पड़ जाता है। ऐसी स्थिति में वे व्यापारी नाम मात्र का मूल्य देकर गायें खरीद लेते हैं, फिर उन्हें औषधियाँ खिलाकर ठीक कर लेते हैं। आज की हालत में हमारी गायें बीमार हैं। उनका दूध सूख गया है। बछड़े भूखे हैं। हमारे बच्चे भी दूध नहीं प्राप्त कर पाते। हमारा धंधा और गौओं के प्राण संकट में हैं।

महाराज! आप भगवान की प्रेरणा से पधारे हैं। आपके चरण इस गाँव में पड़े हैं। हमारे धन्य भाग। आप आशीर्वाद देकर गौओं की रक्षा करें।

मुखिया की बात सुनकर सैन भगत व्याकुल हो उठे। उनका हृदय दया से भर उठा। उन्होंने आर्तभाव से भगवान का स्मरण किया। भगवान ने उन्हें परचा दिया। सैनजी ने मुखिया से कहा- 'मुखिया जी! आप सभी घरों से कच्चा सूत माँगकर लाओ।' सब लोग दौड़ पड़े। बहुत सारा कच्चा सूत इकट्ठा हो गया। सैन भगत ने सूत से एक मोटी रस्सी बनाई। मुखिया से कहा- 'गाँव के बाहर दो खम्बे गाड़कर उनके दोनों सिरों पर यह रस्सी बाँध कर बंदनवार बना दो। गाँव की कन्याओं से कहो कि कलश लेकर आगे-आगे चलें तथा उसके बाद बछड़े चलें, उसके बाद गायें चलें। सबको उस द्वार में से निकाल दो। सबेरे गायें ठीक होकर दूध देने लगेंगी। चारा भी चरने लगेंगी। ईश्वर सब ठीक करेंगे।'

तत्काल एक द्वार बनाया गया। सैन भगत के कहे अनुसार कन्याओं, बछड़ा-बछड़ियों और गायों को उस कच्चे सूत के द्वार में से निकालकर गाँव का चक्कर लगवा, वापिस घरों-बाड़ों

में प्रवेश करवा दिया गया। सैन भगत ने घर-बाड़ों में जाकर गायों पर जल छिड़का और उन्हें प्रणाम किया।

प्रभात होने से पहले गायें रँभाने लगीं। गाँव जाग उठा। सब लोग गायों के बाड़ों की ओर दौड़ पड़े। गायों ने चारा खाया। उनकी उवाड़ी (स्तनों) में दूध उतर आया। बछड़ों को छोड़ा गया। बछड़ों ने धाप कर दूध पिया। फिर गायों का दूध निकालने का क्रम शुरू हुआ। पूरा गाँव दूध निकालने से होने वाली धापों की मीठी संगीत-ध्वनि से गूँज उठा।

गाँव हर्ष से पुलकित था। सब लोग सैन भगत के चबूतरे की ओर दौड़ पड़े, उन्हें प्रणाम करने और धन्यवाद देने। सबके हाथों में दूध से भरे पात्र थे। सैन महाराज की जय-जयकार करते जब सब लोग चबूतरे पर पहुँचे, तब तक सैन भगत वहाँ से प्रस्थान कर चुके थे। गायों के रँभाने के स्वरों को सैन भगत ने पहचान लिया। उन्होंने ईश्वर को प्रणाम किया। गौओं की रक्षा के लिए धन्यवाद किया और उस गाँव से प्रस्थान कर गये।

कच्चे सूत के द्वार गाँव-गाँव बनने लगे। उसमें से गायों को निकालकर उन्हें रोग मुक्त करने का सिलसिला चल पड़ा। गायें निरोग हो गईं। व्यापारी निराश हो गये।

कच्चे सूत की यह परम्परा आज भी गाँवों में प्रचलित है। पशुओं पर रोग का प्रकोप होने पर गाँव का मुखिया सूत द्वार बनवाकर गाँव के पशुओं को उसमें से निकालता है।

भले ही परम्परा का रूप थोड़ा बदला हो। भले ही सैन महाराज की जगह किसी अन्य लोकदेवता का नाम जुड़ा हो, किन्तु परम्परा तो निरन्तर है।

तांत्रिक के भय से मुक्ति दिलाई

मध्यकाल में तांत्रिकों का प्रभाव बहुत बढ़ गया था। अलग-अलग मत के कई तांत्रिक अपने शिष्यों की टोलियाँ बनाकर गाँवों में घूमते थे। वे बहुधा गाँव के बाहर वन प्रान्त में या फिर श्मशान आदि वीरान स्थलों पर मुकाम करते थे। मुख्य तांत्रिक जो गुरू कहलाता था, उसके शिष्य गाँवों में जाकर उनका यश बखान करते थे, जिससे भोले-भाले ग्रामीण अपने दुख निवारण के लिए तांत्रिक के पास जाते थे। तांत्रिक अनेक चमत्कार दिखाकर उन्हें आकर्षित करते थे। फिर उनमें भय जगाकर उनको खूब लूटते थे।

यह कहानी श्री बाबूलाल सैन ने महेश्वर में अपने निवास पर मुझे सुनाई थी। वे बहुत खोजी व्यक्ति थे। ऐसे ही एक तांत्रिक का प्रसंग उन्होंने मुझे सुनाया-

एक बार एक तांत्रिक अपने दस-बारह शिष्यों सहित एक गाँव में आया। वन प्रान्त के

उस गाँव के बाहर सघन वन में चम्बल के किनारे उसने अपनी धूनी कायम की। चेलों ने आसपास घूमकर तांत्रिक का खूब प्रचार किया। थोड़े दिन में धाम चल पड़ा। आसपास गाँवों से भीड़ की भीड़ तांत्रिक की धूनी पर दुखड़ा रोने आने लगी। डाकन, भूत-प्रेत, चुड़ैल आदि का उपचार, झाड़-फूँक, गण्डा-ताबीज की धूम मच गई। खूब चढ़ावा आने लगा। बकरे, मुर्गे और शराब की भेंट चढ़ने लगी। चेले चढ़ावा वसूलते और सुबह-शाम खा-पीकर मौज करते। जो गाँव सुख-चैन से रह रहे थे। उन सबमें भूत बाधाओं का भय व्याप्त हो गया। कई महिलाओं को डाकन-चुड़ैल सिद्ध करके उन्हें समाज में अपमानित किया जाने लगा। गाँव के कुछ लोग भी तांत्रिक की दलाली करने लगे। पूरा इलाका तांत्रिक के आतंक से भयग्रस्त हो उठा। निस्संतान औरतों को संतान देने के नाम पर तथा युवा स्त्रियों की भूत बाधा हटाने के नाम पर उनका दैहिक शोषण भी तांत्रिक करने लगा। उसकी आड़ में उनके चेले और दलाल भी मौज-मस्ती करने लगे। तांत्रिक की धूनी भ्रष्टाचार का अड्डा बन गई। तांत्रिक का भय इतना फैल चुका था कि कोई स्पष्ट रूप से उसका विरोध नहीं करना चाहता था।

देवयोग से संत सैन भगत उधर से निकले। एक गाँव में अपना मुकाम किया। एक चबूतरे पर सैन भगत का मुकाम हुआ। होते-होते कुछ लोगों ने तांत्रिक वाली बात उन्हें बताई।

सैन भगत ने कहा- 'भूत-प्रेत कुछ नहीं है। हम जितना भय से डरेंगे। भय हमें डराता चलेगा। वह भय ही भूत है। तांत्रिक के आने से पहले यहाँ कोई भूत-प्रेत बाधा नहीं थी, फिर अचानक कहाँ से आ गई? इसका अर्थ यही है कि वह तांत्रिक और उसके चेले ही भूत-प्रेत हैं। उन्हें भगाओ। उनके भागते ही भूत-प्रेत भी भाग जाएँगे। तुम लोग उन्हें बकरे-मुर्गे और शराब दे रहे हो, पहले अपराधी तो तुम लोग हो। अब अपराध करना बंद करो।

सब लोग अपने-अपने घरों में रामधुन लगाओ। राम प्रताप से सब बाधाएँ हट जाएँगी। तांत्रिक को पूजना बंद करो। वह खुद ही हट जाएगा। उनका साथ गाँव के लोग देते हैं, उन्हें भी रोको। सब ठीक हो जाएगा।'

सैन भगत ने सबको समझाइश दी और कहा- 'मेरा रात्रि मुकाम उसी तांत्रिक के आसपास लगा दो। मैं रात वहीं जंगल में चम्बल के किनारे बिताऊँगा।'

यह सारी सूचना तांत्रिक के पास पहुँच गई। उसने सोचा- यह महात्मा तो हमारा खेल बिगाड़ रहा है। हम इसका ही खेल बिगाड़ देते हैं।

सैन भगत का मुकाम चम्बल किनारे एक बाग में बनी कुटिया में लगा दिया। सैन भगत आसन पर बैठे राम-नाम का जाप कर रहे थे। तभी दो व्यक्ति तलवारें लेकर भीतर कुटिया में घुस आए। उन्होंने तलवार से सैन भगत पर वार कर दिया। तलवार वाले का हाथ हवा में लकड़ी

की तरह जड़ हो गया। इस पर दूसरा साथी घबरा गया। उसने भी वार कर दिया। उसका हाथ भी हवा में जड़ हो गया।

जब बहुत देर तक भी दोनों वापिस बाहर नहीं निकले, तब तांत्रिक को चिन्ता हुई। वह खुद अपने दो चेलों को लेकर कुटिया में गया। चेलों की हालत देखकर वह घबरा गया। उसने साथ आए चेलों को आदेश दिया- तलवार से काट दो महात्मा को। चेलों ने एक-एक कर तलवार का बार किया। वे भी जड़ हो गये। अब तो तांत्रिक के होश उड़ गये। उसने अपना त्रिशूल सैन भगत पर चलाना चाहा, तभी सैन भगत के आसन पर एक सिंह दहाड़ उठा और तांत्रिक पर झपट पड़ा। तांत्रिक जान बचाकर भाग खड़ा हुआ। वह सबेरा होने तक भागता रहा। उसके भागने पर उसके चेले भी उसके पीछे भागने लगे। उनके साथ जो गाँव के दलाल थे, वे गाँव की ओर भागे। जो चेले जड़ हो गए थे, वे ठीक हो गए और बाहर भागे। बाहर की हालत देखकर वे भी भाग गए। उनमें भी दो लोग तो आसपास गाँवों के ही थे।

प्रभात तक वहाँ न तांत्रिक रहा, न चेले और न धूनी। भ्रष्टाचार का अड्डा और तांत्रिक का भय समाप्त हो गया। सभी गाँवों में फिर से सुख-चैन का जीवन आरम्भ हो गया।

सबेरे जब गाँव के लोग सैन भगत की कुटिया पर उनके दर्शन करने आए, तब तक सैन जी वहाँ से प्रस्थान कर चुके थे, अगले मुकाम के लिए।

साँपों के आतंक से मुक्ति दिलवाई

संसार में साधु-पुरुष हैं तो असाधु-पुरुषों की भी कमी नहीं है। वस्तुतः साधु-पुरुष कम और असाधु-पुरुष अधिक हैं। साधु-पुरुषों के कारण असाधु-पुरुषों की कुटिलताएँ, आडम्बर और छल-कपटपूर्ण कार्यविधियों को आघात पहुँचता है। फलतः वे साधु-पुरुषों को कष्ट पहुँचाने, उन्हें समाज में अपमानित करने और प्राण लेने तक के षडयंत्र रचने में सदा प्रयत्नशील बने रहते हैं। वस्तुतः वह सत्य और असत्य का संघर्ष होता है। प्रथम दृष्टि में सत्य कम ताकतवार दिखता है और असत्य अधिक ताकतवर। सत्य विनम्र बना रहता है। असत्य भय पैदा करता है। इसके बावजूद अन्तिम जय सत्य की ही होती है। सत्यवादी सत्य का प्रमाण होकर समाज के समक्ष पूज्य हो जाता है और असत्यवादी का आडम्बर रेत के महल की तरह धराशायी हो जाता है।

ऐसी ही एक घटना सैन भगत को रूपायित करती लोक में व्याप्त है। श्री बाबूलाल सैन ने जब यह घटना सुनाई, तब वे सैन भगत पर काम करना चाहते थे। उनके संग्रह में कुछ साखियाँ और पद भी थे। वर्षों से काम लम्बित था। तब उन्होंने वे साखियाँ व पद मुझे सौंपकर सैन जी पर

काम करने का भार सौंपा। मैं भी बहुत समय तक काम आगे नहीं बढ़ा सका। इसी बीच डॉ. प्रह्लादचन्द्र जोशी-सुसनेर से भी मुझे एक संग्रह प्राप्त हो गया। मेरे पास पहले से भी कुछ साखियाँ-पद संग्रहीत थे।

बात एक प्रेरक प्रसंग की थी। वह घटना वास्तव में सत्य पर असत्य का प्रहार और उसमें सत्य की विजय से सम्बन्धित है। घटना इस प्रकार है-

मालवा-निमाड़ के एक अंचल में कालबेलियों के कुछ डेरे थे। कभी वे घुमक्कड़ी पर निकल जाते थे, कभी वापिस अपने डेरों पर लौट आते थे। विशेष रूप से बरसात में वे मुकामी रहते थे। बरसात में भी श्रावण मास में वे गाँवों में माँगने निकल पड़ते थे। साँप पकड़ना और लोगों के घरों के सामने जाकर बीन बजाकर साँप देवता के दर्शन करवाना, यही उनका प्रकट व्यवसाय था। चोरियाँ करना और राहजनी करना, उनका अप्रकट काम था। अंचल के लोग उनके कारण बहुत परेशान थे।

कई बार कहा-सुनी हुई। पकड़ा-पकड़ी भी हुई, किन्तु वे बाज नहीं आए। छोटे-छोटे राज्य थे। उस राज्य से चोरी करके इस राज्य में और इस राज्य से उस राज्य में शरण ले लेते थे। राहजनी में तो मारपीट, हत्या तक की नौबत आ जाती थी।

उन्हीं कालबेलियों में एक दल ऐसा था, जो बहुत शातिर और क्रूर था। उस दल में एक स्त्री भी थी। साँवली होने के बावजूद भी थी बहुत सुन्दर। चुलबुली और चंचल। वह सेठ साहूकारों को अपने जाल में फँसा लेती थी। उनके घर का भेद ले लेती थी और फिर अपने साथियों से मिलकर चोरी करवा देती थी।

इसी प्रकार जो परिवार उनका विरोध करता, उनके घर में साँप छुड़वा देती। लोग भागकर डेरों में आते थे, तब उसके व्यक्ति जाकर साँप पकड़ लाते। बदले में अनाज, कपड़े और पैसे वसूलते थे। कई बार साँप परिवार में किसी न किसी को काट लेता, तब विष उतारने के नाम पर खूब धन और अनाज ऐंठ लेते थे। वस्तुत: वे साँप विषविहीन होते थे। झाड़-फूँक, तंत्र-मंत्र, मूठ, डाकन-भूत आदि का भय भी उन्होंने खूब फैला रखा था।

संयोग से उस क्षेत्र के एक गाँव में संत सैन भगत का आगमन हुआ। लोगों ने उनकी खूब आवभगत की। फिर अपनी विपदा भी सुनायी। सैन भगत ने कहा- 'डाकन, भूत, चुड़ैल हमारे मन का भय है। उसे मन से निकाल दो। सब मंत्र झूठे हैं। केवल डराकर धन ऐंठने का माध्यम है।' उन्होंने कहा- 'आज के बाद प्रभु कृपा से इस क्षेत्र में किसी को भूत-प्रेत बाधा नहीं व्यापेगी। परमात्मा पर विश्वास रखो। उन्होंने आँखें बंद करके नागदेवता से प्रार्थना की कि- 'हे देव! आपको माध्यम बनाकर साधारण प्रजा को परेशान किया जाता है। आप अपने-अपने

स्थानों पर विराजो। इस प्रकार घरों में गली-मोहल्लों, बाड़ों आदि में मत घूमो। आप तो देव हैं, फिर अदेवों जैसा व्यवहार मत होने दो।' नागदेवता स्वयं प्रकट हुए और सिर हिलाकर लोगों के सामने सैन भगत को प्रणाम कर वापिस लौट गए।

सैन भगत ने सबको आश्वस्त कर दिया कि- 'सब लोग आराम से रहो। नागदेवता अब किसी को नहीं सताएँगे। आप लोग भी नागदेवता को मत सताना। वे जंगल में विचरण करते हैं। मार्ग में दिख जाएँ तो प्रणाम करके मार्ग दे देना। घरों में आ जाएँ तो भी डरना मत। धोक लगाकर विदा कर देना।'

सैन भगत के प्रभाव से सब तरफ भयमुक्त वातावरण बन गया। कालबेलियों के उस आतंकी दल का व्यवसाय बंद हो गया। उन्होंने विचार किया कि इस महात्मा को समाप्त कर दिया जाए। युवती कालबेलिन ने कहा- मारने से तो हम फँस जाएँगे। उसे बदनाम कर देते हैं।

लगातार वर्षा के कारण सैन भगत को उसी गाँव में रुकना पड़ा। गाँव के बाहर एक बाग में एक कुटिया बनी थी। उसी कुटिया में सैन भगत को ठहरा दिया गया। खूब सत्संग होने लगा। गाँव में आनन्द छा गया।

एक रात को कालबेलिन ने कुटिया में प्रवेश किया। भीतर घुसकर उसने दरवाजा बंद कर लिया। उसके साथियों ने बाहर से दरवाजा बंद कर दिया और गाँव के लोगों को बुला लाए। गाँव वालों को इकट्ठा करके कहा कि तुम्हारा महात्मा चरित्रहीन है। अपनी आँखों से देख लो।

उधर जब कालबेलिन अन्दर कुटिया में घुसी और भीतर की साँकल लगाई, तब जोर-जोर से फुफकारने की आवाजें आने लगीं। कुटिया में दीपक जल रहा था, उसके मद्दम प्रकाश में उसने देखा, सैन भगत के आसन पर एक भयंकर नाग फन फैलाए बैठा है और क्रोध से फुफकार रहा है। नाग को देखते ही वह कालबेलन बेहोश होकर धरती पर गिर पड़ी।

बाहर गाँव के लोग इकट्ठा हो गये थे। कालबेलियों ने कहा- भीतर वह महात्मा हमारी कालबेलिन के साथ 'मौंजें माण' रहा है। भीड़ में से एक किसान दोनों हाथ उठाकर सामने आया और बोला- 'महात्मा तो आज प्रात:काल ही यहाँ से प्रस्थान कर गए। मेरा खेत कुटिया के पीछे है। उन्होंने प्रात: मेरे कुएँ पर स्नान किया और चले गए। मैं स्वयं उन्हें कुछ दूर साथ चलकर विदा कर आया। वे तो ओंकारेश्वर के लिए निकले हैं। वहाँ कुछ दिन निवास की बात उन्होंने मुझसे कही थी। फिर कुटिया में कौन महात्मा हैं, जिनकी बात ये कालबेलिये कर रहे हैं। दरवाजा खोलो।' 'हाँ-हाँ, दरवाजा खोलो।' भीड़ ने एक साथ कहा। कालबेलियों में एक ने कुण्डी खोल दी। दरवाजा तो भीतर से बंद था।

उन कालबेलियों ने अपनी कालबेलिन को आवाज लगाई। न तो दरवाजा खुला और न ही भीतर से किसी की आवाज आई। अन्ततः दरवाजा तोड़ा गया।

कालबेलिन दरवाजे के पास ही औंधे मुँह बेसुध पड़ी थी। महाराज सैन भगत के आसन पर एक विशालकाय भुजंग फन फैलाये बैठा था। शान्त मुद्रा में। मानो उन कालबेलियों की मूर्खता पर मुस्करा रहा हो।

गाँव के लोग वह दृश्य देखकर औचक हो गये। एक व्यक्ति ने कहा– 'महात्मा जी ने कहा था कि यदि नागदेवता के दर्शन हो जाएँ तो तत्काल धोक लगा दो।' सबने सिर झुकाकर नागदेवता के धोक लगाई। नागदेवता ने फन हिलाकर सबको आशीर्वाद दिया और देखते–देखते अन्तर्ध्यान हो गये।

कालबेलिन को पानी के छींटे लगाकर होश में लाया गया। उसने होश में आकर सारी घटना सविस्तार बता दी। अपने षडयंत्र को भी बता दिया।

गाँव के मुखिया ने भरी पंचायत में फरमान जारी कर दिया कि हमने अब तक इन कालबेलियों के आतंक को खूब झेला है। अब नहीं झेलेंगे। इन्हें ताकीद दी जाती है कि ये अपने डेरे उठाकर हमारे गाँव के चौघड़े (कुछ गाँवों का समूह) से बाहर चले जाएँ।

उस दिन से गाँव–गाँव में नाग–चबूतरे तो स्थापित हुए, किन्तु कालबेलिये वहाँ से विस्थापित हो गये। क्षेत्र उनके आतंक से मुक्त हो गया। साँपों का आतंक भी समाप्त हो गया। अब नाग वहाँ भय का प्रतीक न होकर देवता के रूप में पूजे जाने लगे। उनके दर्शन शुभ माने जाने लगे।

अकाल को सुकाल कर दिया

एक बार संत सैन भगत बागड़ क्षेत्र से गुजर रहे थे। उन्हें लगा सब तरफ सूखा ही सूखा है। खेत खाली पड़े हैं। आषाढ़ बीतने को आया है। जंगल के पेड़ भी सूखने लगे हैं। पानी का कहीं निशान तक नहीं। रास्ते के गाँव सूने–सूने। मनुष्यों या पशुओं का आना–जाना भी नहीं। घर लगभग सब बंद हैं।

वे सोचते–सोचते एक गाँव में पहुँचे। अँधेरा होने लगा था। सैन भगत ने एक चबूतरे पर अपना मुकाम कर लिया। उन्हें प्यास लगी थी। कोई दिखे तो पानी माँगूँ। तभी एक व्यक्ति वहाँ से गुजरा। सैन भगत ने उसे आवाज लगाई। वह व्यक्ति उन्हें देखकर रुका और उनके पास आकर धोक लगाई।

सैन भगत ने कहा– 'भाई ! यह पूरा इलाका सूना–सूना लग रहा है। रास्ते में जितने गाँव आये, सब सूने। न कोई व्यक्ति दिखा, न पशु। खेत खाली पड़े हैं। आषाढ़ उतरने को आया। पानी नहीं बरसा। क्या यही कारण है?'

'हाँ महाराज!' उस व्यक्ति ने जवाब दिया। उसने बताया– 'यह वागड़ क्षेत्र भीलों का इलाका है। चार सालों से यहाँ पानी नहीं बरसा। बड़ा अकाल पड़ा है। न अनाज है, न चारा, न पानी। लोग गाँव खाली करके दूसरे इलाकों में चले गये हैं। बहुत कम लोग इधर बचे हैं।'

सैन भगत चिन्ता में पड़ गए। वह व्यक्ति वहाँ से जाने को मुड़ा ही था कि सैन भगत ने कहा– 'क्या थोड़ा–सा पानी मिल सकेगा? प्यास लगी है।' वह व्यक्ति थोड़ी देर में एक लोटा पानी ले आया। सैन भगत ने पानी पिया और उस व्यक्ति से कहा– 'गाँव में जितने भी लोग हैं, उन्हें मेरे पास बुला लाओ।' वह व्यक्ति गाँव के लोगों को बुला लाया।

सैन भगत ने सबसे कहा– 'मुझे एक गाँव में एक घर से थोड़ी–सी मक्की (मक्का) मिली है। तुम बारी–बारी से प्रत्येक घर से मेरे पास आते जाओ। दो–दो दाने मक्की लेते जाओ। दाने घर की धान कोठी में डालकर ढक्कन बंद कर देना। सबेरे खोलना। प्रभु की कृपा हो जाएगी। ध्यान रहे सबेरे से पहले मत खोलना।'

सबने दो–दो दाने लेकर अपने घरों की कोठियों में डाल दिए।

सबेरे जब कोठियाँ खोलीं तो कोठियाँ मक्का से पूरी भरी थीं। सब लोग सैन भगत के चबूतरे की ओर जय–जयकार करते पहुँचने लगे। सैन भगत तो ब्रह्म मुहूर्त्त में गाँव से प्रयाण कर चुके थे। तभी सबने देखा, आकाश में बादल घिरने लगे हैं। पूरा गाँव बादलों की गर्जना से गूँज उठा। बिजलियाँ चमकने लगीं। घनघोर वर्षा होने लगी।

गाँव उत्सव की तरह झूम उठा। चार साल का अकाल समाप्त हो गया था। उनके पास खाने और बोने के लिए पर्याप्त बीज था।

कहते हैं– उस साल मक्का की खूब अच्छी फसल हुई। चारा भी खूब हुआ। पानी की कमी नहीं रही। गाँव फिर से आबाद हो गए।

राजा का कोढ़ मिटाया

संत सैना भगत का यह नियम था कि वे रात्रि विश्राम किसी ग्राम में ही करते थे। वे वागड़ से मालवा के दशपुर अंचल में प्रवेश कर गए। मालवा का यह अंचल उन्हें वागड़ क्षेत्र से बिल्कुल विपरीत हरा–भरा और खुशहाल लगा। वे प्रसन्न थे। ईश्वर की माया भी अद्भुत है। एक

अंचल में अकाल दूसरे में सुकाल। उसकी महिमा अपरम्पार है। वे सोचते चल रहे थे। तभी उन्हें लगा कि संध्या उतर आई है। आसमान में बादल भी घिरने लगे हैं। तभी उन्हें एक गाँव निकट दिखा। वे उस गाँव में पहुँचे और एक चबूतरे पर मुकाम लगा दिया। वागड़ में उनके चमत्कारों की खबर पहले ही पहुँच चुकी थी। नामी से भी पहले नाम की महिमा बड़ी होती है।

वे जहाँ भी रुकते थे, रोगियों की देख-रेख अवश्य करते थे। उनका मानना था कि जिस गाँव का अन्न-जल सेवन करो, उस गाँव की सेवा अवश्य करो। वे बहुत सिद्ध वैद्य थे। अनेक औषधियों का उन्हें ज्ञान था। अनेक विकलांगों और लकवाग्रस्तों को उन्होंने ठीक किया था। यह उनकी बहुत बड़ी मानव सेवा थी। उनकी यह ख्याति भी दूर-दूर तक फैल चुकी थी। उनके आते ही गाँव के लोग उन्हें धोक लगाने और विकलांगों को वहाँ लाने लगे। सैन भगत ने भी बिना विश्राम किये उनकी सेवा आरम्भ कर दी। वे आधी रात तक गाँव के विकलांगों और लकवाग्रस्तों की सेवा करते रहे।

उस क्षेत्र के राजा को कोढ़ का रोग था। राजा ने खूब इलाज करवा लिया था। दूर-दूर के वैद्य, देवी-देवता आदि उन्हें ठीक नहीं कर पाए थे। राजा के दूतों ने उन्हें सैन भगत के आने और उनके यश की सूचना दे दी थी।

राजा ने अपने मंत्री को भेजकर सैन को कहलवाया कि वे राजभवन आकर राजा का उपचार करें। सैन भगत ने कहा- 'मेरे लिए राजा और प्रजा में भेद नहीं है।'

राजा परजा कोई भेद न दीखे मोय।
सैना बंदे राम के एक सरीखे होय॥

आप अपने राजा से कहो कि वे यहीं आ जाएँ अथवा धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करें। मैं इस गाँव व आसपास के गाँवों के दुखियारों की सेवा करने के पश्चात् राजा के पास पहुँच जाऊँगा।

सैन भगत भगत का उत्तर जब राजा के पास पहुँचा, तब वे उत्तर सुनकर आगबबूला हो उठे। राजा ने मंत्री से कहा- जाओ और उस सैन को पकड़कर हमारे सामने ले आओ। पहले हमारा इलाज होगा, फिर दूसरों का। उस साधु को इतना गुमान कि वह राजा और सामान्य जन में अन्तर ही नहीं जानता। उन लोगों से उन्हें ठीक से भोजन भी नहीं मिलने वाला। हम उन्हें छत्तीस भोग करवाएँगे। सोने की मुद्राओं से उनकी झोली भर देंगे।

मंत्री अपने साथ चार-पाँच सैनिकों को लेकर सैन भगत के मुकाम पर पहुँचे। मंत्री ने सैन भगत को राजा का हुकुम सुनाया।

सैन भगत ने मंत्री से कहा-

धरम मनख के चीत हे, करम मनख के हीत।
सैन धरम राखतां करम कर, या हे साँची रीत॥

धर्म मनुष्य के चित्त में तथा कर्म मनुष्य के हित में होना चाहिए। धर्म रखते हुए कर्म करना सच्ची रीति है। मैं धर्म को धारण करते हुए कर्म कर रहा हूँ। इसमें मेरा अहंकार राजा किस प्रकार देखता है? महान संत पीपाजी ने कहा है-

हिरदै राखे धरम ने, कर माहिं करम कमाण।
पीपा सत री ओट दे, भेदो निहिच निसाण॥

मैं वही कर रहा हूँ। मन में धर्म, कर में कर्म और दोनों को एक रूप कर अपना मानव सेवा कर्म निर्वाह कर रहा हूँ। यह कर्म मेरा व्यवसाय नहीं है, धर्म है। अपने राजा से कहो, अहंकार और क्रोध से मुक्त हो जाए। अहंकार और क्रोध अविवेक से प्रारम्भ होकर पश्चाताप पर समाप्त होता है। रावण और कंस का नाम उन्होंने अवश्य सुना होगा।

इसके बाद भी यदि तुम्हारे राजा ने मुझे बंदी बना बुलाया है, तो तुम अपना धर्म पालन करो। मैं यहाँ की सेवा पूर्ण कर चुका हूँ। स्नान करके तुम्हारे साथ चल दूँगा। लेकिन इतना जान लो, तुम्हारा राजा ठीक तभी होगा, जब वह अहंकार और क्रोध मुक्त होकर यहाँ आएगा।

सैन भगत की बात सुनकर मंत्री को ज्ञान हो गया। उसने सैन भगत के चरणों में धोक देकर कहा- 'महाराज! आप यहीं विराजो। आपको बंदी बनाकर मैं पाप का भागी नहीं बनना चाहता। आप मुझे क्षमा कर दें। मैं आपका संदेश अपने महाराज तक पहुँचा दूँगा।'

जब मंत्री वहाँ से जाने लगा, तब सैन भगत ने कहा- 'यदि तुम्हारे राजा अहंकार और क्रोध त्याग कर सामान्यजन की तरह अपनी प्रजा में आ जाएँगे, तो वे भले-चंगे हो जाएँगे। जैसे-जैसे वे राजमहल से पाँव पैदल इस गाँव की ओर बढ़ेंगे, वैसे-वैसे उन पर परमात्मा की मेहर बरसने लगेगी। यहाँ आते-आते वे भले-चंगे हो जाएँगे।'

मंत्री ने राजा को सैन भगत का संदेश सुना दिया। मंत्री की बात सुनकर राजा को भी ज्ञान प्राप्त हो गया। वह उसी समय महल से बाहर आ गया। उसने जूते भी नहीं पहने। जैसे ही वह महल से बाहर आया, सावन के सेरे (फुहारें) शुरू हो गई। राजा फुहारों में भींगता हुआ, पूरी श्रद्धा के साथ आगे बढ़ता चल रहा था। वर्षा की फुहारों का ऐसा आनन्द उसने पहली बार अनुभव किया था। उसका पूरा बदन पुलकित था। उसके बदन पर उभरा कोढ़ वर्षा जल के साथ धुलकर शरीर से बह रहा था।

जब वह सैन भगत के सामने पहुँचा, तब तक उसका कोढ़ धुल चुका था। उसने अपने हाथों को, पैरों को बार-बार देखा, उसका कोढ़ समाप्त हो चुका था। कोढ़ का निशान तक नहीं बचा था। वह सैन भगत के चरणों पर गिरकर रोने लगा। क्षमा प्रार्थना करने लगा।

सैन भगत ने कहा- 'तुम्हारा कोढ़ मैंने नहीं मिटाया। तुमने स्वयं उससे मुक्ति पा ली है। तुम्हारा मन निर्मल हो गया। तुमने आर्तभाव से प्रभु को याद किया। प्रभु ने तुम्हारी प्रार्थना सुन ली। उसने अमृत वर्षा से तुम्हारा कोढ़ धो दिया। जैसे कृपा तुम पर प्रभु ने की है, वैसी तुम अपनी प्रजा पर करना। प्रजा है, तभी तुम राजा हो।'

राजा ने बहुत सारा धन सैन भगत के चरणों में डाल दिया और निवेदन किया कि आप महल में पधारो। मैं पालकी भेजूँगा।

सैन भगत ने कहा- 'राजन! यह सम्पत्ति मेरे किस काम की? यदि आप देना ही चाहते हो, तो इस गाँव में एक पाठशाला खोल दो। कुछ तालाब अपने राज्य में बनवाओ। कुछ कुएँ-बावड़ियाँ बनवाओ। खूब सारे छायादार और फलदार वृक्ष लगवाओ। ईश्वर तुम्हारा भला करे। महल में आकर मैं क्या करूँगा? अँधेरा घिरने लगा है। आप अपने महल पधारो।'

राजा को विदा कर सैन भगत हरिभजन में लीन हो गए। गाँव जागे, उससे पहले वहाँ से प्रस्थान भी कर गए।

सरवर जल निर्मल हुआ

संत सैन भगत एक ऐसे गाँव में पहुँचे, जहाँ जल का बहुत अभाव था। जहाँ उन्होंने मुकाम लगाया था, वह स्थान गाँव के बाहर था। सामने एक पक्का बना हुआ सरोवर था। उसके पक्के घाट थे। चारों ओर सीढ़ियाँ बनी थीं। इतना बड़ा सरोवर होने के बावजूद भी पानी का अभाव! वे आश्चर्यचकित थे।

तालाब के घाटों पर गंदगी फैली थी। तालाब के जल पर काई जमी थी। चारों ओर गंदगी और दुर्गन्ध का बोलबाला था। सैन भगत ने चारों ओर दृष्टि घुमाई, उन्हें कोई व्यक्ति दिखाई नहीं दिया। दिन अभी ढला नहीं था। वे सरोवर के निकट एक वृक्ष के नीचे बने चबूतरे पर बैठ गये। आसपास से कुछ झाड़ियाँ इकट्ठी कर उन्होंने चबूतरे को बुहारा और अपना आसन बिछा दिया, तब चार-पाँच लोग उधर आते दिखे।

चबूतरे पर एक महात्मा को देखकर वे उनके पास आए और धोक लगाई। उन्होंने कहा- 'महाराज जी! हमारे धन्य भाग कि आप इस शापित गाँव में पधारे। इस गाँव को किसी का शाप लग गया है। यहाँ कोई महात्मा नहीं आता। यह तालाब दस गाँवों का जल संसाधन था। इसके

पानी में अपने आप कीड़े पड़ गये। मन्दिर का पुजारी और पुरोहित गाँव छोड़कर चले गये। हम गाँव वाले पानी के लिए तरसते हैं। पशु पालना कठिन हो गया है। सारे पशु बेचना पड़े हैं। थोड़े-बहुत बचे हैं। उनको चारा पानी देना कठिन होता जा रहा है।'

सैना भगत ने उनसे यह जानना चाहा कि इतना विशाल और सुन्दर सरोवर नष्ट कैसे हो गया? कोई तो कारण रहा होगा? उन लोगों ने बताया कि यह सरोवर सच में बहुत सुन्दर था। इसमें निर्मल जल रहता था। सब लोग इसी सरोवर से जल भरकर ले जाते थे। इसमें नहाना या घाटों पर गंदगी करना वर्जित था। पशुओं के लिए इसी सरोवर से जल निकासी द्वारा एक अन्य ताल बनाया गया था। सारे पशु उसी ताल से पानी पीते थे।

यह आदिवासियों का इलाका है। नौ गाँव भीलों के तथा यह एक बड़ा गाँव राजपूतों, साहूकारों और ब्राह्मणों का है। यह तालाब हमारे पूर्वजों ने बनवाया था। हमारे पूर्वज यहाँ के जागीरदार थे। सारे गाँव हमारी जागीर का हिस्सा थे। यह सरोवर हमारा है। यह गाँव ही इसका उपयोग कर सकता है। दूसरे गाँव के छोटी जाति के लोग नहीं कर सकते। बाद में उन्हें ठाकुर साहब ने पशुओं वाली तलाई से पानी ले जाने की अनुमति दे दी थी। एक दिन उनके गाँवों के भीलों ने इस सरोवर पर कब्जा करना चाहा और इसमें से पानी ले जाने का प्रयत्न किया। हमने उन्हें मना किया तो मरने-मारने को तैयार हो गये। कुछ लोग सरोवर के जल में घुस गये और जल को अपवित्र कर दिया। सबके पास तीर-कमान थे। दोनों ओर से हथियार चले, बहुत लोग घायल हो गये। आखिरकार जैसे-तैसे समझा-बुझाकर उन्हें शान्त किया गया। भीलों के द्वारा स्नान करने के कारण जल को अशुद्ध मानकर लोगों ने उस सरोवर का जल पीना त्याग दिया। भील पीते थे। रोज झगड़े होते थे। हम गाँव वाले न खुद पीते थे और न उन्हें पीने देना चाहते थे।

हम लोगों ने इसके पानी में गंदगी डालना शुरू कर दी। पशुओं को पानी पिलाना और उन्हें नहलाना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे सारा जल गंदा हो गया। और आज इसकी हालत आप देख ही रहे हैं।

सैन भगत ने जब गाँव के लोगों से सरोवर की कथा सुनी, तब वे अत्यन्त दुखी हो गये। उन्होंने गाँव के मुखिया ठाकुर को बुलवाया। गाँव के और लोग भी आ गये। सैन भगत ने सबको जल का महत्त्व समझाया। ऊँच-नीच का भाव समझाया। जल भगवान देता है। उस पर सबका अधिकार है। आपके पूर्वजों ने यह विशाल सुन्दर सरोवर लोक कल्याण के लिए बनवाया था। इसमें पानी पीने का और इसे स्वच्छ रखने का अधिकार सभी को है। जो भी सरोवर, नदी या अन्य जलाशयों का जल गंदा करता है, वह भगवान का अपराधी है। सरोवर का निर्माण भले ही आपके पूर्वजों ने किया था, किन्तु जल तो बादल बरसाते हैं। बादल तो आपके पूर्वजों के सेवक नहीं हैं। वे तो प्रभु आधीन हैं।

संत सैन भगत ने दसों गाँव के मुखियाओं को बुलाकर समझाया कि जल को गंदा करना महापाप है-

नदी तलैयाँ हाँपड़े, करे शौच पेशाब।
सैना एसा मूढ़ ने, लागो बड़ो अज़ाब॥[1]

जल किसी भी जलाशय का हो, गंगा के समान पवित्र होता है। अत: गंगाजल को सदा शुद्ध ही मानना चाहिए। किसी के स्नान से गंगाजल कैसे अशुद्ध हो सकता है?—

ताल कूप नद बावड़ी, समंदर झरनपहार।
सैन कहे सब संग सम, जीवन राखण हार॥[2]

इस जीवरक्षक जल को सदा शुद्ध रखना चाहिए। आप स्वयं इस कष्ट को भोग रहे हैं। यदि इतना ध्यान-ज्ञान रखते तो आज यह जल संकट नहीं भोगना पड़ता। दस गाँवों को इसका सामना करना पड़ रहा है। जलाशय तो तीर्थधाम हैं। इन्हें पाँच तीर्थ धामों में संतों ने बखाना है—

गो गंगा गीता धरा, जननी एक समान।
सैन भगत साँची कहूँ, पाँचई तीरथ धाम॥[3]

इसीलिए कह रहा हूँ इस सरोवर के जल को सब मिलकर शुद्ध करो। सैन भगत की बात से सब सहमत हो गये। सब युवकों ने मिलकर तालाब के जल को साफ कर दिया। आसपास की गंदगी साफ कर दी। जल की पूजा सभी सुहागिनों से करवाई। गाँवों की सभी कन्याओं की पूजा कर उन्हें भोजन करवाया तथा कहा- 'मेरे कमण्डल का यह जल सरोवर में डाल दो।' ऐसा ही किया गया। सैन भगत ने कहा- 'आज के बाद तालाब को स्वच्छ रखना और दसों गाँवों के लोगों को पानी भरने देना।'

अब सब लोग अपने-अपने घर जाओ। सूरज की प्रथम किरण के साथ सरोवर का जल निर्मल हो जायेगा। सब लोग अपने-अपने घर चले गये। रातभर लोग सूर्योदय की प्रतीक्षा करते रहे। दूसरे दिन 'मुँह अँधूरे' (अँधेरे-अँधेरे, ब्रह्मकाल में) सब लोग तालाब के पास एकत्र हो गये। सूर्योदय की प्रतीक्षा करने लगे। सभी की आँखें आकाश पर लगी थीं। प्रभात होते ही सूर्य के प्रकाश से सरोवर का जल चमक उठा। जल इतना निर्मल था कि सरोवर का तल तक दिख रहा था। पूरे गाँवों के लोगों के चेहरों पर चमक आ गई। सबने देखा बीच सरोवर एक कमल खिला था। मानो स्वयं सैन भगत सबको आशीर्वाद दे रहे हों।

सैन महाराज की जै-जैकार होने लगी। सब लोग सैन भगत के मुकाम पर उन्हें धन्यवाद करने पहुँचे, किन्तु सैन भगत तो ब्रह्मकाल में ही मन्दिर से प्रस्थान कर चुके थे। यही तो उनका सदा का नियम था।

सबने उस सरोवर का नया नाम 'सैन सरोवर' रखा और सैन जी के भक्त हो गये।

दुरसा जल निरमल भयो, ज्युँ गंगा को नीर।
सैन भगत ने मेद दी, जल संकट की भोर।।[4]

ईश्वर और अल्लाह एक है

एक बार भ्रमण करते-करते संध्या ढले सैन भगत एक गाँव में पहुँचे। वे एक बार पहले भी इस गाँव में मुकाम कर चुके थे। तब वे पूर्व दिशा से गाँव में प्रविष्ट हुए थे। वहाँ एक सरोवर के किनारे एक देवस्थान के चबूतरे पर तब उन्होंने मुकाम किया था।

इस बार वे पश्चिम दिशा से प्रविष्ट हुए थे। गाँव के इस भाग में एक सुन्दर-सी मस्जिद थी। उन्होंने सोचा- आज इसी मस्जिद में मुकाम किया जाये। संत-फकीरों की मौज तो सब जानते ही हैं।

सैन भगत मस्जिद में गये और एक कोने में अपना आसन बिछा दिया। वहाँ उसी मस्जिद में पहले से ही एक फकीर ठहरा हुआ था। सैन भगत को मस्जिद में मुकाम लगाते देखकर वह उनके पास आया और बोला- 'अरे महात्मा! तुम मस्जिद में नहीं रुक सकते। किसी मन्दिर में जाकर या मुखिया के चबूतरे पर जाकर मुकाम लगाओ।' सैन भगत ने फकीर से पूछा- 'मेरे यहाँ रुकने में आपको क्या आपत्ति है?' फकीर ने कहा- 'यह खुदा का घर है। भगवान का नहीं है। तुम भगवान वाले हो, इसलिए भगवान के घर में जाकर रहो।'

फकीर की बात सुनकर सैन भगत ने मुस्कराकर कहा-

ईश्वर अल्हा में अजब, फरक करें इन्सान।
ईश्वर अल्हा एक हैं, फरक कर्‌यो इंसान।
सैना दोनोइ एक हैं, वो रहीम ये राम।।

इसलिए-

ना मसीत ना मंदरां, ना कोई खास मुकाम।
सैना रब सब ठौर है, अल्हा कहो के राम।।

सैन भगत के इतना समझाने पर भी फकीर सन्तुष्ट नहीं हुआ और अपनी जिद पर अड़ा रहा। सैन भगत ने कहा- 'फकीर साईं! मेरा तो यहाँ कुछ घड़ियों का मुकाम है। सबेरे दिन उगने से भी पहले मैं कूच कर जाऊँगा।' फकीर ने कहा- 'महात्मा! तुम्हारी बात सही है, मगर यहाँ दूसरे मजहब के आदमी को रुकने की इजाजत नहीं है।'

सैन भगत ने समझाने की बहुत कोशिश की। फकीर तो बार-बार अपनी जिद पर अड़ा था। तब सैन भगत ने उसे एक बार फिर समझाने का प्रयत्न करते हुए कहा-

मूरतकारो एक हे, माटी एक समान।
सैन भगत साँची कहूँ, अंतर करे जहान।।[5]

सब प्राणियों को बनाने वाला मूर्तिकार एक ही परमात्मा है। वह एक जैसी ही मिट्टी से मूर्तियाँ बनाता है। यह संसार उसे अलग-अलग नाम देकर भेद पैदा करता है।

एक धरम एकहि मजब, एकहि राम-रहीम।
सैन भगत साँची कहूँ, एकहिं कृसन-करीम।।[6]
अल्हा ईश्वर एक है, क्युँ दीया दो नाम।
सैन भगत साँची कहूँ, वंदन करूँ तमाम।।[7]

सैन भगत के इतने सारे तर्क उसके समझ आये हों या नहीं आये हों, उसे नींद जरूर आने लगी थी। उसने कहा- 'ठीक है, तुम यहाँ सो जाओ, लेकिन सबेरे नमाजियों के आने से पहले यहाँ से दफा हो जाना।'

सैन भगत फकीर की कड़वी बात सुनकर हँस दिये। उन्होंने कहा- 'ठीक है, सबेरे आप सरोवर के पास आ जाना, वहीं भेंट होगी। मैं आपसे वहीं मिलूँगा।'

दोनों सो गये। सैन भगत सबेरे ब्रह्म मुहूर्त्त में उठे और चलने को हुए। उन्होंने फकीर की ओर देखा, तब फकीर तो वहाँ था ही नहीं। वे थोड़ा मुस्कराये और चल दिये। वे सरोवर पहुँचे, देखा तो फकीर वहाँ चबूतरे पर सो रहा है। उन्होंने उसे उठाया और कहा- 'अरे फकीर साईं! जागो। यह फकीरों और संतों के सोने का समय नहीं है।' फकीर तो नहीं उठा, किन्तु कुछ ग्रामीण वहाँ आ गये। उन्होंने कहा- 'सैन भगत! आप रात को भजन गाते-गाते एकाएक कहाँ चले गये थे। रात को तो आपने खूब भजन सुनाये। यह फकीर तो आपके भजन सुनकर इतना मस्त हो गया था कि नाचने लगा था।' सैन ने कहा- 'मेरा मुकाम तो मस्जिद में था। मैं तो अभी-अभी यहाँ आया हूँ।'

ऐसा कहकर वे सरोवर में स्नान करने के लिए बढ़ गये। ग्रामीण चकित थे। रात को तो इन्होंने यहाँ भजन गाये, फिर अचानक गायब हो गये। यह फकीर भी इनके साथ था। उन्होंने फकीर को जगाया। जागते ही उसने अपने चारों ओर नजर घुमाई- 'अरे! मैं यहाँ कैसे आ गया? मैं तो मस्जिद में सो रहा था।' वह कुछ सोचे-समझे, तब तक सैन भगत स्नान करके चबूतरे पर लौट आये। उन्होंने कहा- 'फकीर साईं! कुछ समझ में आया? खुदा का घर और भगवान का

घर एक जैसा होता है। मैं रातभर खुदा के घर में सोता रहा और आप मुझे सोता छोड़कर यहाँ भगवान के घर में आकर सो गये। दोनों का अन्तर मिट गया।' फकीर चकित था। उसकी समझ में सैन भगत की लीला समझ में नहीं आ रही थी। गाँव वाले तो और भी आश्चर्य में थे। वे भला महात्मा सैन की लीला क्या समझ पाते ?

सन्दर्भ :

1. यह साखी लोकवाणी खण्ड के 224 क्रम पर भी संग्रहीत है।
2. यह साखी 'सैन कहे' खण्ड की साखी क्र.-131 पर भी संग्रहीत है।
3. सैन भगत 'साँची कहूँ' में भी यह साखी क्र.-116 पर संग्रहीत है।
4. यह प्रसंग ठाकुर दलेलसिंहजी यादव-संधारा, भानपुरा, जिला-मन्दसौर के सौजन्य से संग्रहीत.
5. सैन भगत साँची कहूँ खण्ड, साखी क्र.-99.
6. वही, साखी क्र.-101.
7. वही, साखी साखी क्र.-126.

अध्याय-6

संत सैन भगत

वाणी का संकलन एवं सम्पादन

संत साहित्य पर चर्चा करने से पूर्व संत के चरित्र को समझ लेना आवश्यक है। महाभारत में वेद व्यासजी कहते हैं-

संतो हि सत्येन पतन्ति सूर्य, सन्तो भूमिं तपसा धारयन्ति।
सन्तो गतिर्भूत भव्यस्य राजन्, सतां मध्ये नावसीदन्ति सन्तः॥

संत ही अपने तपोबल से सूर्य को ताप देते हैं। संत ही पृथ्वी को धारण करते हैं। सबके आश्रय संत हैं। सन्तों के मध्य संत दुखी नहीं होते। श्रीमद्भागवत-11/26/32 में भी कहा गया है-

निमज्जयोन्मज्जतां घोरे भावव्धौ परमायनम्।
सन्तो ब्रह्मविदः शान्तः, नौर्ईवाप्सु मज्जताम्॥[1]

जल में डूबते हुए लोगों के लिए दृढ़ नौका के समान भयानक संसार समुद्र में गोते खाने वालों के लिए ब्रह्मवेत्ता, शान्त चित्त, संतजन ही अवलम्बन हैं।

तीन प्रकार के संतों का उल्लेख विद्वानों ने किया है। एक वे जो सुमिरन, ध्यान और भजन को आधार बनाते हैं। दूसरे वे जो परमज्ञानी होते हुए तत्त्वज्ञान के शोधार्थी माने जाते हैं। उन्हीं को ऋषि भी कहा गया है।

सुमिरन, ध्यान और भजन को फारसी संतों ने जिक्र, फिक्र और सुल्तानलजकार कहा है।

ऋग्वेद में संत को 'सत्य' के अर्थ में स्थापित करते हुए कहा गया है- 'ऋतस्य

पदयामन्वेति साधु'। पंडित परशुराम चतुर्वेदी धम्मपद का उदाहरण देते हुए संत को शांत शब्द के अर्थ में प्रतिपादित करते हैं।[2]

संत लक्षण एवं उनके कर्त्तव्य मार्ग पर सहज चर्चा करने से हमें यह बात समझ में आ जाती है कि उन्होंने अपनी वाणी में किस प्रकार का संदेश हमारे लिए प्रकट किया होगा। संत न किसी देश के प्रतिबद्ध होते हैं, न समाज के किसी विशिष्ट वर्ग के लिए। वे तो सम्पूर्ण सृष्टि को अपना परिवार मानते हैं तथा 'सर्वहित' और 'सर्वहित परोपकाराय' विचारते हैं। वे सत्य के पोषक होते हैं। भगवान आदि शंकराचार्य ने स्पष्ट कहा है कि मेरा स्वदेश तीनों भुवन हैं।[3] 'स्वदेशो भुवन त्रयम'[4] का संदेश हमारे सभी संतों ने अपनी वाणी में दिया है।

संत वाणी में वेदों, उपनिषदों और त्रिपटकों का गाम्भीर्य, सूफी फकीरों, कबीरों की मौज एवं भागवत भक्ति का माधुर्य समाहित है।[5]

संत वाणी जिसमें नीम की कड़वाहट है तो अमृत की मिठास भी। इनकी वाणी में जनरंजन और मनरंजन की तथा फटकार और दुलार की अद्‌भुत बेजोड़ व्यवस्था है।[6]

संत वाणी में भक्ति, ज्ञान और कर्म की त्रिवेणी की पावनता है, जो हिन्दी साहित्य, भारतीय संस्कृति एवं भक्ति साहित्य की अमूल्य पूँजी है।

संत साहित्य के महत्त्व को उसकी लोक कल्याणी भाव महिमा की सामर्थ्य को विद्वानों ने एक स्वर से स्वीकार किया है। आज के इस भौतिक युग में अशान्त मन-मस्तिष्क वाले अनेकानेक उलझी समस्याओं में फँसे मानव के लिए संतवाणी ही एक सहज सक्षम तथा स्वाभाविक हल है। समस्याओं की परिधि के चारों ओर बेतहाशा दौड़ने वाले मनुष्य के लिए संतवाणी ही एक सुमार्गी छोर है। इस वाणी में कंचन कामिनी एवं सांसारिक ऐश्वर्य से सहज मुक्ति प्रदान करने का अटूट उत्साह, आत्मविश्वास एवं शक्ति है। जनहित, मनहित एवं सर्वहित की भावना एवं भक्ति है और समाज के पुनरुत्थान का असीम साहस एवं अतुल बल है।

संत साहित्य की इन विशेषताओं के अतिरिक्त उसकी सबसे बड़ी विशेषता है विचार स्वातंत्र्य की उपलब्धि। जिन जनतंत्रीय भावनाओं और स्वतंत्रता की हम आज बात करते हैं, वह इन संतों के चरित्र में आज से 600 वर्ष पूर्व हमें दिख जाती है।

इन संतों ने निर्भीक एवं नि:शंक होकर अपने विचारों को अभिव्यक्त किया। मर्यादा का ध्यान संतों ने रखा अवश्य, किन्तु शास्त्रीय व्यवस्था के अनुशासन में नहीं, अपितु सदाचार के कारण। मर्यादा को एक नैतिक मूल्य मानकर उसकी रक्षा सदा संतों ने की।

इसी प्रकार आत्म-निरीक्षण, आत्म-नियंत्रण एवं आत्म-विश्वास का संचार करने में जितना सक्षम संत साहित्य है, उतना हिन्दी साहित्य भण्डार का कोई अन्य साहित्य नहीं है।

ऐसी संतवाणी का संकलन एवं सम्पादन जहाँ हिन्दी साहित्य के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य है, वहीं प्राणी मात्र के लिए चिन्तन में भी अत्यन्त आवश्यक धर्म है।

स्वामी रामानन्द की शिष्य परम्परा

स्वामी रामानन्द जैसे सबल तथा प्रभावकारी तापस गुरू ने दक्षिण से भक्ति की गंगा को उत्तर की ओर मोड़ दिया। इस उल्टी गंगा को सुल्टा कर देने की क्षमता केवल स्वामी रामानन्द जैसे अटल विश्वासी संत में ही मौजूद थी। वे भक्ति गंगा को दक्षिण से बहाकर उत्तर में लाए और समग्र उत्तरी भारत को भक्ति रस से सिंचित कर दिया। वे भक्ति गंगा की पावनता को प्रवाहित करने वाले 'भक्ति भागीरथ' थे। इसीलिए कहा गया कि– 'भक्ति द्राविड़ ऊपजी लाए रामानंद।' इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उत्तर भारत में पहले से मौजूद नहीं थी। किन्तु जिस भक्ति को स्वामी रामानन्दजी उत्तर भारत में लाये, वह सहज भाव की भक्ति थी। शास्त्रीय दुरूहता उसमें नहीं थी।

स्वामी रामानन्द ने अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए बारह शिष्यों को दीक्षित किया। ये बारह शिष्य उनकी विचारधारा के भक्ति दूत थे, जिन्होंने उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम एवं मध्य भाग में रामानन्द के संदेश को पहुँचाया और पुष्ट किया।

नाभादास कृत भक्तमाल में इन बारह शिष्यों का वर्णन किया गया है–

अनंतानंद, कबीर, सुखा, सुरसुरा, पदमावती, नरहरि।
पीपा, भावानन्द, रैदास, धना, सैन, सुरासुरा श्री धरहरि॥
औरो सिष्य, प्रसिष्य एक ते एक उजागर।
विस्वमंगल आधार सर्वानन्द दसधा आगर॥
बहुत काल बपु धारि कै, प्रनत जनन कौं पार दियो।
रामानन्द रघुनाथ ज्यों दुतिय सेतु जगतरन कियो॥

अनन्तानन्द, कबीर, सुखा, सुरसुरा, पद्मावती, नरहरि, पीपा, भावानन्द, रैदास, धना, सैन, सुरसुर की घरहरि– ये बारह शिष्य स्वामी रामानन्द के प्रमुख शिष्यों में मान्य हैं। वैसे तो उनके शिष्य और प्रशिष्य अनेक थे। उन्होंने विश्वमंगल को आधार बनाकर सर्वानन्द के भाव को लोक में प्रसारित करने के उद्देश्य से अपनी भक्ति का लक्ष्य निर्धारित किया। 'सर्वमंगल मांगल्य' का भाव सदा बना रहा।

स्वामी रामानन्दजी को सर्वेश्वर श्री रामचन्द्रजी की बाईसवीं परम्परा में बखाना गया है। उनसे पूर्व जानकीजी, हनुमानजी, ब्रह्माजी, वशिष्ठजी, पाराशरजी, व्यासजी, शुकदेवजी आदि भक्तों को इस परम्परा में बखाना गया है।[8]

स्वामी रामानन्दजी का व्यक्तित्व एक क्रान्ति दृष्टा एवं सृष्टा के रूप में प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने अपने शिष्यों को सर्वहितकारी भक्ति भावना का संबल प्रदान कर एक सबल सामाजिक पुनर्जागरण का उद्घोष करने का आदेश देकर पूरे भारत में चतुर्दिक भक्ति आन्दोलन के दूतों के रूप में भेजा और वे अपने उद्देश्य एवं संकल्प में सफल भी हुए।

स्वामीजी के बारह शिष्यों में कबीर, पीपा, रैदास, धना और सैन जैसे संतों का योगदान सबसे अधिक है। ये संत निर्भीक, जितेन्द्रीय, सशक्त एवं सम्मोहक वाणी वाले विषपायी संत थे, जिन्होंने अपने चरित्र एवं वाणी के माध्यम से अपने गुरू के उद्देश्य को सफल बनाते हुए स्वयं की उपस्थिति को भी जन-जन में स्थापित किया। वे क्रान्ति ज्योति बनकर लोक में विस्तीर्ण हुए और अज्ञान अंधकार को समाप्त करने में सफलता प्राप्त की।

ये संतगण सिद्ध कवि थे अथवा नहीं तथा उन्हें काव्य-सृजन का शास्त्रीय ज्ञान कितना था, यह बात हमारी विवेचना का लक्ष्य नहीं है। इतना सत्य है कि इनमें काव्य-प्रतिभा थी। इनके भावों में काव्य-सृजन की सहजता और सहज गम्यता विद्यमान थी। जो काम वाल्मीकि की संस्कृत रामायण नहीं कर पायी। वह सफलता लोकभाषा अवधी में रचित तुलसी कृत रामचरितमानस ने कर दिखाया। तुलसी की सहज अभिव्यक्ति ने राजा राम को जन-जन का हृदय सम्राट एवं सर्वपूज्य भगवान बना दिया।

यही क्षमता इन संतों की वाणी में हम देख सकते हैं। इनकी वाणी में अद्भुत सत्य उजागर हो जाता है। इसी को 'पारख ज्ञान' कहा गया है। कबीर ने इस भाव को स्पष्ट करते हुए कहा है-

साखी आँखी ज्ञान की, समुझि लेहुँ मन माँहि।
बिन साखी संसार को, झगरा निपटत नाँहि॥

संतों की वाणी उनके अनुभव ज्ञान (पारख ज्ञान) की साखी (साक्षी) है। क्योंकि संतों ने कागज की लेखी नहीं कही, आँखों की देखी कही है। संत गुमनामी सूफी संत थे। वे अनेक संतों के पद गाते-गाते सूफियाना भाव में गये। उन्हें कबीर, धन्ना, पीपा, रैदास और सैना के अनेक पद याद थे। उन्होंने तो कृष्ण को शिवना नदी के तट पर पीला अम्बर, मोरमुकुट और बाँसुरी बजाते देखा था।[9] वही कृष्ण उन्हें चिश्ती के दरबार में भी दिख जाता है।[10]

इन्हीं संत गुमनामी की साखी है-

पीपा धन्ना सैयनजी, नाम देव कबीर।
गुमनामी पाँचों भगत, हैं पीरों के पीर॥

वेद पुराणों में नहीं, बोलें ऐसे बोल।
गुमनामी सहजा सबद, बेमिसाल अनमोल॥[11]

इन संतों ने अपने भक्ति बल से लोक कल्याण का सफल प्रयत्न किया, जो इनकी वाणियों में देखा जा सकता है।

तैत्तरीय में कहा है–

असन्नेव ही भवति असद्, ब्रह्मेति वेद चेत्।
अस्ति ब्रह्मेति चेद् वेद, सन्तमेनं ततो विदुः॥[12]

संत परमार्थ सत् है। उनके महनीय नाम में ही यह तत्त्व निहित है। संत कर्म, ज्ञान और भक्ति तीनों सद्‌मार्गों का समन्वय करता है। वह सद्‌मार्ग प्रशस्त करता है।

यथा लब्धेऽपि सन्तुष्टः समचित्तो जितेन्द्रीयः।
हरि पादाश्रयो लोके विप्रः साधुरन्दिकः॥
निर्बैरः सदयः शान्तों, दम्माहकारवर्जितः।
निरपेक्षो मुनिवीर्तरागः, साधुरिहोच्यतेः॥

'जो साधु है वही तो संत है। वही भक्त है। जो भक्त है वही तो संत भी है। यथा लाभ में, संतोष, सुख-दुख में समचित्त, जितेन्द्रीय, हरि के चरणों में समर्पित, परनिन्दा त्यागी, निर्वैरी, कृपालु, शान्त, दम्भ और अहंकार से मुक्त, पक्षपात रहित, बैरागी और मुनि गुणों से जो युक्त है वही संत है। वही भक्त भी है। संत और भक्त में कोई भेद नहीं है।'[13]

संत गुमनामी कहते हैं– ये संतगण हद और अनहद का राज जानते हैं। इसलिए इनके रहने और कहने का अन्दाज़ अजब और गजब है—

हद तपे अणहद तपे, जाणे हक का राज।
गुमनामी अजबो गजब, है इनका अन्दाज॥[14]

इनके इसी अन्दाज के कारण राजा-महाराजा भी इन्हें वन्दन करते हैं–

राजा राणा शहंशाह, साहू सेठ अमीर।
गुमनामी सिज्दा करें, झुक-झुक आलमगीर॥[15]

इसीलिए वे कहते हैं कि ये संत, फकीर पीरों से भी बड़े हैं–

पीर बड़ो फकीर से, कै फकीर से पीर।
गुमनामी पीरान से, ऊँचे गणू फकीर॥[16]

संतों की वाणी में उपरोक्त सभी विशेषताएँ पाई जाती हैं। सहज बोली-भाषा में सत्संगत करते हुए इन संतों ने मुक्त कण्ठ से अपनी साखियाँ, पद, छप्पय, अभंग कहे हैं- जो हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि हैं। इस धरोहर को सहेजना एवं संरक्षित करते हुए लोकवाणियों को पुनः लोक तक पहुँचाने का काम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

सन् 1969 ईस्वी से मैंने संत पीपाजी पर शोध करना प्रारम्भ किया, तब तक मेरे पास संत पीपाजी का केवल एक पद था। वह भी वही पद, जो गुरूग्रन्थ साहब में संग्रहीत है।

जो ब्रह्मंडे सोई पिंडे, जो खोजे सो पावे।
पीपा प्रणवै परम तत ने, सतगुरु मिले लखावे॥ [17]

इस पद के अतिरिक्त कहीं कोई पद या साखी नहीं मिल रही थी। शोध की समस्त औपचारिकताएँ पूरी हो चुकी थीं। पीछे लौटने का कोई कारण नहीं था। मन में दोलायमान स्थिति बनी हुई थी।

चित्त की उसी भटकाव वाली स्थिति में मैंने एक विकल्प ढूँढा- संत सैन भगत! सोचा अपनी शोध-यात्राओं में संत पीपाजी की वाणी के साथ-साथ संत सैनजी की वाणी भी यदि मिलती रहे, तो उसे भी संग्रहीत करता रहूँ। संयोग यह कि संत सैन का भी तब तक केवल एक पद ही ज्ञात था। जो गुरुग्रन्थ साहब में संग्रहीत है।

मंगल हरि मंगल। नित मंगलु राजा कौं॥ टेक॥[18]

यही पद दादूधाम नारायण के ग्रन्थांक-497, पृ.-556-7 पर भी अंकित है।

मैंने एक डायरी सैन भगत की वाणी संग्रह करने के लिए पृथक् से अपने साथ रख ली। संत पीपा का कोई पद मिलता तो पृथक् डायरी में संग्रहीत कर लेता। सैन भगत का पद-दोहा पृथक् डायरी में। बूँद-बूँद से घट भरने वाली कहावत मुझे तब समझ में आई, जब मेरे पास दोनों संत कवियों की पर्याप्त वाणी संग्रहीत हो गई। यह सच है कि मेरा सर्वाधिक ध्यान संत पीपा जी की वाणी संग्रह करने में रहता था। मैं जब भी कोई हस्तलिखित पाण्डुलिपि पढ़ता, तब मेरी आँखें संत पीपा शब्दों पर केन्द्रित रहती थी। इस कारण हस्तलिखित पाण्डुलिपियों में मैं सैन जी को नहीं ढूँढ पाया। आज मुझे अपनी उस भूल पर पछतावा है। फिर भी जितना मिला, वह सैन जी को जानने-समझने के लिए बहुत अधिक है। डॉ. शिवमंगल सिंह का एक सूत्र मेरे पास था-

'यदि किसी संत ने एक पद भी लिखा है, तो उसकी सृजनशक्ति का वह प्रमाण है। ढूँढने से और पद भी अवश्य मिलेंगे।' इसी सूत्र ने मेरा साहस बनाये रखा।

मैंने राजस्थान में बीकानेर, जोधपुर, चौपासनी, जयपुर, नागौर आदि नगरों में उपलब्ध शोध-संस्थानों, संतों, मठाधीशों, लोक गायकों और सामान्य जनों से अपना शोधकार्य पूर्ण करने में सहयोग लिया।

मेरा शोध का जुनून ऐसा था कि सन् 1970 में जब मैं उज्जैन में बी.एड. का प्रशिक्षण ले रहा था, तब छात्रावास में साथी मुझे 'पीपा' नाम से सम्बोधित करने लगे थे। उज्जैन में ही लालबाई-फूलबाई मार्ग पर एक आश्रम था। स्वामी भोलानन्दजी उस आश्रम के मठाधीश थे। उनके सान्निध्य में मैंने संत पीपाजी एवं संत सैन जी पर बहुत काम किया। उन्हीं के पास सुरक्षित पाण्डुलिपि 'पीपा इन वन्दन करौं' मैंने बाद में प्राप्त की, जिसका रोचक वर्णन मैंने अपने ग्रन्थ 'संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन' में किया है।[19]

इसी वर्ष मैंने उज्जैन में पीपा जयंती का आयोजन किया। यह आयोजन तब से पहले सबसे बड़ा आयोजन था। पूरे राजस्थान और मध्यप्रदेश से बड़ी संख्या में पीपावंशी क्षत्रिय समाज एकत्र हुआ। उस आयोजन का लाभ मुझे दोनों संतों की वाणी संग्रह में भी पर्याप्त हुआ।

सन् 1969 से लगाकर आज तक मेरे संग्रह में संत सैन भगत की जो वाणी संग्रहीत है, उसका विवरण है। जितनी वाणी लोक कण्ठों से प्राप्त हुई, उसका पाठ मैंने पृथक् से सम्पादित किया है तथा जो वाणी अलग स्रोतों से प्राप्त हुई है, उसे मैंने उसी रूप में संकलित एवं सम्पादित किया है। उनके प्राप्ति सौजन्य का उल्लेख भी मैंने यथास्थान कर दिया है। संत पीपाजी की भाँति एवं सैन जी की वाणी भी अधिक प्रचलित नहीं रहने के कारण यथास्थिति में ही उपलब्ध हुई है। उसमें प्रक्षिप्तिकरण लगभग नहीं हुआ, ऐसा मैं मानता हूँ। संत पीपाजी एवं सैन जी संवत् 1472 से 1477 तक एक साथ रहे।[20] इस कारण उनके विचारों में एक सहज समानता दिख जाती है। सैन जी संवत् 1472 से 1480 विक्रमी तक निरन्तर मालवा में रहे। इस कारण उनकी वाणी में इस अंचल की बोली-भाषा का प्रभाव स्पष्ट है।[21]

इसी प्रकार संत सैन की जितनी वाणी मुझे उपलब्ध हुई है, वह वाचिक परम्परा से ही प्राप्त हुई है। कुछ संकलन ऐसे हैं, जिन्हें मैंने इस संग्रह में संकलित किया है। उनका सौजन्य एवं महत्त्व भी मैंने उल्लिखित कर दिया है।

मेरा उद्देश्य किसी युग-विशेष के काव्य अथवा भाषा-जन्य प्रभावों का प्रस्तुतीकरण कदापि नहीं है। मैं तो भक्तिकाल या कहूँ मध्यकाल के संत-कवियों की वाणी एवं उसमें निहित संदेश को लोक तक पहुँचाना चाहता हूँ।

वाचिक परम्परा से उपलब्ध साहित्य को प्रमाणिकता की कसौटी पर कसना अथवा उसमें प्रक्षिप्तिकरण का आरोप लगाना, केवल विद्वता का डकार लेना मात्र है। जो लोक कण्ठ पर रहेगा, उसमें जोड़-घटाव तो अवश्य होगा। बोली-भाषा भी बदलेगी। सारे बदलाव सम्भावित हो सकते हैं, किन्तु केन्द्रीय भाव में बदलाव नहीं होता। कहन बदल सकती है, रहन नहीं। उसकी रहन अर्थात् उसका भाव-विचार और सहभाव जीवित बना रहता है। मीरा के पद गुजरात में सुने तो गुजराती में तथा राजस्थान में सुने तो राजस्थानी में, मालवा में सुने तो मालवी में। भाषा-बोली बदलने के बावजूद भी मीरा की कहन सुरक्षित बनी रही। ऐसा ही संतों की वाणी में भी हुआ।

मूल पदावली और उसका अर्थ

संत सैन की वाणी, दशौरी मालवी में इसलिए सर्वाधिक उपलब्ध है कि उनका लगभग आठ वर्ष का समय संवत् 1472 से 1480 हाड़ौती (गागरौन, झालावाड़) तथा दशपुर अंचल एवं फिर नर्मदा अंचल में बीता। वे महाराष्ट्र में रहे। उनके अभंग मराठी में उपलब्ध हैं। पंजाबी में भी उपलब्ध हैं। राजस्थानी में भी। इस ग्रन्थ में उनकी संकलित वाणी का विवरण इस प्रकार है-

संत सैन की लोक वाणी (साखी-283)

इस कृति का संकलन मैंने 1969 ईस्वी से अद्यतन लोक कण्ठों से किया है। मैं संत पीपाजी पर 1969 से शोधरत था। इसी बीच जहाँ से भी जिस भी माध्यम से मुझे संत सैन भगत की वाणी उपलब्ध हुई, मैंने उसका भी संकलन किया। तब यह लक्ष्य नहीं था कि मैं कभी इस विषय पर पुस्तक लिखूँगा। मेरी ही तरह इस विषय पर और विद्वान भी प्रयासरत थे। यह बात बहुत बाद में ज्ञात हुई। श्री बाबूलाल सैन, डॉ. प्रह्लादचन्द्र जोशी, श्री माँगीलाल सैन 'सुमन' जैसे और भी विद्वान हो सकते हैं, जिन्होंने संत सैन भगत पर कुछ लिखने का विचार किया हो। हो सकता है अभी भी कुछ विद्वानों के मन में उन पर कुछ लिखने का संकल्प जीवित हो।

यह संकलन मेरे 44 वर्षों के सतत् प्रयत्न एवं लगन का प्रतिफल है। इस संकलन में 283 साखियाँ एवं 52 प्रसंग हैं। प्रसंगों का निर्धारण मैंने किया है।

यह संकलन संत सैन भगत के समग्र दर्शन का प्रतिनिधि संकलन है। यह संकलन सैन भगत के मालवा-प्रेम को भी प्रमाणित करता है तथा उन्हें सामाजिक सुधारकों में महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करने में सक्षम सिद्ध होता है। इसी प्रकार यह संकलन उनके आध्यात्मिक दर्शन एवं साधना पद्धति पर भी प्रकाश डालता है।

मध्यकाल में व्याप्त सामाजिक एवं धार्मिक पाखण्ड, छुआछूत, वर्गगत एवं धार्मिक भेदभाव, बलि, अस्पृश्यता, सगुण-निर्गुण, भेद-भ्रम, तंत्र-मंत्र, पर्यावरण, जल, गाय, स्त्री,

कन्या आदि विषयों पर सैन भगत ने अत्यन्त स्पष्ट रूप से अपनी वाणी मुखरित की है। अन्य कबीर, पीपा, रैदास आदि संतों की भाँति सैन भगत की वाणी केवल उपदेश मात्र नहीं है, अपितु सामाजिक एवं धार्मिक पुनरुत्थान के बीजमंत्र है। इनमें जीवन की सरलता एवं निर्मलता है। आत्मविश्वास और आशावाद है।

रामानन्द की शिष्य परम्परा में कबीर के बाद संत पीपा एवं संत सैन ने जितना मुखर होकर अपना संदेश दिया है, वह जन-जन में जागृति का प्रेरक बना। यह 283 साखियों और 52 प्रसंगों का संग्रह संत सैन भगत का प्रतिनिधि संकलन है।

सैन भगत साँची कहूँ (चेतावणी : कुल साखियाँ-130)

इस कृति में 130 साखियाँ हैं। इन साखियों को प्रसंगों में नहीं बाँटा गया। वस्तुत: यह सैन जी की 'चेतावणी' की परम्परा में लिखी गई है।

इसकी उपलब्धि मुझे 13 जनवरी, 1969 में एक छोटे से गाँव रीछालाल मुँहा (तहसील-मन्दसौर, जिला-मन्दसौर, म.प्र.) में श्री नानूराम सैन (केलवा) से हुई। तब मैं वहाँ अध्यापक था। नानूरामजी बेसन से बनी नामकीन सेंव बनाने में दक्ष थे। जिस दिन वे सेंव बनाते थे, उस दिन पूरे गाँव में उसकी सुगन्ध व्याप्त हो जाती थी। वे पहले पाये में से सबसे पहले मेरे घर सेव भेजते थे। उस दिन सेंव में जो कागज था, उसे पढ़कर मुझे पता चला कि इसमें सैन भगत की साखियाँ लिखी हैं। मैं उन दिनों संत पीपाजी पर शोध कर रहा था। संत सैन पीपाजी के गुरुभाई थे। वह कागज लेकर मैं नानूरामजी के पास पहुँचा। उनसे पूछा, यह कागज कहाँ से फाड़ा? तब उन्होंने एक पुरानी कापी मुझे दिखा दी। मैंने कापी को उल्टा-पुलटा पढ़ा, तब लगा उसमें तो सैन भगत की बहुत सारी साखियाँ लिखी हैं। मेरे वहाँ पहुँचने तक चार-पाँच पन्ने फट चुके थे। उनके पुत्र अम्बालाल को दौड़ा कर वे पन्ने संग्रहीत किये।

पाण्डुलिपि की लिखावट पुराने ढंग की थी। एक लम्बी लकीर शिरोरेखा में एक साथ लिखी हुई। नन्दलालजी भुवाई नायक व श्री आशारामजी भुवाई नायक, जो शर्मा लिखते थे- के सहयोग से मैंने उस पुरानी जर्जर पाण्डुलिपि से साखियों को सुवाच्य लिखा।

श्री नानूराम एक समाजसेवी और सत्संगी व्यक्ति थे। उनके पास यह पाण्डुलिपि कई वर्षों से पुराने कागज-पत्रों में बँधी थी। कागजों के अभाव में वे उसे बस्ते में से कागजों को फाड़-फाड़कर सेंव बेचने में उपयोग करते रहे। इस प्रक्रिया में कितना महत्त्वपूर्ण खो गया, कहा नहीं जा सकता। ऐसा ही प्राचीन साहित्य जाने-अजाने बस्तों में पड़ा-पड़ा नष्ट हो रहा है अथवा कचरे में फेंका जा रहा है। 'सैन भगत साँची कहूँ' संत सैन भगत की एक महत्त्वपूर्ण कृति है। इसमें संग्रहीत 130 साखियाँ अनेक चेतावनियाँ देकर चेतमान करती है।

सैन कहे (साखियाँ-156)

इस संग्रह की उपलब्धि मुझे भानपुरा के श्री माँगीलाल सैन 'सुमन' से हुई। इसमें 52 प्रसंग एवं 156 साखियाँ हैं। इस संग्रह की साखी क्र.-154, 155, 156 से ज्ञात होता है कि यह संग्रह सैन भगत के गागरोन में रहते हुए सत्संगत में जो वाणी उन्होंने कही, उसे सगोतरी ने संत्संगत में बैठकर प्रतिदिन एकत्र किया और फिर एक पाण्डुलिपि तैयार की। वे साखी क्र.-154 में कहते हैं-

सीता तरगी पीपो तर्‌यो, धन्नो तरयो मूर।
सैन कहे जरजर हुओ, तारो सुगत हजूर॥

पीपाजी का महाप्रयाण गागरोन में संवत् विक्रम 1477 में हुआ। तब सैनजी वहाँ उपस्थित थे। वे सीताजी के महाप्रयाण के समय भी टोडा रायसेन में उपस्थित थे।

वे एक साखी में कहते हैं-

जो कह्यो सो सूणियो, सत्संगियाँ के बीच।
सैन कहे सत्संग कर्‌यो, तन की आँखाँ मीच॥

तथा-

गागरोन का मुलक में, कथ्या खूब वखाण।
जिण सुण्या तिन लीखिया, सेना राखूँ ध्यान॥
(सेना रखजो ध्यान, साखी क्र.-112)

वे अन्तिम साखी क्र.-156 में कहते हैं—

सुण-सुण लिखी सगोतरी, नित सत्संग में बैठ।
सैन कहे दूपट लिखी, रामगुमानी सेठ॥

इस आत्मकथ्य से इतना तो अनुमान लगाया जा सकता है कि यह संग्रह प्रतिदिन के सत्संग में आने वाले 'सगोतरी' ने संग्रहीत किया। यह सगोतरी उनका गोत्रज था अथवा उसका नाम था। जो भी हो, उसने इस संग्रह को किसी 'गुमानी' नामक सेठ को दिखाया। उस सेठ ने दुबारा (सम्भवतः सुवाच्य) लिखा। यदि स्वयं सैन इस संग्रह की चर्चा अपनी साखी में करते हैं, तब उस संग्रह को उन्होंने देखा भी होगा। यदि यह सत्य है, तब मूल पाण्डुलिपि विक्रम संवत् 1477 में तैयार की गई होगी। सैन जी 1477 विक्रम तक गागरोन में उपस्थित थे। बाद में अलग-अलग लोगों ने उसे नकल रूप में लिखा होगा और उसी क्रम में यह श्री माँगीलाल जी

सैन 'सुमन' भानपुरा को प्राप्त हुई होगी। उन्होंने वह पुरानी अस्त-व्यस्त पाण्डुलिपि जून 1973 में मुझे सौंपी। पाण्डुलिपि पुराने किसी गृहकार्य के पन्नों पर लिखी गई थी। मैंने भानुपरा में ही उसकी नकल श्री माँगीलाल सैन 'सुमन' और श्री कँवरलाल खद्यौत के सहयोग से उतारी।

श्री माँगीलाल सैन 'सुमन' कवि तो थे ही, पुराने लोकगीतों व संत वाणियों के संग्राहक भी थे। उनसे प्राप्त 156 साखियों का संग्रह सैन भगत की वाणी में महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है।

सैना रखजो ध्यान (साखियाँ-113)

यह कृति मुझे श्री बाबूलाल सैन, महेश्वर से प्राप्त हुई। श्री बाबूलाल सैन लोक साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान थे। निमाड़ी लोक साहित्य और संत साहित्य के अध्येता थे।

मैं उन दिनों में टण्ट्या भील पर शोधकार्य कर रहा था। मैंने सबसे पहले टण्ट्या भील पर लोक साहित्य का संकलन किया, फिर उसे आधार बनाकर टण्ट्या का जीवन संघर्ष लिखा। इसी सन्दर्भ में टण्ट्या सम्बन्धी तीन गाथाएँ- 'तात्यो कर ग्यो छे रापारोल तथा पोमली बोल रईऽज छे ललकार एवं बोलो काई करनो छे मरदां' निमाड़ी बोली में थी। मैंने इन्हें सुनकर लिखा था। इनकी भाषा-बोली की त्रुटियाँ ठीक करवाने मैं वर्ष 1999 में श्री बाबूलाल सैन के पास महेश्वर गया। बाबूलालजी ने रातभर उन्हें देखा और कहीं-कहीं भाषागत सुधार भी किये। वे मेरे शोधकार्य से प्रभावित हुए और बोले- मेरे पास सैन भगत की साखियों का एक संग्रह तथा कुछ पद हैं। मैं उन पर पुस्तक लिखना चाहता था। अब काम नहीं होता। मेरे पास सामग्री इतनी नहीं है कि उसे आधार बनाकर पुस्तक लिखी जा सके। यह सामग्री आप ले लो और मेरे काम को आगे बढ़ाओ। एक औढरदानी की तरह उन्होंने वह सारी सामग्री मुझे प्रदान कर दी।

'सैना रखजो ध्यान' कृति में 113 साखियाँ हैं तथा 25 प्रसंग हैं। श्री बाबूलाल सैन ने इन साखियों का उपयोग कभी भी कहीं भी नहीं किया। हाँ! उनके कुछ पद आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'लोक में भक्ति' में बाद में छपे। सम्भवत: उन्हें वे पद पहले कभी भेज रखे होंगे।

उनके पास कुछ पद 'सयन' की छाप के थे, जिन्हें वे कभी सैन भगत और कभी सम्मनजी मानते थे। छाप में 'सयन' स्पष्ट लिखा था। बाद में वे ही पद लोक की भक्ति में छपे। वस्तुत: वे 'सयन' अर्थात् सैन के ही पद थे। निमाड़ी में उच्चारण के कारण भी सैन को सयन कहा जाता है तथा सैन भगत का मूल नाम भी 'सयन' ही था, जो बाद में सयन से सैन, सेन तक पहुँचा। आज भी उन्हें कहीं सैन तथा कहीं सेन पुकारा जाता है। श्री बाबूलाल सैन ने इन साखियों का संग्रह निमाड़ के संत कवियों का संग्रह करते समय किया था। हस्तलिखित पाण्डुलिपि उनके संग्रह में सुरक्षित है।

संत सैन का प्रेमामृत (पूर्व पीठिका : साखियाँ–113)

यह कृति मुझे लोक साहित्य एवं संत साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान डॉ. प्रह्लादचन्द्र जोशी, सुसनेर, जिला–शाजापुर से प्राप्त हुई। श्री जोशी ने जितना संग्रहीत किया तथा जितना लिखा है, वह आश्चर्यजनक है।

वे डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय के शिष्य थे। मैं भी का ही शिष्य हूँ। हम दोनों ने पीएच.डी. का सफर साथ–साथ शुरू किया। उस दौरान कई बार मिलते रहे। एक सन्दर्भ में मैं उनसे वर्ष 1999 में उनके निवास पर मिला था। उन दिनों वे बीमार थे। उनके मस्तिष्क में कोई फोड़ा पनप रहा था, ऐसा उन्होंने बताया था।

मैं संयोगवश उधर से गुजर रहा था। उनसे मिलने और 'साता पूछने' पहुँच गया। वैसे मैं भरथरी पर कुछ लिखना चाहता था। उनके पास एक गाथा होने की सूचना मुझे थी। बहुत तलाशने पर भी वह नहीं मिली।

बातों–बातों में सैन भगत पर बात चली। मैं संत पीपा का शोधार्थी था। उसी दौरान मुझे जहाँ से भी संत सैन की वाणी मिलती रही, मैं उसे भी संग्रहीत करता रहा। यह बात उन्हें भी ज्ञात थी।

भाई जोशी ने कहा– पूरन जी! आप मेरे यहाँ से खाली हाथ मत जाओ। मेरे संग्रह में संत सैन भगत की एक कृति 'संत सैन का प्रेमामृत' है। आप इसे ले जाओ। मेरे से तो अब कुछ काम होना नहीं है। मेरे संग्रह की सारी सामग्री पड़ी–पड़ी नष्ट हो जाएगी।

इस जखीरे से मुझे ही कुछ नहीं मिलता, दूसरे लोग क्या ढूँढ पाएँगे, ऐसा कहकर उन्होंने वह कृति मुझे भेंट कर दी। इसमें 114 साखियाँ और 17 प्रसंग हैं। उन्हीं से मुझे संत सयना (सैना) की परचई भी प्राप्त हुई। उस परचई में 200 चौपाइयाँ एवं 51 दोहे हैं। उस परचई का संकलन भी इसी ग्रन्थ में किया गया है। यह परचई संत सैन भगत के जीवन परिचय पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डालती है।

संत सैन की पदावली

संत सैन भगत की वाणी–साखियों और पदों में उपलब्ध है। मेरे संग्रह में उनके 36 पद संकलित हैं। इनकी उपलब्धि मुझे अनेक सूत्रों से हुई है। जहाँ सम्भव हो सका, प्राप्ति का सौजन्य पाद टीप द्वारा उल्लेखित किया गया है। इस लम्बे अन्तराल में यह स्मरण रख पाना सम्भव नहीं रहा कि मैं इन पदों की प्राप्ति को अंकित कर सकूँ।

ये पद संत सैन भगत के समाज सापेक्ष एवं अध्यात्म सापेक्ष दर्शन को भलीभाँति स्पष्ट

करते हैं। कुछ पदों में तो उनके जीवन के संकेत भी ज्ञात हो जाते हैं। यथा पद क्र.-2, 4, 14, 15, 18, 34, 35। इन पदों में संत सैन भगत के जीवन की महत्त्वपूर्ण स्थितियों का बोध हो जाता है।

संत सैन भगत की यह पदावली उनकी काव्य-रचना का प्रमाण तो देती ही है, साथ ही उनके साधना-पथ का भी परिचय करवाती है। यदि और भी प्रयत्न किया जाता, तब बहुत सम्भव है और भी पद खोजे जा सकते थे, किन्तु संत सैन ने स्वयं कहा है- 'सैना ऊपर पाकगी, जरजर वियो सरीर।' मेरी भी यही स्थिति है। उमर पक गई है और शरीर भी जर्जर हो चला है। सोचता हूँ- श्री माँगीलाल सैन 'सुमन', श्री नानूराम सैन, श्री प्रह्लादचन्द्र जोशी तथा श्री बाबूलाल सैन की तरह मुझे भी यह थाती किसी अन्य को न सौंपना पड़ जाये। अत: अब विलम्ब उचित नहीं, ऐसा जानकर जितना भी उपलब्ध हो गया, उसे ही पर्याप्त मानकर अपना काम पूर्ण करना ही उचित है। जितने पद-साखियाँ मिलीं, वे मेरे 44 वर्ष के जीवन-श्रम का प्रतिफल हैं तथा संत सैन के जीवन पर प्रकाश डालने के लिए पर्याप्त हैं।

निमाड़ अंचल में संत सैन भगत की वाणी काया गीतों (मृत्युगीतों) के रूप में उपलब्ध है। इन गीतों-पदों का संग्रह श्री रमेशचन्द्र तोमर 'निमाड़ी' द्वारा किया गया है। इन गीतों से यह तो प्रमाणित हो जाता है कि निमाड़ अंचल में संत सैन भगत की वाणी लोक कण्ठों पर अथवा पोथियों में उपलब्ध है, जिसे खोजना अभी भी शेष है।

मराठी अभंग

संत सैन भगत अपने प्रारम्भ काल में दक्षिण भारत में रहे। सद्‌गुरू रामानन्दजी का यही आदेश था। उनकी वाणी में तथा परचइयों के अलावा कल्याण के संत अंक एवं संत वाणी अंक में भी इस बात का उल्लेख किया गया है। (यथास्थान इसका हवाला पाद टीपों में देते हुए उद्धरण प्रस्तुत किये गये हैं)। मराठी के 110 अभंगों का हिन्दी रूपान्तरण (काव्यमय) स्व. पाण्डुरंग लोहोकरे ने किया है तथा शेष का हिन्दी गद्य रूपान्तर श्रीमती प्रेरणा ठाकरे ने किया। ये सभी 138 अभंग मुझे डॉ. शैलेन्द्रकुमार शर्मा, आचार्य-विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन से प्राप्त हुए हैं। मेरे प्रति उनका स्नेह सदा ऐसा ही रहा है।

निमाड़ी पद

संत सैन भगत के निमाड़ी पद (कायागीत-मृत्युगीत) श्री रमेशचन्द्र तोमर 'निमाड़ी' दवाना द्वारा मुझे प्राप्त हुए हैं। ये 13 पद संत सैन भगत के निमाड़ क्षेत्र में प्रभावशाली होने का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। यह अंचल महाराष्ट्र से लगा हुआ है। सम्भव है, महाराष्ट्र से लौटते समय वे निमाड़ (मालवा) अंचल में भी कुछ समय ठहरे हों और वहाँ भी खूब सत्संग किया हो। यदि

प्रयत्न किया जाये तो सिंगाजी की संत-भूमि निमाड़ में सैन भगत के और भी पद प्राप्त हो सकते हैं। श्री तोमर को ही यह काम सहज रूप से करना चाहिए। इस भेंट के लिए मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। यह भेंट उन्होंने मेरे माँगने पर नहीं, अपितु सहज रूप से मेरे शोध की जानकारी होने पर स्वैच्छिक प्रेषित की है।

सन्दर्भ :

1. भागवत, 11/26/32, टीप-2.
2. उत्तरी भारत की संत परम्परा, भूमिका खण्ड, पृ.-4-5-6.
3. अन्नपूर्णा स्तोत्रम्, आदि शंकराचार्य द्वारा स्वरचित, श्लोक क्र.-12.
4. संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन, पृ.-76.
5. सूफी संत गुमनामी बाबा, मन्दसौर का दोहा-
   वेदपुराणा में नहीं, बोले ऐसा बोल। गुमनामी सहजा सबद, बेमिसाल अनमोल॥
   मालवा के संत भक्त, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-62, दोहा क्र.-27.
6. संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-76.
7. भक्त नाभादास कृत भक्तमाल, पृ.-282, छप्पय-691/36 (178).
8. वही, पृ.-283.
9. मालवा के संत भक्त, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-61, प्रेम चषक, दोहा क्र.-9-12.
10. वही.
11. वही, साखी क्र.-27-29 एवं कैलाश पाठक 'अनवर' के संग्रह से.
12. तैत्तिरीय-2, वल्ली.
13. तैत्तिरीय-2, वल्ली एवं मालवा के भक्त कवि, पृ.-2, भूमिका खण्ड, डॉ. पूरन सहगल.

14-16. मालवा के संत भक्त, डॉ. पूरन सहगल, गुमनामी खण्ड-9, साखी क्र.-30, 31, 32 एवं श्री कैलाश पाठक 'अनवर' का संग्रह.

17. संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-135, पद-2.
18. दादूधाम नारायणा के ग्रन्थांक-497, पृ.-556-57 एवं गुरुग्रन्थ साहब तथा संत शिरोमणि सैन जी, श्री ललित शर्मा, पृ.-72.
19. देखें, संत पीपाजी एवं भक्ति आन्दोलन, डॉ. पूरन सहगल, पृ.-283-84.
20. इसी ग्रन्थ में अन्त: साक्ष्य के आधार पर देखें, संत सैन जी और उनका जीवन परिचय, अध्याय-3-अ.
21. इसी ग्रन्थ में प्राप्त उनकी वाणी के आधार पर। देखें, संत सैन जी और उनका जीवन परिचय, अध्याय-3-अ.

संत सैन भगत की लोकवाणी

सद्गुरू

ताड़ी जा सिमरन कर्‌यो, मिट्यो न मन संताप।
सैन भगत तापो मिट्यो, गुरु चरणा परताप॥ 1॥

ध्यान लगाकर स्मरण किया तब मन का संताप मिटा। सैन भगत कहते हैं- इसी से मन को स्थिरता मिली और मन शान्त हुआ। यह सब सद्गुरू के चरण प्रताप से ही सम्भव हुआ।

चित चंचल मन मात्यो, ढले न एकै ठाँव।
सैन भगत थिरता मिला, सत्‌गुरु चरणा छाँव॥ 2॥

सैन भगत कहते हैं- मन चंचल और मदान्ध है। यह एक स्थान पर स्थिर नहीं रहता। सद्गुरू चरणों की कृपा से मन को स्थिरता मिली है।

करी चाकरी राज की, जजमानी घर दुवार।
सैना चाकर राम को, सतगुरु तारण हार॥ 3॥

सैन कहते हैं- मैंने राजा की चाकरी की घर-द्वार जाकर जजमानी की, अब सब त्याग कर राम का चाकर हूँ। सद्गुरू ही उद्धार करने वाले हैं।

धन कबिरा पीपा हुआ, हिरदै सद्गुरु नाम।
सैन भगत जा पौंच्या, साहिब चरणा धाम॥ 4॥

सैन भगत कहते हैं- कबीर, पीपा धन्य हो गए जिनके हृदय में सद्गुरू का वास है। उन्हीं की कृपा से मैं भी साहिब के चरणों में पहुँच पाया।

सैन क्युँ असमंजयो, क्युँ मन चित्त भरमाय।
बाहर भीतर राम है, सद्‌गुरु दियो बताय॥ 5॥

सैन कहते हैं- असमंजस में क्यों हो तथा मन चित्त में भ्रम क्यों है? बाहर और भीतर एक ही राम है, ऐसा सद्‌गुरू ने बता दिया है। भ्रम मिट गया है।

रामानंद पूरा गुरु, दियो परख को बोध।
सैन भगत हिरदै हुओ, साहिब को परबोध॥ 6॥

रामानन्दजी पूरे गुरू हैं। उन्हीं ने मुझे पारख ज्ञान का बोध करवाया है। सैन भगत कहते हैं- उन्हीं की कृपा से मुझे साहिब का प्रबोध हुआ है।

अगत-जगत में भटक्यो, मिल्यो नहीं मुकाम।
सैन भगत सद्‌गुरु दियो, एक साँच को नाम॥ 7॥

सैन भगत कहते हैं- मैं पूरे जगत में भटक लिया, किन्तु कहीं भी ठौर-ठिकाना नहीं मिला। फिर सद्‌गुरू (रामानन्द) ने मुझे सत्य का नाम ज्ञान देकर शरण दी।

भेष धर्‌यो भिछा करी, करी चाकरी खूब।
सैन भगत सद्‌गुरु कृपा, उगी हृदय में दूब॥ 8॥

मैंने भेष धारण किया, भिक्षाटन किया, खूब चाकरी की, किन्तु मन में शान्ति नहीं मिली। सैन भगत कहते हैं कि सद्‌गुरू की कृपा से मेरे हृदय में दूब उगी, अर्थात् ज्ञान प्राप्त हुआ।

अब नी जाऊँ चाकरी, फैंक्या राछ अर पीछ।
सैन भगत चाकर हुओ, सतगुरु साहिब सीछ॥ 9॥

सैन भगत कहते हैं- मैंने अब तक खूब चाकरी की है। अब नहीं करूँगा। सब औजार फेंक दिए। अब तो मैं सद्‌गुरू और साहिब का चाकर (शिष्य) हूँ।

मीत कियाँ संसो रहे, कद वैइ जावे बैर।
सेना सद्‌गुरु मीत कर, सदां रेहवसी खैर॥ 10॥

सैन कहते हैं- मित्र बनाने में सदा बैर हो जाने का भय रहता है, किन्तु सद्‌गुरू को मित्र बना लो, सदा कुशल मंगल ही रहेगा।

सैना सद्‌गुरु थरपियो, सोई तीरथ धाम।
रामानंद गुरु साँचला, साँचो साहिब नाम॥ 11॥

सैन भगत कहते हैं– मैंने सद्‌गुरू बनाया है। मेरे लिए वही तीर्थ धाम है। रामानन्द गुरू सत्यपुरुष हैं। साहिब (परमात्मा) का नाम ही सत्य है।

सैना सतगुरु सूपड़ो, परख प छीटे ज्ञान।
पोचा-पोच फटक दे, खरो ठोस संजान॥ 12॥

सैन कहते हैं– सद्‌गुरू सूप के समान होता है। जो पोचा ज्ञान फटक कर बाहर फेंक देता है तथा असल खरा–ठोस ज्ञान बचा लेता है।

सैन हिरदै हाँच वे, जिव्हा रेवे नाम।
सद्‌गुरु की किरपा बणे, साहिब सहज मुकाम॥ 13॥

सैन कहते हैं– हृदय में सत्य हो, जिव्हा पर नाम हो, यदि सद्‌गुरू की कृपा भी मिल जाए, तब साहिब का मुकाम सहज ही मिल सकेगा।

जनम्यो नानी के घरे, वाज्यो सैन हजाम।
सद्‌गुरु की थापी लगी, पायो ठेठ मुकाम॥ 14॥

सैन कहते हैं– मैं नाई के घर पैदा हुआ। मेरा नाम सेन हजाम पुकारा गया। जब सद्‌गुरू का आशीर्वाद मिला, तब मुझे सही मुकाम मिल पाया।

सैना सैन सैन्या, सुणतां पाक्या कान।
सैन वई सद्‌गुरु कृपा, होयो सत को भान॥ 15॥

सैन, सैना और सैन्या नाम सुनते–सुनते कान पक गए थे। कोई सम्मान से नहीं पुकारता था। सैन कहते हैं– जब सद्‌गुरू की कृपा हुई, तब मुझे सत्य का आभास हो गया।

सपना में साईं मिल्या, साँचा रामानन्द।
सैन उजालो वई गयो, दरस्या परमानंद॥ 16॥

सैन कहते हैं– मुझे स्वप्न में सच्चे गुरू रामानन्द के दर्शन हुए। मन से अज्ञान का अँधकार मिट गया और ज्ञान का उजाला फैल गया।

सपना ने साँचो कर्‌यो, सद्‌गुरु कृपा निधान।
सैन भगति भगवंत की, हिरदै उग्यो भान॥ 17॥

सद्‌गुरू ने सपने में दर्शन देकर उसे सत्य भी कर दिया। मुझ पर कृपा करके कृपा निधान ने भगवंत की भक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। मेरे हृदय में ज्ञान का सूर्योदय हो गया।

सैना सतगुरु के हुकुम, आयो दक्खन देस।
ना ठाकर की चाकरी, ना कोई कलह करेस॥ 18॥

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू का हुकुम पाकर दक्षिण देश में आया हूँ। यहाँ न तो ठाकुर की चाकरी करना पड़ती है और न कोई कलह कलेश है।

सैना सरग न चाहिए, न मुगती को धाम।
सद्‌गुरु की किरपा भली, भलो राम को नाम॥ 19॥

सैन कहते हैं- मुझे स्वर्ग और मुक्ति की इच्छा नहीं है। मुझे तो सद्‌गुरू की कृपा और राम का नाम ही चाहिए।

ज्ञान मिल्यो सद्‌गुरु कृपा, दी कबीर न बाट।
सैना पीपे संग दियो, नेहो धन्ने जाट॥ 20॥

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू ने ज्ञान दिया। कबीर ने मार्ग प्रशस्त किया और पीपा ने संगत दी तथा धन्ना ने स्नेह दिया।

जोई राम धरती रमे, सोई रमे अगास।
सैन भगत हिरदै रमे, सद्‌गुरु के परगास॥ 21॥

सैन कहते हैं जो राम धरती पर विद्यमान हैं। वही आकाश में भी विद्यमान हैं। वही राम हृदय में भी विद्यमान है। यह सद्‌गुरू की कृपा से है।

नाम नाव में बैठयाँ, वे भवसागर पार।
सैना मेहर राम की, सद्‌गुरु खेवनहार॥ 22॥

सैन कहते हैं- नाम रूपी नाव में बैठने पर भवसागर से पार उतरना सम्भव है। यदि राम की कृपा हो और सद्‌गुरू खेवनहार हों तो कोई बाधा नहीं होगी।

सतगुरु पाको खेवटो, पार उतारा हार।
सैना निरभै कर कियो, भवसागर उस पार॥ 23॥

सतगुरू पक्के, प्रवीण, अनुभवी नाविक हैं। वे ही भवसागर पार उतार सकते हैं। उन्होंने ने मुझे निर्भय कर भवसागर पार उतारा है।

सोऽहम जाप अजाप है, जप ले साँस उसांस।
सैना सतगुरु शरण ले, भीतर कर ले वास॥ 24॥

सैन कहते हैं– 'सोहम' अजपा जाप है। उसे सांस–उसांस जप ले। सद्गुरू की कृपा प्राप्त कर सोऽहम् जाप को भीतर घट में रमा ले।

चौरासी का जाल में, फस्यो बापड़ो जीव।
सैना सतगुरु की कृपा, दरसन होया पीव॥ 25॥

सैन कहते हैं– यह बेचारा जीव चौरासी के फेर में फँसा हुआ है। सद्गुरु की कृपा से पीव (परमात्मा) के दर्शन हो गए। फेर मिट गया।

सैना के जन तिर गया, जिनकी मिटगी चाह।
सद्गुरु की किरपा हुई, मन में मोह न डाह॥ 26॥

सैन कहते हैं– वे लोग तिर गए जिनकी चाह मिट गई। उन पर सद्गुरू की कृपा हुई, मन से मोह और ईर्ष्या समाप्त हो गई।

मान पान चाहूँ नहीं, नहिं इनाम इकराम।
सैना सद्गुरु शरण वै, भजूँ राम को नाम॥ 27॥

सैन कहते हैं– मुझे न किसी इनाम की चाह है न पद की। मैं चाहता हूँ, सदा सद्गुरू की शरण रहूँ और राम का नाम स्मरण करूँ।

सैना सद्गुरु का चरण, घर भीतर पड़ जाए।
वास्तुदोस अवसैं मिटे, दुख दरिद्र नसाय॥ 28॥

सैन कहते हैं– यदि सद्गुरू के चरण घर में पड़ जायें, तब घर का वास्तुदोष तो मिट ही जायेगा। दुख और दरिद्र भी समाप्त हो जायेगा।

गुरु के पास अगाध हे, पावे अपनी लाग।
सैना सेवा फल मिले, अपणे–अपणे भाग॥ 29॥

सैन कहते हैं– गुरू के पास तो अगाध ज्ञान है। शिष्य अपनी लग्न के मान से प्राप्त कर सकता है। गुरू की सेवा का फल अपने–अपने भाग से ही मिलता है।

सद्गुरु की पद पादका, हिरदा में बस जाय।
सैना माया नागणी, कधां नहीं डस पाय॥ 30॥

सैन कहते हैं– यदि सद्गुरू की चरण पादुका हृदय में स्थापित हो जाये, तब माया रूपी नागिन कभी नहीं डस सकती।

मूंड मुँडाए नी मले, मले न जटा बढ़ाय।
सैना गुरु किरपा बिना, राम दरस नी पाय॥ 31॥

मूँड़ मुँड़ाने से और जटा बढ़ाने से परमात्मा का साक्षात्कार नहीं हो सकता, वह तो गुरू कृपा से ही सम्भव है।

गुरु किरपा हरि दरस्या, सनमुख ऊबा आय।
सैना असमंजस पड्या, गुरु चरणा चित लाय॥ 32॥

सैन कहते हैं– मैंने गुरू कृपा से हरिदर्शन किए हैं। स्वयं हरि मेरे सम्मुख आ गए। मैं तो असमंजस में पड़ गया। मैंने गुरू चरणों में चित्त लगाया है।

सद्गुरु को एको सबद, पड़े कान के माँहि।
सैना सद्गुरु को करज, जुग-जुग उतरे नाँहि॥ 33॥

सैन कहते हैं– सद्गुरू का एक शब्द भी कान में आ जाए तब भी हमारा अज्ञान नष्ट हो जाएगा। एक शब्द का कर्ज हम युगों तक नहीं उतार सकते।

साध वेस धर्यो फिरे, सबद पड़यो नहिं कान।
सैना सद्गुरु की शरण, पारख्या परचो जान॥ 34॥

सैन कहते हैं– साधू वेश धारण कर घूमते हैं, किन्तु गुरू से शब्द ज्ञान-नाम प्राप्त नहीं किया। सद्गुरू की शरण जाने पर ही हम पारख ज्ञान का परिचय जान सकते हैं।

इत उत क्युँ भमतो फिरे, निस दिन नुगराँ लार।
सैना जा सद्गुरु शरण, साहिब के दरबार॥ 35॥

सैन कहते हैं– अरे! इधर-उधर क्यों भटकता फिर रहा है। रात-दिन नुगरों के साथ रहकर जीवन क्यों व्यर्थ कर रहा है? सद्गुरू की शरण जा, फिर साहिब के दरबार भी जा पाएगा।

प्राण जाय तो जाण दे, सबद न जावण देय।
सैना सद्गुरु की कृपा, सबद रिदै धर लेय॥ 36॥

प्राण जायें तो चिन्ता नहीं करना चाहिए। 'सबद' नहीं जाने देना है। सैन कहते हैं– गुरू कृपा से प्राप्त 'सबद' को हृदय में धर लेना चाहिए।

वेद पुराण पढ़या नहीं, पढ़यो न पोथी ज्ञान।
सैना सद्गुरु के सबद, पायो सहजो भान॥ 37॥

सैन कहते हैं– मैंने न तो वेद पढ़े न पुराण, न पोथी ज्ञान प्राप्त किया। सद्गुरू की कृपा से 'सबद' ज्ञान पा कर सहजता का भान हुआ है।

सगुण निगुण का भेद ने, सद्गुरु सके बताय।
सैना सद्गुरु के सबद, धीरो वे चित लाय॥ 38॥

सगुण–निर्गुण के भेद को सद्गुरु ही बता सकते हैं। जैसा शब्द ज्ञान सद्गुरू प्रदान कर देंगे, उसे ही धैर्यपूर्वक चित्त में धारण कर लो।

एक सबद सद्गुरु दियो, तिस को आद न अंत।
सैना वेद पुरान कथे, पच-पच गए महंत॥ 39॥

सैन कहते हैं– एक शब्द जो सद्गुरू से मिला है। वह अनादि है, उसका आदि है न अन्त है। वेद, पुराण और बड़े–बड़े महन्त भी उसका भेद नहीं जान सके।

राम मंत्र सद्गुरु दियो, चरण कमल की छाप।
धन्न कबीरा वैई गयो, पड़ी पीठ पे थाप॥ 40॥

सद्गुरू ने 'राम' तारक मंत्र देकर अपने चरणों की छाप मस्तक पर लगा दी। कबीर धन्य हो गए, जिन्हें सद्गुरू ने पीठ पर थाप लगाकर धन्य किया।

टीप– ऐसी मान्यता है कि कबीर को रामानन्दजी ने गंगा घाट की सीढ़ियों पर पैर की ठोकर लगने पर 'राम' कहा। इसे ही कबीर ने दीक्षा मान लिया। जब लोगों ने रामानन्दजी से कहा कि क्या आपने कबीर को दीक्षा दी है। वह ऐसा कहता है। तब उन्होंने कबीर को बुलवाया। कबीर ने जाते ही साष्टांग दण्डवत किया। रामानन्दजी ने पीठ पर हाथ से थाप लगा कर पूछा– 'क्यों कबीर, मैंने तुझे कब दीक्षा दी?' तब कबीर ने विनम्र भाव से कहा– 'यदि पहले की आप भूल गए तो आज तो पीठ पर आशिर्वाद की थाप लगाकर सबके समक्ष दी है। इसे मत भूलिएगा।' यह साखी सम्भवत: उसी सन्दर्भ में है।

सतगुरू ऐसा मील्या, तुरत उधार्‌यो हंस।
सैना भौ सागर तर्‌यो, अंस मिल्यो परमंस॥ 41॥

सैन कहते हैं– सद्गुरू ऐसा मिला कि जीव (हंस) का उद्धार हो गया। भवसागर पार हो गया। अंश परम में मिल गया।

टीप : यह साखी सैन की रचना नहीं लगती। सम्भवत: लोक में सैन भगत के परमात्मा में विलीन होने का बखान है।

सतगुरू मिल्या भाग से, कर्‌यो रोग निदान।
सैना रोग मिटा दियो, होयो पारख ज्ञान॥ 42॥

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू ऐसा मिला कि रोग (भ्रम) का निदान कर दिया। भ्रम दूर कर ज्ञान का मार्ग सुझाया और पारख ज्ञान प्रदान किया।

गुरु गोविंद से क्युँ बड़ो, देऊँ अरथ बताय।
सैना गोविंद तद मिले, जद गुरु होय सहाय॥ 43॥

सैन कहते हैं- मैं गुरू और गोविन्द में सद्‌गुरू के बड़ा होने का अर्थ बताता हूँ। जब तक सद्‌गुरू ज्ञान नहीं दे-दे, तब तक गोविन्द नहीं मिल सकता।

सैना बड़भागी बड़ो, सद्‌गुरु सुपने दीठ।
तारक मंत्र सद्‌गुरु दियो, थाप लगा दी पीठ॥ 44॥

सैन कहते हैं- मैं बहुत बड़भागी हूँ, सपने में सद्‌गुरू के दर्शन हुए। उन्होंने तारक मंत्र देकर पीठ पर आशीर्वाद की थापी लगा दी।

सेना अन्तर घट बसें, सद्‌गुरु सचिदानंद।
जद चहूँ तद दरस लूँ, आवे परमानंद॥ 45॥

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू और सच्चिदानन्द मेरे अन्तर्घट में बसते हैं। जब चाहूँ तब अन्तर्मन में झाँककर दर्शन कर सकता हूँ।

मात-पिता गंगा अर गाय, सद्‌गुरुओं को थाण।
सैना सद्‌गुरु की शरण, ई षड़ तीरथ जाण॥ 46॥

सैन कहते हैं- माता-पिता, गंगा और सद्‌गुरुओं का कथानक तथा सद्‌गुरू की शरण, ये सभी छह तीरथ जानना चाहिए।

सैना मत कर कल्पणी, सतगुरू कृपा निधान।
भान करासी साँच को, देसी पारख ज्ञान॥ 47॥

सैन कहते हैं- मन में व्याकुल मत हो। सद्‌गुरू कृपा निधान हैं, वे सत्य का भान करवा कर पारख ज्ञान प्रदान करेंगे।

सैना गुरु चरणा गह्याँ, मन हरसावो खूब।
नदी कनारे जसतरा, हर भर रेवे दूब॥ 48॥

सैन कहते हैं- गुरू के चरण शरण जाने से मन हर्षित होता है, जिस प्रकार नदी किनारे की दूब हरी-भरी रहती है उसी प्रकार गुरू शरण से तन-मन प्रफुल्ल रहता है।

ब्रह्म

सैना जो बाहर लखूँ, भीतर घट दरसाय।
लीलाधारी की कला, कोई समझ न पाय॥ 49॥

सैन कहते हैं- जो बाहर देखता हूँ, वही भीतर भी दिखता है। (जो ब्रह्माण्डे, सो ई पिण्डे) लीलाधारी की कला कोई नहीं समझ सकता।

जो प्रभु राखणहार हे, सो ई चाखण हार।
सैना करम करे नहीं, नाम धर्‍यो करतार॥ 50॥

सैन कहते हैं- जो रक्षक है, वही भक्षक भी है। वह कर्म मुक्त होकर भी करतार कहलाता है।

ईश्वर तो कण-कण बसे, आखाँ नी दरसाय।
सैना सगुण सरूप में, झलक छवि दिख जाय॥ 51॥

सैन कहते हैं- ईश्वर तो कण-कण में व्याप्त है, किन्तु आँखों से देखा नहीं जा सकता। उसकी सगुण छवि में एक झलक के रूप में देखा जा सकता है।

बागां में नजरां दिखे, बिरछाँ में साखात।
सैना कण-कण में दिखे, भीतर घट झलकात॥ 52॥

सैन कहते हैं- वह (ब्रह्म) बागों, वृक्षों में और कण-कण में व्याप्त है, वह भीतर घट में भी दिखता है।

स्त्रजन हार सिरज करे, कण-कण रह्यो समाय।
सैन भगत अचरज बड़ो, नजरां क्युँ नी आय॥ 53॥

सृजनहार सृजन करता है। वह कण-कण में समाया हुआ है। सैन कहते हैं, कितना बड़ा आश्चर्य है कि वह नजर नहीं आता।

दस दिस दरसूँ राम ने, कण-कण रह्या समाय।
सैन भगत अन्दर रमे, सो बाहर दरसाय॥ 54॥

सैन कहते हैं- मैं अपने राम को दसों दिशाओं में देखता हूँ। वह कण-कण में समा रहा है। वह मेरे अन्दर निवास करता है। वही बाहर भी दिखता है।

जिनके ह्रदय हरि बसे, वे हरि हिरदै बीच।
सैना जद हरि दरस चहूँ, दरसूँ आखाँ मीच॥ 55॥

सैन कहते हैं- जिनके ह्रदय में हरि का वास है। हरि के ह्रदय में उनका वास है। मैं जब भी हरिदर्शन करना चाहता हूँ, आँखें बन्द कर लेता हूँ।

धरम अरथ अर काम मोरा, जीवन का सुख धाम।
सैना सुभ सगुने लग, अन्तरघट वे राम॥ 56॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये सब जीवन के लक्ष्य हैं, किन्तु ये तभी शुभ होंगे, जब मन में राम का वास हो।

देस बिदेसां भटकतां, ढूण्ढत फिरूँ गोपाल।
गोपालों नातन कर, सैना हिरदै थाल॥ 57॥

सैन कहते हैं- मैं देश-विदेश में भटक कर गोपाल को ढूँढता फिर रहा हूँ। गोपाल तो मेरे ह्रदय स्थल पर नृत्य कर रहा है।

गोपालो घट भीतरां, मूं खोजूँ जग बीच।
बाहर सो भीतर लखूँ, सैना आँखाँ मीच॥ 58॥

गोपाल तो मेरे घट में हैं और मैं बाहर जगत में ढूँढ रहा हूँ। सैन कहते हैं- जो बाहर है वही मैं आँखें बन्द करके भीतर देखता हूँ।

ना हरि मंदर में बसे, ना हरि बसे आकास।
सैना हरि घट-घट बसें, हिरदै करो उजास॥ 59॥

हरि ना तो मन्दिर में बस रहे हैं, न आकाश में, हरि तो घट-घट में बस रहे हैं। भीतर घट में ज्ञान का उजास करो।

देख्यो सो अद्‌भुतो, सबदो कह्यो न जाय।
सैना जो भीतर दिखे, सोइ बाहर दरसाय॥ 60॥

सैन कहते हैं- जो भी देखा, वह अद्‌भुत है, उसे शब्दों में नहीं कहा जा सकता। जो भीतर दिख रहा है, वही बाहर भी दिख रहा है।

जगत नियंता साहिबा, अग-जग रह्यो समाय।
जित देखूँ तित साहिबा, भेद न जाण्यो जाय॥ 61॥

जिधर भी देखता हूँ उधर ही जगत नियंता साहिब के दर्शन होते हैं। वह पूरे विश्व में व्याप्त है। उसका भेद नहीं जाना जा सकता है।

जीव

एक बूंद ती सिरजयो, जीव जगत ब्रह्माण्ड।
सैना सब माटी ता घड़े, ज्युँ कुम्हार को भांड॥ 62॥

सैन कहते हैं- वह सृजनकार एक बूँद से जीव, जगत और ब्रह्माण्ड की रचना करता है। वह मिट्टी से सृजन करता है। जिस प्रकार कुम्हार मिट्टी से सृजन करता है।

भीतर रहतों याद थो, बाहर आयाँ भूल।
सैन जगत के रूप रंग, जीव हुओ मशगूल॥ 63॥

सैन कहते हैं- जब जीव माँ की कोख में था, तब उसे परमात्मा का स्मरण था, किन्तु जगत के रूप में लिप्त होकर बाहर आने पर वह उसे भूल गया।

बूँद समंद ती ऊपजी, गई समंद समाय।
सैना तेसई जीव ब्रह्म, मिले और बिलमाय॥ 64॥

सैन कहते हैं- जिस प्रकार बूँद समुद्र से अलग हो जाती है तथा फिर समुद्र में मिल जाती है। उसी प्रकार जीव और ब्रह्म का विछोह-मिलन होता रहता है।

पाँच तत्त को पींजरो, जण में हूड़ो जीव।
सैना कलपे भीतरां, कघां मिले जा पीव॥ 65॥

सैन कहते हैं- यह पाँच तत्व का पिंजरा (देह) उसमें जीव तोते के समान रहता है। भीतर ही भीतर व्याकुल रहता है। कब अपने प्रियतम (ब्रह्म) से मिलूँगा।

पाँच तत्त्व को पूतरो, मनख धरायो नाम।
सैना गारत वैइ गयो, निकल गयो जद राम॥ 66॥

सैन कहते हैं- यह पाँच तत्त्व का पुतला है, इसका नाम मनुष्य रखा। जब राम (जीव) निकल जाता है, तब नष्ट हो जाता है।

जीव बसे तन पींजरे, पिंजरा में दस द्वार।
सैना रहे तो मौज से, जद चाहे तद बाहर॥ 67॥

सैन कहते हैं- जीव देह रूप पिंजरे में निवास कर रहा है। इस पिंजरे में दस दरवाजे हैं।

यह जब तक मर्जी होती है, तब तक इस पिंजरे में रहता है। जब मन भर जाता है, तब उड़कर बाहर चला जाता है। पिंजरा खाली कर जाता है।

अजब बणयो पींजरो, एक पंछी दस द्वार।
सैना भीत खुल रमे, साईं कह्यों तद बाहर॥ 68॥

सैन कहते हैं- परमात्मा ने अद्भुत पिंजरा बनाया है, इसमें दस द्वार हैं। उसमें एक पंछी (जीव) रहता है। खुला रमता है, जब तक साईं (परमात्मा) नहीं कह देता, तब तक बाहर नहीं निकलता। साईं के कहने पर बाहर निकलता है।

माया

माया तो ठगनी बड़ी, पलक झपयाँ ठग जाय।
सैन भगत जाग्यो रहे, तिस को नी ठग पाय॥ 69॥

सैन कहते हैं- माया तो बहुत ठगनी है। पलक झपकते ही ठग लेती है। जो जागता रहता है, उसे नहीं ठग सकती।

माया तो ठगनी घणी, ठग लिया विस्वामीत।
सैना नारद नी बच्या, कोई सक्यो नहिं जीत॥ 70॥

सैन कहते हैं- माया तो बहुत ठगनी है। उसने विश्वामित्र और नारद तक को ठग लिया। उसकी ठगी से कोई नहीं बच सकता।

ब्रह्मा विसनू सीवजी, माया के आधीन।
सैना माया के मते, तीनई के मन छीन॥ 71॥

सैन कहते हैं- ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी माया के आधीन हैं। ये तीनों माया के कहने में चलते हैं।

माया-माया क्या करो, माया जगत चलाय।
सैना माया के वसे, जीव ढबे तन माय॥ 72॥

सैन कहते हैं- माया, माया क्या करते हो? माया से ही जगत चल रहा है। माया के वश यह जीव तन में रुका हुआ है।

माया मरजादा बणे, माया राखे लाज।
सैना माया सोभती, सदा संवारे काज॥ 73॥

सैन कहते हैं– माया मर्यादा भी है। माया लाज भी बचाती है। शुभ माया सुशोभित होती है तथा सारे काम संवार सकती है।

माया मायाधीश की, सहजां समझ नी आय।
सैन भगत साँची कहूँ, सतगुरू होय सहाय॥ 74॥

मायाधीश की माया को कोई नहीं जान सकता। सैन कहते हैं– इसे तो सद्गुरू ही समझा सकते हैं।

भटक्यो माया जाल में, भूल्यो असल मुकाम।
सैना मारग तां दिसे, गुरु चरणा सुखधाम॥ 75॥

सैन कहते हैं– माया के जाल में फँसकर असल मुकाम भूल गया। सही मार्ग तभी दिखेगा। जब गुरु चरणों में शरण लेगा। वह सुखधाम है।

माया को परदो हटे, घट जाय गरब गुमान।
सैना माया के मिटे, आवे पारख ज्ञान॥ 76॥

सैन कहते हैं– माया का परदा हटते ही अहंकार मिटता है। माया के घटते ही पारख ज्ञान मिलता है।

सत्संग

भाव भगति दीखे जठे, भले मिले ना कौर।
सैना वाँ जाजो अवस, हे संतां को ठौर॥ 77॥

सैन कहते हैं– जहाँ भक्ति का वातावरण हो, वहाँ अवश्य जाना चाहिए, क्योंकि वहाँ संतों का मुकाम है। वहाँ सत्संग का लाभ होगा। भले वहाँ भूखा रहना पड़े, किन्तु वहाँ अवश्य जाना चाहिए।

साँच जुड़े संगत जुड़े, जुड़े साँचली वात।
सैन कहे सद्मत जुड़े, पारख ज्ञान निजात॥ 78॥

सैन कहते हैं– जहाँ सत्संग का आयोजन हो, जहाँ सत्य पर चर्चा हो रही हो, वहाँ अवश्य जाना चाहिए। वहाँ सद्मति जुड़ती है तथा पारख ज्ञान द्वारा निर्णय होता है।

सत्संगत के कारणे, त्यागूँ सरग मुकाम।
सैन भगत सत्संग में, चारों तीरथ धाम॥ 79॥

सैन कहते हैं- सत्संग के कारण मैं स्वर्ग का भी त्याग कर सकता हूँ। सत्संग में चारों तीर्थ धाम मौजूद रहते हैं।

संत वचन अमृत सुधा, अन्तरघट सरसाय।
सैना अमरत संचर्‍याँ, विस अमरत बण जाय॥ 80॥

सैन कहते हैं- संतों के वचन अमृत तुल्य होते हैं। वे अन्तर्घट को आनन्दित कर देते हैं। ये अमृत सत्संग से ही प्राप्त होते हैं।

पीपा सीवे कापड़ा, रटे राम को नाम।
सैना सत्संग नी तजे, तजे न सूई काम॥ 81॥

सैन कहते हैं- संत पीपा कपड़े सीते हैं और राम का नाम भी रटते रहते हैं। वे अपना सुई का काम करते हुए भी सत्संग नहीं त्यागते।

सैना सत्संग होवे जठे, मिटें सकल संताप।
भ्रम दुई सबत मिटे, मिटैं विसमता पाप॥ 82॥

सैन कहते हैं- जहाँ सत्संग होता है, वहाँ सभी संताप मिट जाते हैं। भ्रम, दूई भाव (माया-ब्रह्म) समाप्त हो जाता है तथा विषमता रूपी पाप मिट जाता है।

संत मिल्याँ सत्संग जमें, तन अर मन हरसाय।
सैना तन-मन कलुस, संत मिल्यां धुल जाय॥ 83॥

संत समागम से सत्संग जमता है। तन और मन हर्षित हो जाता है। सैन कहते हैं- संत समागम से तन और मन का कलुष धुल जाता है।

संत साध जिन सेविया, तिनके मोटे भाग।
सैना सत्संगत मिल्याँ, आवे सुरती जाग॥ 84॥

सैन कहते हैं- जिनने साधू-संगत कर ली, उनकी सेवा कर ली, उनके बड़े भाग मानना चाहिए। सत्संगत से सुरति जाग जाती है।

सैना संगत साध की, मन चित निरमल होय।
जैसे पारस परस ती, लोहो कंचन होय॥ 85॥

सैन कहते हैं- जिस प्रकार पारस के स्पर्श से लोहा कंचन हो जाता है। उसी प्रकार साधु संगत से मन-चित निर्मल हो जाता है।

नाम स्मरण

माला तो कर में फिरे, मन नहिं चाले संग।
सैना जिव्हा बापड़ी, बिरथा करे उतंग॥ 86॥

सैन कहते हैं- माला तो हाथ में घूमती है, किन्तु मनकों के साथ-साथ मन नहीं घूमता। बेचारी जिव्हा व्यर्थ चलती रहती है।

जिव्हा रटती राम ने, मन में उमढ़े काम।
सैना मन कबजे करो, फेर उचारो नाम॥ 87॥

सैन कहते हैं- मन तो मौजी है, वह तो बहाने बाज है। उसके कहने में मत आओ। उसमें काम भाव उमड़ता रहता है। पहले मन को कब्जे में कर लो, फिर स्मरण करो।

मन तो मकराइयाँ करे, मनके मते न लाग।
सैना मन कब्जे करे, बण का मोटा भाग। 88॥

सैन कहते हैं- मन तो अनेक चालें चलता है। उसके कहे मत लगो। जिसने मन को कब्जे में कर लिया, उसके भाग्य बड़े हैं।

भीख माँग भोजन करे, भजे न हरि का नाम।
सैन भगत मरयाँ पछे, भोगे नरक मुकाम॥ 89॥

सैन कहते हैं- जो गृहस्थियों से भीख माँग कर भोजन करता है और हरि नाम का स्मरण नहीं करता, उसे नर्क भोगना पड़ता है।

साधां की संगत करूँ, भूलूँ जग का काम।
सैना माया मोह मिटे, रटूँ राम को नाम॥ 90॥

सैन कहते हैं- जगत के काम भूलकर साधू संगत करता हूँ। इससे मोह, माया मिट जाती है। राम नाम का स्मरण कर सकता हूँ।

सैना जगत सुधारतां, भूल गयो हरि नाम।
राम नाम मन-चित धरो, सुधरें सगरे काम॥ 91॥

सैन कहते हैं- जगत सुधारने में मैं हरिनाम स्मरण भूल गया। राम नाम मन-चित्त में धारण करने से सारे काम सँवर जाते हैं।

मेरा-मेरा क्या करे, तन भी तेरा नाहिं।
सैन सिमर ले नाम ने, हे जतरे जग माहिं॥ 92॥

मेरा-मेरा क्या कहता है, यह तन भी तेरा नहीं है। सैन कहते हैं- जब तक तू संसार में है, नाम स्मरण कर ले।

ऊमर अब पाकण लगी, करण चहे विसराम।
सैना पी ले राम रस, जतरे अठे मुकाम॥ 93॥

सैन कहते हैं- उम्र पकने लगी है। अब विश्राम (संसार से मुक्ति) चाहती है, इसलिए जब तक यहाँ मुकाम है, राम नाम का स्मरण कर ले।

भोजन करे गिरहस्त को, रटे राम को नाम।
सैना सद्मतयो रहे, यो संतां को काम॥ 94॥

सैन कहते हैं- जो गृहस्थ का भोजन करे और राम नाम का स्मरण करे तथा सद्मत रहे। यही संत जनों का कर्तव्य है।

ऊँदे माथे लटक्यो, गरभ कोठरी माँय।
सैना भूल्यो हरिकृपा, नाम रिमरतो नाँय॥ 95॥

सैन कहते हैं- जिसने भी राम रसायन पी लिया (नाम स्मरण कर लिया), उसकी मन की तृष्णाएँ मिट जाती हैं। इच्छाएँ पूर्ण हो जाती है। मन शीतल हो जाता है।

अणत-गणत का साँस हे, होसी अवस तमाम।
सैना जतरे साँस हे, वतरे रट ले राम॥ 97॥

सैन कहते हैं- गिनती की साँसें मिली हैं। एक दिन समाप्त हो जाएँगी। जब तक साँस है, तब तक राम का स्मरण कर ले।

राम नाम जपन करूँ, माला साँस उसाँस।
सैना छौर सुकरम हे, पूरबजाँ को खास॥ 98॥

सैन कहते हैं- मैं राम नाम का साँसों की माला से स्मरण करता हूँ। अपने पूर्वजों के सुकर्म (क्षीर) को भी करता रहता हूँ।

पपिहा पिव-पिव न रटे, सिमरे साँस उसांस।
सैना जतरे नी मले, तजे न पिव की आस॥ 99॥

पपिहा पीव नाम का स्मरण सांस-उसांस करता रहता है। सैन कहते हैं- जब तक उसे अपना प्रिय नहीं मिल जाता, आशा नहीं छोड़ता है।

सैना चाकर राम को, रटूँ राम का नाम।
शाह ठाकर के क्युँ रहूँ, ड्योढ़ीवान गुलाम॥ 100॥

सैन कहते हैं- मैं राम का चाकर हूँ। उन्हीं का नाम स्मरण करता हूँ। वही मेरे स्वामी हैं। मैं किसी शाह या ठाकुर का ड्योढ़ीवान-गुलाम (चाकर) क्यों रहूँ।

राम नाम पत्थर तिर्‌या, तिरि गया अधम तमाम।
सैना वी नी तिरि सक्या, जिन रसना नहिं राम॥ 101॥

राम नाम के प्रताप से पत्थर भी तिर गए। कई अधम तिर गए। सैन कहते हैं- वे नहीं तिर सकते, जिनके हृदय तथा जिह्वा पर राम नहीं है।

वाल्मीक सिमरन कियो, मन चित ध्यान लगाय।
सैना उल्टो सुलट्‌यो, एसो हुओ उपाय॥ 102॥

सैन कहते हैं- वाल्मीकि ने मन-चित से ध्यान लगाकर स्मरण किया। वे कहते हैं उल्टा जाप सुल्टा हो गया। ऐसा चमत्कार हुआ।

पारख

सैना मन तां खोलिए, वे पारख को भान।
खोट-खोट न्यारो करे, करे खरो संजान॥ 103॥

सैना मन तब खोलो, जब पारख का भान हो जाय। पारख ज्ञान खोट-खोट अलग कर देता है और खरा-खरा प्राप्त कर लेता है।

सैना करनी सुभ करो, करो न ज्ञान बखाण।
हीरो तो हीरो रहे, पारख करे पिछाण॥ 104॥

सैन कहते हैं- सदा शुभ काम करना चाहिए। अपने ज्ञान का व्यर्थ बखान मत करो। हीरा तो हीरा ही रहता है, किन्तु उसकी पहचान पारखी ही कर सकता है।

देखे भोगे जाण ले, साध करे निरधार।
सैना पारख ज्ञान बिन, नी होवे निरधार॥ 105॥

देखें, उपयोग करें और तब जाने, यह काम साधू को सोचकर करना चाहिए। बिना पारख ज्ञान के निर्णय सम्भव नहीं है।

नाद

नाद बजे माया हटे, हरसे दीन दयाल।
सैना ज्युँ मंदर बजे, घंटी अर घड़ियाल॥ 106॥

नाद के बजते ही माया का परदा हट जाता है। मंदिर (घट भीतर) विराजित दीनदयाल हर्षित हो जाते हैं। सैन कहते हैं- जैसे ही मंदिर का (घट भीतर) घंटा (नाद स्वर) गूँज उठता है। आनन्दानुभूति हो जाती है।

सैना सबद निनाद में, सगुण-निगुण को राग।
बाहर भीतर झिलमिलो, जाग सके तो जाग॥ 107॥

सैन कहते हैं- शब्द के निनाद में सगुण-निर्गुण का राग बजने लगता है। बाहर भीतर झिल-मिलाहट हो उठती है। ऐसी स्थिति में तू जाग सके तो जाग जा।

भीतर बाजे बाँसरी, उमगे अणहद नाद।
सैन भगत अणहद झरे, आनंद भर्‌यो सुवाद॥ 108॥

सैन कहते हैं- घट भीतर एक मधुर बाँसुरी बज उठती है। अनहद नाद उमंगित हो गया है। अनहद से अमृत झर रहा है। उसका स्वाद आनन्दित करने वाला है।

सुरती लागी राम में, भीतर उठा निनाद।
सैना मुरली बज उठी, बाज्यो अणहद नाद॥ 109॥

सैन कहते हैं- राम में सुरति लग गई है। घट भीतर निनाद बज उठा है। मुरली भी मधुर बज रही है। अनहद नाद बजने लगा है।

उठै तरंगा नाद की, घंटी की घनकार।
सुध बणें वायु गगन, सेनो कहे पुकार॥ 110॥

हृदय घट रूपी मन्दिर में स्मरण की घण्टी बजते ही नाद की तरंगें उठने लगती हैं। भीतर-बाहर वायुमण्डल शुद्ध हो जाता है। सैन कहते हैं- यही नाद निनादित होकर तरंगित हो उठता है।

साधो करसो मोलतां, ठक्क-ठक्क लेओ बजाय।
सेन संगत जद करो, जद मन-चित्त भा जाय॥ 111॥

सैन कहते हैं- मटका मोल लेते समय अच्छी तरह ठोककर परख लेना चाहिए। उसी प्रकार किसी की संगत करते समय भी परख-जानकर ही मन-चित्त को भा जाय, तब संगत करना चाहिए।

आँख मूँद तपसा करे, तंतर-मंतर साज।
सेना सोई पारखी, जिण घट अणहद बाज॥ 112॥

सैन कहते हैं- जो आँखें बंद कर तपस्या करे, तंत्र-मंत्र की साधना करे, वह आडम्बर है। जिसके घट में अनहद नाद बज रहा है और जो पारख ज्ञान जानता है, वही सच्चा साधु है।

सगुण-निर्गुण

सगुण-निगुण का भरम में, पच-पच हारया साध।
सैना सद्‌गुरु बोध्यो, सो ई नाम अराध॥ 113॥

सैन कहते हैं- सगुण और निर्गुण के भ्रम में साधु-संत-ज्ञानी पच-पच हार गये, किन्तु कोई भी यह भ्रम नहीं मिटा सका। सद्‌गुरु ने प्रबोध दिया। वह है नाम की आराधना।

अजब पसारो जगत को, गजबो सिरजनहार।
सैना सगुण-निगुण को, भेदो देओ बिसार॥

सैन कहते हैं- इस सृष्टि-प्रचार अजब है और इसका सृजनहार गजब है। सगुण और निर्गुण का भेद भूल जाओ। दोनों एक ही हैं।

सगुण-निगुण का फेर में, क्यु भटके रे जीव।
सैना थिरता राख ले, अवस मिलेंगे पीव॥ 114॥

सैन कहते हैं- अरे जीव! तू सगुण-निर्गुण के फेर में क्यों भटक रहा है? वे कहते हैं- अटल विश्वास रख ले, तुझे तेरा इष्ट अवश्य मिलेगा।

समर्पण

तन-मन-धन सब राम को, मेरा-मुझ कुछ नाहिं।
सैन भगत जद मन पड़े, सब पाछे पलटाहिं॥ 115॥

सैन कहते हैं- तन-मन-धन सब राम के हैं। मेरा या मुझसे कुछ भी नहीं है। वह जब चाहे, यह सब वापिस ले सकता है।

मैं मारूँ मुझ मार दूँ, करूँ चाकरी राम।
सैन भगत आखिर मिले, चरणा में विसराम॥ 116॥

सैन कहते हैं- मैं और मुझ का भाव समाप्त हो गया है। राम की चाकरी में रम जाऊँ। उन्हीं के चरणों में अन्ततः विश्राम मिलेगा।

पीपो समदर कूद्यो, तनक न राखी संक।
सैना मन चित थिर रहे, नाम भगति भगवंत॥ 117॥

पीपा निशंक होकर पूर्ण समर्पित भाव से भक्ति समुद्र में कूद गया। यदि हमारा मन और चित्त स्थिर रहे। पूर्ण समर्पण भाव हो तो ईश्वर प्राप्ति निश्चित है।

मैं मारूँ मुझ ने हनूँ, मारूँ सकल विकार।
सैना हिरदै प्रेम रस, जग पूरो परवार॥ 118॥

सैन कहते हैं- मैं और मेरा का हनन कर समस्त विकारों को समाप्त कर दूँ। हृदय में प्रेम-भाव की स्थापना कर लूँ, तब पूरा विश्व मुझे अपना परिवार लगेगा।

भगत दुखी हरि भी दुखी, सुखी देख हरसाय।
सैना हरि अर भगत में, एक तार वैइ जाय॥ 119॥

सैन कहते हैं- हरि भी दुखी, भक्त भी दुखी रहता है, जब तक समर्पण भाव नहीं आ जाता। जब इष्ट के प्रति समर्पण हो जाता है, भक्त-भगवान में तल्लीनता आ जाती है, तब दोनों का मन हर्षित हो जाता है।

सेना सांसां खुट चुकी, शेष रही दो-चार।
आँखाँ सामूँ मति हरो, नटखट कृसन मुरार॥ 120॥

सैन कहते हैं- अब तो अन्त समय आ पहुँचा है। साँसें खुट चली हैं। इसलिए- हे कृष्ण मुरार (परमात्मा)! आँखों के समक्ष बने रहो।

मानव देह

काचो लगे सुवासणो, गदरायाँ मीठास।
सैना ऊ फल कूण सो, पाक्याँ दे कड़वास॥ 121॥

सैना कहते हैं- जो फल कच्चा रहने पर सुहाना लगता है, गदरा जाने पर मीठा तथा पक जाने पर कड़वा - वह फल कौन-सा है? वे बताते हैं- मानव देह है। बालपने सुहानी, जवानी में मीठी (आनन्ददायी) और वृद्धावस्था में कड़वी (उपेक्षित) लगती है। कष्टदायी लगती है।

नश्वरता

सैमल फूले बीस दिन, धुर निपात वै जाय।
सैना जतरे फूल हे, जग को मन हरसाय॥ 122॥

सैन कहते हैं- जिस प्रकार सेमल वृक्ष बीस दिन (अल्पकाल) तक फूलता है, हरा-भरा रहता है। फूल भी आते हैं, फिर एकदम निपाता हो जाता है। न पत्ते रहते हैं, न फूल, न फल। ठूँठ जैसा बन जाता है। मानव देह भी वैसी ही है।

सैना जगत सरायहे, आवण-जावण होय।
चार दिना मेलो करे, थिर मुकाम न कोय॥ 123॥

सैन कहते हैं- यह संसार एक सराय के समान है। इसमें आना-जाना चलता रहता है। यात्री जिस प्रकार चार दिन ठहरता है, दूसरे यात्रियों से मेल-जोल होता है, फिर सब अपने-अपने गन्तव्य की ओर चले जाते हैं। स्थिर मुकामी कोई नहीं रह पाता। वैसा ही संसार में हमारा आना-जाना है।

जो उग्यो सो आथमे, विधि को अटल विधान।
सैना टार्याँ नी टरे, या गति साँची जान॥ 124॥

जो उदित (जन्म) हुआ है, वह अस्त (मृत्य) भी होगा। यह विधि का अटल विधान है। सेन कहते हैं- यह टालने से नहीं टल सकता। इसे सत्य मानो।

आया है सो जायगा, गयो सो पाछो आय।
सैन कहे अणि सृष्टि में, विधना चाक चलाय॥ 125॥

सैन कहते हैं- जो आया है, वह वापिस जायेगा। इस सृष्टि का यह चक्र विधाता चला रहा है।

सैना कंचन गार में, फरको नहीं जणाय।
दोई माटी ती कढ़े, माटी में मल जाय॥ 126॥

सैन कहते हैं- यह देह मिट्टी की है। कंचन काया कहलाती है। कंचन और मिट्टी में कोई फर्क नहीं है। दोनों मिट्टी से निकलकर मिट्टी में मिल जाते हैं।

पेलां तो पतझर झरे, फेर बिरछ अंकराय।
सैना इसतर जगत को, चाके राम चलाय॥ 127॥

सैन कहते हैं- पतझड़ होती है, फिर अंकुरण होता है। यह क्रम निरन्तर रहता है। राम-परमात्मा इसी प्रकार सृष्टि चक्र चलाते रहते हैं।

नुगरा

नाग नसेड़ो नूगरो, करे दुबक ने घात।
सैना मति विसासजो, तीनई खोटी जात॥ 128॥

सैन कहते हैं- नाग, निर्लज्ज और नुगरा (गुरू विरोधी) एक समान होते हैं। इनका विश्वास कभी नहीं करना चाहिए।

ब्रह्महीन ब्राह्मण

बामण ब्रह्म भण्यो नहीं, नहिं विद्या को ज्ञान।
सैना एसा विपर ने, जाणू सुदर समान॥ 129॥

सैन कहते हैं- जिस ब्राह्मण ने ब्रह्म का ज्ञान नहीं जाना। विद्या नहीं सीखी। ऐसे विप्र को मैं शूद्र समान मानता हूँ।

सुदर न पोथी पढ़ सके, नारी गुणे न ज्ञान।
सैना बामण ने कर्‌यो नारी, सुदर समान॥ 130॥

सैन कहते हैं- शूद्र और नारी को विद्या से वंचित करके ब्राह्मणों ने नारी और शूद्र को एक समान कर दिया है।

करनी-कथनी

कथनी तो ऊँची कहे, करणी होवे नीच।
सैना एसो मूरखो, फँसी दुई के बीच॥ 131॥

सैन कहते हैं- जो बातें तो बड़ी-बड़ी करते हैं, किन्तु करनी निम्न स्तर की होती है। ऐसे मूर्ख अधोगति में फँसते हैं।

करणी तो एसी करे, जैसी कथनी होय।
सैना कथनी करणि में, फरक न दीसे कोय॥ 132॥

सैन कहते हैं- करनी ऐसी होनी चाहिए, जैसी कथनी है। दोनों में सामंजस्य आवश्यक है। दोनों में अन्तर नहीं दिखना चाहिए।

कथनी-करणी में फरक, हे नुगरा को भान।
सैना कथनी-करणी ने, राखो एक समान॥ 133॥

सैन कहते हैं- कथनी और करनी में फरक नुगरा लोगों का भान (समझ) है। यह बुरा है। दोनों को सदा एक रखो।

विस जन ने सूरो गणो, जिण के हिरदै साँच।
सैना केहण करण में, नी आवण दे आँच॥ 134॥

सैन कहते हैं- मैं उसी को सूरमा मानता हूँ, जिसके मन में सत्य है। जो कहने और करने में आँच नहीं आने देता।

धैर्य

चित्त ने राखे निरमलो, मन ने राखे धीर।
सैना सोई संत जन, सोई पीर फकीर॥ 135॥

सैन कहते हैं- जिसका मन निर्मल है तथा मन में धीरता है, वह सच्चा संत और पीर-फकीर है।

समभाव

जात-पाँत छोटो-बड़ो, राजो सेठो रंक।
सैन कहे सब भायला, फरक न गणूँ नसंग॥ 136॥

जात-पाँत, छोटा-बड़ा, राजा, सेठ या रंक सब एक समान हैं। सैन कहते हैं- मैं सबको भाई मानता हूँ। जरा भी भेद नहीं समझता।

सैना दुख-सुख बाँट लौ, दुखी न रेवे कोय।
एक बाप का पूत सब, फरक न दीखे मोय॥ 137॥

सैन कहते हैं- हम एक दूसरे के सुख-दुख बाँट लें। कोई दुखी न रहे। सब एक बाप की संतानें हैं। मुझे फर्क नहीं दिखता।

सैना जीव जमात की, कर ली साँची कूत।
एकहि माँ जाया सभी, एक बाप का पूत॥ 138॥

सैन कहते हैं- जितने भी जीव हैं, मैंने अच्छी तरह समझ-जान लिया है। सब एक ही माँ जाये पूत तथा एक ही बाप के पुत्र हैं। सबका पिता एक ही है। जननी भी एक है।

छोट-मोट को सोचणो, हे अति तुच्छ विचार।
सैना फरको हे नहीं, साहिब के दरबार॥ 139॥

सैन कहते हैं- छोटा या बड़ा किसी को मानना तुच्छ विचार है। किसी में कोई फर्क नहीं है। साहिब के दरबार में सब समान हैं।

निष्ठा

सैना चल घर आपणे, यो बेगानो देस।
जिण घर में साईं बसें, सोई अपणो देस॥ 140॥

सैन भगत कहते हैं- चलो अपने घर चलें, यह संसार तो मुसाफिरखाना है। यह बेगाना देश है। जिस देश में परमात्मा निवास करते हैं, वही हमारा (जीव का) असली देश है। वहीं चलना है।

निसरा अर विस्वास में, तरक काम नी आय।
सैना चुटकी भसम ती, सकल रोग मिट जाय॥ 141॥

सैन कहते हैं- निष्ठा और विश्वास में तर्क काम नहीं आता है। संत फकीर की एक चुटकी भस्म से रोग मिट जाते हैं। यह विश्वास और निष्ठा का ही प्रभाव है।

निर्दम्भता

निरदंभा वै ने रहो, लील दरोब समान।
सेना चर्‌याँ नी चुके, खोद्‌याँ होय न हान॥ 142॥

सैन कहते हैं- सदा निरदम्भ (निर्दम्भ) रहो, जिस प्रकार दूब रहती है। विनम्रता और निर्दम्भता बहुत बड़ी शक्ति है। जिस प्रकार दूब चरने और खोदने पर भी सदा जीवित बनी रहती है, वैसे निर्दम्भी व्यक्ति भी बना रहता है।

बाँस नमे धरती छुए, अंधड़ ऊपर जाय।
सैन भगत खोटो समे, आवे अर टर जाय॥ 143॥

सैन भगत कहते हैं- अंधड़ आने पर बाँस नम जाता है, वह धरती पर सो जाता है। अंधड़ निकल जाने पर फिर तनकर खड़ा हो जाता है। इसी प्रकार अच्छा-बुरा समय आता-जाता रहता है। विनम्रता सदा सहायक होती है।

अंधड़ में जो नम सकें, ते वृछ नित हरसाय।
सैन भगत जो नी नमें, जड़ामूल ते जाय॥ 144॥

जो वृक्ष अंधड़ में नम सकता है, वह सदा हरा-भरा रहता है। जो नहीं नमता, वह जड़-मूल से नष्ट हो जाता है। मनुष्य के साथ भी यही सिद्धान्त लागू होता है।

अहंकार

चित अभमान धरो मति, करो न गरब-गुमान।
सैना लंका छार वी, रावण के अभमान॥ 145॥

सैन कहते हैं- चित्त में अभिमान धारण मत करो, अहंकार मत करो। इसी अभिमान के कारण रावण की लंका राख हो गई।

मैं-मैं कर बकरी कटी, हाट बिकायो चाम।
सैना वे नर नहिं कट्या, जिनके हिरदै राम॥ 146॥

सैन कहते हैं- मैं-मैं करते हुए बकरी को कटना पड़ा। उसका चमड़ा हाट में बिक गया। 'मैं' अहंकार का प्रतीक है। केवल वही लोग नहीं कटते, जिनके हृदय में राम होता है। जिनके हृदय में राम होता है, उनके हृदय में अहंकार नहीं हो सकता।

सैना गरब न कीजिए, गरब गरत ले जाए।
गरब कियो लंकेश ने, लीयो वंस नसाय॥ 147॥

सैन कहते हैं- गर्व (अहंकार) नहीं करना चाहिए। अहंकार गर्त में ले जाता है। लंका के राजा रावण ने अहंकार किया। वंश सहित नष्ट हो गया।

काम क्रोध मोह लोभ, मद अंकारो बड़ पाप।
सैन भगत यूँ जाणजो, भीतर बेठ्या साँप॥ 148॥

काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद (अहंकार) - इनमें अहंकार सबसे बड़ा पाप है। सैन कहते हैं- अहंकार को ऐसे जानना कि भीतर साँप बैठा हुआ है।

दान करे सौदो करे, देतां करे गुमान।
सैना दाता राम जी, तनक न करे बखान॥ 149॥

सैन कहते हैं- दान देता है, सौदा करता है। देते समय दातापन का अहंकार जताता है। असली दाता तो रामजी हैं, जो तनिक भी गुमान नहीं करते।

अहंकार सबती बुरो, रागस जेसो रूप।
सैन भगत माथे चढ़े, कर दे अंधड़ धूप॥ 150॥

सैन कहते हैं- अहंकार सबसे बुरा है। उसका रूप राक्षस जैसा डरावना है। अहंकार करते समय मुद्रा डरावनी हो जाती है। जब अहंकार सिर पर चढ़ता है, तब विवेक नष्ट हो जाता है। अविवेक का घना अँधेरा छा जाता है।

माथे धर जस पोटली, भमतो फिरे जहान।
सैना खुद जस करम कर, मत कर वृथा गुमान॥ 151॥

सैन कहते हैं- यश की पोटली सिर पर रखकर व्यर्थ ही सब तरफ घूमकर अपना यश बखान करता फिरता है। खुद यश करते हुए व्यर्थ का गुमान नहीं करना चाहिए।

अन्न फल खावे मानवी, सूरज तम खा जाय।
सैना साई राम जी, अहंकार ने खाय॥ 152॥

सैन कहते हैं- मानव अन्न और फल खाते हैं, सूरज अंधकार खाता है। साईं (परमात्मा) अहंकार को खाता है।

दान करे डोंडी करे, करे वृथा अभमान।
सैना जाणे बाणियो, लेन-देन का भान॥ 153॥

सैन कहते हैं- दान करता है और फिर उसका प्रचार करता है। व्यर्थ का अभिमान जताता है। ऐसा लगता है मानो कोई बनिया लेन-देन का हिसाब लगा रहा है।

बड़बोली करतो फिरे, ज्युँ ढोली को ढोल।
सैना भीतर गुण नहीं, क्युँ ररकावे बोल॥ 154॥

सैन कहते हैं- बिना गुण के व्यर्थ ही बड़बोली करता फिर रहा है। भीतर गुण एक भी नहीं, अहंकार के बोल बहुत हैं।

दान करे कहतो फिरे, बढ़-बढ़ करे बखान।
सैन भिखारी राम को, झूठो करे गुमान॥ 155॥

सैन कहते हैं- दान देकर बढ़-चढ़कर बखान करता फिरता है। खुद ही राम परमात्मा का भिखारी है। व्यर्थ का अहंकार करता है।

सतपुरुष

सत नी त्यागे सतपुरख, पाको काछ अर वाच।
सैन भगत सच जाणजो, राखे सद्‌मत साँच॥ 156॥

सैन कहते हैं- सत्पुरुष वह होता है, जो चरित्र और वाणी का अटल होता है। वह किसी भी स्थिति में सत्य का त्याग नहीं करता।

नीच पुरुष

धिक झूठन खातो फिरे, गली-कूच भमराय।
सैना एसो नीच नर, शूकर जोनी पाय॥ 157॥

सैना कहते हैं- वह पुरुष अधम है, जो गली-कूचों में आवारागर्दी करता फिरे और चरित्रहीनता करे। ऐसा अधम व्यक्ति ग्राम शूकर (भंडूरा) की योनी पायेगा।

मन

मन तो कबजा में नहीं, तन ने देवे दोस।
सैना मन कब्जे रहे, तन ने रेहवे होस॥ 158॥

सैन कहते हैं- यदि मन वश में न हो, तो तन को दोष देना व्यर्थ है। यदि मन कब्जे में रहेगा तो तन भी कब्जे में रहेगा।

सृजनहार

चितरावण गजबी करी, चित्रकार अणजान।
सैना अजब रंग भर्‌या, हो नी सके बखाण॥ 159॥

सैन कहते हैं- उस सृजनहार ने गजब की सृष्टि रची है। उसमें अजब के रंग भरे हैं। वह अजान, अज्ञात अद्‌भुत चित्रकार हैं। उसका बखान करना कठिन है।

सत

भोपा में सत चाहिए, देवत में तो होय।
सैना भोपो झूठलो, दोनइ को सत खोय॥ 160॥

सैन कहते हैं- देवता में तो सत्य होता है। यदि भोपा (लोकदेवता का पुजारी, जिसके शरीर में देवता भाव रूप से प्रकट होता है) में सत्य नहीं है, तो देवता और भोपा दोनों का सत्य शंका में आ जाता है। इसी प्रकार साधक में सत्य नहीं हो तो सिद्धि नहीं मिल सकती।

परनारी

परनारी नागण समां, तीन ठौर ती खाय।
सैना धन यौवन हरे, पत पंचा में जाय॥ 161॥

सैन कहते हैं- परनारी नागिन के समान होती है। वह तीन ठौर से डँसती है- धन, यौवन का नाश तो करती ही है, लोक में इज्जत भी चली जाती है।

परनारी नागण समां, घणी रूपारी होय।
सैन दशे विषदंत ती, जीवित बच्या न कोय॥ 162॥

सैन कहते हैं- परनारी नागिन समान होती है। वह अपनी पत्नी से बहुत सुन्दर लगती है। (नागिन भी बहुत सुन्दर होती है) उसके दंश से कोई भी जीवित नहीं बच सकता।

परनारी डाकण समां, नैणाती भरमाय।
सैना खावे कारजो, मर्‌याँ नरग कराय॥ 163॥

सैन कहते हैं- परनारी डाकण के समान होती है। वह नैन-बाण से भ्रमित कर देती है। वह डाकण की तरह कलेजा खा जाती है। मरने पर नर्क ले जाती है।

कुलटा नारी

डाकण काढ़े डील ती, लावे कुलटा नार।
नीदां सांटे ऊझकड़ो, वणजे मूरख यार॥ 164॥

सैन कहते हैं- यदि डाकण लग गई हो और उससे मुक्ति भी मिल गई हो तथा यदि वह व्यक्ति कुलटा स्त्री से विवाह कर ले, तब जानो एक डाकण गई, दूसरी आ गई। वैसा ही हुआ कि नींद के बदले सपने में डँसने का रोग ले लिया।

कुलटा कबदी कुलच्छनी, चतर चोरनी जात।
सैना जिण घर एकली, मति रुक जाजो रात॥ 165॥

सैन कहते हैं- जिस घर में कुलटा, छली, कुलच्छिनी, चालाक और चोर जाति का वास हो, उस घर में कभी रात मत रुकना। यदि ये कुलटा प्रकार की स्त्रियाँ घर में अकेली हों, तब तो बिलकुल मत रुकना।

धिक नारी जो खण्ड दे, अपने पति को मान।
सैना एसी अधम को, कोसे सकल जहान॥ 166॥

सैन कहते हैं- जो नारी अपने पति की इज्जत बिगाड़ दे, ऐसी अधम नारी की लोक निन्दा होती है।

जती सती अर सूरमा, डिगें न सत से नेक।
सैना सत को आसरो, सत की राखे टेक॥ 167॥

सैन कहते हैं- जती, सती और सूरमा सत्य से कभी नहीं डिगते। उन्हें सत्य का ही आसरा होता है और वे सत्य को दृढ़ रखते हैं।

अपनो तन अरपे नहीं, अपने पति के नेह।
सेना धिक विस नारी को, जो जावे पर गेह॥ 168॥

सैन कहते हैं- जो नारी अपने पति पर स्नेह नहीं रखती और समर्पण नहीं करती, उस नारी को धिक्कार है। जो अपने पति की उपेक्षा करके पर घर जाकर परपुरुष गमन करती है।

टीप : यही सिद्धान्त भक्त और उसके इष्ट पर भी लागू होता है। जो साधक अपने इष्ट को त्याग कर अन्यत्र देवों पर मन भटकाता है।

परण्या ने प्रणवे नहीं, पर नर करे बखान।
सैना एसी नारी को, बिगरैं दोई जहान॥ 169॥

सैन कहते हैं- जो नारी अपने ब्याहता से प्रेम नहीं करती, दूसरे नर का यश बखान करती है, ऐसी नारी के दोनों लोक बिगड़ते हैं।

साईं ती परदो करो, पर नर लाज लुटाय।
सेना असी कुलछनी, धिक छिनार कहाय॥ 170॥

सैन कहते हैं- जो अपने साईं (पति) से, स्वामी से भेद रखे और परनर के निकट जाकर अपनी लाज लुटाती है, ऐसी कुलच्छिनी को धिक्कार है।

सतवन्ती

सतवंती सत नी तजे, तज दे भले पिरान।
सेना एसी नारी को, जुग-जुग मिले सम्मान॥ 171॥

सैन कहते हैं- सतवन्ती कभी भी सत नहीं त्यागती, भले उसके प्राण चले जाएँ। ऐसी नारी को लोक में सदा सम्मान मिलता है।

तेल खोलता में डले, कै वै बलती आग।
सैना कद्यां नी लग सके, सतवंती पे दाग॥ 172॥

सैन कहते हैं- सतवन्ती को चाहे खौलते तेल के कड़ाह में डाल दो या फिर आग में जला दो। उसके दृढ़ निष्ठा और सत्य पर दाग नहीं लग सकता।

सैना सतवंती नमूं, नम-नम करूँ जुहार।
सतवंती के सत टिक्यो, जग को कारोबार॥ 173॥

सैन कहते हैं- मैं सतवंती को नम-नम कर वन्दन करता हूँ। सतवन्ती के सत पर ही यह संसार टिका हुआ है।

विधना को लेखो टरे, टरे ग्रहां को ताप।
सैना कदी नी टर सके, सतवंती को श्राप॥ 174॥

सैन कहते हैं- विधाता का लेख टल सकता है। ग्रहों का प्रकोप टल सकता है, किन्तु सतवन्ती का श्राप नहीं टल सकता।

उपलब्ध की उपेक्षा

पीपर ने पूजे नहीं, कलप बिरछ की आस।
सैना आँगण को बिरछ, देवे सीतल वास॥ 175॥

सैन कहते हैं- आँगन के पीपल की उपेक्षा करके कल्पवृक्ष की आशा रखना व्यर्थ है। जो उपलब्ध है, उसका मान करो। कल्पवृक्ष प्राप्त हो नहीं सकता। (घर का जोगी जोगिया, आन गाँव का सिद्ध)।

विनम्रता

आपा को अरपण करे, तरपण करे हंकार।
सैना नमतो वै रहे, जद पावे करतार॥ 176॥

सैन कहते हैं- जो अहंभाव को अर्पण कर दे, अहंकार का तर्पण कर दे तथा सदा विनम्र बना रहेगा, तभी वह परमात्मा को पा सकेगा।

ओछा वचन उचारतां, उपजे कलह करेस।
सैना मिठ बोला रहो, ओछा रहो न लेस॥ 177॥

ओछे वचन बोलने से कलह और क्लेश उत्पन्न होता है। सैन कहते हैं- मीठे वचन बोलो। कभी भी ओछापन मत दिखाओ।

वचना में मीठो रहे, सदरचना में सांत।
सैना ऐसा सूरमा, रहव सदा निरांत॥ 178॥

सैन कहते हैं- जो व्यक्ति वचनों में मीठा, रचना (कर्म) में सदा शान्त स्वभाव रहता है, वह सूरमा पुरुष सदा निरान्त (पूर्णकाम) लालसाओं से मुक्त एवं तृप्त-भाव बनाये रहता है।

संत चरित नमतो रहे, मान पान वे खूब।
सैना ज्युँ हरसित रहे, नदी किनारे दूब॥ 179॥

सैन कहते हैं- संत चरित्र वाले व्यक्ति सदा विनम्र स्वभाव के होते हैं। उनका मान-पान (आदर-आवभगत) खूब होता है। जिस प्रकार नदी किनारे की दूब हरी-भरी रहती है, उसी प्रकार वे भी सदा हर्षित रहते हैं।

सत्य

ओछी पूँजी साँच की, धर ले गाँठ सम्हार।
सैना बेचिन्तो वियाँ, ठग लेवे बटमार॥ 180॥

सैन कहते हैं- सत्य की पूँजी बहुत थोड़ी होती है, उसे सम्हालकर रखना चाहिए। तनिक भी असावधान होने पर बटमार ठग लेंगे।

साँच आँच आवे नहीं, कहि गया संत-फकीर।
सैना साँची द्रौपदां, कृसन बढ़ायो चीर॥ 181॥

सैन कहते हैं- साँच को आँच नहीं आती, ऐसा संत-फकीर कह गये हैं। द्रौपदी सत्य पर अटल थी, कृष्ण ने उसके सत्य की रक्षा की और वस्त्र बढ़ाकर उसकी लज्जा बचाई।

षड्रिपु

चोर घुस्या घट भीतराँ, बारह हाथाँ आग।
सैना मन मरघट करें, जाग सके तो जाग॥ 182॥

सैन कहते हैं- छह चोर (षड्रिपु) अपने बारह हाथों में आग (पाप प्रभाव) लिए घुस आए हैं। वे सब तुम्हारे मन को जलाकर संतापित करके मरघट बना देंगे। जाग सकता हो तो जाग जा।

स्वार्थ

सुवारथ की पूजा करें, सुवारथ के जजमान।
सैना सुवारथ को जगत, सुवारथ के वरदान॥ 183॥

सैन कहते हैं- यह संसार स्वार्थ का ही व्यवहारी है। यहाँ जजमान, पुजारी, साधक आदि सब स्वार्थवश ही पूजा-अर्चना करते हैं। यहाँ वरदान भी स्वार्थवश दिये जाते हैं।

निन्दा

सैना निंदा मति करो, निंदा खोटो काम।
ना तो जग में जस मिले, ना मल पावे राम॥ 184॥

सैन कहते हैं- निन्दा नहीं करनी चाहिए। निन्दा बुरा भाव है। इससे न तो संसार में यश मिल सकता है और न परमात्मा।

ईर्ष्या

जण के घट में ईरसा, नागण बण धँस जाय।
सैन कहे एसो मनख, खीज-खीज मर जाय॥ 185॥

सैन कहते हैं- जिसके मन में ईर्ष्या नागिन बनकर घुस जाती है, वह व्यक्ति भीतर-भीतर खीजता रहता है और खीज-खीजकर मर जाता है।

दुर्वचन

ररकावे खोटा वचन, ओछा बोले बोल।
सैना एसो अधम नर, दो कौड़ी को मोल॥ 186॥

सैन कहते हैं- जो सदा कड़वे व ओछे वचन बोलता रहता है, ऐसे अधम व्यक्ति का लोक में दो कौड़ी का भी मोल नहीं रह जाता।

सज्जन

सैना सज्जन परखिये, परदेसां के बीच।
आपद तिर्‌या परखिये, सज्ज परखो खीच॥ 187॥

सैन कहते हैं- सज्जन की पहचान परदेस में तथा आपद आने पर होती है। तिरिया (पत्नी) की परीक्षा भी मुसीबत पड़ने पर होती है।

लोभ

सैना सिद्धि पा गयो, मन नी होयो सिद्ध।
लोभ देख टटकी पड़े, ज्युँ चिड़िया पे गिद्ध॥ 188॥

सैन कहते है- सिद्धि तो पा गया, किन्तु मन सिद्ध नहीं हुआ। लोभ देखकर सब मर्यादा भूलकर उसी प्रकार उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हो जाता है, जैसे चिड़िया पर गिद्ध झपट पड़ता है।

सैना लोभ न कीजिये, लोभ काल को बान।
लोभ कर्‌याँ मछली फँसी, अंत गँवाया प्रान॥ 189॥

सैन कहते हैं- लोभ मत करो, लोभ काल का बाण है। लोभ करने से मछली काँटे में फँसकर प्राण गँवा बैठती है।

कुमार्ग

सब पापों को मूल है, जुओ इसक सराब।
सैना जो इनमें फँसे, जोनी होय खराब॥ 190॥

सैन कहते हैं- सब पापों का मूल है- जुआ, इश्क और शराब। जो व्यक्ति इन दुर्व्यसनों में फँस जाता है, उसका जन्म नष्ट हो जाता है।

मित्र

सैना सबने मीत कर, बैर न कर एक ठाँव।
घर-घर मीत न कर सके, एक मीत एक गाँव॥ 191॥

सैना सबको मित्र बनाओ, किसी से भी बैर मत करो। यदि घर-घर मित्र नहीं बना सकते, तब एक गाँव में एक मित्र अवश्य बना रखो।

सैना मन का पाप ने, देओ मीत बताय।
पाप कढ़याँ ते जाण लो, चित्त निर्मल वै जाय॥ 192॥

सैन कहते हैं- मरन के पाप को अपने मित्र के समक्ष अवश्य प्रकट कर देना चाहिए। पाप जब व्यक्त हो जायेगा, तब चित्त में निर्मलता आ जाएगी।

सज्जन तो सज्जन रहे, पर दुख मेटणहार।
सेना एसा मीत ने, वंदौ बार हजार॥ 193॥

सैन कहते हैं- सज्जन मित्र सदा परदु:ख मेटने वाला होता है। ऐसे सज्जन मित्र का बार-बार वन्दन है।

दुख झेलो सुख बाँट लो, सुणतां ने हरसाय।
सैना नित को रोवणो, सहजां मीत घटाय॥ 194॥

दुख को सहन कर लो, सुख सबको बाँटो, इससे सुनने वाला हर्षित होता है। सैन कहते हैं- नित का रोना रोने से मित्र घटने लगते हैं।

स्वाभिमान

सैना पर घर जायाँ, मति कुरलावो मीत।
खुद को दुख खुद भोगणो, रेहवो सदा सुचीत॥ 195॥

सैन कहते हैं- दूसरे के घर जाकर अपने घर के या स्वयं के दुख या हालचाल मत बखानो। खुद का दुःख खुद ही भोगना होगा। सदा चैतन्य एवं सावधान रहो।

सैना निज संताप ने, मन ही राखो गोय।
ना तो कोई सुण सके, न कोएँ दुख होय॥ 196॥

सैन कहते हैं- अपने मन के संताप को अपने मन में रखो। उसे न तो कोई सुनना चाहेगा और न किसी को तुम्हारे दुःख से दुःख होगा। केवल उपहास होगा।

ना तो आव ना आदरो, ना दीखे सनमान।
सैना छप्पन भोग तज, सैज बचा लो मान॥ 197॥

सैन कहते हैं- न तो आव-आदर हो और न सम्मान हो, तब छप्पन भोग भी हो तो त्याग दो और सहज ही अपना सम्मान रख लो।

कटु वचन

लागी प्रीत न तोड़िये, बको न करुआ बोल।
सैना समयो पलटतां, फिर होवे हमजोल॥ 198॥

सैन कहते हैं- कड़वे वचन मत बोलो, लगी प्रीत टूट जाएगी। समय अच्छा आयेगा, तब फिर से मित्र आ मिलेंगे। बुरे समय में तो सब साथ त्यागते ही हैं।

तोड़ दियाँ फिर नी जुड़े, कतराइ करो उपाव।
सैना नेह न तोड़िये, मीठी करो सुभाव॥ 199॥

सैन कहते हैं- कटु वचन से नेह टूट जायेगा। यदि एक बार टूट गया, तब दुबारा जोड़ना सम्भव नहीं है। इसलिए अपना स्वभाव मधुर बना लो। प्रेम मत तोड़ो।

सैना रेसम गाँठ ज्युँ, जाणो कपट सनेह।
ज्युँ खोलो त्युँ ढीट वे, पड़े सीस पे खेह॥ 200॥

सैन कहते हैं- कपटपूर्ण स्नेह रेशम गाँठ की तरह होता है। जैसे-जैसे उसे सुलझाने की कोशिश करेंगे, तैसे-तैसे पक्का (चीठा) होता जाएगा। अन्ततः अपयश ही मिलता है।

जुआ

जुओ धन सनमान को, कर दे अवस विनास।
सैना हगरा खेट को, हे जुआ में वास॥ 201॥

सैन कहते हैं- जुआ धन और सम्मान का अवश्य ही विनाश कर देता है। जुआ सब बुराइयों का घर है। छल, कपट, लोभ, क्रोध, मदपान, परनारी गमन आदि सभी बुरे व्यसन जुआ प्रकट कर देता है।

जुओ खेल्यो पाण्डवाँ, सरबस बैठ्या हार।
सैना नल राजा रम्यो, जिनगी वई खुवार॥ 202॥

सैन कहते हैं- जुआ पाण्डवों ने खेला, सर्वस्व हार गये। राजा नल ने खेला जीवन ही नष्ट हो गया।

सदनारी

सात पीढ़ियाँ तार दे, नारी होय सुजान।
सैना सिच्छा खूब दो, खूब बणे बलवान॥ 203॥

जो सुजान नारी होती है, वह सात पीढ़ियाँ तार देती है। इसलिए नारी को खूब शिक्षा दो और शक्तिशाली बनाओ।

अपणी रगसा खुद करे, एसी नारी होय।
सैना एसी क्युँ रहे, खूँटे बैठी रोय॥ 204॥

सैन कहते हैं- नारी हर तरह से शक्तिशाली होना चाहिए कि वह अपनी रक्षा खुद करे। ऐसी क्यों बनी रहे कि मुसीबत के समय खूँटे से बँधी गाय की तरह बैठी-बैठी रोती रहे।

जण घक्र अर परवार में, नारी को नहिं मान।
सैन भगत साँची कहूँ, वो घर नरग समान॥ 205॥

सैन भगत कहते हैं- जिस घर और परिवार में नारी का सम्मान नहीं है, वह घर नर्क के समान जानना चाहिए।

विरह

बिछड़यो जोड़ो कूँज को, जार-जार कुरलाय।
सैना बिछड़या राम ती, हिरदा में अकलाय॥ 206॥

सैन कहते हैं- जिस प्रकार कूँज पक्षी (क्रौंच) का जोड़ा अपने साथी के बिछुड़ने पर विरह वेदना में कुरलाता (विलाप करता) है, उसी प्रकार राम के विरह में जीव व्याकुल रहता है।

विरह एकहि रैन को, चकवी सह नी पाय।
सैना बिछड़या राम ती, उनको कौन उपाय॥ 207॥

सैन कहते हैं- जिस प्रकार चकवा एक रात का विरह भी नहीं सह पाता, उसी प्रकार जो राम से बिछुड़े हों, उनका क्या उपाय हो सकता है?

आडम्बर

नित न्हावे पूजा करे, लाम्बो तिलक लगाय।
सैन दसौ हिरदै नहीं, नत दन पाप कमाय॥ 208॥

सैन कहते हैं- प्रतिदिन स्नान करते हैं, लम्बा तिलक लगाते हैं। जिसके हृदय में दया नहीं है, वह प्रतिदिन पाप कर्म करता है। यह आडम्बरयुक्त व्यक्ति कहलाता है।

महादेव को नाम ले, गट-गट पीवे भाँग।
सैना बदमस्ती करे, देवे मुर्गा बाँग॥ 209॥

सैन कहते हैं- महादेव का नाम लेकर जो लोग गटागट भंग पीते हैं तथा खूब बदमस्तियाँ करते रहते हैं एवं जोर-जोर से अलख की तथा अन्य प्रकार का ध्वनि घोष करते हैं, वे आडम्बरी हैं। वे मुर्गे की तरह बाँग देते है।

गाँजो पीवे रात-दन, और कहावे साध।
सैना मदमस्ता रहे, केहवे लगी समाध॥ 210॥

सैन कहते हैं- जो लोग रात-दिन गाँजा पीते हैं और साधु कहलाते हैं। वे लोग मदमस्त हो नशे में आँख मूँद बैठे रहते हैं तथा कहते हैं- वे समाधि लगा रहे हैं।

तंत्र-मंत्र साधन करे, खावे दारू-मांस।
सैना एसा साध जन, हे समाज में फाँस॥ 211॥

सैन कहते हैं- जो लोग (साधु जन) तंत्र-मंत्र साधना करते हैं, दारू और मांस का सेवन करते हैं। ऐसे साधुजन समाज में फाँस (दाग) हैं।

दारू पी दुरमत करे, भोगे पंच मकार।
सैना एसा साध ने, बार-बार धिक्कार॥ 212॥

सैन कहते हैं- दारू पीकर दुष्कर्म करते हैं और पंचमकार भोगते हैं (पंच मकार- मांस, मदिरा, मत्स), ऐसे साधु कहलाने वालों को बार-बार धिक्कार है।

चेला मूंडे स्वारथाँ, चेली ने भरमाय।
सैना एसा साध जन, वेसहिं दाग लगाय॥ 213॥

सैन कहते हैं- स्वार्थवश चेला बनाते हैं, चेली को भ्रमित कर भोगते हैं, ऐसे साधुजन वेश को दाग लगाते हैं।

भगवा पहरे भरम का, भोगे रागस भोज।
सैना ठगी-ठगोर कर, खूब उड़ावे मौज॥ 214॥

सैन कहते हैं- जो भगवा वस्त्र केवल भ्रम पैदा करने के लिए पहनते हैं तथा राक्षसी भोजन (मांस-मदिरा) का भोजन करते हैं, इसी प्रकार ठगी-ठगोरी करके मौज उड़ाते हैं, वे आडम्बर करते हैं।

जटा बढ़ा भमता फिरे, मूंड मुँडा मदहोस।
सैना खुद पापो करे, जग ने देवे दोस॥ 215॥

जो लोग जटाएँ बढ़ाकर या मूँड़ मुँड़ाकर मदहोश बने रहते हैं। खुद तो पाप में संलग्न रहते हैं तथा जग में दूसरों को दोष देते हैं, वे लोग भी आडम्बरी है।

भविस्य बतावे जगत को, खुद को जाणे नाहिं।
सैना जग ठगतो फिरे, नरग ठाँव न पाहिं॥ 216॥

जो लोग सबका भविष्य बताते हैं, किन्तु खुद का भविष्य नहीं जानते, वो लोग जग को ठगते फिरते हैं। उन्हें नर्क में भी स्थान नहीं मिलता। अधोगति में जाएँगे।

चेला मूँड्या मोकरा, खूब बसाया नीड़।
सैना मन नहिं मूड्यो, कणि काम की भीड़॥ 217॥

सैन कहते हैं– बहुत सारे चेले मूँड़े, खूब ठिकाने (पीठ) कायम किये, किन्तु मन नहीं मूँड़ा। लालसाओं से मुक्त नहीं हुए। ऐसी भीड़ इकट्ठी करने से क्या लाभ?

दया

दया करे जो दीन पे, देवे रोटी दाल।
सैना सो जन सतपुरख, सोई दीन दयाल॥ 218॥

सैन कहते हैं– जो दीनों पर दया करते हैं तथा उन्हें भोजन कराते हैं, वे जन वास्तव में सत्पुरुष हैं। वे ही दीनदयाल हैं।

आर्तभाव

सैना रगसा राखजो, गोपी गाय गुवाल।
ग्रन्थ ज्ञान का मूल हे, राखो सदा सम्हाल॥ 219॥

सैन कहते हैं– हे गोपी और गायों के रक्षक गुवाल, गोपाल जी! आप मेरी भी रक्षा करना। वे आगे कहते हैं– ग्रन्थ ज्ञान का आधार हैं। उन्हें भी सम्हालना।

पाप

पाप पोटली सीसधर, किसतर उतरे पार।
सैना हिरदै राम धर, सिर को भार उतार॥ 220॥

सैन कहते हैं– पाप की पोटली सिर पर रखकर भवसागर से पार कैसे उतरोगे? सैन कहते हैं– हृदय में राम का वास करो तथा पाप कर्म त्याग दो।

ग्रह नीच नहीं होत हैं, नीच हृदय का पाप।
सैना जे मन ऊजलो, ग्रसे न कोई ताप॥ 221॥

सैन कहते हैं– ग्रह नीच नहीं होते, मन के पाप नीच होते हैं। वे ही भय पैदा करते हैं। यदि मन उज्ज्वल हो जाये तो कोई भी ग्रह नहीं ग्रसेगा।

पाप विचारे चित्त में, नरग द्वार खुल जाय।
सैना जो करि गूजरे, वे कहूँ ठौर न पाय॥ 222॥

सैन कहते हैं- जो व्यक्ति मन में पाप विचारता है, उसके लिए नर्क-द्वार खुल जाता है। जो पाप कर लेता है, उसे तो अधोगति प्राप्त होती है।

भक्ति

भगती में सगती घणी, तारे सबद उसांग।
सैना महरत एक में, तरि गयो राज उटांग॥ 223॥

सैन कहते हैं- भक्ति में बहुत शक्ति है। एक शब्द से मुक्ति मिल जाती है। भक्ति के बल राजा उटाँग एक मुहूर्त्त में मुक्त हो गया। (पुराण प्रसंग)

जल

नदी तलैयाँ हाँपड़े, करे शौच पेशाब।
सैना एसा मूढ़ ने, लागे बड़ो अजाब॥ 224॥

नदी-तालाब पर स्नान करे, जल में मल-मूत्र त्याग करे। सैन कहते हैं- ऐसे मूर्ख को महापाप का भागीदार होना पड़ेगा। ईश्वर का महाकोप सहना पड़ेगा।

वृक्ष

ब्रछ काटे मछली हने, वन में करे सिकार।
सैना जल गंदो करे, उस जन ने धिक्कार॥ 225॥

सैन कहते हैं- जो व्यक्ति वृक्ष काटता है, जल में मछली का शिकार करता है तथा वन में पशुओं का शिकार करता है, जल को गंदा करता है, ऐसे व्यक्ति को धिक्कार है।

बिरछ बचे नदियाँ बचे, बचे अनाथ गरीब।
जल वायु सुध-सुध मिले, वेद न आए करीब॥ 226॥

सैन कहते हैं- यदि वृक्ष और नदियाँ सलामत रहें, तब अनाथ और गरीब सलामत रह पाएँगे। शुद्ध जल और वायु मिलेगी तो वैद्य की आवश्यकता नहीं रहेगी। अनाथ-गरीब अपना इलाज नहीं करवा सकते, अभाव में मर जाते हैं।

फल देवे मन भावतो, सीतल देवे छाँव।
सैना दुख दीजो मती, बिरछां साध सुभाव॥ 227॥

सैन कहते हैं- वृक्ष फल देते हैं, शीतल छाया देते हैं, इसलिए वृक्षों को दु:ख मत देना (मत काटना)। वृक्ष साधु स्वभाव के होते हैं।

माता-पिता

मात-पिता सेवा करें, तिनके सँवरें काम।
सैना इन चरणा बसें, हगरा तीरथ धाम॥ 228॥

जो माता-पिता की सेवा करता है, उसके सभी काम सँवर जाते हैं। सैन कहते हैं- सभी तीर्थ-धाम उनके चरणों में बसते हैं।

मात-पिता ने सेवताँ, अस्व जगन फल जान।
सैना चरणा धोकताँ, मिले रजक जस मान॥ 229॥

माता-पिता की सेवा करने से अश्वमेध यज्ञ जैसा फल मिलता है। सैना कहते हैं- उनके चरण वन्दन से रजक (रोजी, अन्न-भोजन) यश और मान मिलता है।

जिन घर में जामण बसे, बाड़े रोवे गाय।
सैना नगरी संत हों, ऊ तीरथ क्युँ जाय॥ 230॥

जिसके घर में माता हो, बाड़े में गाय हो तथा नगर में संत हों, उसे तीर्थ जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

मात-पिता गुरु-संत को, करे नहीं सनमान।
सैना एसो अधम नर, शूकर श्वान समान॥ 231॥

सैन कहते हैं- जो व्यक्ति माता-पिता और गुरू तथा संतों की सेवा-सम्मान नहीं करता, वह व्यक्ति ग्राम शूकर और श्वान के समान जानना चाहिए।

नर्क

ना भक्ति ना राम रस, ना कोई चरित नेम।
सैना वा ढिग नरग है, नी जायाँ में खेम॥ 232॥

सैन कहते हैं- जिस घर में न भक्ति है, न राम का स्मरण है, न कोई मर्यादा, सुचरित्र संस्कार हैं, उस घर को नर्क मानना चाहिए। वह घर या स्थान त्याज्य है। वहाँ नहीं जाने में ही कुशलता है।

सीख

दने पिये राते पिये, पीपी झोला खाय।
सैना एसो अधम नर, जींदो ही मर जाय। 233॥

सैन कहते हैं- दिन में खूब परिश्रम करे, रात में शराब पीकर झोले खाए, झूमने लगे, ऐसा नर तो जिन्दा नर्क कमा रहा है।

बेटी को सोदो करे, अधमो पाप कमाय।
सैना एसो नीच नर, घोर नरक में जाय॥ 234॥

सैन कहते हैं- जो अपनी बेटी का सौदा करता है, वह अधम है और घोर पाप कमा रहा है, ऐसा व्यक्ति घोर नर्क में जाएगा।

सेवा करे समाज की, रहे सदा हुसियार।
सैना रूप निखार दे, दाई नाई सुनार॥ 235॥

सैन कहते हैं- जो समाज की सेवा करता है और सदा सावधान रहता है, वही मनुष्यों का रूप निखार देता है। वह है- दाई माता, नाई और सुनार।

सैना खुद ऊजल रहे, ऊजल करे तमाम।
मिठ बोले सेवा करे, नाई जात हजाम॥ 236॥

सैन कहते हैं- जो स्वयं स्वच्छ रहता है, सबको स्वच्छ रखता है, मीठा बोलता है, वह नाई है। उसे ही हजाम भी कहते हैं।

आन-बान पूरी धरे, खास खवास कहाय।
सैना सेवा को धरम, सागो-साग निभाय॥ 237॥

सैन कहते हैं- खवास (नाई) अपनी आन-बान बरकरार रखता है। वह सदा खास चाकर कहलाता है। सेवा करने का धर्म वह तत्काल निभाता है।

सुख-दुख दोनों रात-दिन, एक आए-एक जाय।
सैना विधना को लिखो, समो गुड़कतो जाय॥ 238॥

सुख और दुख, रात और दिन की तरह हैं। एक आता है, दूसरा चला जाता है। विधाता का लेख समय के साथ चलता है।

बटमार्‌या बनवट्गड़ा, नमन करे बेबात।
सैना रहिजो चौकना, दुबक करेगा घात॥ 239॥

सैन कहते हैं- बटमार (राहजन), भेड़िया दुबक कर वार करते हैं। ये पहले नमते हैं, फिर वार करते हैं। सदा सावधान रहना।

पेलाँ तो पापो करे, पाछे करे पुकार।
सैन भगत सिर क्यों धुने, साहिब के दरबार॥ 240॥

पहले तो पाप करता है, फिर रक्षा की पुकार लगाता है? सैन कहते हैं- साहिब के दरबार में फिर सिर धुनने से क्या लाभ?

कान पकड़ तौबाँ करे, साँचे मन पछताय।
सैना साँची मान लो, अवस झरेंगे पाप॥ 241॥

सैन कहते हैं- यदि कान पकड़कर सच्चे मन से पश्चाताप करे तथा फिर पाप नहीं करने का संकल्प ले-ले, तब सच जानो कि उसके पाप धीरे-धीरे घटते चले जाएँगे।

खोट काम घणा कर्‌या, अबतो चेते लाग।
सैना काया कंचनी, मत लागण दे दाग॥ 242॥

बुरे काम खूब किये, अब तो सावधान हो जा। सैन कहते हैं- यह कंचन काया है। इस पर अब तो दाग मत लगने दो।

नीठल्या पड़्या-पड़्या, करो न जनम खुवार।
सैना हामूँ न्हार के, आवे नहीं सिकार॥ 243॥

निठल्ले पड़े-पड़े जीवन क्यों व्यर्थ कर रहे हो? सैन कहते हैं- सिंह के सामने स्वयं चलकर शिकार नहीं आता।

बड़ो कहावे जगत में, करे हीन को काम।
सैना जग निंदा करे, हने वंस को नाम॥ 244॥

सैन कहते हैं- जो बड़ा नाम धराकर हीन काम करता है, वह लोक निन्दा का भागी तो होता ही है, वंश का नाम भी डुबाता है।

सैना मोटो काम है, खोटो कर्‌यो नाम।
सैना मद पीवण लगा, नीच धरायो नाम॥ 245॥

सैन कहते हैं- बड़े पद हैं समाज में या राज में प्रतिष्ठा का पद है, किन्तु शराब पीने लगे तब अप्रतिष्ठा होगी। लोग बुरा कहने लगेंगे। पद की गरिमा रखना चाहिए।

छत्री वै धींगा करे, करे हीन व्यवहार।
(सैना) रगसा को वादो लियो, बण बैठ्या बटमार॥ 246॥

जो क्षत्रिय होकर धमाल करता है, निम्न या नीच व्यवहार करता है। सैन कहते हैं– धिक्कार है। रक्षा का वचन और लूटपाट करता है।

लाँबो तो टीलो करे, छै तागा को तार।
सैना दुरमतिया विया, करें छुद्र व्यवहार॥ 247॥

सैन कहते हैं– लम्बा तिलक लगाता है, छै तागों का तार (जनेऊ) धारण करता है। यदि वह दुर्मति होकर क्षुद्र व्यवहार करता है, तो उसे धिक्कार है।

साहुकार तो नाम को, करे ठगी को काम।
सैनो धंधो पाप को, धरमदास हे नाम॥ 248॥

सैन कहते हैं– नाम तो साहूकार है, काम ठगी का करते हैं। पाप का धंधा करते हैं किन्तु नाम धर्मदास है।

दारू तज धंधो करो, मांस तजो जड़मूल।
सैना जुओ जम गणो, मति करजो कोई भूल॥ 249॥

सैन कहते हैं– शराब और मांस का त्याग कर दो और अपना धंधा करते रहो। जुआ यम के समान है। उसे अपनाने की भूल तो कभी भी मत करना।

पूजा बड़ी भगवंत की, बड़ो जाप तप ध्यान।
सैना हगरां ती बड़ो, मानव सेवा जान॥ 250॥

सैन कहते हैं– परमात्मा की सेवा-पूजा, तप-जाप, ध्यान सब श्रेष्ठ काम हैं, किन्तु इनसे भी बड़ी मानव सेवा होती है।

मद्यपान

मद पी दुरवचनी करे, करतो फिरे धमाल।
सैना ना खुद खुस रहे, ना घर रहे खुसाल॥ 251॥

सैन कहते हैं– जो व्यक्ति मद्य पान कर अपशब्द बोल-बोलकर धमाल करता है, वह न तो खुद खुश रह जाता है, न घर-परिवार सुखी रह जाता है।

बेटी

बेटी पे आपद घणी, नोचे कागा स्वान।
ऐसी दुरदसा बणी, नस्ट हो रह्यो मान॥ 252॥

सैन कहते हैं- बेटी पर बहुत मुसीबत है, कौए और श्वान की तरह उसे नोचा जा रहा है। उसकी ऐसी दुर्दशा हो रही है कि उसका सम्मान तक नष्ट हो गया है।

दाँव लगा गिरवी करे, जनमतां ले प्रान।
सैना कन्या ने जनम, क्युँ देवो भगवान॥ 253॥

सैन कहते हैं- बेटी को दाँव पर लगाया जाता है, गिरवी रखा जा रहा है, पैदा होते ही उसे मार दिया जाता है। हे भगवान! आप कन्या को जन्म ही क्यों देते हैं?

बेटी कर दी हाट बिकानी, बेपढ़ निपट गँवार।
सेना मूँछा बंट दे, केवाने सिरकार॥ 254॥

सैन कहते हैं- बेटी को बाजार की वस्तु बना दिया है। उसे अनपढ़ और निपट-गँवार बना दिया है। ये लोग स्वयं को सरकार, ठाकुर, जागीरदार कहते हैं और मूँछों पर ताव लगाते हैं।

कन्या दो कुल तार दे, सदा राखजो ध्यान।
सैना वर ने सोपजो, मति कर दीजो दान॥ 255॥

सैन कहते हैं- कन्या दो कुल तारणहार होती है। यह सदा ध्यान रहे। उसे सम्मान सहित वर को सौंपना, दान में मत देना।

अन्तःसाक्ष्य

सैना मन चित रमि गयो, तुरतंई दक्खन देस।
रहेस भेस बोली करी, सहजी जेसो देस॥ 256॥

सैन कहते हैं- मेरे मन और चित्त में दक्षिण देश तुरन्त रम गया है। यहाँ की रहनी, यहाँ का पहनावा और बोली भी सहज रूप से जैसा देश वैसा भेष के रूप में मैंने स्वीकार कर ली है।

सैना डंको बजि गयो, खरो बुलावो जाण।
तन मन चित पुरका गयो, सोवूँ सीरक ताण॥ 257॥

सैन कहते हैं- यम का डंका बज गया है। इसे खरा बुलाव मान ले। मेरा तन-मन और चित्त पुलकित हो गया है। मैं निश्चिन्त होकर (सीरक- रजाई तानकर) सो रहा हूँ।

बाँधवगढ़ रे वासणो, बाघेलां का राज।
सेना सेवा राज की, नाई ऊजल समाज॥ 258॥

सैन कहते हैं– मैं बाँधवगढ़ का रहवासी हूँ। यहाँ बाघेलों का राज्य है। मेरी राज्य की सेवा है। मैं उज्ज्वल नाई समाज का हूँ।

पुण्य जग्यो रैदास को, सद्‌गुरु रामानंद।
सैना तारक मंत्र दे, लागी थाप आनंद॥ 259॥

सैन कहते हैं– रैदास के पुण्य उदय हुए कि उन्हें रामानन्द जी जैसा सद्‌गुरू मिला, जिन्होंने तारक मंत्र देकर पीठ पर आनन्द की थपकी लगा दी।

सीता सती सरगां गई, टोडे नगर मझार।
सैना राजा ने करी, पूरी सार सम्हार॥ 260॥

सैन कहते हैं– सती सीता सहचरी टोडे नगर में स्वर्ग सिधार गईं। उनकी सारी साज-सम्हार टोडा के राजा ने ही की।

ज्ञान मिल्यो सद्‌गुरु कृपा, दी कबीर ने बाट।
सैना पीपे संग दियो, नेहो धन्ने जाट॥ 261॥

सैन कहते हैं– सद्‌गुरू से ज्ञान प्राप्त हुआ, कृपा मिली, कबीर ने मार्ग सुझाया, पीपा ने संग दिया और धन्ना जाट ने स्नेह दिया।

कर समाध सीता सती, पीपे कर्‌यो प्रनाम।
सैना संगत साध की, अतरी लीखी राम॥ 262॥

सीता सहचरी की समाधि बनाकर पीपाजी ने उन्हें प्रणाम किया और कहा– राम ने हमारी इतनी ही संगत लिखी थी।

पीपा की संगत करी, टोडा ती गगरोन।
सैना संगम की गुफा, मिल्यो पौन में पौन॥ 263॥

सैन कहते हैं– टोडा से गागरोन तक मैंने संत पीपा की संगत की। गागरोन में संगम गुफा (कालीसिंध और आहूँ का संगम) पीपाजी का महाप्राण हो गया। पवन में पवन मिल गया।

लोकाचार

मुखियो बाजे गाम को, मोटी बाँधे पाग।
सैना न्याव न कर सके, मुखिया पन पे दाग॥ 264॥

गाँव का मुखिया कहलाये, सिर पर बड़ी पाग बाँधे, किन्तु न्याय नहीं कर सके, तब सैन कहते हैं- ऐसा करना मुखियापने पर कलंक है।

ठाकर को बेटो कँवर, बेंगुणियो इतराय।
सैना पूत गरीब को, गुणी नजर नी आय॥ 265॥

सैन कहते हैं- ठाकुर का गुणहीन बेटा इतराता फिरता है, किन्तु गरीब के गुणी बेटे पर किसी का ध्यान नहीं जाता।

राजा की बेटी भगे, सोयंवर बण जाय।
सैना बेटी दीन की, बदचलनी कहलाय॥ 266॥

सैन कहते हैं- राजा की बेटी भाग जाए तो उसने स्वयंवर कर लिया, ऐसा कहा जाता है। किसी दीन, गरीब की बेटी भाग जाये तो उसे बदचलन कहा जाता है।

आज हे सो राज हे, करो पुण्य को काम।
सैन काल तो काल हे, बीत्यो सो सिरिधाम॥ 267॥

सैन कहते हैं- वर्तमान ही महत्त्वपूर्ण है। यही हमारा कर्मक्षेत्र है। इसलिए पुण्य के काम कर लो। कल का क्या भरोसा। कल तो काल है जो बीत गया, वह श्रीधाम चला गया।

आज सुधर्‌यो काल सुभ, बीत्या ती लो सीख।
सैना आज सुधार्‌यो, मन में रहे न बीख॥ 268॥

यदि हमारा वर्तमान सुधर गया, तब कल सुधर ही जाएगा। जो बीत गया, उस कल के अनुभव से सीखकर आज वर्तमान को सुधार ले। इससे मन में भय नहीं रहेगा।

सैना आज सँवार ले, काल सँवर्‌यो जान।
कर को हीरो फैंक ने, खोदे कठन खदान॥ 269॥

सैन कहते हैं- वर्तमान को सुधार लो। वर्तमान सुधरा कि भविष्य तो सुधर ही जायेगा। वे कहते हैं- हाथ का हीरा फेंककर खदान के कठोर पत्थरों को खोदने से क्या लाभ?

राज-पाठ मठ-मेड़ियाँ, हरती-फरती छाँव।
सैन भगत थिरता मिले, सिमर हरि को नाँव॥ 270॥

राज-पाट, महल-मेड़ियाँ ये आज और की, कल दूसरे की होंगी। सैन कहते हैं- चित्त में स्थिरता तो केवल हरि स्मरण में ही है।

सुख-दुख तो हेरो करे, एक आत एक जात।
सैना एसो जानिए, होय रात-परभात॥ 271॥

सैन कहते हैं- सुख-दु:ख तो आते-जाते रहते हैं। एक आता है, दूसरा जाता है। वे कहते हैं- इन्हें तो ऐसा जानिये, जैसे रात और प्रभात है।

पूरबजा सूरज चढ़या, खूब कमायो नाम।
सैना थारी सोच ले, थारो कठे मुकाम॥ 272॥

सैन कहते हैं- पूर्वजों ने खूब यश कमाया। वे सूर्य की भाँति दैदीप्यमान हुए। खूब नाम कमाया। तू तेरी सोच, तूने क्या किया और तेरा क्या स्थान है?

बड़ो नाम रघुवंश को, सरगां सूदी नाम।
सैना खुद का करम ती, रघुवीर कहाया राम॥ 273॥

रघुवंश का यश बहुत बड़ा है। उनका स्वर्ग लोक तक यश था, किन्तु श्रीराम वंश के कारण यशस्वी नहीं हुए। उन्होंने स्वयं अपना यश अर्जित किया और 'रघुवीर' कहलाये।

बाँझ

पूत परायो मार ने, करे पूत की आस।
सैना ऐसी बाँझड़ी, जुग-जुग पावे त्रास॥ 274॥

सैन कहते हैं- बाँझ स्त्री (तंत्र-मंत्र के वश होकर) दूसरे के पुत्र मारकर अपने लिए पुत्र की आस रखती है। उसे इस पाप कर्म से पुत्र तो प्राप्त नहीं होता, उल्टे उसे युग-युग, जन्म तक त्रास भोगना पड़ता है।

कोख उजाड़े जननि की, अधमो पाप कमाय।
सैना एसी डाकणी, बाँझ बणी रेह जाय॥ 275॥

सैन कहते हैं- जो बाँझ स्त्री (या कोई भी स्त्री) दूसरी माता की कोख उजाड़ती है। बदले में उसी की कोख उजड़ जाती है, ऐसी डाकन स्त्री सदा बाँझ ही बनी रहती है।

मन चित ने कब्जे करो, जसतर अस्व लगाम।
राम सुमर धंधो करो, सैना सँवरें काम॥ 276॥

सैन कहते हैं- मन और चित को वश में कर लो, जैसे लगाम लगाकर अश्व को वश में कर सकते हैं। वे कहते हैं- राम का स्मरण करते हुए धंधा करोगे तो सारे काम सँवर जाएँगे।

हल मल रेहजो प्रेम ती, मति करजो तकरार।
सैना कद चलणो पड़े, चला-चली संसार॥ 277॥

सैन कहते हैं- सबसे हिल-मिलकर प्रेम से रहो। किसी से भी तकरार मत करो। यह संसार चला-चली का है। क्या पता कब चलने का हुकुम आ जाये।

सतगुरू ने किरपा करी, खोल्या रिदै कपाट।
सैना तमसो मिटि गयो, मिली सुमारग बाट॥ 278॥

सैन कहते हैं- सद्गुरू ने कृपा कर हृदय के कपाट खोल दिये हैं। सारा अँधेरा समाप्त हो गया है और सुमार्ग का पथ प्रशस्त हो गया है।

पारख

पारख बिन जाणे नहीं, अगम निगम को भेद।
सैना सद्गुरु परख्या, न पुराण न वेद॥ 279॥

सैन भगत कहते हैं- पारख ज्ञान के बिना अगम-निगम के भेद को नहीं जाना जा सकता। सैन कहते हैं- मुझे वेद या पुराण के बल पर नहीं, बल्कि पारख ज्ञान के द्वारा सद्गुरू ने परख लिया है।

साखी बिन आँखी नहीं, नहिं साखी बिन ज्ञान।
सैना घट बिच राम बिन, नहिं लग पावे ध्यान॥ 280॥

सैन भगत कहते हैं- साखी ज्ञान की आँखें हैं। साखी के बिना परख कठिन है। यदि घट के भीतर राम हों तो ध्यान लगा पाना सरल होता है।

एक राम घट भीतरां, इक मूरत के बीच।
सैना नजरां दरस लूँ, हरसूँ आखाँ मीच॥ 281॥

सैन भगत कहते हैं- एक राम घट के भीतर हैं, एक राम मूरत में हैं। मैं राम को आँखों से देख सकता हूँ। आँखें मीच कर घर के भीतर भी दर्शन कर सकता हूँ।

पहलो पागल हे कबीर, दूजा पीपो जाण।
सैना दोई के वई, राम प्रभु पेहचाण॥ 282॥

सैन भगत कहते हैं- एक पागल तो कबीर है, दूसरे पीपाजी हैं। दोनों को पारख ज्ञान प्राप्त है। इन्होंने राम प्रभु को जान लिया है।

सद्‌गुरु रामानंदजी, जगगुरु सुन्दर श्याम।
सैना ब्रह्मस्वरूप हे, हिरदै घट में राम॥ 283॥

सैन भगत कहते हैं- सद्‌गुरू रामानन्दजी हैं, जगतगुरू सुन्दरश्यामजी हैं। दोनों ही ब्रह्मस्वरूप हैं। हृदय में राम का निवास है।

सेवा करतां राज की, उमर वई सैंतीस।
सैना सद्‌गुरु सुभ घड़ी, दी थापी आसीस॥ 284॥

राज्य की सेवा करते-करते उमर सैंतीस वर्ष हो गई है। सैन कहते हैं- शुभ घड़ी में सद्‌गुरू ने आशीर्वाद देकर धन्य कर दिया।

सद्‌गुरु आया राज में, जुड़्यो जोग संजोग।
सैना सेवा मिस गयो, तुरत लगाई धोग॥ 285॥

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू स्वयं राज में (बाँधवगढ़ महलों में) पधारे, यह जोग-संजोग मिल गया। मैं तो महलों में सेवा चाकरी के नियमित कारण गया था। वहीं उनके दर्शन हो गये। मैंने तुरन्त उन्हें धोक लगा दी (चरण स्पर्श कर लिये)।

नाम दियो मेहर करी, सद्‌गुरु रामानंद।
सैना साथे लै गया, छूट गया सब फंद॥ 286॥

सैन भगत कहते हैं- उन्होंने मुझ पर कृपा कर नाम-मंत्र प्रदान कर दिया। मुझे अपने साथ ले गये। संसार के सभी फंद मिट गये।

सैन भगत साँची कहूँ ...

महाकाल दरसन कर्‌यो, केदारा को ध्यान।
सैन भगत साँची कहूँ, घट भीतर भगवान॥ 1॥

मैंने महाकाल के दर्शन किये, केदारेश्वर के दर्शन किये। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ- भगवान तो मेरे भीतर बैठा है।

पीपा धन्ना सदमता, सदमतयो रैदास।
सैन भगत साँची कहूँ, सद्‌गुरु की अरदास॥ 2॥

पीपा, धन्ना और रैदास सद्‌मति प्राप्त संत थे। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, सबको सद्‌गुरू की कृपा का फल प्राप्त था। उन्होंने सद्‌गुरू की अरदास की थी।

पीपा धन्ना तिरिगया, तिरसी अवस कबीर।
सैन भगत साँची कहूँ, म्हारे हिरदै धीर॥ 3॥

पीपा, धन्ना तिर गये हैं, कबीर भी अवश्य तिरेंगे। सबका उद्धार होगा। सैन कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, मेरे हृदय में धैर्य है। मेरा भी अवश्य उद्धार होगा।

साँचा सद्‌गुरु मीलिया, सद्‌गुरु रामानंद।
सैना जाजर नाव हे, म्हारे मन आनंद॥ 4॥

सच्चा गुरू मिला है, वे हैं सद्‌गुरू रामानन्द। मेरी नाव जर्जर है, पुरानी है। वे अवश्य पार उतारेंगे, मेरे मन में आनन्द है।

सद्‌गुरु पाका खेवट्या, भवनद तारणहार।
सैना रिदै भरोस हे, अवस उतारे पार॥ 5॥

मेरे सद्‌गुरू पक्के खेवट्ये (नाविक) हैं। भवनद से पार उतारने में सक्षम हैं। मुझे पूरा विश्वास है, मुझे अवश्य पार उतारेंगे।

नाव जरजरी सैन की, गेहरो खूब अमंद।
सैन भगत साँची कहूँ, खेवणहार बुलंद॥ 6॥

सेन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, मेरी नाव चाहे जर्जर है, चाहे भवसागर खूब गहरा है, किन्तु नाविक बुलन्द है। अवश्य पार उतारेगा।

पण्डो बैठ्यो घाट पे, करे मुगति बेपार।
सैन भगत साँची कहूँ, विषय-वासना मार॥ 7॥

घाट पर बैठा पण्डा मुक्ति का व्यापार कर रहा है। सैन भगत कहते हैं- मुक्ति चाहिए तो विषय-वासना का नाश करो।

सद्‌गुरु की शरणा गया, मिटे वृथा अभमान।
सैन भगत साँची कहूँ, आवे पारख ज्ञान॥ 8॥

सद्‌गुरू की शरण में जाने पर व्यर्थ का अभिमान नष्ट हो जाता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, सद्‌गुरु की शरण जाने पर ही पारख ज्ञान प्राप्त होता है।

परख ज्ञान सद्‌गुरु दियो, खुलि गया ज्ञान कपाट।
सैन भगत साँची कहूँ, तन मन उपज्यो ठाठ॥ 9॥

सद्‌गुरू ने पारख ज्ञान देकर ज्ञान के कपाट खोल दिये। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, तन-मन में ठाठ उत्पन्न हो गया है।

दो कौड़ी को सेन थो, हाट बिके नहिं बाट।
सैना सद्‌गुरु परस से, खुल्या ज्ञान कपाट॥ 10॥

सैन कहते हैं- मैं दो कौड़ी का था। न तो हाट में कीमत थी, न किसी वाट में। सद्‌गुरू के स्पर्श से ज्ञान कपाट खुल गये।

एक भरोसो राम को, सो ही साँचो सांइ।
सैन भगत साँची कहूँ, खुद बाण आया नांइ॥ 11॥

सैन भगत कहते हैं- मुझे एक राम का ही भरोसा है, वह सच्चा स्वामी है। मेरी लाज बचाने के लिए खुद नाई बनकर आ गये।

वेस धर्‌याँ कोई नी तरे, जनक तर्‌या नी वेस।
सैन भगत साँची कहूँ, मेरो रागदुवेस॥ 12॥

भेष धारण करने से किसी का उद्धार नहीं होता। जनक ने कोई वेश धारण नहीं किया था। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, मन में से राग-द्वेष निकाल दो तो उद्धार होगा।

जिनकी मोह माया मिटी, वो जन तिर्‌या जान।
सैन भगत साँची कहूँ, जल में कमल समान॥ 13॥

जिनके मन से मोह-माया समाप्त हो जाती है, समझो उनका उद्धार हो गया। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, जो व्यक्ति जल में कमल के समान जीवन जीता है, उसका उद्धार अवश्य होता है।

नरग-सरग बेमतलबां, दोई धरा मुकाम।
सैन भगत साँची कहूँ, करनी-भरनी धाम॥ 14॥

नर्क और स्वर्ग बेमतलब की बात है। दोनों धरती पर हैं। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, करनी-भरनी सब यही है।

वन्दौ गुरु अर राम ने, बिरछ धरा गुरुधाम।
सैन भगत साँची कहूँ, रदै रहे निहकाम॥ 15॥

मैं अपने सद्‌गुरू राम की, वृक्ष, धरा तथा गुरुधाम की वंदना करता हूँ। सैन भगत कहते हैं- ह्दय में निष्काम भाव आवश्यक है।

गुरु गोविन्द ने एक गण, धिरता राखे पूर।
सैन भगत साँची कहूँ, मिट जाय गरब गरूर॥ 16॥

गुरू और गोविन्द को एक समान जानकर उन पर पूरी आस्था रखना चाहिए। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ इस भाव से ह्दय से अहंकार नष्ट हो जायेगा।

गुरु अर पारस एक सम, परस्याँ ऊजल होय।
सैन भगत साँची कहूँ, तन मन ऊजली होय॥ 17॥

गुरू और पारस एक समान हैं। जिस प्रकार पारस के स्पर्श से लोहा कंचन हो जाता है, उसी प्रकार गुरू के कृपा स्पर्श से तन-मन निर्मल हो जाता है।

गुरु अर कंचन एक सम, जानि लेहुँ मन माहिं।
सैन भगत साँची कहूँ, कंचन करे सुभाहिं॥ 18॥

गुरू और कंचन एक समान हैं। यह सदा ध्यान में रहे। सैन भगत कहते हैं– जिस प्रकार कंचन खरा होता है, सच जानो गुरू भी हमें खरा कर देता है। वह स्वयं खरा होता है।

चार दिनाँ की जीनगी, कर ले सुथरा काम।
सैन भगत साँची कहूँ, जग सिमरेगा नाम॥ 19॥

यह जीवन चार दिनों का है, अच्छे काम कर लो। सैन भगत कहते हैं– मैं सच कहता हूँ, संसार सदा तुम्हें याद रखेगा।

यो तन सेमल के समां, फूल खिले दन बीस।
सैन भगत साँची कहूँ, नाम सिमर ले ईस॥ 20॥

यह सेमल के समान है। बीस दिनों तक फूल खिलते हैं, फिर झड़ जाते हैं। यह जीवन भी इसी प्रकार क्षणभंगुर है। सैन भगत कहते हैं– मैं सच कहता हूँ, ईश्वर के नाम का स्मरण कर लो।

सेमल के फल लागतां, मिट्ठू राखे आस।
सैन भगत साँची कहूँ, होए अन्त निरास॥ 21॥

सेमल वृक्ष पर फल लगने पर मिट्ठू उन्हें खाने की आशा में वहाँ मुकाम बनाता है, किन्तु जब फल पकते हैं, तब उनमें से न रस निकलता है, न गिरी। केवल पोची रुई निकलती है। तोता अन्त में निराश हो जाता है। यह संसार भी सेमल के फल के समान ही है।

पारस कंचन कर सके, पारस करे न मूल।
सैन भगत साँची कहूँ, सद्गुरु करे अनकूल॥ 22॥

पारस अपने स्पर्श से लोहे को कंचन तो बना सकता है, किन्तु स्वयं के समान पारस नहीं बना सकता। सैन भगत कहते हैं कि– सद्गुरू शिष्य को अपने समान बना सकता है।

सो तन भाड़ा में मिल्यो, बण बेठ्यो मगरूर।
सैन भगत साँची कहूँ, बाहर कढ़े जरूर॥ 23॥

यह तन तो किराये पर मिला है। तू इसे स्वामी बनकर अपना मान बैठा है। मगरूर हो रहा है। एक दिन तुझे बाहर निकलना पड़ेगा।

खीसो तो खाली पड़्यो, बिणजण आयो हाट।
सैना पूँजी जोड़ ले, नाम सिमर धर बाट॥ 24॥

जेब तो खाली है और हाट में खरीदी करने आया है। सैन कहते हैं– पहले पूँजी जोड़ ले, फिर मार्ग पर कदम रखना।

गुरु किरपा माने नहीं, गुरु विरोध जताय।
सैन भगत साँची कहूँ, ऊ नुगरो केहलाय॥ 25॥

जो व्यक्ति गुरू कृपा नहीं मानता और गुरू का विरोध करता है। सैन भगत कहते हैं– मैं सच कहता हूँ, वह व्यक्ति नुगरा कहलाता है।

जद भी जस विसनाग बण, घट भीतर धस जाय।
सैन भगत साँची कहूँ, पतन दुवार खुल जाय॥ 26॥

जब यश विषनाग की भाँति घट भीतर बैठ जाता है, तब अहंकार जन्म लेता है। सैन भगत कहते हैं– सच मानो ऐसा होने पर पतन का द्वार खुल जाता है।

जस अर मान सम्मान ने, जाणो एक तेवार।
सैन भगत साँची कहूँ, बीते तिथि अर वार॥ 27॥

यश और सम्मान को एक त्योहार की तरह जानो। सैन भगत कहते हैं– सच मानो, जिस प्रकार तिथि-वार बीत जाते हैं, वैसे वह समय भी बीत जाता है।

गुरु ती विद्या ले करे, खुद पे गरब गुमान।
सैन भगत साँची कहूँ, सो नर नुगरो जान॥ 28॥

जो व्यक्ति गुरू से विद्या लेकर स्वयं पर अहंकार कर गुरू की कृपा को नकारता है। सैन भगत कहते हैं– सच कहता हूँ, वह व्यक्ति नुगरा है।

झूठ कपट कर ले गयो, जो सद्‌गुरु ती ज्ञान।
सैन भगत साँची कहूँ, सो नर अधम समान॥ 29॥

जो व्यक्ति झूठ, कपट करके गुरू से ज्ञान प्राप्त कर ले। सैन भगत कहते हैं– ऐसा व्यक्ति अत्यन्त अधम माना जायेगा।

झूठ कपट की वीधा, वकत पड्याँ बिसराय।
सैन भगत साँची कहूँ, करण दसा वै जाय॥ 30॥

जो व्यक्ति झूठ-कपट से विद्या प्राप्त करता है। उसे वह विद्या आवश्यकता पड़ने पर भूल जाती है, जैसी करण को भूल गयी थी।

भलो कर्‌यो सो भूल ग्यो, करे पलट ने हाण।
सैन भगत साँची कहूँ, सो नर नुगरो जाण॥ 31॥

जो व्यक्ति किसी के द्वारा अपने प्रति किये गये उपकार को भूल जाता है तथा पलटकर उस उपकारी को हानि पहुँचाता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, ऐसा व्यक्ति नुगरा कहलाता है।

ज्ञान दीप सद्‌गुरु दियो, मन चित वियो उजास।
सैन भगत साँची कहूँ, पूरण वैइ गी आस॥ 32॥

सद्‌गुरू ने ज्ञान का प्रकाश दिया, उससे मन चित्त में ज्योति फैल गयी। सैन भगत कहते हैं- ज्ञान प्रकाश से मन की आशा पूर्ण हो गयी।

जो सरगुण सोई निरगुणो, दोनोइ एक समान।
सैन भगत साँची कहूँ, एकहिं नाम हे राम॥ 33॥

जो सगुण है, वही निरगुण भी है। दोनों एक ही हैं। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, एक ही नाम सगुण भी है, निर्गुण भी है।

सातहिं खण्डे एक पसारो, एकहि सिरजनहार।
सैन भगत साँची कहूँ, राम नाम निरधार॥ 34॥

सातों खण्डों में एक परमात्मा का विस्तार है। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, यह विस्तार राम नाम का ही है।

चातक तरस्यो मर सके, पिये न डाबर नीर।
सैन भगत साँची कहूँ, राखे मन-चित धीर॥ 35॥

चातक प्यासा मर जाना स्वीकार कर सकता है, किन्तु डाबर का जल नहीं पियेगा। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, मन-चित्त में अपने इष्ट के प्रति धैर्य और दृढ़ विश्वास रखना चाहिए ।

कलप ब्रिछ की आस में पीपल ने बिसराय।
सैन भगत साँची कहूँ, रीतो ही रेह जाय॥ 36॥

जो व्यक्ति कल्पवृक्ष की आशा में पीपल की उपेक्षा कर देता है। सैन भगत कहते हैं- उसे न कल्पवृक्ष प्राप्त होता है, न पीपल वृक्ष।

सद्मतगत साँचो रहे, साँचा बोले बोल।
सैन भगत साँची कहूँ, सतवंती अनमोल॥ 37॥

जो नारी सद्मत और सद्गत सत्य पर अडिग रहती है, सदा सत्य बोलती है। सैन भगत कहते हैं- ऐसी सतवन्ती नारी अनमोल है।

सतवंती सत पे अटल, हरगिज डिगे न मूल।
सैन भगत साँची कहूँ, सपने करे न भूल॥ 38॥

सतवन्ती सदा सत पर अटल रहती है। चाहे जो हो जाये, सत्य से नहीं डिगती। सैन भगत कहते हैं- सपने में भी सत्य को नहीं त्यागती।

घर-घर में तुलसां लगे, बाड़े लागे नीम।
सैन कहे साँची कहूँ, दोई बड़ा हकीम॥ 39॥

घर-घर में तुलसी तथा बाड़े में नीम लगाना चाहिए। सैन भगत कहते हैं कि- सच जानिये, दोनों ही बड़े वैद्य हैं।

विषयां में फँस्यो रहे, बाहर निकर न पाय।
सैन भगत साँची कहूँ, सद्गुरु देवे भान॥ 41॥

शब्द के बिना वेद, पुराण और अन्य सभी ज्ञान गूँगे हैं। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, सद्गुरू ही शब्द का भान करवा सकते हैं।

देख्यो सो भी सच नहीं, सुण्यो सो भी कूड़।
सैन भगत साँची कहूँ, बिन परख्याँ सब मूढ़॥ 42॥

हम जो देख रहे हैं, वह भी सच नहीं हो सकता तथा जो सुनते हैं, वह भी झूठ हो सकता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, बिना परखे विश्वास करना मूर्खता है।

पारस जाणो सद्गुरु, सिक्ख लोह खण्ड जाण।
सैन भगत साँची कहूँ, परस्याँ होय पिछाण॥ 43॥

सद्गुरू पारस मानो और लौह खण्ड को शिष्य जानिये। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कह रहा हूँ, स्पर्श करने से पूरी पहचान हो पायेगी।

दुख तो वाँ को कीजिये, जो चिरजीवी होय।
सैन भगत साँची कहूँ, दुख न व्यापे कोय॥ 44॥

दुख उसके जाने का करना उचित है। जो चिरजीवी हो, जो विनाशी है, उसका दुख करना उचित नहीं है।

सबद बिगर नहिं हो सके, अगम-निगम को ज्ञान।
सैन भगत साँची कहूँ, बिना सबद नहिं भान॥ 45॥

शब्द के बिना आगम-निगम का ज्ञान नहीं हो सकता। सैन भक्त कहते हैं- मैं सत्य कहता हूँ कि बिना शब्द के ज्ञान सम्भव नहीं है।

कलप बिरछ सरगाँ कहें, सरग जाण अनमान।
सैन भगत साँची कहूँ, पीपर कलप समान॥ 46॥

कहते हैं- कल्पवृक्ष स्वर्ग में है। स्वर्ग तो केवल अनुमान है। सैन भगत कहते हैं- पीपल को ही कल्पवृक्ष मानना उचित है।

हिरदा भीतर हरि बसें, पल-पल जाऊँ भूल।
सैन भगत साँची कहूँ, जमी आरसी धूल॥ 47॥

हरि तो हृदय में बस रहे हैं, मैं पल-पल उसे भूलकर बाहर खोजने लगता हूँ। सैन भगत कहते हैं- सच मानिये, भीतर काँच पर धूल (माया) जमी है, उसे हटाने पर हरि दर्शन हो जाएँगे।

संत भरोसे राम के, गुरु चरणा आधार।
सैन भगत साँची कहूँ, भखे चकोर अंगार॥ 48॥

संत राम और गुरू चरणों के भरोसे रहते हैं। सैन भगत कहते हैं- सच मानिये, इसी विश्वास के बल चकोर अंगार को खा जाता है।

गंगा प्रगटी गुरु कृपा, साँचो मन रैदास।
सैन भगत साँची कहूँ, हिरदै करो उजास॥ 49॥

रैदास के मन की सत्यता और गुरूकृपा के कारण गंगा रैदास की कछोरी में प्रगट हुई है। सैन भगत कहते हैं- सच मानिये, हृदय में उजास (सत्यनिष्ठा) हो तो कुछ भी सम्भव है।

पीपो कूद्यो समंद में, रिदै अटल बीसास।
सैन भगत साँची कहूँ, पहुँच्यो हरि के पास॥ 50॥

मन में अटल विश्वास लेकर पीपा समुद्र में कूद गया। सत्य मानिये, यदि इष्ट के प्रति दृढ़ विश्वास हो तो पीपा की तरह हरि के दर्शन सम्भव हो जाते हैं।

दरद न जाणे और को, खुद को करे बखान।
सैन भगत साँची कहूँ, बहुत बड़ो नादान॥ 51॥

जो व्यक्ति दूसरों का दर्द नहीं जानता और अपना ही दुख बखानता रहता है। सैन भगत कहते हैं- वह व्यक्ति सबसे बड़ा मूर्ख है। अज्ञानी है।

धन मद पद मद रूप मद, आखिर होय तबाह।
सैन भगत साँची कहूँ, चालो सहजी राह॥ 52॥

धन-मद, पद-मद और रूप-मद अन्ततः विनष्ट हो जाते हैं। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि सदा सहज भाव से ही रहो। अहंकार मत करो।

मद को फोड़ो पाक्याँ, पड़े डील में दाह।
सैन भगत साँची कहूँ, सद्‌गुरु बणे जराह॥ 53॥

अहंकार का फोड़ा जब पक जाता है, तब पूरे शरीर में पीड़ा होने लगती है। जहर फैल जाता है। सैन भगत कहते हैं- सच मानो, तब सद्‌गुरू ही शल्य-क्रिया करने के लिए शल्य चिकित्सक (जराह-यूनानी) बनते हैं।

गरब न कण को टिक सक्यो, बीत्या रावण कंस।
सैन भगत साँची कहूँ, बाकी रह्यो न वंस॥ 54॥

अहंकार किसी का भी टिक नहीं सकता। इसी अहंकार के कारण रावण और कंस का नाश हुआ। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ कि उनका वंश तक समाप्त हो गया।

पीपे संग सीता रही, अजब निभाई रीत।
सैन भगत साँची कहूँ, अटल राम संग प्रीत॥ 55॥

पीपाजी के साथ सीताजी भी संन्यासिनी बनकर रहीं। उन्होंने अद्‌भुत रूप से अपनी रीति निभाई। सैन कहते हैं कि मैं सच कह रहा हूँ कि उन्होंने राम के साथ अटल प्रीत निभाई। वे धन्य थीं।

सोई निरगुण सगुण हे, सोई किरसन राम।
सैन भगत साँची कहूँ, अगण धराया नाम॥ 56॥

वही निर्गुण है, वही सगुण भी है, वही कृष्ण और राम भी है। सैन भगत कहते हैं- सच जानो, उसी के अनगिनत नाम हैं।

माया तजी न मोह तज्यो, तज नहिं पायो मान।
सैन भगत साँची कहूँ, भेख धर्‌यो बेभान॥ 57॥

माया, मोह, अहंकार तो त्याग नहीं पाया। सैन भगत कहते हैं- सच मानो, इस प्रकार भेष धारण करना व्यर्थ है।

माला मनका हाथ ले, साध रटे हरिनाम।
सैन भगत साँची कहूँ, मन भटके घर-गाम॥ 58॥

माला-मनका हाथ में लेकर साधु हरि का नाम जपता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि उसका मन उसके घर और गाँव में भटकता रहता है। ऐसे जाप से क्या लाभ?

टुकड़ा खाए गिरत्थ का, करे नहीं उपगार।
सैन भगत साँची कहूँ, तिनको नहीं उद्धार॥ 59॥

जो साधु, संत, फकीर आदि गृहस्थ का टुकड़ा खाता है और लोक कल्याण नहीं करता, किसी का उपकार नहीं करता- मैं सच कहता हूँ कि उसका कभी भी उद्धार नहीं हो सकता।

भेख धरे सत नी धरे, सतगुरू नहिं सहार।
सैन भगत साँची कहूँ, तिनको नहिं उद्धार॥ 60॥

जो व्यक्ति भेष धारण कर लेता है, किन्तु सत्य को हृदय में नहीं धरता तथा जिसे सद्‌गुरू का सहारा नहीं है। सैन कहते हैं- सच जानो, उसका उद्धार कभी भी नहीं हो सकता।

भेख धार पीवे चिलम, देवे दारू धार।
सैन भगत साँची कहूँ, तिनको नहिं उद्धार॥ 61॥

जो व्यक्ति भेष धारण कर ले (संन्यास ले-ले), फिर चिलम पीये और दारू पीये। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, ऐसे व्यक्ति का कभी भी उद्धार नहीं हो सकता।

गुरु थापे नुगरो बणे, बिरथा करे अंकार।
सैन भगत साँची कहूँ, तिनको नहिं उद्धार॥ 62॥

यदि कोई व्यक्ति गुरू की स्थापना करे (दीखा ले), फिर नुगरा बन जाये, व्यर्थ का अहंकार करे। सैन भगत कहते हैं- सच मानना, ऐसा नुगरा, अहंकारी का कभी उद्धार नहीं हो सकता।

मनसे वाचे करमणे, साध रहे जो नेक।
सैन भगत साँची कहूँ, सद्‌गुरु राखे टेक॥ 63॥

मन, वचन और कर्म से जो साधु नेक अर्थात् सुमार्गी रहता है। सैन भगत कहते हैं- सच मानना, उसकी सद्‌गुरू लाज रखते हैं।

लाखीणो वण ने कहूँ, जिनकी सम्पति नाम।
सैन भगत साँची कहूँ, हिरदै वसता राम॥ 64॥

मैं लखपति उसे मानता हूँ, जिनकी सम्पत्ति 'राम' का नाम है। सैन कहते हैं- सच कहता हूँ। कि उस व्यक्ति के हृदय में राम का वास होता है।

सद्मत समद्रस्टो रहे, निरखे सब जिव राम।
सैन भगत साँची कहूँ, सो जन जनक समान॥ 65॥

जो व्यक्ति समदृष्टि वाला और सद्मति वाला होता है, जो सबमें राम के दर्शन करता है, सैन कहते हैं- सच जानो, वह जनक समान होता है।

नदी ताल अर कूप को, करे जो मैलो नीर।
सैन कहे साँची कहूँ, भोगे रौरक पीर॥ 66॥

जो व्यक्ति नदी-तालाब-कुएँ के जल को गंदा करता है। सैन भगत कहते हैं- वह नर रौरक नर्क की यातना भोगता है। यह सत्य है।

नरग-सरग जो कहूँ, हगरा धरती धाम।
सैन भगत साँची कहूँ, सबको अठे मुकाम॥ 67॥

नर्क, स्वर्ग जो भी हैं, सब धरती पर ही हैं। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि सबका मुकाम यहीं इसी धरती पर ही है।

पुण्य खिर्‌याँ आणो पड़े, पाछो धरती लोक।
सैन भगत साँची कहूँ, धरती करां सलोक॥ 68॥

पुण्य क्षय हो जाने पर यदि फिर से इसी धरती पर लौटना निश्चित है। तब सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि हम धरती को ही सलोक (स्वर्ग तुल्य) बना दें।

करम कर्‌या जो जगत में, पड़े भोगना आप।
सैन कहे साँची कहूँ, ना बेटो ना बाप॥ 69॥

हमने जो भी और जैसे भी कर्म किये हैं, उनका फल अच्छा या बुरा हमें ही भोगना पड़ेगा। उसे न हमारा बेटा भोगेगा, न बाप।

पुण्य-पाप माँ-बाप का, सत पीढ़ी तइं जाय।
सैन कहे साँची कहूँ, पछतावो पलटाय॥ 70॥

माँ-बाप के पाप-पुण्य, यश-अपयश सात पीढ़ियों तक को भोगना पड़ता है। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ कि केवल पश्चाताप ही उन्हें पलट सकता है।

बदनामी संतान की, कुल कूँ दाग लगाय।
सैन कहे साँची कहूँ, कोइक सके मिटाय॥ 71॥

संतान की बदनामी पूरे कुल-वंश को कलंकित कर देती है। सैन भगत कहते हैं- कुल में कोई ऐसा (पुण्य फल से) जन्म ले लेता है, जिसके कारण कुल कलंक मिट जाता है।

काम क्रोध मद ईर्ष्या, ध्यान कर्‌याँ छुट जाय।
सैन भगत साँची कहूँ, हगरा पाप नसाय॥ 72॥

काम, क्रोध, मद (अहंकार), ईर्ष्या, ध्यान-योग से छूट जाते हैं। सैन भगत कहते हैं- सच जानो, ध्यान से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं।

वस्तर धोवे ऊजला, मल-मल धोवे देह।
सैन भगत साँची कहूँ, भरी भीतरां खेह॥ 73॥

वस्त्र खूब उजले धो लिये, तन को भी खूब मल-मलकर स्वच्छ कर लिया। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि भीतर घट में (खेह) मैल भरा है। उसको धोना आवश्यक है।

मन चंचल मन चुलबुला, पल दूरां पल पास।
सैन भगत साँची कहूँ, मन माया को दास॥ 74॥

मन चंचल है, मन चुलबुला है, यह कभी पास रहता है, कभी दूर चला जाता है। सैन भगत कहते हैं- यह मन तो माया का दास है। मैं सच कहता हूँ कि इसे वश में करना होगा।

साध संत सब थाक्या, सक्या न मन ने साध।
सैन कहे साँची कहूँ, बिरथा करे अराध॥ 75॥

साधु, संत सब थक गये हैं, कोई भी मन को नहीं साध सका। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, ये सब व्यर्थ में आराधना करते हैं।

मन असवो चंचल घणो, झेले नहीं लगाम।
सैन भगत साँची कहूँ, हिरदै राखो राम॥ 76॥

मन रूपी अश्व बहुत चंचल है, उसे लगाम लगाना बहुत कठिन है। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, यदि 'हिरदै' में राम हों तो मन रूपी अश्व को वश में किया जा सकता है।

मन चंगो मन ऊजलो, मन गंगा को नीर।
सैन भगत साँची कहूँ, मन ज्युं संत फकीर॥ 77॥

मन स्वस्थ, मन उज्ज्वल, मन गंगा नीर के समान पावन। सैन भगत कहते हैं- सच कहूँ तो मन संतों-फकीरों जैसा निर्मल होना चाहिए।

मन चित राखे समरसो, वे संतोखी धीर।
सैन भगत साँची कहूँ, जाणो संत फकीर॥ 78॥

जिसका मन और चित समरस (एकाग्र) हो, जो संतोषी और धैर्यवान हो। सैन भगत कहते हैं- ऐसे व्यक्ति को संत-फकीर मानना चाहिए।

सद्‌गुरु ती ऊँचो नहीं, कोई बड़ो मुकाम।
सैन भगत साँची कहूँ, सद्‌गुरु तीरथ धाम॥ 79॥

सद्‌गुरू से ऊँचा किसी का भी स्थान नहीं है। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, सतगुरू ही तीर्थ धाम है।

एक राम एक सद्‌गुरु, तीजो हे भटकाव।
सैन भगत साँची कहूँ, एक ठाँव ठहराव॥ 80॥

राम और सद्‌गुरू के सिवा यदि अन्य के प्रति आस्था रखते हो, तो भटकाव हो सकता है। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, एक ही आस्था रखना उचित है। चित्त को स्थिर रखना चाहिए।

मन चित्त देख्या ऊजला, ज्युँ गांगा को नीर।
सैन भगत साँची कहूँ, पीपा नाम कबीर॥ 81॥

सैन भगत कहते हैं- सच मानो, यदि किसी का मन और चित्त मैंने गंगा के जल के समान निर्मल-पावन देखा है तो वह है पीपा, नामदेव और कबीर का।

सद्‌गुरु की किरपा बणे, सँवरें सगरे काम।
सैन भगत साँची कहूँ, कोड़ी लगे न दाम॥ 82॥

सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि यदि सद्‌गुरू की कृपा हो जाये तो सभी काम सँवर जाते हैं। उसमें न कौड़ी खर्च होती है, न पैसा।

दारू पी पड्‌यो रहे, मैला में खरड़ाय।
सैन भगत साँची कहूँ, शूकर जोनी पाय॥ 83॥

जो व्यक्ति दारू पीकर पड़ा रहे और मैले में लथपथ हो जाये। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि ऐसा व्यक्ति शूकर (भंडूरा-ग्राम शूकर) की योनि में जायेगा।

होंपयो मति खाजो कोई, होंपयो हाँप नी खाय।
सैन भगत साँची कहूँ, वंस नास वै जाय॥ 84॥

सौंपी हुई अमानत मत नकारना, अमानत तो साँप भी नहीं खाता। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि ऐसे व्यक्ति का वंश नाश हो जाता है।

करजो ले देतां नटे, खा-पी मौज उड़ाय।
सैन भगत साँची कहूँ, बल की जोनी पाय॥ 85॥

कर्ज लेकर लौटाने में मना कर दे, उस धन को अय्याशी में खर्च कर दे। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि ऐसा व्यक्ति बैल की योनि पाता है।

तोड़ावे रिश्तो बण्यो, छल कर चुगली खाय।
सैन भगत साँची कहूँ, घोर नरक में जाय॥ 86॥

जो व्यक्ति किसी (बालक/बालिका) का तय किया हुआ रिश्ता छल, कपट, चुगली द्वारा भंग करवाता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि वह व्यक्ति घोर नर्क में जाता है।

गोचर भूमि हाँक ले, कबजो कर हरसाय।
सैन भगत साँची कहूँ, अवगतयो वै जाय॥ 87॥

जो व्यक्ति गोचर भूमि हाँककर उस पर कब्जा करके हर्षित होता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि ऐसा व्यक्ति अधोगति को प्राप्त होता है।

चारो जारे गाय को, पाणी न तरसाय।
सैन भगत साँची कहूँ, नरक ठौर नहिं पाय॥ 88॥

जो व्यक्ति गायों (पशुओं) का घास जलाता है, उनको पानी के लिए तरसाता है। सैन भगत कहते हैं- उसे नर्क में भी स्थान नहीं मिलता।

खुद को पूत जने नहीं, जननी ने सरपाय।
सैन भगत साँची कहूँ, जनम-जनम दुख पाय॥ 89॥

जो बाँझ खुद तो संतान पैदा नहीं करती और जो जनती है, उसे श्राप (बद्दुआ) देती है, ऐसी बाँझ स्त्री जनम-जनम दुख भोगती है।

शील हरे हत्या करे, कुल कूँ दाग लगाय।
सैन भगत साँची कहूँ, वेतां ही मर जाय॥ 90॥

जो अधम किसी कन्या का शील हरण करता है, फिर उसकी हत्या करता है। ऐसा कुलघाती, कुलकलंकी बेटा पैदा होते ही मर जाये, तो अच्छा है।

सतवंती को सत हरे, लाज शरम नहीं आय।
सैन भगत साँची कहूँ, श्वान योनी पाय॥ 91॥

जो व्यक्ति सतवन्ती नारी का सत हरण करता है, ऐसा दुष्कर्म करते हुए तनिक भी लज्जा नहीं आती। सैन भगत कहते हैं- उस निर्लज्ज व्यक्ति को श्वान योनि प्राप्त होती है।

गाम गली भमतो फिरे, गदड़ा ज्युँ मदकाय।
सैन भगत साँची कहूँ, गदड़ा योनी पाय॥ 92॥

जो व्यक्ति गाँव, गली में आवारागर्दी करता फिरे और गधे के समान मस्ती करता फिरे, सैन भगत कहते हैं- वैसे मदान्ध को गधे की योनी प्राप्त होती है।

मैं-मैं बकरी ने करी, धर दी छुरी खटीक।
सैन भगत साँची कहूँ, मैं कहनो नहिं ठीक॥ 93॥

बकरी ने मैं-मैं की तो खटीक ने गर्दन पर छुरी धर दी। सैन भगत कहते हैं- मैं (अहंकार) करना ठीक नहीं है।

सरणागत के साथ में, कर लेवे जो घात।
सैन भगत साँची कहूँ, अधमी ओछी बात॥ 94॥

जो व्यक्ति अपने शरणागत के साथ ही घात कर ले। सैन भगत कहते हैं- वह अत्यन्त नीच तथा ओछी प्रकार की बात है।

तू-तू करना सीख लो, मैं उपजे अभमान।
सैन भगत साँची कहूँ, मैं मति हिरदै आन॥ 95॥

सैन भगत कहते हैं- यह बात मैं सच कह रहा हूँ कि 'तू' (ईश्वर) कहना सीखो, 'मैं' (मेरा) भाव त्याग दो। इसी में भलाई है।

वचन कहे नटनी करे, उपजावे संताप।
सैन भगत साँची कहूँ, खूब बड़ो यो पाप॥ 96॥

वचन देकर मुकर जाना बहुत बुरा है, इससे संताप उत्पन्न होता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कह रहा हूँ, इससे बड़ा कोई पाप नहीं है।

सरणे आवे आपके, ले हिरदै में आस।
सैन भगत साँची कहूँ, करजो मति निरास॥ 97॥

जो कोई आपकी शरण में आये उसे निराश मत करो, यथाशक्ति उसे सहयोग दो। सैन भगत कहते हैं- उसे निराश मत करो।

धरती में दाणो उगे, सब जीवां को सीर।
सैन भगत साँची कहूँ, साखी हे रघुवीर॥ 98॥

धरती में जितना अन्न उत्पन्न होता है, उसमें सबका भाग है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि स्वयं परमात्मा रघुवीर साक्षी है।

मूरतकारो एक हे, माटी एक समान।
सैन भगत साँची कहूँ, अन्तर करे जहान॥ 99॥

मूर्तिकार एक ही है। मिट्टी भी एक समान है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि संसार के लोग इसमें भेद उत्पन्न कर देते हैं।

सरजनहारो एक हे, धर दिया नाम अनेक।
सैन भगत साँची कहूँ, असल नाम हे एक॥ 100॥

सृजनहार एक ही है। लोगों ने उसके अनेक नाम रख दिये हैं। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि असल नाम तो एक ही है।

एक धरम, एकहि मजब, एकहि राम रहीम।
सैन भगत साँची कहूँ, एकहि कृसन करीम॥ 101॥

सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि दुनिया में एक ही धर्म और एक ही मजहब है। राम-रहीम भी एक हैं। कृष्ण-करीम भी एक हैं। हमने वृथा भिन्न-भिन्न कहकर भेद उत्पन्न कर दिये हैं।

एक बात ती ऊपजे, एकहि माँ का पूत।
सैन भगत साँची कहूँ, एकहि रुई का सूत॥ 102॥

सैन भगत कहते हैं- सच जानना, मैं सच कहता हूँ कि दुनिया के सब जीव एक ही बाप से उत्पन्न हुए हैं तथा एक ही माँ के जाये हैं। सब एक ही रुई के सूत हैं।

चाहे कर लो आरती, चाहे पढ़ें निमाज।
सैन भगत साँची कहूँ, उसे नहीं इतराज॥ 103॥

सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि हम चाहे आरती करें, चाहे नमाज पढ़ें, ईश्वर को कोई एतराज नहीं है। वह तो मन की शुद्धता देखता है।

भूले हित उपकार ने, कपट करे इतराय।
सैन भगत साँची कहूँ, नुगरो जाण्यो जाय॥ 104॥

जो व्यक्ति किसी के उपकार को भूल जाता है। ऐसा करके वह कपट करता हुआ इतराता भी रहता है। उसे कृतघ्न (नुगरा) कहा जाता है। मैं सच कहता हूँ।

चिड़िया चुग्गे खेत में, कंकर मार गिराय।
सैन भगत साँची कहूँ, अधमो पाप कमाय॥ 105॥

जो व्यक्ति खेत में चुगती हुई चिड़िया को कंकर मारकर गिरा देता है, मार डालता है, घायल कर देता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि वह व्यक्ति अधम है और पाप कमाता है।

छोरो तो सीरो भखे, छोरी खावे घाट।
सैन भगत साँची कहूँ, अणमें झूठो ठाठ॥ 106॥

बेटे को तो हलवा खिलाये और बेटी को मक्की के आटे की उबली घाट। सैन कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, यह अनुचित है। भेदभाव केवल झूठा ठाठ ही है।

छोरो तो वारिण बणे, छोरी पर घर जाए।
सैन भगत साँची कहूँ, दोनों वंस तराय॥ 107॥

बेटा तो सम्पत्ति का वारिस बनता है और बेटी पराये घर चली जाती है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि दोनों ही क्रमशः वंश की वृद्धि करते हैं व उद्धार करते हैं। भेदभाव उचित नहीं है।

दुख पड्याँ में बेटी तपे, बेटो मर्‍याँ आय।
सैन भगत साँची कहूँ, बेटो मौज उड़ाय॥ 108॥

दुख पड़ने पर बेटी ही माँ-बाप की सहायक होती है। बेटा तो मरने के बाद पहुँचता है। लोकाचार निभाता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ, बेटा तो बाप की सम्पत्ति पर मौज उड़ाता रहता है।

दुखियाँ का दुख मेट दे, वण का मोटा भाग।
सैन भगत साँची कहूँ, थोड़ो करो तियाग॥ 109॥

दुखियों के दुख दूर करे वही भाग्यशाली है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि थोड़ा-त्याग करने की आदत डालो।

दो दाना चिड़िया चुगे, चुगतां ही उड़ जाय।
सैन भगत साँची कहूँ, धान नहीं खुट पाय॥ 110॥

चिड़िया केवल दो दाने चुगकर उड़ जाती है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि चिड़िया के चुगने से अन्न खत्म नहीं होता।

भूखाँ ने भोजन मिले, तरसाँ प्यास बुझाय।
सैन भगत साँची कहूँ, मोटो जगन कराय॥ 111॥

भूखे लोगों को भोजन देंवे तथा प्यासों की प्यास बुझायें। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ कि यह बहुत बड़ा यज्ञ करवा गया है।

राम प्रभु संतान दी, देओ शुद्ध विचार।
सैन भगत साँची कहूँ, विद्या तारणहार॥ 112॥

राम प्रभु ने संतान दी है तो हम उसका पालन-पोषण शुद्ध संस्कार देकर करे। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि विद्या से ही उद्धार हो सकता है।

धरती वापाँ एक कण, सौ कण कर लौटाय।
सैन भगत साँची कहूँ, धरती माँ कहलाय॥ 113॥

धरती में एक कण बोते हैं, वह हमें सौ दाने लौटाती है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि इसीलिए धरती माता कहलाती है।

जाणी तत्त पैदा हुओ, नहिं वण की पेहचान।
सैन भगत साँची कहूँ, सद्‌गुरु देवें भान॥ 114॥

जिस तत्त्व (ब्रह्म) से जीव उत्पन्न हुआ, वह उसी को (माया-मोह में पड़कर) भूल जाता है। सद्‌गुरू ही अपने ज्ञान द्वारा भान करवाते हैं।

धरमहीन डूबे अतल, करम हीन परवार।
सैन भगत साँची कहूँ, दोई सर्‌याँ भवपार॥ 115॥

धर्महीन अतल में डूब जाता है। कर्महीन परिवार सहित डूब जाता है। सैन भगत कहते हैं- जब दोनों सुधर जाएँ, तब भवसागर पार उतर सकते हैं।

गो गंगा गीता धरा, जननी एक समान।
सैन भगत साँची कहूँ, पाँचइ तीरथ जान॥ 116॥

गऊ, गंगा, गीता, धरा और जननी - ये पाँचों एक समान हैं। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि इन पाँचों को तीर्थ समान मानना चाहिए।

जनम-मरण प्रभु हाथ में, करम-धरम निज हाथ।
सैन भगत साँची कहूँ, सत-चित रह्याँ सनाथ॥ 117॥

जन्म-मरण तो प्रभु के हाथ है, किन्तु कर्म और धर्म हमारे हाथ है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि सदा सत्य चित्त रहो। इससे प्रभु भी तुम्हारे साथ रहेंगे। तुम सनाथ कहलाओगे।

खोद-खोद ने काढ़या, सारा जग का बाँक।
सैन भगत साँची कहूँ, अपने भीतर झाँक॥ 118॥

हमने सारे संसार के बाँक को ढूँढ-ढूँढकर निकाल लिये हैं। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि हमने अपने भीतर नहीं झाँका। अपने भीतर झाँककर अपने बाँक भी हम ढूँढे।

जीवतयाँ सेवे नहीं, पाछे करे सराध।
सैन भगत साँची कहूँ, बेमाफियो अपराध॥ 119॥

जीते जी तो माता-पिता की सेवा नहीं करते। मरने के पश्चात् श्राद्ध करते हैं। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि यह अक्षम्य अपराध है।

मात-पिता ने त्रास दे, बूढ़पणो घनघोर।
सैन भगत साँची कहूँ, पावे जोनी ढोर॥ 120॥

जो व्यक्ति अपने माता-पिता को बुढ़ापे में त्रास देता है। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि उसे पशु की योनि प्राप्त होती है।

साहिब तो भीतर बसे, तू ढूँढे जग बीच।
सैन भगत साँची कहूँ, तन की आँखाँ मीच॥ 121॥

साहिब (परमात्मा) तो हमारे भीतर बस रहा है और हम उसे बाहर ढूँढ रहे हैं। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ कि तन की आँखें बंद करके मन में झाँक प्रभु के दर्शन हो जाएँगे।

मन निरमल रैदास को, गंगा प्रगटी ठाम।
सैन भगत साँची कहूँ, बड़ो भरोसो राम॥ 122॥

रैदास का मन निर्मल था, तब उनके बर्तन (कछोरी) में गंगा प्रकट हो गई। सैन भगत कहते हैं- राम (परमात्मा) पर भरोसा होना चाहिए।

चम्बल न्हाओ सीपरा, नरमद गंगा न्हान।
सैन भगत साँची कहूँ, मन निरमलता आन॥ 123॥

चाहे हम चम्बल, क्षिप्रा, नर्मदा अथवा गंगा में स्नान करें। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ कि इस स्नान से तभी निर्मलता आयेगी, जब हमारा मन निर्मल होगा।

सद्‌गुरु के चरणा नमूँ, हिरदै राखूँ सम।
सैन भगत साँची कहूँ, साँसाँ सुमरूँ नाम॥ 124॥

मैं सद्‌गुरू चरणों में नमन करता हूँ, हृदय में राम परमात्मा को स्थापित रखता हूँ। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि साँस-साँस में नाम स्मरण करता रहता हूँ।

सत्संगियाँ साधाँ नमूँ, पीराँ करूँ सलाम।
सैन भगत साँची कहूँ, सबका मालिक राम॥ 125॥

मैं अपने सभी सत्संगियों को नमन करता हूँ। सभी पीरों को सलाम करता हूँ। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि सबका मालिक एक राम ही है।

अल्ला ईश्वर एक हे, क्युँ दिया दो नाम।
सैन भगत साँची कहूँ, वंदन करूँ तमाम॥ 126॥

अल्लाह और ईश्वर एक है, दो नाम क्यों दिये हैं? सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि मेरे मन में सभी संतों-पीरों-फकीरों के लिए समान भाव है। मैं सबका वन्दन करता हूँ।

संत फकीर संग-संग चलें, करें मरम की बात।
सैन भगत साँची कहूँ, पूछे धरम न जात॥ 127॥

संत और फकीर साथ-साथ चलते हैं, रहते हैं। मर्म की चर्चा करते हैं। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि दोनों न तो धर्म पूछते हैं, न जाति पूछते हैं।

सद्‌गुरु रामानंद ने, किरपा करी सुनाम।
सैन भगत साँची कहूँ, दियो सबद को नाम॥ 128॥

सद्‌गुरू रामानन्द ने कृपा कर सुनाम (सार्थक-हितकारी) कृपा कर दी। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ, उन्होंने मुझे शब्द रूपी नाम का दान देकर धन्य कर दिया।

सैना से साई हुओ, रामानंद परताप।
सैन भगत साँची कहूँ, साँस उसासाँ जाप॥ 129॥

मैं सैना से साई (संत) हुआ। यह रामानन्द सद्‌गुरू का प्रताप है। सैन भगत कहते हैं- सच कहता हूँ कि मैं साँस-साँस से सद्‌गुरु रामानन्द का जाप करता हूँ।

दया भाव जिनके रिदै, निसदिन सिमरें नाम।
सैन भगत साँची कहूँ, तिनके हिरदै राम॥ 130॥

जिनके हृदय में दया का भाव है, जो दिन-रात नाम का जाप करते हैं। सैन भगत कहते हैं- मैं सच कहता हूँ कि उनके हृदय में राम बसते हैं।

सैन कहे...

सगुण

पट पीताम्बर धार्‌यो, सीस मुकुट मणि मोर।
सैना के हिरदै बसैं, मुरलीधर चितचोर॥ 1॥

पीताम्बर रेशमी धारण किए, शीश पर मणियों से जड़ित मोर पंखों से सज्जित मुकुट धारण किए चित्तचोर मुरलीधर मेरे हृदय में बस रहे हैं।

सुध-बुध हगरी भूल गी, हुआ एक टक नैण।
दरस हरस मन-चित्त हुओ, इकरस होया नैण॥ 2॥

दर्शन करते ही मन-चित्त हर्षित हो गया। एक रसता आ गई। सुध-बुध भूल गई। नयन एकटक दर्शन में लीन हो गए।

साहिब का दरसन विया, भूल्यो जोग अर नेम।
सैन जल मरी वासना, होयो जोग संजोग॥ 3॥

साहिब (परमात्मा) के दर्शन हो गए। जोग और भोग दोनों भूल गए। वासना जलकर नष्ट हो गई। योग का संयोग हो गया।

रूप निरखतां क्रसन को, हुओ चित चितरंग।
सैन कहे अमरत पियो, रूप निरख बहुरंग॥ 4॥

कृष्ण का रूप निरखकर चित्त चित्रमय हो गया। सैन कहते हैं- विविध रंगी सुन्दर स्वरूप निरखकर ऐसा लगा मानो अमृतपान कर लिया हो।

निर्गुण

सैन बस्या हरि भीतरा, हरि सेना के माँय।
जीव ब्रह्म अर सद्‌गुरु, सबद कथन के नाँय॥ 5॥

हरि मुझमें हैं और मैं हरि में बसता हूँ। जीव ब्रह्म और सद्‌गुरू में न तो अन्तर है और न उनको शब्दों में बखाना जा सकता है। वे तो शब्दातीत हैं।

सगुण-निर्गुण

राम कहूँ किरसन कहूँ, निरगुन कहूँ सरूप।
सैन कहे ऊजल दिखे, एक सरीखो रूप॥ 6॥

राम कहूँ अथवा कृष्ण, निर्गुण कहूँ अथवा सगुण। सैन कहते हैं- मुझे तो सारा रूप-स्वरूप ज्योर्तिमय एक समान दिखता है।

सगुण रूप धर कृसन ने, दीयो दरस कराय।
सैन कहे सोई भीतराँ, जग-मग नजराँ आय॥ 7॥

कृष्ण ने सगुण रूप धरकर मुझे दर्शन दे दिए। सैन कहते हैं- वही रूप मेरे अन्तर्घट में भी ज्योतित हो रहा है। भीतर बाहर एक ही परमात्मा है

सगुण-निर्गुण का फेर में, भटक्यो चारी धाम।
सैन कहे सद्‌गुरु कृपा, पायो थिरत मुकाम॥ 8॥

सगुण और निर्गुण के फेर में मैं चारोधाम भटकता फिरा, अन्ततः सद्‌गुरू की कृपा से मुझे स्थिरता प्राप्त हुई है। भ्रम समाप्त हो गया।

जेसो रूप सरूप हे, वैसोई भीतर दीठ।
सैन कहे भेदो नहीं, दोनोई लागे मीठ॥ 9॥

जैसा रूप-सरूप दर्शन है, वैसा ही भीतर घट में भी है। मुझे तो सगुण-निर्गुण में कुछ भेद नहीं दिखता। दोनों मीठे (मनभावन) लगते हैं।

मोक्ष मुगति चाहूँ नहीं, चाहूँ न सरग मुकाम।
सैन कहे हिरदै बसो, सरगुण-निरगुण राम॥ 10॥

मुझे न मोक्ष चाहिये, न मुक्ति चाहिये, न स्वर्ग चाहिये। हे राम! आप सगुण-निर्गुण रूप में मेरे हृदय में निवास करो।

कंवला पति हिरदै बसें, नवल किशोर जहान।
सैन कहे दोनों छवि, दरसूँ एक समान॥ 11॥

सैन कहते हैं- हृदय में कँवलापति का निवास है, जगत् में नवलकिशोर कृष्ण बसते हैं। मैं दोनों छवियाँ एक समान देखता हूँ।

सद्‌गुरू

ज्ञान चखू सद्‌गुरु दिया, अन्तरमन परकास।
सैन कहे जगमग हुओ, भीतर को आकास॥ 12॥

सद्‌गुरु ने ज्ञान चक्षु प्रदान कर अन्तर्मन को प्रकाशित कर दिया। सारा अज्ञान अंधकार नष्ट हो गया। भीतर का हृदयाकाश जगमगा उठा।

भीतर मन आकास में, दरस लियो बरमांड।
सैन कहे सद्‌गुरु कृपा, गयो चितेरो मांड॥ 13॥

सद्‌गुरू की कृपा से मैंने भीतर घट में सारा ब्रह्माण्ड देख लिया। सैन कहते हैं- उस अज्ञात चितेरे ने भीतर ब्रह्माण्ड की छवियाँ चितरा दीं।

सद्‌गुरु आँख उघाड़ दी, होया दरस उजास।
सैन कहे हिरदै हुओ, राम प्रभु को वास॥ 14॥

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू ने ज्ञान चक्षु खोल दिये। एक अद्‌भुत ज्योति के दर्शन हो गये। हृदय उस ज्योति से जगमगा उठा। भीतर घट में राम प्रभु का निवास हो गया।

वेद पुराण गुणि संत जन, जाण न पावे सार।
सैन कहे सद्‌गुरु कृपा, भगत करे निरधार॥ 15॥

वेद, पुराण, गुणीजन, संतजन कोई भी उस अज्ञात, अगम्य को नहीं जान सका। सद्‌गुरू की कृपा से भक्त उसे जान पाते हैं।

कथा जगन व्रत तीरथा, सद्‌गुरु चरणा बीच।
सैन कहे सरणां गयां, करें नेह की सींच

कथा, यज्ञ, व्रत और तीर्थ, सब सद्‌गुरू के चरणों में बसते हैं। सैन कहते हैं- सद्‌गुरू की शरण जाने पर वे स्नेह से सींच देते हैं।

भवसागर गेहरो घणो, जरजर नाव सवार।
सैन कहे आरत करो, सद्गुरु तानरहार॥ 17॥

भवसागर बहुत गहरा है। मैं जर्जर नाव में सवार हूँ। ऐसी स्थिति में सद्गुरू से आर्त पुकार करने पर वे अवश्य पार उतारेंगे।

अन्तरजामी सद्गुरु, हरे शिष्य संताप।
सैन कहे मन सुद्ध कर, जप लो अजपा जाप॥ 18॥

सद्गुरू तो अन्तर्यामी हैं। वे शिष्य के संताप को सहज भाव से हर लेते हैं। वे मन के कलुष दूर कर मन को शुद्ध कर देते हैं। इसलिए सदा अजपा जाप जपते रहो।

भवसागर नैया फँसी, दिखे ने खेवनहार।
सैन कहे बलि सद्गुरु, झट आ कर दी पार॥ 19॥

सैन कहते हैं- मेरी नाव भवसागर में फँस गई। कोई खेवनहार नहीं दिख रहा था। सद्गुरू की बलिहारी उन्होंने आकर मेरी नैया पार लगा दी।

मोह दलदल में मन फँस्यो, गेहरो गढ़तो जाय।
सैन कहे सद्गुरु कृपा, मिले तो बाहर आय॥ 20॥

मेरा मन मोह पंक में फँस गया है। यह गहरे से गहरा गड़ता ही जा रहा है। सैन भगत कहते हैं- सद्गुरु की कृपा से ही यह बाहर आ सकता है।

सुख-दुख मन व्यापे नहीं, एसो होवे ज्ञान।
सैन कहे सद्गुरु कृपा, बगर न हावे भान॥ 21॥

सैन कहते हैं- यदि सद्गुरू की कृपा हो जाये, तब सुख-दुख का प्रभाव मिट जाता है। सद्गुरू कृपा बिना यह सम्भव नहीं है।

विषय वासना मोहवश, भूल्यो सद्मत भान।
सैन कहे सद्गुरु शरण, सदा होय कल्यान॥ 22॥

विषय, वासना और मोह में फँसकर सद्मति भ्रमित हुई। सद्गुरू की शरण जाने पर कल्याण हो सकता है।

सबद दियो सद्गुरु सहज, पायो सहजो ज्ञान।
सैन कहे दोई मिटी, उग्यो भीतर मान॥ 23॥

शब्द का ज्ञान देकर सद्‌गुरू ने सहज भाव जागृत कर दिया। मन का भ्रम मिट गया। सैन कहते हैं- भीतर घट में ज्ञान का सूर्योदय हो गया।

चित्त में वासो राम को, नासे कुटिल विचार।
सैन कहे गुरु ज्ञान की, जोत चित्त में धार॥ 24॥

चित्त में परमात्मा राम का वास होने पर समस्त कुटिल विचार नष्ट हो जाते हैं। सैन कहते हैं- गुरू ज्ञान से चित्त में ज्योति जगमगा उठती है।

सद्‌गुरु पाका पारखी, साँची करे पिछाण।
सैन कहे काढ़े तुरत, साँच-झूठ की जाण॥ 25॥

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू पूरे पारखी हैं। इन्हें सच्ची व खरी पहचान आती है। वे तुरन्त सच और झूठ को जान लेते हैं।

जीव

सैन ब्रह्म अर सद्‌गुरु, एसो हुओ मिलाप।
संसय की दुई मिटी, मिटिगयो सब संताप॥ 26॥

सैन कहते हैं- ब्रह्म और जीव का ऐसा मिलाप हुआ कि दोनों का भेद मिट गया। हृदय का संताप दूर हो गया।

नदिया सागर में मिले, एकमेव वई जाय।
सैन कहे परब्रह्म में, अपणो जीव मिलाय॥ 27॥

जिस प्रकार नदी सागर में मिलकर एकमेव हो जाती है। सैन कहते हैं- उसी प्रकार हम परब्रह्म में स्वयं को लीन कर दें।

सुवरण गल गेहणों बणे, भांतक रूप धराय।
सैन कहे गेहणो गले, फेर सुवणस केहलाय॥ 28॥

जिस प्रकार स्वर्ण को गलाकर गहना बनाया जाता है, उसका रूप बदलता है, चरित्र नहीं। वही गहना जब गलता है, तब फिर स्वर्ण बन जाता है। सैन कहते हैं- यह स्थिति ब्रह्म और जीव की है।

जीव ब्रह्म ती नीसरे, भांतक रूप धराय।
सैन कहे परब्रह्म में, मिले ब्रह्म वई जाय॥ 29॥

जीव, ब्रह्म से विलग होकर भाँति-भाँति के रूप धारण करता है। सेन कहते हैं- पुनः ब्रह्म में मिल जाने पर ब्रह्म हो जाता है।

जीव ब्रह्म को अंस है, राखो सदा सम्हार।
सैन कहे यो पामणो, नी आवे हर बार॥ 30॥

यह जीव ब्रह्म का ही अंश है, इसलिए इसे सम्हालकर रखो। सैन कहते हैं- यह मेहमान है, पता नहीं कब चला जाये और पता नहीं कब लौटे- न भी लौटे।

संत

संत जणा को दास हूँ, पीवूँ चरण पखार।
सैन कहे अमरत समाँ, हिरदै आवे ठार॥ 31॥

सैन कहते हैं- मैं संतों का दास हूँ। उनके चरण पखार कर पीता हूँ। उनका चरणामृत हृदय में शीतलता प्रदान करता है।

संत जणा ने पूजतां, आवे मन आनंद।
सैन कहे तुरतां मिटे, मन को संसय द्वन्द्व॥ 32॥

संतों को पूजने से मुझे आनन्दानुभूति होती है। उनकी पूजा से मन के द्वन्द्व मिट जाते हैं।

संत कहूँ सत पथ चले, करे अहम को त्याग।
सैन कहे मन चित धरे, राम प्रभु अनुराग॥ 33॥

सैन कहते हैं- संत वह होता है जो सत्य मार्ग पर चलता है और अहंकार का त्याग कर देता है तथा मन-चित्त में राम का प्रेम धारण करता है।

संत दया को रूप हे, दया करे निसवार।
सैन कहे ज्युँ वादरो, वरसा करे निधार॥ 34॥

संत दया का रूप होता है, जो सब पर निस्वार्थ भाव से दया करता है। सैन कहते हैं- जिस प्रकार बादल बिना पक्ष लिये वर्षा करता है, उसी प्रकार संत भी दया करता है।

संत सूरजो वादरो, करे न भेद-दुराव।
सैन कहे थिर भाव ती, किरपा करे सुचाव॥ 35॥

संत सूर्य और बादल के समान बिना भेदभाव के सब पर एक जैसी कृपा करता है।

निस दिन हरि जिह्वा भजे, सतसंग करे समाव।
सैन कहे सोई संत हे, निश्छल रहे सुभाव॥ 36॥

जो निसिदिन हरि नाम रटता रहे, सत्संग करे तथा निश्छल स्वभाव रहे। सैन कहते हैं– वही सच्चा संत है।

संतां को कुल जगत में, तीन लोक विस्तार।
सैन कहे सबमें लखे, ब्रह्म रूप साकार॥ 37॥

संतों का कुल तीनों लोकों में विस्तारित है। वह सबमें साकार ब्रह्म का रूप देखता है।

सुपथ दिखाते संत जन, मेटें करस कसार।
सैन कहे समरस रहे, हिरदो सदा उदार॥ 38॥

सैन कहते हैं– संत सबको सद्‌मार्ग दिखाते हैं, हृदय से समस्त ऐषणाएँ दूर करते हैं। सदा समरस और उदार रहते हैं।

संता की वाणी बसे, सद्‌मत वेद पुरान।
सैन कहे शरणा गयां, मले साँच को भान॥ 39॥

वेदों, पुराणों में संतों की ही वाणी है। संतों की शरण जाने पर सबको सत्य का भान हो जाता है।

संत भगत सेवा नहीं, धर्‌यो नहिं चितसार।
सैन कहे गुरु ज्ञान बिन, नी होवे निधार॥ 40॥

संतों व भक्तों की सेवा नहीं की, चित्त में सत्य धारण नहीं किया। सैन कहते हैं– गुरू ज्ञान बिना कोई निर्धारण नहीं हो सकता।

सत्संग

संत मिल्याँ ती वई गयो, मन निरमल निरधार।
सैन कहे सत्संग ती, उतरे भव नद पार॥ 41॥

संतों के परस्पर मिलने पर सत्संग करने से मन निर्मल होता है तथा संसार सागर से पार उतरने में सहायता मिलती है।

भजन करे भगवंत को, जुड़े जठे सतसंग।
सैन कहे हरि भगति को, निखरे अद्‌भुत रंग॥ 42॥

सैन कहते हैं– जहाँ सत्संग जुड़ता है, जहाँ भगवान का भजन होता है, वहाँ हरिभक्ति का अद्‌भुत आनन्द होता है।

तीरथ ब्रत पूजा जगन, बरजन करूँ न कोय।
सैन कहे सत्संग ते, तन-मन निरमल होय॥ 43॥

सैन कहते हैं– व्रत, पूजा, यज्ञ मैं किसी को मना नहीं करता, किन्तु सत्संग से तन-मन निर्मल हो जाता है।

सत्संगत पारस मणि, परस्याँ करे अमोल।
सैन कहे कंचन करे, एक सबद को मोल॥ 44॥

सत्संग पारस मणि के समान है, जिसके स्पर्श से अमूल्य हो सकते हैं। सैन कहते हैं– जिस प्रकार पारस मणि लौह को स्पर्श कर कंचन कर देती है, उसी प्रकार सत्संग के शब्द प्रभाव से सब खोट दूर होकर मन खरा हो जाता है।

ब्रह्म ज्ञान चर्चा सुणे, क्रोध शमन वै जाय।
सैन कहे निरमल हृदय, रीस करेस मिटाय॥ 45॥

ब्रह्म ज्ञान की चर्चा सुनने पर क्रोध शान्त हो जाता है। सैन कहते हैं– हृदय निर्मल हो जाता है और क्रोध, ईर्ष्या और क्लेश मिट जाता है।

समर्पण

भगतां के वस में रहे, क्रसन राधका नाथ।
सैन कहे पग डगमग्यो, झट भर लीयो बाथ॥ 46॥

राधा के नाथ कृष्ण भक्तों के आधीन रहते हैं। सैन कहते हैं– मेरा पाँव जब भी डगमगाया-भटका, उन्होंने झट बाँहों में भरकर सम्हाल लिया।

सद्‌मत सद्‌गत दे प्रभु, खूब कियो उपकार।
सैन कहे ढांढस दियो, साहिब तारणहार॥ 47॥

सैन कहते हैं– तारणहार साहिब परमात्मा ने सद्‌मति और सद्‌गति देकर मुझ पर बहुत उपकार किया है। मुझे खूब ढाँढस बँधाया है।

सिमरण

बाहर को मोह त्याग दे, भीतर करे निवास।
सैन कहे हरि नाम ने, सिमरे साँस-उसाँस॥ 48॥

बाहर का मोह त्याग कर भीतर अन्तर्मन में निवास करें। सैन कहते हैं- साँस-उसाँस हरि का नाम स्मरण करना चाहिए।

पतित पावन नाम हे, स्मरयां करे सुचन्न।
सैन कहे ज्युँ-ज्युँ रटो, त्युँ-त्युँ उजरे मन्न॥ 49॥

परमात्मा का नाम पापों को क्षय करने वाला है। स्मरण से मन जागरूक रहता है। सैन कहते हैं- ज्यों-ज्यों नाम का स्मरण होगा, त्यों-त्यों मन उज्ज्वल होता जायेगा।

रात-दिनां माला जपे, तृस्ना मन भटकाय।
सैन कहे मन सुद्ध वे, जद हरि दरसन पाय॥ 50॥

रात-दिन माला जपते रहें, मन तृष्णा के वश हो भटकता रहे। सैन कहते हैं- यदि मन शुद्ध हो तभी हरि के दर्शन हो सकते हैं।

काम क्रोध मद ईरसा, लोभ द्वेस अंकार।
सैन कहे हरिनाम भज, तज दे सबै विकार॥ 51॥

सैन कहते हैं- काम, क्रोध, मद, ईर्ष्या, लोभ, द्वेष और अहंकार का त्याग कर हरिनाम भजन करो। सभी विकारों को त्याग दो।

या देवी नसवर गणो, आखिर होवे राख।
सैन कहे हरिभजन बिन, नी बच पावे साख॥ 52॥

यह देह नश्वर है, अन्ततः जलकर राख हो जायेगा। सैन कहते हैं- हरि भजन के बिना साख नहीं बच सकती।

नाम सिमर मन राचियो, म्हारे मन आनंद।
सैन कहे अब नी चखूँ, अमरत को आनंद॥ 53॥

मेरा मन नाम स्मरण में लीन हो गया है। मैं आनन्दित हूँ। अब तो अमृत पान तक की भी लालसा नहीं रही है।

समर्पण

हिरदा की चिन्ता मिटी, मिट्यो सकल विकार।
सैन कहे मन सीतयो, साहिब के दरबार॥ 54॥

सैन कहते हैं– परमात्मा के चरण–शरण होते ही मन शीतल हो गया। सभी विकार मिट गये और समस्त चिन्ताएँ मिट गयीं।

शरणागति

सरणागत आयो प्रभु, आरत सुणो पुकार।
सैन कहे डूबण लग्यो, तारो तारणहार॥ 55॥

हे तारणहार प्रभु! मेरी जीवन नैया डूबने लगी है। मैं आपकी शरण हूँ। मेरी आर्त पुकार सुनकर शीघ्र आओ और मुझ शरणागत का उद्धार करो।

देवत के मंदर गयो, घंटो करे निनाद।
सैन कहे सुण लेव जो, सुरणायाँ फरयाद॥ 56॥

देव मन्दिर में गया। घंटे का निनाद हुआ, पुकार लगी। सैन कहते हैं– हे प्रभु! शरणागत की फरियाद सुन लो।

लीनता

नसो करो हरि भक्ति को, झूमो आतम ज्ञान।
सैन कहे एसा रमो, रहे न जग को भान॥ 57॥

सैन कहते हैं– हरि भक्ति का नशा करके आत्मानन्द में झूम उठो। परमात्मा में इस प्रकार लीन हो जाओ कि संसार का भान भी भूल जाये।

पारख ज्ञान

बिन जाने परखे बिना, कसतर होय बिसास।
सैन कहे पारख करूँ, हो जाऊँ तुझ दास॥ 58॥

बिना जाने–समझे मैं कैसे विश्वास कर लूँ। सैन कहते हैं– परख करने के बाद मैं आपका दास बन जाऊँगा।

गुरु सरणा जायां बिना, मिले न पारख ज्ञान।
सैन कहे पारख बिना, भेदो सको न जान॥ 59॥

सैन कहते हैं- गुरू शरण जाये बिना पारख ज्ञान नहीं मिल सकता। बिना पारख ज्ञान के सत्य का भेद नहीं जाना जा सकता।

सद्गुरु ने किरपा करी, बगस्यो पारख ज्ञान।
सैन कहे मुझ हो गयो, सत्त तत्त को भान॥ 60॥

सैन कहते हैं- सद्गुरू ने कृपा कर मुझे पारख ज्ञान प्रदान कर दिया। पारख ज्ञान से मुझे परम सत्य और तत्त्व-ज्ञान प्राप्त हो गया है।

साँच जुड़े संगत जुड़े, जुड़े सांचली वात।
सैन कहे सद्मत जुड़े, पारख ज्ञान निजात॥ 61॥

सैन कहते हैं- सत्संग के जुड़ने से सत्य का प्रकाश होता है। सद्मति जुड़ती है, तब पारख ज्ञान मिलता है।

संशय

मोख मुगति चाहूँ नहीं, नहीं सरग सुख धाम।
सैन कहे संसो हरो, हिरदै करो मुकाम॥ 62॥

मुझे न मोक्ष चाहिए, न मुक्ति चाहिए और न स्वर्ग का सुख चाहिए। सैन कहते हैं- हे प्रभु! आप मेरे हृदय में निवास करो, जिससे मैं निशंक हो जाऊँ।

हिरदा को संसो मिटै, भेद भाव मिट जाय।
सैन कहे हरि दरस ती, मन ऊजल वई जाय॥ 63॥

हृदय का संशय दूर हो, मन से दुई का भ्रम मिट जाये। सैन कहते हैं- यह हरि दर्शन से ही सम्भव है। हरि दर्शन से मन का तमस दूर होकर उजाला हो जायेगा।

सद्कर्म

डरनो कद्यां नी मोत ती, जीवन हे संगराम।
सैन कहे सद्करम ती, सँवरें दोनों धाम॥ 64॥

सैन कहते हैं- मृत्यु भय त्याग देना चाहिए। यह जीवन तो संग्राम है। यदि हम सद्कर्म करेंगे, तब हमारे दोनों लोक सँवर जायेंगे।

चित में चेतन्यो बसे, मन में बसे मुरार।
सैन कहे सत करम कर, सत्य वचन मन धार॥ 65॥

चित्त में चैतन्य (परमात्मा, ब्रह्मा) बसें और मन में कृष्ण बसें। सगुण-निर्गुण दोनों समभाव रहें। मन में सत्य वचन धारण कर हमेशा सद्कर्म करते रहना चाहिए।

भक्त

भगत बड़ो हे राम ती, कथ्यो संत कबीर।
सैन कहे शबरी कुटी, खुद पौंच्या रघवीर॥ 66॥

राम से बड़ा राम का भक्त होता है। ऐसा संत कबीर भी कहते हैं। सैन कहते हैं- यही कारण है कि अपनी भक्त शबरी की कुटिया पर स्वयं रघुवीर को जाना पड़ा।

भगत बड़ो भगवंत से, कहि गया संत विचार।
सैन कहे भगवंत ने, भगत रहे हिव धार॥ 67॥

सैन कहते हैं- भगवान से भक्त बड़ा होता है, ऐसा संतों ने विचार कर कहा है। भक्त हरि भगवान को अपने हृदय में धारण करके रखता है।

भगत और भगवंत में, एक तार जुड़ जाय।
सैन कहे माया मरे, जीव ब्रह्म दरसाय॥ 68॥

सैन कहते हैं- जब भगवान और भक्त एक लय हो जाते हैं, तब माया का पर्दा हट जाता है और जीव को ब्रह्म के दर्शन हो जाते हैं।

भक्ति

काम क्रोध मद लोभ ने, भगति सस्तर मार।
सैन कहे इन मारयाँ, नी वाजे हत्यार॥ 69॥

सैन कहते हैं- काम, क्रोध, मद और लोभ को भक्ति के शस्त्र से मार डालो। इनके मारने से हत्या दोष नहीं लगता।

हिरदा ने ऊजल करे, मेटे भेद दुराव।
सैन कहे थिर भगति से, निरमल होय सुभाव॥ 70॥

हृदय को ऐषणाओं से मुक्त करें, मन से भेद और दुराव हटा दें। सैन कहते हैं- ऐसी स्थिर (अटल) भक्ति से स्वभाव निर्मल हो जाता है।

प्रेम

भगति करो भगवंत की, होवे चित्त उजास।
सैन कहे भेदो मिटे, कढ़े दुई की फाँस॥ 71॥

सैन कहते हैं– भगवान की भक्ति से चित्त निर्मल हो जाता है, मन से दुई का भ्रम मिट जाता है।

प्रेम पुलक में रंग घणो, भाटो भी गल जाय।
सैन कहे आरत सुणे, अरवाणे पग आय॥ 72॥

प्रेम और पुलक में बहुत शक्ति होती है, पत्थर तक पसीज जाता है। सैन कहते हैं– ईश्वर भक्त की प्रेमपगी आर्त पुकार सुनकर नंगे पाँव दौड़ चले आते हैं।

जिन के हिरदै प्रेम हे, तिनके हिरदै आप।
सैन कहे खिलयो रहे, मिटै सकल संताप॥ 73॥

सैन कहते हैं– जिनके हृदय में भक्ति होती है, वह सदा प्रफुल्ल रहता है। उसके हृदय में स्वयं ईश्वर निवास करते हैं। सारे संताप मिट जाते हैं।

सद्‌कर्म

लाखाँ लाशाँ खा गयो, भूखो तो ई मशाण।
सैन कहे जस नी भखे, मिटे न नाम निसाण॥ 74॥

श्मशान लाखों लाशें खा गया, फिर भी भूखा का भूखा ही है। सैन कहते हैं– श्मशान मनुष्य के सद्‌कर्म (यश) को नहीं खा सकता। वह सदा जीवित रहता है।

जनम अटल मिरतू अटल, विधना रच्यो विधान।
सैन कहे जस अटल हे, जुग-जुग होय बखान॥ 75॥

सैन कहते हैं– जनम और मृत्यु अटल है। यह विधाता का विधान है। सदकर्म का यश भी अटल है। उसका बखान युग-युगान्तर होता रहता है।

मन चित्त चेतन करो, करो न अधम विचार।
सैन कहे सतकरम हे, बिन सुवारथ उपकार॥ 76॥

सैन कहते हैं– मन-चित्त को सदा चैतन्य बनाये रखो, उसमें बुरे विचार मत आने दो। सदा सद्‌कर्म करो और निस्वार्थ भाव से उपकार करो।

चित्त में चेतनयो बसे, मुख में क्रसन मुरार।
सैन कहे सत्त करम कर, सत्त वचन चित धार॥ 77॥

सैन कहते हैं- चित्त में चैतन्य (ब्रह्म) का वास तथा मुख में कृष्ण का वास (दोनों एक ही हैं) सदा सद्कर्म करते रहो, चित्त में सत्य वचन धारण कर सद्कर्म करो।

निर्मल

साँच कहे साँचो रहे, करे साँच वेपार।
सैन कहे मन-चित्त-करम, करे विनत वेवहार॥ 78॥

सत्य वचन कहें, सच्चा व्यापार करें, मन-वचन-कर्म से विनीत भाव से निर्मल व्यवहार करें। सैन कहते हैं- यह उचित है।

छट रिपुआँ संधारताँ, लगे न हत्या पाप।
सैन कहे मन निरमलो, मिटैं सकल संताप॥ 79॥

षड्रिपुओं को मारने में हत्या दोष नहीं लग सकता। सैन कहते हैं- यदि मन निर्मल हो तो समस्त संताप मिट जाते हैं।

निष्काम

निस्वारथ सेवा करे, भजन करे हरिनाम।
सैन कहे सुरतो रहे, करम करे निहकाम॥ 80॥

सैन कहते हैं- निस्वार्थ भाव से सेवा करें, सदा सचेत रहे। निष्काम भाव से कर्म करें तथा हरि का भजन करे, यह उचित है।

अहंकार

हरणा कास्यप नी रह्यो, रह्यो न रावण कंस।
सैन कहे मर खूटिया, अहंकार के दंस॥ 81॥

सैन कहते हैं- अहंकार के दंश से कई नष्ट हो गये। हिरण्यकश्यप और रावण जैसे अहंकारी को अहंकार खा गया।

मैं अर मुझ ती ऊबरे, मद मत्सर हंकार।
सैन कहे जो सुख चहो, षड्रिपु देओ मार॥ 82॥

सैन कहते हैं- जो सुख चाहते हो तो षड्रिपुओं का मर्दन करो। 'मैं' और 'मुझ' से मुक्त हो जाओ।

मैं छोड़ूँ मुझ छोड़ दूँ, छोड़ूँ सकल गुमान।
सैन कहे तद मिल सके, परम सत्य को ज्ञान॥ 83॥

जब मैं 'मैं' और 'मुझ' को त्याग दूँगा, समस्त अहंकार छोड़ दूँगा, तभी मुझे परम सत्य का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

समभाव

जात-पाँत छोटो-बड़ो, कै राजा कै रंक।
सैन कहे सब नी गणूँ, हिरदै मिलूँ निसंक॥ 84॥

सैन कहते हैं- मैं कभी भी जाति-वर्ग, छोटा-बड़ा, राजा-रंक यह भेद नहीं करता। सबके साथ एक भाव से मिलता हूँ।

संत पीर दोई एक हे, दोइ चलें इक राह।
सैन कहे फरको नहीं, मन-चित एकहि चाह॥ 85॥

सैन कहते हैं- संत-फकीर दोनों एक समान हैं। दोनों की मंजिल एक है। दोनों में अन्तर नहीं है। उनके मन चित्त में एक ही इच्छा है। परमात्मा का साक्षात्कार।

साध संत ज्युँ जाणिये, सोई पीर फकीर।
सैन कहे दोई रब रटें, हरें जगत को पीर॥ 86॥

सैन कहते हैं- जैसे साधु और संत हैं, वैसा ही पीर-फकीर को जानें। दोनों रब (ईश्वर) का नाम स्मरण करते हैं और संसार की पीड़ा हरते हैं।

हिन्दू नित पूजा करें, मुसलिम पढ़ें नमाज।
सैन कहे भीतर बजे, एक सरीखा साज॥ 87॥

हिन्दू प्रतिदिन पूजा करते हैं, मुसलमान नमाज पढ़ते हैं। सैन कहते हैं- दोनों के हृदय में एक जैसा साज बजता है।

आतुरता

मंदर को घंटो बजे, भीतर उठे निनाद।
सैन कहे हरि दरस की, जीव करे फरयाद॥ 88॥

मन्दिर का घंटा बजते ही भीतर नाद गूँज उठता है। सैन कहते हैं- जीव हरिदर्शन की फरियाद करने लगता है।

घनाघन्न घंटो बजे, गगना उठे तरंग।
सैन कहे हरि दरस की, सरसण लगे उमंग॥ 89॥

सैन कहते हैं- जैसे ही मन्दिर में घंटा बजता है, आकाश मण्डल में तरंगें उठने लगती हैं। हरिदर्शन की उमंग आतुरता के साथ जाग उठती है।

ज्युँ-ज्युँ घन घंटो बजे, त्युँ-त्युँ उठे तरंग।
सैन कहे घर-गाम में, उठे हरिदास उमंग॥ 90॥

सैन कहते हैं- जैसे-जैसे मन्दिर में घंटा ध्वनि की तरंगें तरंगायित होती हैं, वैसे-वैसे घरों में और समग्र गाँव के वासियों में हरिदर्शन की आतुरता बढ़ती जाती है।

अनहद

मंदर में घंटो बजे, भीतर बजे सितार।
सैन कहे माया हरे, अणहद की झंकार॥ 91॥

सैन कहते हैं- मन्दिर में घंटा बजता है, तब उसका नाद निनादित होकर घट भीतर तरंगायित होने लगता है। भीतर एक मधुर सितार बज उठती है। उसी सितार से अनहद नाद झंकृत हो उठता है।

मंदिर में घंटो बजे, हिरदा में झंकार।
सैन कहे दोनों मिलें, सरसे अमरत धार॥ 92॥

मन्दिर में घंटे का नाद होते ही हृदय में झंकार हो उठती है। सैन कहते हैं- जब नाद और निनाद का मेल होता है, तब अमृत धार झरने लगती है।

साँस रोक ध्यानो करे, चाखे मधुरो सुआद।
सैन कहे भीतर उठे, अद्‌भुत अणहद नाद॥ 93॥

साँस रोककर ध्यान लगाये, फिर सुमधुर रस का आस्वादन करे। उसके बाद भीतर अद्‌भुत अनहद नाद बज उठेगा।

ध्यान

तीन लोक भीतर बसें, बाहर को कई भान।
सैन कहे घट भीतरां, धरूँ राम को ध्यान॥ 94॥

सैन कहते हैं- भीतर घट में ही तीनों लोक बसते हैं, फिर बाहर का भान क्यों करूँ? मैं घट के भीतर ही राम का ध्यान लगाता हूँ।

होनी

होनी तो होकै मिटे, कतरोई करो उपाय।
सैन कहे जादव खुद्या, धाम गया जदुराय॥ 95॥

सैन कहते हैं- होनी तो होकर ही रहती है। कितना भी उपाय कर लो। होनी के कारण यादव कुल नष्ट हो गया। यदुवंशी कृष्ण को अपने धाम लौटना पड़ा।

मृत्यु

राम गया रावण गया, गयो कंस जदुराय।
सैन कहे जो अवतर्यो, ऊ आतमणो जाय॥ 96॥

सैन कहते हैं- मृत्यु अटल है, जो भी अवतरित हुआ (जन्म लिया), उसे अस्त होना पड़ा। इसी परम्परा व अटल सत्य के होते राम, रावण, कंस और कृष्ण को भी जाना पड़ा।

नाद

ज्युँ-ज्युँ घन घंटो बजे, नगर ग्राम सरसाय।
सैन कहे पापात्मा, नगर बाहर कढ़ जाय॥ 97॥

नाद ध्वनि का बहुत महत्त्व है। जैसे-जैसे मन्दिर में घंटे का नाद गूँजने लगता है, वैसे-वैसे गाँव-नगर सरस होने लगता है तथा पापात्माएँ नगर-गाँव के बाहर निकलने लगती हैं।

ठाकुर के सामें गयाँ, घंटा की झंकार।
सैन कहे माया हरे, जुड़े देव से तार॥ 98॥

सैन कहते हैं- ठाकुर के सामने जाते ही जब घंटे की झंकार का नाद उठता है, तब उसके निनादित होते ही माया का हरण हो जाता है। माया का परदा हटते ही परमात्मा के दर्शन हो जाते हैं।

सुरति

तेज उस्तरो हाथ में, चले कंठ की धार।
सैन कहे सुरते रहो, धीरज धरम विचार॥ 99॥

सैन अपने कर्म के माध्यम से अपनी सुरति को चैतन्य बनाने का संदेश देते हुए कहते हैं- हाथ में उस्तरा रहता है, जो कण्ठ की धार पर चलता है। इसलिए अपनी सुरति सदा चैतन्य रखो। धैर्य और धर्म का सदा ध्यान रखो।

सुरति लागी राम संग, रह्यो न जग को भान।
सैन कहे सुरति लग्याँ, लगे एक रस ध्यान॥ 100॥

सैन कहते हैं- राम सुरति लग जाने के बाद संसार का भान नहीं रह जाता। सुरति लगने पर मन तन्मय हो जाता है।

बाह्याडम्बर

पूजा-अर्चा जगत में, ना व्रत न त्योहार।
सैन कटे माला जपन, नहीं उतरावे पार॥ 101॥

सैन कहते हैं- केवल पूजा-अर्चना, व्रत-त्योहार अथवा माला जपने से संसार से मुक्ति नहीं मिल सकती। इसके लिए हृदय की शुद्धता और ईश्वर के प्रति सच्ची लगन चाहिए।

मन की स्थिरता

द्वेस दंभ मिट्यो नहीं, मिट्यो न बिरथा क्रोध।
सैन कहे मन थिरबणे, आवे हिरदै बोध॥ 102॥

सैन कहते हैं- जब तक व्यर्थ का क्रोध नहीं मिट जाता, हृदय में स्थिरता कायम नहीं हो जाती, तब तक ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता।

विधना ने जो लिख दियो, टाल सके नहिं कोय।
सैन कहे मन साध्याँ, मन चित थिरतो होय॥ 103॥

जो विधाता ने लिख दिया, उसे कोई नहीं टाल सकता। सैन कहते हैं- मन को साधने पर मन-चित्त स्थिर हो जाते हैं।

हिंसा

ओछो काम खटीक को, एसोई जामिन खोर।
सैन कहे जिव पीड़नो, काटण बूढ़ा ढोर॥ 104॥

सबसे ओछा काम खटीक का है, वैसा ही ओछा काम उसका है, जो अमानत खा जाता है। इन कर्मों से मन में पीड़ा होती है। इस जीव पीड़ा को हिंसा कहते हैं। ऐसी ही हिंसा जीवों को सताने व वृद्ध पशुओं को मारने की होती है।

मन वचन उर करम ती, करे जीव ने पीड़।
सैन कहे हिंसा कहूँ, तोड़े पंछी नीड़॥ 105॥

सैन कहते हैं- जो व्यक्ति मन, वचन और कर्म से किसी को पीड़ा पहुँचाता है, वह हिंसा करता है। जो पक्षियों के नीड़ (घोंसले) तोड़ता है, वह भी हिंसक है।

कर्म भोग

तरे तो अपने पुण्य से, डूबे खुद के पाप।
सैन कहे सत करम कर, सद्‌गुरु के परताप॥ 106॥

मनुष्य अपने पुण्य से तिरता है और अपने पाप से डूबता है। अपनी करनी भुगतता है। सैन कहते हैं- सद्‌गुरू के प्रताप से सद्‌मार्ग पर चलकर सद्‌कर्म करो।

सरग नरग की बानगी, धरती पे दिख जाय।
सैन कहे जेसो जिए, वैसोई नजरां आय॥ 107॥

सैन कहते हैं- नर्क और स्वर्ग की बानगी धरती पर ही दिख जाती है। जैसा जीवन हम भोग रहे हैं, उसी से अनुमान लग जाता है।

नारी

बेटी को तो जानिए, माता का वरदान।
सैन कहे लच्छमी समां, देणो हे सनमान॥ 108॥

सैन कहते हैं- बेटी को माता का वरदान मानना चाहिए। उसे लक्ष्मी के समान जानकर सम्मान देना चाहिए।

जो नर बेइज्जत करे, नारी कारे सतमान।
सैन कहे एसो अधम, शूकर गदहो श्वान॥ 109॥

सैन कहते हैं– जो व्यक्ति नारी के सत्त को अपमानित करता है, ऐसा व्यक्ति शूकर, गदहे और श्वान के समान अधम है।

विश्वास

पीपो समदर कूदयो, राख चित्त विसवास।
सैन कहे हरि जी सुणी, हिरदा की अरदास॥ 110॥

सैन कहते हैं– पीपाजी इष्ट पर विश्वास रखकर समुद्र में कूद गया। चित्त में विश्वास के कारण हरिजी ने उसकी अरदास सुनी और दर्शन दिये।

सगला औसुगना टले, हिरदै राम निवास।
सैन कहे सगले सगुन, सेन भगत के पास॥ 111॥

सैन कहते हैं– यदि हृदय में राम का निवास हो तो सभी अपशगुन भी शुभ हो जाते हैं। मन में सदा विश्वास कायम रखो।

समचित्त

काम क्रोध मद लोह हे, नरग द्वार का मूल।
सैन कहे समचित रहो, तद रेवे अनकूल॥ 112॥

सैन कहते हैं– काम, क्रोध, मद, लोभ आदि विकार नर्क के द्वार जानना चाहिए। इसलिए सदा समचित्त रहना उचित है। इससे सभी विकार अनुकूल हो जाते हैं।

मन तो समचित हे नहीं, जीभ रटे हरि नाम।
सैन कहे मन थिर करो, फेर सुमरजो राम॥ 113॥

सैन कहते हैं– मन तो स्थिर है नहीं, फिर जीभ से हरि नाम रटने से क्या लाभ? पहले मन को स्थिर कर लो, फिर राम का स्मरण करना।

शुचिता

साँच नहीं सुचिता नहीं, नहीं दया नहिं दान।
सैन कहे धरमात्मा, करे वृथा अभिमान॥ 114॥

सैन कहते हैं- न तो मन में शुचिता है, न दया है, न सत्य है, न दान भाव है, फिर भी स्वयं को धर्मात्मा कहकर वृथा अभिमान करते हैं।

नीति

करो खवासी मान ती, करो न ओछी बात।
सैन कहे जजमान की, सम सरखी औकात॥ 115॥

सैन कहते हैं- सेवा कर्म करते हुए अपमानजनक व्यवहार बर्दाश्त मत करो, क्योंकि जजमान भी हमारे जैसा ही है। वह ऐसा श्रेष्ठ नहीं कि हमारा अपमान करे।

ठाकर तो दारू पिये, आप करो पद-चाप।
सैन कहे दुरमत गणूँ, जाणू सामिल पाप॥ 116॥

सैन कहते हैं- ठाकुर शराब पीता रहता है और आप उसी के चरण दबाते रहते हैं। मैं इस व्यवहार को गलत कहता हूँ और मानता हूँ कि आप भी उस ठाकुर के पाप कर्म के सहभागी हैं।

दारू से दुरमत बणे, उपजे अणगण पाप।
सैन कहे मति पीवजो, मति कमाजो पाप॥ 117॥

दारू पीने से दुर्बुद्धि का उदय होता है, उससे अनेक पाप कर्म उपजते हैं। इसलिए दारू मत पिओ और पाप मत कमाओ।

करम करो सुभ भाव ती, नहिं कोई ओछो काम।
सैन कहे हाथां करम, मन में राखो राम॥ 118॥

सैन कहते हैं- सदा अच्छे (शुभ) काम करो, ओछे काम मत करो। हाथों में कर्म और मन में राम को स्थापित करो।

नर देही फिर नी मिले, मिल गी मोटे भाग।
सैन कहे सदमत चलो, करो न द्वेस कुराग॥ 119॥

सैन कहते हैं- यह मानव देह किसी बड़े सौभाग्य के कारण मिली है। सदा सुमार्ग पर चलो, बुरे मार्ग को त्याग दो और द्वेष तथा बुरे वचन त्याग दो।

चुगलखोर चुगली करे, करे कपट बेवहार।
सैन कहे मिठ बोलता, करदे खाना खुवार॥ 120॥

चुगलखोर से तथा उसके कपट व्यवहार से सदा सावधान रहो। सैन कहते हैं- चुगलखोर मीठा बोलकर सर्वनाश करवा देता है।

चुगलखोर ने जाणजो, हीवऱ्या की जात।
सैन कहे झूठन भखे, करतो फिरे कुघात॥ 121॥

सैन कहते हैं- चुगलखोर को सियार जैसा जानो। वह दूसरों की झूठन खाकर चापलूसी करता है तथा कुघात लगाता है।

जिण घर में कलहो रहे, बगर बात घमसान।
सैन कहे सो घर अधम, परतख नगर समान॥ 122॥

जिस घर में सदा कलह होता है, बिना बात झगड़ा-विवाद होता है। सैन कहते हैं- वह घर अधम कोटि का है। नर्क के समान है।

सूरज उगे प्रभात में, साँझ पड़्याँ ढल जाय।
सैन कहे त्युँ जीवड़ो, जनमें अर मर जाय॥ 123॥

सैन कहते हैं- सूरज प्रभात में उगता है, संध्या में ढल जाता है। यह जीव भी पैदा होता है और मर जाता है। यह क्रम चलता रहता है। वह जीव की नियति है।

ईर्ष्या

द्वेस ईरसा जाणजो, खुद के हिरदे शूल।
सैन कहे सुलग्याँ करे, आग लपेटी तूल॥ 124॥

सैन कहते हैं- द्वेष और ईर्ष्या को ऐसा जानो, मानो खुद के ही हृदय में शूल चुभ गया है। वह ऐसी आग है जो रुई में लिपटी आग की चिंगारी की तरह भीतर-भीतर सुलगती ही रहती है।

जण के घट में ईरसा, नागण बण धँस जाय।
सैन कहे एसो मनख, खीज-खीज मर जाय॥ 125॥

सैन कहते हैं- जिसके घट में ईर्ष्या नागिन की तरह घुस जाती है, वह व्यक्ति खीज-खीजकर मर जाता है।

पाप

पाप करे करतों इतरावे, फिर-फिर करे बखान।
सैन कहे सो मूढ़ नर, अधमाध्मयो जान॥ 126॥

सैन कहते हैं– जो व्यक्ति पाप कर्म करता है, फिर उसका बार–बार बखान कर इतराता फिरता है, उस व्यक्ति को अधम से भी अधम समझना चाहिए।

द्वेष

जिनके हिरदे द्वेस हे, तिनके मन संताप।
सैन कहे भीतर जले, करे पाप पे पाप॥ 127॥

सैन कहते हैं– जिनके मन में द्वेष है, उनमे मन में संताप रहेगा। वह व्यक्ति भीतर–भीतर अपने ही संताप से जलता रहेगा और पाप पर पाप करता चला जायेगा।

बैर

बैर करे घिरणा करे, करे द्वेस बेबात।
सैन कहे खुद की अगन, जला करे दिन–रात॥ 128॥

सैन कहते हैं– जो मन में घृणा भाव रखता है, अकारण ही द्वेष करता है, वह खुद ही आग में दिन–रात जलता रहता है।

आडम्बर

तुलसी की माला गले, लाम्बो तिलक ललाट।
सैन कहे ठग ताकड़ी, झूठे राखे बाट॥ 129॥

सैन कहते हैं– जो गले में तुलसी माला पहने, भाल पर लम्बा तिलक लगाये, वह व्यक्ति वैसा ही ठग है, जो ठग तराजू और झूठे बाँट रखने वाला व्यापारी होता है।

ज्ञान

सूरज जगत उजास दे, ज्ञानी देवे ज्ञान।
सैन कहें इनते बड़ो, नहीं जगत में दान॥ 130॥

सैन कहते हैं– सूरज जगत् को प्रकाश देता है, ज्ञानी ज्ञान का प्रकाश देकर अंधकार को समाप्त करता है। उस ज्ञानी से बड़ा दानवीर और ज्ञान से बड़ा दान दूसरा नहीं है।

प्रकृति

अजब–गजब सृष्टि रची, लीलाधर अनजान।
सैन कहे दीखे नहीं, जगत करे गुणगान॥ 131॥

सैन कहते हैं– उस अज्ञात लीलाधारी ने अद्‌भुत और अनोखी सृष्टि का निर्माण किया है। सैन कहते हैं– वह लीलाधारी दिखता नहीं है, फिर भी जगत् में सब उसका गुणगान करते हैं।

ताल कूप नद बावड़ी, समदर झरनपहार।
सैन कहे सब गंग सम, जीवन राखणहार॥ 132॥

सैन कहते हैं– तालाब, कुआँ, नदी, बावड़ी, समुद्र और पर्वत-झरना ये सब गंगा के समान हैं और सबका जल जीवन रक्षक है।

एक पगे ऊबा रहे, जण कोई तापस होय।
सैन कहे ब्रछ देवता, मन चित्त राखो सोय॥ 133॥

सैन कहते हैं– वृक्ष तपस्वियों के समान एक पाँव पर खड़े ऐसे दिखते हैं, मानो तपस्यारत हों। वृक्ष सच में देवता है, यह बात सदा मन में सँजोकर रखना।

ब्रछ ब्रह्म को रूप हे, सद्‌मत राखो ज्ञान।
सैन कहे ब्रछ देवता, करे सकल कल्यान॥ 134॥

सैन कहते हैं– वृक्ष ब्रह्म का साकार रूप है। इस सद्‌मति को सदा ध्यान रखो। वृक्ष की सेवा (सिंचन) करने से सर्व कल्याण होता है।

ब्रछ गउ गंगा संत जन, मात-पिता गुरुधाम।
सैन कहे तीरथ सकल, पावन कह्या मुकाम॥ 135॥

सैन कहते हैं– वृक्ष, गऊ, गंगा, संत, माता-पिता और गुरूधाम– ये सभी तीर्थ समान हैं। इन्हें पावन स्थान कहा गया है।

विस पीवे अमरत झरे, करे जगत कल्यान।
सैन कहे सिंचन करे, शंकर संभु समान॥ 136॥

सैन कहते हैं– वृक्ष विष पीकर अमृत प्रदान करते हैं। वे शिव के समान कल्याणकारी और शंकर हैं। शुभकर हैं। इसलिए इनका सिंचन शिव के समान करना चाहिए।

व्यसन

जुओ जम को बारनो, मति करजो कोई वास।
सैन कहे बुद्धि हरे, तन धन इज्जत नास॥ 137॥

जुआ यम का द्वार है। कोई भी उसमें प्रवेश मत करना। सैन कहते हैं– वह बुद्धि (विवेक) को हर लेता है। वह तन, धन और इज्जत का नाश करता है।

ज्ञान भक्ति

ज्ञान कहे ज्ञानी बड़ो, नहीं ज्ञान को पार।
सैन कहे भगती बिना, नी होवे निस्तार॥ 138॥

सैन कहते हैं कि– ज्ञानी गर्व करते हैं। ज्ञान के बिना प्रभु नहीं मिल सकते। ज्ञान अपार है। किन्तु भक्ति के बिना तो निस्तार हो ही नहीं सकता।

सृष्टि-चक्र

आया हे सो जायगा, गयो सो पाछो आय।
सैन कहे अणि सृष्टि में, विधना चाक चलाय॥ 139॥

सैन कहते हैं– जो आया है वह जायेगा और जो गया है, वह वापिस आयेगा। विधाता सृष्टि का चक्र इसी प्रकार चलाते रहते हैं।

काल

रंक मुआ राजा मुआ, मरि गया ठाकर सेठ।
सैन कहे सब जग मुआ, काल करे आखेट॥ 140॥

सैन कहते हैं– इस सृष्टि में सब नश्वर हैं। रंक, राजा, ठाकुर, सेठ– सब मर जाते हैं। काल सबका शिकार कर लेता है।

कुसंग

सतसंगत भायी नहीं, पड्यो कुसंगत लार।
सैन कहे भट्क्यो फिरे, पड़े सीस पे खार॥ 141॥

सैन कहते हैं– सत्संगत अच्छी नहीं लगी, कुसंगत के संग चल पड़ा। सद्मार्ग से भटक गया। अन्तत: अपयश का भागीदार बना। सिर पर राख पड़ी।

नुगरा

संग न कीजे वाहि को, जो जन नुगरो होय।
सैन कहे नुगरो मनख, भंडुर दीखे मोय॥ 142॥

सैन कहते हैं– जो व्यक्ति नुगरा हो, बिना गुरू अथवा गुरूद्रोही हो, ऐसे नीच व्यक्ति का संग नहीं करना चाहिए। वह मुझे ग्राम शूकर के समान दिखता है।

सुगरो

सुगरो संत समान हे, कद्यां न छोड़ो संग।
सैन कहे दरसन कर्‌याँ, हिरदै भरे उमंग॥ 143॥

सैन कहते हैं– सुगरा व्यक्ति संत के समान होता है। ऐसा व्यक्ति संगत योग्य होता है। उसके दर्शन मात्र से मन हर्षित हो उठता है।

सबद

दाता को दातार हे, सद्‌गुरु रामानंद।
सैन कहे दीयो सबद, हिरदै उठी तरंग॥ 144॥

सद्‌गुरू रामानन्द दाता के दातार हैं। उन्होंने कृपा करके मुझे शब्द का ज्ञान दिया। ज्ञान प्राप्त होते ही हृदय में आनन्द की तरंगे उठने लगीं।

आत्म-कथ्य

पेल परोड़े जागतां, करूँ साईं को ध्यान।
सैन कहे घट अंतरे, दीखे ऊजल भान॥ 145॥

सैन कहते हैं– मैं प्रथम प्रभात (ब्रह्मकाल) में जागकर साईं का ध्यान लगाता हूँ। घट के भीतर मुझे ज्योतित सूर्य के दर्शन होते हैं।

नाई कुल में जनम्यो, छौर करम को काज।
सैन कहे ऊजल करम, नहीं पाप को साज॥ 146॥

सैन कहते हैं– मेरा जन्म नाई कुल में हुआ। हजामत करना मेरा काम है। यह काम उज्ज्वल है। पाप कर्म नहीं है।

सेवा करूँ समाज की, राजा रंक समान।
सैन कहे समचित रहूँ, तनक नहीं अभमान॥ 147॥

सैन कहते हैं– मैं समाज की सेवा करता हूँ। राजा और रंक में भेद नहीं करता। सदा समभाव रहता हूँ। मन में अहंकार नहीं है।

जात-पाँत छोटो-बड़ो, राजो सेठो रंक।
सैन कहे सब भायला, फरक न जाणूँ न संग॥ 148॥

सैन कहते हैं- जात-पाँत, छोटा-बड़ा, राजा, सेठ, रंग- सब भाई हैं और एक समान हैं। इनमें फरक नहीं करता।

संत चरण तीरथ गणूँ, पूरे मन की आस।
सैन कहे तन मन बणे, ऊजल मिटे उजास॥ 149॥

संतों के चरणों को मैं तीर्थ-तुल्य मानता हूँ। संतजन मेरे मन की आशाएँ निवारण करते हैं। तृप्ति प्रदान कर पूर्ण काम करते हैं। तन-मन उज्ज्वल हो जाता है और हृदय में ज्ञान प्रकाश फैल जाता है।

वेद-पुराण पढ़या नहीं, नी जाणू गुणगान।
सैन कहे सद्‌गुरु कृपा, हिरदै आयो भान॥ 150॥

सैन कहते हैं- मैंने न तो वेद-पुराण पढ़े हैं और न भगवान के गुणों का बखान करना जानता हूँ। सद्‌गुरू की कृपा से हृदय में उजास हो गया है।

ज्ञान ध्यान जाणू नहीं, करूँ ज्ञान की बात।
सैन कहे सद्‌गुरु कृपा, सत संगियों की दात॥ 151॥

सैन कहते हैं- मैं ज्ञान-ध्यान नहीं जानता, फिर भी ज्ञान की बातें करता हूँ। यह सद्‌गुरु की कृपा और सत्संगियों की देन है।

जतियाँ सतियाँ सद्‌मतां, सतसंगियाँ सत साध।
सैन कहे जैसी मती, वेसी करी अराध॥ 152॥

सैन कहते हैं- जति, सति, सद्‌मति, सत्संगी और सत्य के सभी साधक जैसी उनकी मति होती है, सब अपने-अपने मान से आराधना करते हैं।

पीपा को संग मीलियो, पायो सतसंग ज्ञान।
सैन कहे संग छूटियो, आगे करूँ पयान॥ 153॥

सैन कहते हैं- पीपा का सत्संग मिला, सत्संग से ज्ञान प्राप्त हुआ। अब उनका संग छूट गया है। मैं उनका धरम छोड़कर आगे प्रयाण करता हूँ।

या देही नहीं आपणी, विरथा करो गरूर।
सैन कहे जो ऊगमें, आथम हेज जरूर॥ 154॥

सैन कहते हैं- यह देह तो अपनी नहीं है। व्यर्थ ही इस पर अभिमान करते हैं। जो उदित हुआ है, वह अस्त अवश्य होगा।

सीता तरगी पीपो तर्‌यो, धन्नो तरगयो मूर।
सैन कहे जरजर हुओ, तारो सुगत हजूर॥ 155॥

सैन कहते हैं- गुरू भाई की पत्नी सीता की मुक्ति हो गयी, पीपा की मुक्ति हो गयी, धन्ना भगत मुक्त हो गया। हे स्वामी! मेरी देह अब जर्जर हो गई है। हे हुजूर! मुझे भी सुगति प्रदान कर धन्य करो।

जो कह्यो सो सूणियो, सतसंगियों के बीच।
सैन कहे सत्संग कर्‌यो, तन की आँखाँ मीच॥ 156॥

सैन कहते हैं- सत्संगियों के साथ बैठकर जो सुना और जो गुना उसी से सत्संग हुआ। मैंने तो तन की आँखें मीच (बंद) कर यह कहा है।

सुण-सुण लिखी सगोतरी, तिन सत्संग में बैठ।
सैन कहे दूपट लिखी, रामगुमानी सेठ॥ 157॥

सैन कहते हैं- सगोतरी ने प्रतिदिन सत्संग में बैठकर ये (वाणी) सुन-सुनकर लिखी है। इसे फिर से रामगुमानी सेठ ने दुबारा लिखा।

– सौजन्य : माँगीलाल जी सैन 'सुमन'-भानपुरा, संकलन-जून, 1973 ईस्वी.

सैना रखजो ध्यान...

सदगुरू

पेलां पूजूं सद्‌गुरु, पाछे हमरा देव।
सैना घट भीतर नमूँ, सदमत राखें टेव॥ 1॥

पहले सद्‌गुरू की पूजा करूँ, फिर सभी देवों को पूजूँ। सैन कहते हैं- मैं अपने घट (हृदय) को तथा घट में विराजित परमब्रह्म को प्रणाम करता हूँ। वे सदा मेरा मान रखते हैं।

वंदौं सद्‌गुरु देव जी, भवनद तारनहार।
सबद मंत्र साँचो दियो, सैना सुणी पुकार॥ 2॥

मैं अपने सद्‌गुरु का वन्दन करता हूँ, जो संसार सागर से पार उतारने वाले हैं, जिन्होंने मेरी पुकार सुनकर 'शब्द' का मंत्र प्रदान किया।

सद्‌गुरु पाका खेवट्या, मनवद तारनहार।
सैना रामानंद नमूँ, नम-नम करूँ जुहार॥ 3॥

मेरे सद्‌गुरू रामानन्दजी, पक्के तारक हैं। संसार सागर को पार करवा सकते हैं। मैं उन्हें बार-बार नमन करता हूँ।

कै तो वन्दौं सद्‌गुरु, कै रैदास कबीर।
सैना तारक मंत्र दे, रिदै बँधाई धीर॥ 4॥

मैं प्रथम तो सद्‌गुरू को वन्दन करता हूँ, फिर रैदास और कबीर को वन्दन करता हूँ। इन्होंने मुझे तारक मंत्र देकर धैर्य बँधाया।

पीपो अपदीपो कहूँ, कर्‌यो भक्ति उजास।
सैना एसा संत के, चरण शरण को दास॥ 5॥

पीपाजी स्वयं ज्योतित संत हैं। उन्होंने भक्ति का प्रकाश सब तरफ फैला दिया है। सैन ऐसे महान संत के चरणों का दास है।

गुरु सरणा जायां बिना, मिले न पारख ज्ञान।
गुरु विमुख वीजो मती, सैना रखजो ध्यान॥ 6॥

गुरू की शरण में गये बिना पारख ज्ञान नहीं मिल सकता। इसलिए सदा ध्यान रखना और गुरू विमुख कभी मत होना। पारख ज्ञान यानी ईश्वर की पहचान करना है।

सद्‌गुरु साँचो सबद दे, देवे पारख ज्ञान।
सद्‌गुरु शरण तजो मती, सैना रखजो ध्यान॥ 7॥

सद्‌गुरू ही सत्य का 'शब्द' प्रदान कर पारख ज्ञान करवाते हैं, इसलिए कभी भी सद्‌गुरू की शरण मत त्यागना। सैन कहते हैं- यह बात सदा ध्यान रखना।

सद्‌गुरु चरण तीरथ गणूँ, सबती ऊँचो मान।
सद्‌गुरु चरण गति मिले, सैना रखजो ध्यान॥ 8॥

सद्‌गुरू के चरण ही तीर्थ हैं। उनका ही सबसे श्रेष्ठ मान है। सद्‌गुरू के चरण-शरण से ही गति मिलेगी। सैन कहते हैं- यह बात सदा ध्यान रखना।

सद्‌गुरु विमुख न होवजो, करजो मती गुमान।
भवनद तारे सद्‌गुरु, सैना रखजो ध्यान॥ 9॥

सैन कहते हैं- कभी भी सद्‌गुरू से विमुख मत होना, मन में कभी भी अहंकार मत आने देना। क्योंकि सद्‌गुरू ही भवसागर से पार लगा सकते हैं।

सद्‌गुरु पाका खेवट्या, सद्‌गुरु ने हे भान।
पार लगावें सद्‌गुरु, सैना रखजो ध्यान॥ 10॥

सद्‌गुरू ही पक्के तारक नाविक हैं। उन्हें सब प्रकार का पूरा अनुभव है। वही पार उतार सकते हैं, यह सदा ध्यान रखना।

भवनद कतरो गेहरो, सद्‌गुरु ने अनमान।
पार उतारे सेइजां, सैना रखजो ध्यान॥ 11॥

भवसागर की गहराई का पूरा अनुमान सद्गुरू को ही है। वे ही सहज रूप से पार उतार सकते हैं। यह सदा याद रखना।

सद्गुरु भेटे राम ती, सद्गुरु साँचजो जान।
सद्गुरु बिन गति नी मले, सैना रखजो ध्यान॥ 12॥

सद्गुरू ही राम से भेंट करवा सकते हैं। सद्गुरू को ही सच्चा मानो। उनके बिना गति नहीं है। यह बात सदा याद रखना।

सीस दियाँ सद्गुरु मिले, कर लीजो मुल्यान।
सद्गुरु तो अनमोल है, सैना रखजो ध्यान॥ 13॥

यदि सिर के भाव भी सद्गुरू मिलें, तब भी सौदा कर लेना। सद्गुरू तो अनमोल हैं। यह बात सदा ध्यान में रखना।

सद्गुरु साहिब एक हे, तनक न अन्तर जान।
दोई ने नमता रहो, सैरना रखजो ध्यान॥ 14॥

सद्गुरू और साहिब (ईश्वर) में भेद नहीं है। इसलिए सदा दोनों को नमन करो, यह बात सदा ध्यान रखना।

सद्गुरु साँचो पारखी, जाणे जगत-जहान।
परख-फरक सद्गुरु करें, सैना रखजो ध्यान॥ 15॥

सद्गुरू सच्चा पारखी है। वह खरा-खोटा सब जान लेता है। उसे सारे जगत् का बोध रहता है। यह बात सदा याद रखना।

सद्गुरु खोट निकाल दे, बगसे पारख ज्ञान।
खरो करे ज्युँ कंचनो, सेना रखजो ध्यान॥ 16॥

सद्गुरू पारख ज्ञान प्रदान कर समस्त खोट (कलुष) निकाल देते हैं और खरा कंचन कर देते हैं। यह बात सदा याद रखना है।

पाणी पीजो छाणतां, गुरु तो करजो जान।
काचो गुरु नद नी तेरे, सैना रखजो ध्यान॥ 17॥

पानी छानकर पीना और गुरू समझकर करना। कच्चा गुरू भवसागर से पार नहीं जा सकता। यह बात सदा याद रखना।

साधौ काँचो खेवटो, करे नाव गरकान।
गुरु सिख दोई गरक वे, सैना रखजो ध्यान॥ 18॥

अनुभवहीन नाविक नाव को गारत (डुबो) देता है। फलस्वरूप गुरू और शिष्य दोनों ही डूब जाएँगे। यह बात सदा याद रखना।

सगो नहीं सतगुरु समां, नहिं साहिब सों मान।
चरण शरण गाठ रहो, सैना रखजो ध्यान॥ 19॥

सद्‌गुरु के समान कोई सगा नहीं है। साहिब के समान को माननीय नहीं है। इसलिए सदा चरण-शरण में पक्के बने रहो।

सद्‌गुरु साँचा सूरमा, मारे सबद सुजान।
षड्‌रिपुओं हत-हत करे, सैना रखजो ध्यान॥ 20॥

सद्‌गुरू सच्चा सूरमा है, जो शब्द बाण से षड्‌रिपुओं को हताहत कर देता है। सैन कहते हैं- यह बात सदा याद रखना।

सद्‌गुरुजी की चरण रज, धरूँ सीस सरधान।
सबद-सबद साँचो कहे, सैना रखजो ध्यान॥ 21॥

सैन भक्त कहते हैं- मैं सद्‌गुरू की चरण रज शीश पर धारण करता हूँ। वे शब्द-शब्द साँचा अर्थात् ज्ञानपरक कहते हैं। यह बात सदा याद रखना।

ब्रह्म जगत् को मूल हे, कोई सके न जान।
जो जाने सो सद्‌गुरु, सैना रखजो ध्यान॥ 22॥

जगत् का मूल ब्रह्म है। इसे सद्‌गुरू के सिवा कोई भी नहीं जान सकता। यह बात सदा याद रखना।

रात-दिनां पचतो रहे, गुरु बिन मिले न ज्ञान।
सबद ज्ञान गुरु दे सके, सैना रखजो ध्यान॥ 23॥

रात-दिन पचने पर भी गुरू के बिना ज्ञान नहीं मिल सकता। सद्‌गुरू शब्द ज्ञान देकर धन्य कर देते हैं। सदा याद रखना।

साधौ सद्‌गुरु तीरथो, करो चरण जल-पान।
सद्‌मत सद्‌गत ज्ञान दे, सैना रखजो ध्यान॥ 24॥

सद्‌गुरू तीर्थ हैं। उनके चरणों का चरणामृत पान करने से ही सद्‌मति और सद्‌गति प्राप्त होती है। यह सदा याद रखना।

ब्रह्म

साहिब नखतरां रमें, कण-कण में परमान।
जित देखूँ तित साहिबा, सैना रखजो ध्यान॥ 25॥

साहेब (परमात्मा) नक्षत्रों (सम्पूर्ण आकाश मण्डल) में व्याप्त है। वह कण-कण में समाया हुआ है। मैं जहाँ भी दृष्टि डालता हूँ, वहाँ मुझे वही परमतत्त्व दिखाई देता है।

भीतर अजब उजास हे, बाहर रूप सुजान।
भीतर-बाहर रमें, सैना रखजो ध्यान॥ 26॥

भीतर घट में एक अद्‌भुत ज्योति दीपित है। बाहर एक सुन्दर स्वरूप दृष्टिगोचर हो रहा है। भीतर और बाहर सर्वत्र हरि का अस्तित्व है। सैन कहते हैं- सदा यह बात ध्यान रखना।

साहिब के सन्नेहड़े, सद्‌गुरु को घण मान।
सद्‌गुरु संग न छोड़जो, सैना रखजो ध्यान॥ 27॥

साहिब के सन्निकट, सद्‌गुरू की बहुत प्रतिष्ठा है। इसलिए सद्‌गुरू का संग कभी भी मत छोड़ना। यह बात सदा ध्यान में रहें।

ज्युँ सागर में लेहरां, लेहर मनोरम गान।
त्युँ साहिब ने जाणजो, सैना रखजो ध्यान॥ 28॥

जिस प्रकार सागर में लहरें और लहरों में मनोरम संगीत है किन्तु दिखाई नहीं देता। उसे पृथक् करके नहीं जाना जा सकता। उसी प्रकार जगत् में साहिब विद्यमान है, यह सदा ध्यान रहे।

ज्युँ सूरज में ओजसो, फूलां गंध विधान।
त्युँ सृष्टि में ब्रह्म हे, सैना रखजो ध्यान॥ 29॥

जैसे सूर्य में प्रकाश और फूलों में गंध का अस्तित्व है, उसी प्रकार सृष्टि में ब्रह्म का अस्तित्व है। वह होते हुए भी दिखता नहीं। यह सदा ध्यान रहे।

रूप रंग सुगंध में, दरसूँ ब्रह्म प्रमान।
कीड़ी कुंजर में रमें, सैना रखजो ध्यान॥ 30॥

रूप, रंग और सुगन्ध में मुझे ब्रह्म के दर्शन होते हैं। वही चींटी और हाथी में भी बस रहा है। यह बात सदा ध्यान रखना।

नहिं करता सिरजन करे, करे खान और पान।
करता-धरता राम हे, सैना रखजो ध्यान॥ 31॥

वह कर्म से मुक्त है फिर भी सृजन करता है। वह खाता भी है, पीता भी है। वही राम कर्ता-धर्ता है। यह बात सदा ध्यान में रखना।

खुद सिरजे खुद भाख ले, अजबो रच्यो विधान।
अगम-निगम जाणे नहीं, सैना रखजो ध्यान॥ 32॥

खुद ही सृजन करता है। खुद ही विनाश करता है। प्रभु ने अद्‌भुत विधान रचा है। उसे आगम और निगम भी नहीं जान पाते। यह सदा ध्यान रखना।

राम

राम हरि घनश्याम सब, एक हरि का नाम।
रूप अरूप एकै सबै, सैना रखजो ध्यान॥ 33॥

राम-हरि और घनश्याम- सब एक ही परमात्मा का नाम है। रूप और अरूप (सगुण और निर्गुण) सब एक ही है। यह सदा ध्यान रखना।

राम कहूँ तो स्याम है, स्याम कहूँ हरि जान।
सबै ब्रह्म के नाम हैं, सैना रखजो ध्यान॥ 34॥

राम कहता हूँ तब श्याम जानिये और श्याम कहता हूँ तब राम जानिये। ये सभी ब्रह्म के ही नाम हैं। यह बात सदा याद रखना।

ज्युँ बादर में बीजुरी, बिरछां माहीं प्रान।
वेतां भी दीखे नहीं, सेना रखजो ध्यान॥ 35॥

जैसे बादल में बिजली और वृक्षों में प्राण होते हैं। ये होते हुए भी ये दिखलाई नहीं देते। सैन कहते हैं- सदा ध्यान रहे।

राम-राम जिह्वा रटे, घट में अणहद गान।
सचर-अचर नरतन करे, सैना रखजो ध्यान॥ 36॥

जिह्वा से राम-राम का स्मरण हो तथा घट भीतर अनहद गान (नाद) गूँजता रहे। वह परमात्मा सचर और अचर सबमें विद्यमान है। यह बात सदा याद रखना।

पीव

पीव मिल्या जीणो सुभो, पिव बिछड्याँ नहिं मान।
पीव बिछोड़ो नहिं बणे, सैना रखजो ध्यान॥ 37॥

प्रीतम (ब्रह्म) का मिलाप शुभ है और प्रियतम का विछोह होने पर मान घट जाता है। पीव से विछोह नहीं हो। यह सदा ध्यान में रहे।

पीव जड़ेली जीव की, पिव आतम संधान।
पिव बिन कलपे आतमा, सैना रखजो ध्यान॥ 38॥

प्रियतम प्राणों का रक्षक जड़ी-बूटी के समान है। पीव ही आत्मा साधक है। पिव के बिना आत्मा कलपती रहती है। सदा यह बात ध्यान में रहे।

पीव-पीव पपियो रटे, धरे पीव को ध्यान।
पिव परमानन्द जाणजो, सैना रखजो ध्यान॥ 39॥

पपीहा निस-दिन पीव-पीव रटता है। सदा पीव का ही ध्यान लगाता है। पीव ही परमानन्द है। यह सदा ध्यान रखना।

सत्य

सत छोड़या प्रन टूट जै, प्रन टूट्याँ नहिं मान।
मान गयाँ कई जीवणों, सैना रखजो ध्यान॥ 40॥

सत के छूटने से प्रण टूटता है। प्रण टूटने से मान घटता है। मान जाने पर जीवन व्यर्थ है। यह सदा याद रखना।

सत अर साहिब एक हे, संता का फरमान।
सत बिन साहिब नी मले, सैना रखजो ध्यान॥ 41॥

सत (सत्य) और साहिब एक ही हैं। ऐसा संतों का फरमान है। सत्य के बिना साहिब (परमात्मा) नहीं मिल सकता। यह बात सदा ध्यान में रहे।

साधौ सत मति छोड़जो, सत छोड़्याँ पत जाय।
पत जायाँ गति नी मिले, सैना रखजो ध्यान॥ 42॥

हे साधो! सत्य का त्याग मत करना। सत्य के त्यागने पर साख समाप्त हो जाती है। साख समाप्त होने पर दुर्गति होती है। यह बात सदा ध्यान रखना।

जीव

जीव ब्रह्म को अंस हे, एकहि वंस निदान।
दुई को भेद न मानजो, सैना रखजो ध्यान॥ 43॥

जीव ब्रह्म का ही अंश है। दोनों का कुलवंश एक ही है। इसमें दो का भेद मत जानना। यह बात सदा याद रहनी चाहिए।

जीव मिले जद ब्रह्म में, होवे सुरत सुजान।
ब्रह्म जीव एकौ बणे, सैना रखजो ध्यान॥ 44॥

जीव-ब्रह्म में जब एकाकार हो जाता है, तब सुरति जागृत होती है। यह बात सदा याद रखना।

अकलावे घण जीवड़ो, होय ब्रह्म बिलगान।
ब्रह्म मिलन तरसां करे, सैना रखजो ध्यान॥ 45॥

जब भी जीव-ब्रह्म से विलग होता है, तब उसमें पुनर्मिलन की आतुरता बनती है। वह तरसता रहता है। यह सदा ज्ञात रहे।

ब्रह्म जीव विधान को, समझ्न न पावे ज्ञान।
ज्युँ उगमें त्युँ आतमें, सैना रखजो ध्यान॥ 46॥

ब्रह्म और जीव के विधान को ज्ञान नहीं जान सकता। जो भी इस विधान को देखता है, वह अचरज करता है। यह सदा ध्यान रहे।

लीला

लीला धारी की कला, कोई सके न जान।
जो देखे अचरज करे, सैना रखजो ध्यान॥ 47॥

लीलाधारी की कला कोई नहीं जान सकता। जो भी देखता है, वह अचम्भित होता है। यह सदा ज्ञात रहे।

अजब-गजब सृष्टि रची, कर्यो अजब विधान।
जित निरखूँ तित हरि दिखें, सैना रखजो ध्यान॥ 48॥

लीलाधारी ने अजब और गजब सृष्टि रची है। मैं जिधर भी देखता हूँ, हरि ही दिखते हैं। यह ज्ञात रहे।

लीला सिरजनहार की, खूब कर्या गुणगान।
नारद सरखा थाक्या, सैना रखजो ध्यान॥ 49॥

सृजनहार की लीला का गुणगान सबने खूब किया है। नारद जैसे भक्त ऋषि भी गुणगान करते-करते थक गये। कोई पार नहीं पा सका। यह सदा याद रहे।

विरह

विरह कूंजां रो गजब, रो-रो भरे उड़ान।
एकमेव होणो चहे, सैना रखजो ध्यान॥ 50॥

सैन कहते हैं- विरह तो कुंज पक्षी का मानना चाहिए। अपनी संगी को बाण लगने पर रो-रोकर उड़ता है, विलाप करता है- अपने प्रिय से एकमेव होने की आतुरता प्रगट करता है और प्राणोत्सर्ग कर देता है।

विरही जन तलफ्याँ करे, ज्युँ मछुरी तलफ़ान।
पीव मिल्याँ तलफन मिटे, सैना रखजो ध्यान॥ 51॥

विरहीजन जल बिन मछली के समान तड़पता रहता है। जब तक प्रिय मिलन नहीं हो जाता, तब तक तड़पन नहीं मिटती। यह सदा ध्यान रहे।

चकवा-चकवी को विरह, एक रात परमान।
पल-पल काटे बरस ज्युँ, सैना रखजो ध्यान॥ 52॥

चकवा-चकवी का विरह (विछोह) एक रात का ही होता है, किन्तु विरह का एक-एक पल एक-एक बरस जैसा कटता है। यह सदा ध्यान रहे।

बिरहो चातक चन्द्र को, लगी रहे पिव तान।
एक पलक चूके नहीं, सैना रखजो ध्यान॥ 53॥

चातक और चन्द्रमा का विरह अजब है। चातक की पूरी सुरती प्रिय चन्द्र की ओर लगी रहती है। एक पल भी ध्यान भंग नहीं होता। यह सदा ध्यान रहे।

मिलन

बिछुड़ी बूँद समुंद ती, मिले समंदर आन।
त्युँ जिव परमानंद मिले, सैना रखजो ध्यान॥ 54॥

जिस प्रकार समुद्र से बिछुड़ कर वह पुन: समुद्र में विलीन हो जाती है। उसी प्रकार यह जीव भी परमानन्द से बिछुड़ने के पश्चात् पुन: परमानन्द में विलीन हो जाता है। सैन कहते हैं- यह बात सदा याद रखना।

जिव बिलावे ब्रह्म ती, होय फेरू मिलान।
जीव ब्रह्म मेलो बणे, सैना रखजो ध्यान॥ 55॥

जीव, ब्रह्म से विलग होता है। फिर मिलन हो जाता है। इस प्रकार ब्रह्म और जीव का मिलान हो जाता है। यह सदा ध्यान रहे।

बिलगायाँ पूरन रहे, मिले तो पूरन जान।
परमतत्त पूरन सदा, सैना रखजो ध्यान॥ 56॥

पूरन परमानन्द सदा सम्पूर्ण ही रहता है। उसमें से अंश निकल जाये, तब भी तथा पुन: मिल जाये तब भी। सैन कहते हैं- यह बात सदा याद रखना।

सतवन्ती

सतवंती सत पे टिके, सत-पत राखे मान।
प्राण तजे सत नी तजे, सैना रखजो ध्यान॥ 57॥

सतवन्ती अपने सत पर अडिग रहती है। प्राण चाहे जाएँ, किन्तु सत नहीं त्यागती। यह सदा ध्यान रहे।

नारी भली सुलक्खणी, राखे पति को मान।
अडिग रहे सत धरम पे, सैना रखजो ध्यान॥ 58॥

नारी वही अच्छी होती है, जिसमें शुभ लक्षण हों। जो पति की मान-मर्यादा का ध्यान रखे, जो अपने धर्म पर दृढ़ रहे। सैन कहते हैं- यह सदा ध्यान रहे।

कुलक्खणी

नारी बुरी कुलक्खणी, नहीं पीव को ध्यान।
मरजादा राखे नहीं, सैना रखजो ध्यान॥ 59॥

जो स्त्री पीव की मान-मर्यादा का ध्यान नहीं रखती, वह नारी कुलक्षणी कही जाती है। यह बात सदा ध्यान रखना चाहिए।

वरत वास तीरथ करो, गंगा करो सनान।
गुरुचरणा तीरथ बड़ो, सैना रखजो ध्यान॥ 60॥

व्रत, उपवास, तीर्थ, गंगा स्नान सब करो, किन्तु इन सबसे बड़ा तीर्थ गुरू-चरणों का वास है। सैना सदा ध्यान रखना।

मन मैला तन ऊजला, तीरथ करे सनान।
साधौ मन ऊजल बणे, सैना रखजो ध्यान॥ 61॥

मन मैला हो और तन उजला हो तो तीर्थ-स्नान से क्या लाभ? सैन कहते हैं- मन को उजला बनाना आवश्यक है। यह सदा ध्यान रहे।

तीरथ ने तारक कहे, तारक सदगुरु ज्ञान।
साधौ सत्संग तीरथो, सैना राखजो ध्यान॥ 62॥

तीर्थ को तारक कहा जाता है। तारक तो सद्‌गुरू का ज्ञान है। सैन कहते हैं- सत्संग सबसे बड़ा तारक तीर्थ है। यह सदा ध्यान रहे।

स्मरण

सिमर-सिमर जिह्वा घिसे, मन नहिं होय रुझान।
एसो सिमरन बेगतो, सैना रखजो ध्यान॥ 63॥

स्मरण करते-करते जिह्वा घिस जाये। मन में ईश्वर के प्रति लगन नहीं हो, तब वह स्मरण व्यर्थ है। यह सदा ध्यान रहे।

सिमर साँस-उसाँस को, संता को फरमान।
दत्त-चित्त सिमरण करो, सैना रखजो ध्यान॥ 64॥

साँस-उसाँस से नाम स्मरण ही सच्चा स्मरण है। ऐसा संतों का कथन है। स्मरण दत्त-चित्त करना चाहिए। यह सदा ध्यान रहे।

मन चित्त जिह्वा एक रस, करे राम गुणगान।
उलट-पलट फरको नहीं, सैना रखजो ध्यान॥ 65॥

मन, चित्त और जिह्वा एक रस होकर राम गुणगान करें, यही उचित है। राम को तो उल्टा-सीधा, कैसा भी कहो, राम ही उच्चारित होता है। यह सदा ध्यान रहे।

संत

संत सती अर सूरमा, तीनई एक समान।
सत्रु को मारन करे, सैना रखजो ध्यान॥ 66॥

संत, सती और सूरमा तीनों एक ही समान माने गये है। तीनों ही शत्रु (षड्रिपु) का मर्दन करते हैं। यह सदा ध्यान रहे।

मैंने मारे मूल ती, करे न गरब गुमान।
निस दिन राम रट्याँ करे, सैना रखजो ध्यान॥ 67॥

जो 'मैं' (स्व) का अन्त करे- वही संत कहलाता है, जो अहंकार को त्याग दे, वह संत कहलाता है तथा जो निसिदिन राम का स्मरण करता है, वह संत कहलाता है। यह सदा ध्यान रहे।

सोई साँचा संत है, तोड़े जग बंधान।
माया मोह तर्जन करे, सैना रखजो ध्यान॥ 68॥

सच्चा संत वही है, जो संसार बंधन से मुक्त हो जाए। माया और मोह को निकट नहीं फटकने दे। यह सदा ध्यान रखना।

षड्रिपु जाणे टेगड़ा, मारग करे पयान।
सद्मारग त्यागे नहीं, सैना रखजो ध्यान॥ 69॥

षड्रिपु को श्वान की भाँति जानकर, उन्हें टालता हुआ अपने सद्मार्ग पर बढ़ता रहे, विचलित नहीं हो, वही सच्चा संत है। यह सदा ध्यान रहे।

संत मिलावे राम ती, जाणे पारख ज्ञान।
सबद ब्रह्म को भेदियो, सैना रखजो ध्यान॥ 70॥

संत ही राम से मिला सकता है, वह पारख ज्ञान का जानकार तथा शब्द ब्रह्म का ज्ञाता होता है। यह सदा ध्यान रहे।

निरवैदी निरकामता, करे सत्य संधान।
सद्गुरु की शरणा रहे, सैना रखजो ध्यान॥ 71॥

जो अजातशत्रु हो, जो समस्त कामनाओं को त्याग कर निष्काम हो गया हो तथा सदा सद्‌गुरू की चरण-शरण में रत रहे, वही सच्चा संत है। यह सदा स्मरण रहे।

असंत

सतसंगत सेवे नहीं, लियो न गुरु ती ज्ञान।
निगुरो कुबुध असाध हे, सैना रखजो ध्यान॥ 72॥

जो सत्संगत में नहीं जाता, जिसने गुरू से शब्द ज्ञान नहीं लिया, वह निगुरा-दुर्बुद्धि तथा असाधु है। यह सदा ध्यान रहे।

माया मद लिपट्यो रहे, हे नहिं पारख ज्ञान।
सो जन अबुध असंत है, सैना रखजो ध्यान॥ 73॥

जो व्यक्ति माया और मद में लिप्त रहे, जिसे पारख ज्ञान प्राप्त नहीं है, वह व्यक्ति मूर्ख-बुद्धिहीन एवं असंत है। यह सदा ध्यान रहे।

भेख धरावे साध को, करतो फिरे गुमान।
नुगरो बण ठगतो फिरे, सैना रखजो ध्यान॥ 74॥

जो साधु का वेश धारण करे, व्यर्थ का अहंकार करता फिरे, नुगरा बनकर ठगाई करता फिरे, वह असंत है। यह सदा ज्ञात रहे।

संत देख दूरां रहे, नजरां करे निचान।
पारख कुटिल असंत की, सैना रखजो ध्यान॥ 75॥

संतों को देखकर दूर रहे, सदा नजर नीचे कर ले। जिसे संतों का संग नहीं भाये। कुटिल असंत की यही परख है। सदा ध्यान रहे।

माया

माया तो ठगनी बड़ी, कर देवे बेभान।
माया मते न लागजो, सैना रखजो ध्यान॥ 76॥

माया बहुत ठगनी है, वह बेभान कर देती है। विवेकहीन कर देती है। इसलिए माया के चक्कर में मत लगना। यह सदा ध्यान रहे।

माया जाणी मोहनी, मोह्या संत सुजान।
हरिभगतां नहिं मोह सके, सैना रखजो ध्यान॥ 77॥

माया मोहिनी है। इसने सुजान संतों तक को मोह लिया। यह केवल हरि के भक्तों को नहीं मोह सकती। यह बात सदा याद रहे।

माया मदक कलालणी, बैठे हाट मेंडान।
जो चाखे मदहोस वे, सैना रखजो ध्यान॥ 78॥

माया-मदिरा बेचने वाली कलालण के समान है, जो हाट में मदिरा की दूकान लगाकर बैठती है। जो भी उसके मद को चखता है, वह मदहोश हो जाता है। यह सदा ध्यान रहे।

माया कामण कामणी, कर देवे बेभान।
नैण बाण घायल करे, सैना रखजो ध्यान॥ 79॥

माया कामण (काम के समान) मोहने वाली कामिनी है, जो बेभान कर देती है। नयन बाणों से घायल कर देती है। यह सदा याद रहे।

सत्संग

सत्संग सूरज अगन सम, जोर कलुष विषान।
तन अर मन ऊजल करे, सैना रखजो ध्यान॥ 80॥

सत्संग सूर्य और अग्नि के समान है। जिस प्रकार अग्नि और सूर्य समस्त मल-कलुष जलाकर निर्मलता प्रदान करते हैं, उसी प्रकार सत्संग मन के कलुष को जलाकर मन को उज्ज्वल बनाता है। यह सदा ध्यान रहे।

सत्संगत पे वार दो, माया जगत जहान।
साईं ती मेलो बणे, सैना रखजो ध्यान॥ 81॥

सत्संगत पर माया, जगत्-जहान की समस्त सुख-सुविधा न्यौछावर कर दो। सत्संगत से साईं से मिलन होता है। यह बात ध्यान में रखना।

साधौ जिन सत्संग कर्‌यो, कर लियो तीरथ स्नान।
तन मन चित्त ऊजल बणे, सैना रखजो ध्यान॥ 82॥

हे साधौ! जिन्होंने सत्संग किया है, मानो उन्होंने तीर्थ-स्नान कर लिया है। सत्संग से तन-मन-चित्त उज्ज्वल हो जाता है।

जिन सत्संगत नी करी, लियो न सद्‌गुरु ज्ञान।
मनख जमारो धिक हुओ, सैना रखजो ध्यान॥ 83॥

जिसने सत्संग नहीं किया, सद्‌गुरु से ज्ञान प्राप्त नहीं किया, उसका मनुष्य जन्म व्यर्थ हो गया। यह बात सदा याद रखना।

पीड़क

मनसे वाचे करमणे, रहिजो सदा सुजान।
जिव पीड्याँ पापो घणो, सैना रखजो ध्यान॥ 84॥

मन, वचन और कर्म से सदा सुजान (जागृत) रहो, जीवों को मत सताओ। जीवों को पीड़ा पहुँचाना महापाप है। सदा याद रहे।

जो जिव जाणे ब्रह्म ज्युँ, राखे हिरदै ध्यान।
सो जन सदमत्यो गणो, सैना रखजो ध्यान॥ 85॥

जो व्यक्ति जीव को ब्रह्म के समान जानता है, वह व्यक्ति सद्‌मत वाला मानना चाहिए। यह सदा ध्यान रहे।

जिव तो सचराचर बसे, जिव हे ब्रह्म समान।
जिव पीड्याँ ब्रह्म पीड़सी, सैना रखजो ध्यान॥ 86॥

समस्त सचराचर में जीव विद्यमान है। जीव और ब्रह्म एक ही तत्त्व है। जीव को पीड़ित करना, ब्रह्म को पीड़ित करना है। यह सदा ध्यान रहे।

दया

दया नहीं जिसके हृदय, सो जन राकस जान।
नर पिसाच जाणू विसे, सैना रखजो ध्यान॥ 87॥

जिसके हृदय में दया नहीं, वह राक्षस है। उसे नर-पिशाच कहना चाहिए। यह सदा ध्यान रहे।

दया धरम हिरदै नहीं, धरे लखीणो नाम।
धन भर्‌यो करसो कहूँ, सैना रखजो ध्यान॥ 88॥

जिसके मन में दया-धर्म नहीं है और वह स्वयं को लखपति कहता है। वास्तव में वह धन से भरा संवेदनहीन कलश मात्र है, यह सदा ध्यान रखना।

मोह

भेस फकीरी का धरे, तज दे मोह मदान।
मोह तज्याँ सुख ऊपजे, सैना रखजो ध्यान॥ 89॥

यदि फकीरी का वेष धारण किया है, तब मोह के मद से मुक्त हो जा। मोह त्यागने से सुख उपजेगा। यह सदा याद रखना।

मोह जगत जंजाल हे, फस्याँ होय बंधान।
ज्युँ जतने त्युँ-त्युँ फँसे, सैना रखजो ध्यान॥ 90॥

मोह जगत् का जंजाल है। इसमें जो फँस गया, वह मोह में बँध गया। मोहपाश के बंधन में बंधने के बाद ज्यों-ज्यों जतन करोगे, त्यों-त्यों फँसते जाओगे। सदा यह याद रहे।

सदाचार

सत्य न्याव को आचरन, धीर धरम को मान।
मरजादा तोड़े नहीं, सैना रखजो ध्यान॥ 91॥

जो सत्य, न्याय का आचरण करे, धैर्य और धर्म की मान-मर्यादा बनाये रखे। मर्यादा भंग नहीं होने दे, वह सदाचारी कहलाता है।

क्षमा

छमा करे सो सूरमा, सो ई संत सुजान।
सो ई संत-फकीर हे, सैना रखजो ध्यान॥ 92॥

जिसमें क्षमा करने की शक्ति है, वही सच्चा शूरवीर है। वह सच्चा संत है। यह बात सदा याद रखना।

दण्ड धरो होय हाथ में, दे माफी को दान।
सो दाता सब ते बड़ो, सैना रखजो ध्यान॥ 93॥

हाथ में दण्ड हो, फिर भी क्षमा दान दे सके, वह सबसे बड़ा दाता है। यह बात सदा याद रखना।

जगत

जीव जगत और ब्रह्म में, भेद-अभेद बखान।
मूल असल में एक हे, सैना रखजो ध्यान॥ 94॥

जीव, जगत् और ब्रह्म में भेद और अभेद के कई बखान हैं, जबकि ये सब एक ही हैं। यह सदा याद रहे।

यो जग जाणो पींजरा, माया मोह चुगान।
चातुर काल बहेलिया, सैना रखजो ध्यान॥ 95॥

यह जगत् एक पिंजरा है। माया और मोह चुग्गा है। यह काल चतुर बहेलिया है, जो चुग्गा डालकर जीव को फाँस लेता है।

शरण

शरणागत रकसा करे, सो साँचो परधान।
प्राण तजे प्रण नी तजे, सैना रखजो ध्यान॥ 96॥

जो शरणागत की रक्षा करे, वही सच्चा प्रधान (मुखिया) है। प्राण तज कर भी प्राण नहीं तजे। यह बात सदा याद रखना चाहिए।

शरणायाँ ने शिष्यें, सद्गुरु देवें ज्ञान।
फरको करे न जात को, सैना रखजो ध्यान॥ 97॥

शिष्य के शरण आने पर सद्गुरू को चाहिए कि बिना जाति-वर्ग और वर्ण का भेद किये उसे ज्ञान दे। यह सदा याद रखना चाहिए।

शरण गह्याँ की लाज रखे, तज देवे जो प्रान।
सो जन साँचो सूरमो, सैना रखजो ध्यान॥ 98॥

शरणागत की लाज बचाने में जो अपने प्राणों तक का भी बलिदान कर दे, वही सच्चा सूरमा है।

जगत

राम रमेया जगत, रचयो अजब विधान।
रमे रमावे अद्भुते, सैना रखजो ध्यान॥ 99॥

राम ने जगत् की सृष्टि कर अजब विधान किया है। वह स्वयं इसमें रमण करता है। यह सब अद्भुत है। यह सदा ध्यान रहे।

कित जनम्यो कित जा बस्यो, किसतर करूँ बखान।
एक मुलक एक राम है, सैना राखूँ ध्यान॥ 100॥

मैं कहाँ पैदा हुआ, कहाँ जाकर बसा? यह बखान कैसे करूँ? एक ही देश है। एक ही राम सर्वत्र है। यह सदा याद है।

रामानंद सद्गुरु मिल्या, दियो सबद को दान।
पारख को भेदो दियो, सैना राखूँ ध्यान॥ 101॥

रामानन्द जैसे सद्गुरू मिले, जिन्होंने शब्द का ज्ञान दिया एवं पारख का भेद बताया। मैं यह सदा याद रखता हूँ।

जात-पात जाणू नहीं, सद्गुरु कियो विधान।
मूँ खुद नाऊ जात को, सैना राखूँ ध्यान॥ 102॥

मैं जाति-पाँति पर भेद नहीं मानता। सद्गुरू ने यही विधान किया है। मैं स्वयं नाई जाति का हूँ। मैं यह सदा याद रखता हूँ।

राम गया रावण गया, गया क्रसन बलधान।
जो आया सो जायगा, सैना रखजो ध्यान॥ 103॥

राम चले गये, रावण चला गया, बलधारी बलराम और कृष्ण चले गये। जो भी आया, सब जायेंगे। यह सदा याद रखना।

मंत्र-तंत्र जाणू नहीं, ना कोई जग्य विधान।
राम नाम एक मंत्र है, सैना राखूँ ध्यान॥ 104॥

मैं न तो कोई तंत्र जानता हूँ और न मंत्र जानता हूँ। न ही कोई यज्ञ विधान जानता हूँ। मैं तो केवल राम नाम का मंत्र जानता हूँ। यह बात सदा याद रखता हूँ।

सगुण-निगुण भेदूँ नहीं, जेसो जण को ज्ञान।
मन ऊजल राखो सदा, सैना राखूँ ध्यान॥ 105॥

मैं सगुण-निर्गुण में भेद नहीं करता। जैसा जिसको ज्ञान है, वह ठीक है। मैं तो एक बात याद रखता हूँ कि मन उज्ज्वल रखो।

तेल लगा मालिश करूँ, औसध करूँ मिलान।
रोग मिटें सद्‌गुरु कृपा, सैना राखूँ ध्यान॥ 106॥

तेल में औषधि मिलाकर मालिश करता हूँ। राम कृपा से रोग मिटते हैं। मैं यह सदा याद रखता हूँ।

हाथां ती सेवा करूँ, घट में कृपा निधान।
एसो जीणो उचित हे, सैना राखूँ ध्यान॥ 107॥

हाथों से सेवा करता हूँ। घट में कृपा निधान को धारण करता हूँ। इसी प्रकार का जीवन-यापन ही उचित है। मैं यह सदा याद रखता हूँ।

भोजन भखूँ गिरहस्थ को, राखूँ हिरदै भान।
राम रटूँ सेवा करूँ, सैना राखूँ ध्यान॥ 108॥

गृहस्थ का भोजन करता हूँ। मन में यह बात याद रखता हूँ, इसलिए मुख से राम स्मरण करता हूँ और हाथों से सेवा करताहूँ।

चम्बल नर्मद सीपरा, करतो फिरूँ सनान।
मालव अत प्यारो लगे, सैना राखूँ ध्यान॥ 109॥

चम्बल, नर्मदा, शिप्रा आदि नदियों में स्नान करता हुआ भ्रमण करता रहता हूँ। मालव देश बहुत प्यारा लगता है। यह सदा याद रखता हूँ।

उत्तर दक्खन पंचनद, म्हारो खास रहान।
मालव अत प्यारो लगे, सैना राखूँ ध्यान॥ 110॥

उत्तर, दक्षिण और पंजाब में मेरा खास रहना है, किन्तु मालव देश बहुत प्यारा लगता है।

दसपर में सतसंग सुण्यो, कथ्या सुण्या बखाण।
जिण सुण्या तिन लीखिया, सेना राखूँ ध्यान॥ 111॥

दशपुर में खूब सत्संग किया। ईश्वर के खूब बखाण (कथा-आख्यान) कहे-सुने। जिन्होंने सुने, उन्होंने लिखे। यह मैं सदा याद रखता हूँ।

गागरोन का मुलक में, कथ्या खूब बखान।
किण सुण्या किण लीखिया, सैना राखूँ ध्यान॥ 112॥

गागरोन देश में खूब बखान कहे। किसने सुने, किसने लिखे, वह मेरे ध्यान में है।

सेवा चाकर राम की, संतां को फरमान।
सतगुरू की किरपा बणी, सैना राखूँ ध्यान॥ 113॥

परमात्मा राम की सेवा चाकरी और संत जनों के आदेश से एवं सद्‌गुरू की कृपा से ये बखान कहे। मैं सदा यह बात ध्यान में रखता हूँ।

– सौजन्य : श्री बाबूलाल सेन, महेश्वर, जिला–खरगौन (म.प्र.), 28 अगस्त 1999

संत सैन का प्रेमामृत कलश

सद्‌गुरू

सद्‌गुरु रामानंद ने, किरपा करी अपार।
सैना महत्तम प्रेम को, राम नाम आधार॥ 1॥

सैन भगत कहते हैं– सद्‌गुरू रामानन्दजी ने मुझ पर अपार कृपा करके प्रेम का महत्त्व बताकर राम नाम का आधार प्रदान किया है।

सद्‌गुरु साँचा खेवट्या, डूबन किसतर देय।
सैना जरजर नाव ने, सहज पार कर लेय॥ 2॥

सैन कहते हैं– सद्‌गुरू सच्चे तारणहार (नाविक) हैं। किस तरह डूबने देंगे? जर्जर नाव को भी सहज ही पार (भवसागर) उतार देंगे।

कतरी झंझा आ पड़े, लेहरां उठे विसाल।
सेना डूबन क्युँ डरूँ, सतगुरू ऊबा नाल॥ 3॥

सैन कहते हैं– कितनी भी झंझा आ पड़े, कितनी भयंकर लहरें उठने लगें, मैं डूबने से क्यों डरूँ? सद्‌गुरू मेरे साथ खड़े हैं।

सेना ऊपर पाकगी, अणगण कर्‌या मुकाम।
हरि-हरि करतां आ पुग्यो, सतगुरूजी के धाम॥ 4॥

सैन कहते हैं– उम्र पक गई है। अन्त समय आने लगा है। अनेक मुकाम करता-करता हरि नाम जपता-जपता सद्‌गुरू (रामानन्द) जी के धाम (काशी) पहुँच गया हूँ।

सैना प्याला प्रेम का, सद्‌गुरु दियो पिलाय।
राम रटे रस जीभड़ी, सबदां कह्यो न जाय॥ 5॥

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू जी ने प्रेम-रस का प्याला पिला दिया है। जीभ राम रस रट रही है। इस स्वाद को शब्दों में नहीं बखान सकते।

क्युँ कुरलावे जीवड़ा, सद्‌गुरु शरणा जाव।
सैना पीव मिले अवस, सद्‌गुरु करे उपाव॥ 6॥

सैन कहते हैं- अरे जीव! क्यों विलाप कर रहा है? सद्‌गुरू की शरण जा। तुझे तेरा प्रियतम अवश्य मिलेगा। इसका उपाय सद्‌गुरूजी ही बता सकते हैं।

जो हरि है सोइ राम है, सोइ क्रिसन सोइ सीव।
सैना सद्‌गुरु सोध्या, सोइ साँचो पीव॥ 7॥

जो हरि है, वही राम है, वही कृष्ण है, वही शिव भी है। सैन कहते हैं- सद्‌गुरू ने शोध कर लिया है। वह सच्चा (साहिब) पीव है।

सैना सतगुरू को मरम, कोई सक्यो न जान।
केहत सुणता थाक्या, थाक्या वेद-पुरान॥ 8॥

सैन कहते हैं- सद्‌गुरु का मर्म कोई नहीं जान पाया। कहने-बखानने एवं सुनने वाले दोनों थक गये, किन्तु वेद-पुराण भी नहीं जान पाये।

हरि

जिण घट नेहो संचरे, तिन घट हरि को वास।
सैना एसा मनख ने, नहिं सम्पति की आस॥ 8॥

सैन कहते हैं- जिस घट में स्नेह (प्रेम) संचरित होता है, उस घट में हरि का वास होता है। ऐसा व्यक्ति को किसी सम्पत्ति की आशा नहीं रहती।

भगत हरि को दास हे, हरि भगतां को दास।
सैना नाई बणि गया, सेबा करी खवास॥ 9॥

सैन कहते हैं- जिस प्रकार भक्त हरि का दास है, उसी प्रकार हरि भी भक्तों का दास है। मेरी लाज बचाने खातिर हरि स्वयं नाई बनकर आये और सेवा चाकरी की।

सीस कटे जो हरि मिले, तो मैं लेऊँ मोलाय।
सेना हरि साँटे मिले, नवलख धूर मिलाय॥ 10॥

सैन कहते हैं– सिर के बदले भी यदि हरि मिलें तो मैं ले लूँगा। यदि हरि के बदले नौ लाख भी मिलें तो मैं धूल में मिला दूँगा।

सत्य

सरत्व तज्यो हरिचन्द ने, तज्यो नहीं पण साँच।
सैना विस्वामीत ने, करली पूरी जाँच॥ 11॥

हरिश्चन्द्र ने सर्वस्व त्याग दिया, किन्तु सत्य नहीं त्यागा। सैन कहते हैं– विश्वामित्र ने खूब परीक्षा कर ली।

सत्य धरम को रूप हे, सत्य अटल विसवास।
सैना सत्य न त्यागजो, हे जतरे भी साँस॥ 12॥

सत्य ही धर्म का रूप है, सत्य ही अटल विश्वास है। सैन कहते हैं– जब तक साँस है, तब तक सत्य मत त्यागना।

नाम

माँगन को तो एक हे, राम हरि को नाम।
सैना सतगुरु चरण रज, सिमरण जगपति राम॥ 13॥

यदि कुछ माँगना है तो केवल राम हरि का नाम ही है। सैन कहते हैं– सद्गुरू की चरण रज सीस पर और स्मरण के लिए जगद्पति राम।

सतगुरू रामानंदजी, दीयो तारक नाम।
सैना डूबन क्यूँ डरूँ, खेवटियो सतधाम॥ 14॥

सद्गुरू रामानन्दजी ने नाम का तारक मंत्र देकर धन्य कर दिया और निर्भय कर दिया। अब मैं डूबने से क्यों डरूँ, जबकि तारक स्वयं सतधाम सद्गुरू हैं।

माया

सैना माया बेलड़ी, रही सकल जग छाय।
एक गुणी ने काटिया, सौ गुण बढ़ती जाय॥ 15॥

सैन कहते हैं- यह माया ऐसी बेल है, जो सकल संसार में छाई हुई है। इसे एक गुनी काटो तो सौ गुनी बढ़ जाती है।

पीव

प्रेम पगा विस पी गया, सिवजी अमरत जाम।
सैना आसव प्रेम को, जाणे हरि को नाम॥ 16॥

सैन कहते हैं- शिवजी प्रेमवश विष को अमृत का प्याला मानकर पी गये। प्रेम का आसव हरि के नाम के समान ही है।

सैना आसव प्रेम को, घणो नसीलो होय।
तन की करनी नी चले, मन चाहे जो होय॥ 17॥

सैन कहते हैं- प्रेम का आसव बहुत मादक होता है। उसके पी लेने पर तन विवश हो जाता है। मन का किया ही मानना पड़ता है।

धन्य कर्‌यो दोई वंस ने, जनम्यो सेऊ पूत।
सैना सिर दे चानणा, होयो सदर-सबूत॥ 18॥

सैन कहते हैं- सेऊ सुपुत्र ने मेरे घर जन्म लेकर दोनों वंश (मातृ, पितृ) धन्य कर दिये। प्रेम वश अपना शीश देकर यशस्वी एवं पूर्ण हो गया।

प्रेम कर्‌याँ पछताव क्युँ, यह तो रीत न होय।
सैना हानि-लाभ को, सौदो करे न कोय॥ 19॥

सैन कहते हैं- प्रेम करके पछताना तो ठीक नहीं है। यह प्रीत की रीत नहीं है। इसमें हानि-लाभ का सौदा नहीं होता। समर्पण होता है।

धरम सत्य है सत्य धरम, दोनोइ एक सरूप।
सैना हिरदै प्रेम जिन, तिनके छाँव न धूप॥ 20॥

धर्म सत्य स्वरूप है। सत्य ही धर्म है। दोनों ही एक स्वरूप हैं। सैन कहते हैं- जिनके हृदय में प्रेम है, उनके लिए छाँव-धूप (दुख-सुख) का बोध नहीं रह जाता।

सैना रस की रीत ने, सहज सिखावे ईख।
गाँठाँ में रस नी मले, या हे साँची सीख॥ 21॥

सैन कहते हैं- रस की रीति को ईख सहज ही सिखा देता है। उसकी पौर की गाँठों में रस नहीं होता। अर्थात् जहाँ गाँठ होती है, वहाँ नीरसता होती है। यही सच्ची सीख ईख देता है।

जिनके हिरदै गाँठ वे, तिन घट नहीं सनेह।
सैना कपटी के हृदय, हरि जी किसतर रेह॥ 22॥

सैन कहते हैं- जिनके हृदय में कपट-बैर होता है, वहाँ स्नेह कैसे रह सकता है। कपट वाले हृदय में हरिजी कैसे रह सकते हैं?

पिव तो घट भीतर बसें, तपसें गुफा पहार।
सैना भीतर झाँक ले, चलक नूर करतार॥ 23॥

प्रियतम तो घट के भीतर बस रहा है और तुम पहाड़ों की गुफाओं में तपस्या कर उसे खोज रहे हो। जरा भीतर झाँककर देख लो, परमात्मा करतार का ज्योति प्रकाश जगमगा रहा है।

रूप न रंग न गुण कहूँ, ना सुआरथ न सीव।
सैना जण ती मन मले, सोई साँचो पीव॥ 24॥

सैन कहते हैं- प्रेम में रूप, रंग या गुण अथवा की शर्त नहीं देखी जाती। जिससे मन रम जाये, वही सच्चा प्रियतम होता है।

साधू सेवा कारणे, दीयो सीस कटाय।
सैना सेऊ जी उठ्यो, संतन को संग पाय॥ 25॥

सैन कहते हैं- सेऊ ने संतों के प्रेम और सेवा के कारण अपना सिर कटवा लिया। उसी प्रेम और संत सेवा के बल पर वह पुन: जीवित हो उठा।

सेऊ ने सिर अरपयो, कर्‌यो न तनक विचार।
सैना संतन कारणे, कट जाएँ सेऊ हजार॥ 26॥

सैन कहते हैं- संतों के प्रेम कारण सेऊ ने अपना सिर अर्पित कर दिया। तनिक भी विचार नहीं किया। संतों के कारण हजार सेऊ कट जाएँ, तब भी चिन्ता नहीं। (सैनजी के एक पुत्र का नाम सेवाराम था। वे उसे 'सेऊ' पुकारते थे।)

हाट बिकातो हरि मिले, हर कोई लेय मोलाय।
सैना प्रेम सुपास में, हरि झट कबजे आय॥ 27॥

सैन कहते हैं- यदि हरि हाट में बिकता मिल जाए, तब तो कोई भी खरीद लायेगा। हरि तो प्रेमपाश में ही कब्जे आ सकता है।

सैना पिव बिन जीवणो, बेमतलब की बात।
ज्युँ मछली जिव त्याग दे, जल से बाहर आत॥ 28॥

सैन कहते हैं- प्रियतम के बिना जीना व्यर्थ है। जैसे मछली जल से बाहर आते ही प्राण त्याग देती है, वैसा ही प्रीतम के बिना जीव का प्रेम होना चाहिए।

सैना पिव ती प्यार कर, तज दे माया मोह।
माया भरमावे घणी, पिव ती करे विछोह॥ 29॥

सैन कहते हैं- अपने प्रियतम से प्यार करने में समस्त माया-मोह त्याग दो। माया भ्रमित करती है और प्रियतम से वियोग करवा देती है।

मान कर्‌यो जिन पीव ती, पल-पल भौंह चढ़ाय।
सैना अपना पीव ने, बैठी रोय गँवाय॥ 30॥

सैन कहते हैं- जो आत्मा (नारी) अपने प्रियतम से बार-बार रूठती है, भौंहें चढ़ाकर मान जताती है। वह अपना प्रियतम खो बैठती है, फिर पछताती है।

पिव ती परदो मति करो, परदो नेह घटाय।
सैना तन-मन सोंप दे, कद्यां नहीं पछताय॥ 31॥

सैन जी कहते हैं- पीव से पर्दा मत करो। पर्दा करने से स्नेह घटता है। अपना तन-मन सर्वस्व अपने प्रियतम को सौंपने वाला कभी पछताता नहीं है।

पिव ती मति परदो करो, अरपो तन मन जीव।
सैना अवसां रीझसी, प्रेम पिआरो पीव॥ 32॥

सैन जी कहते हैं- प्रियतम से पर्दा मत करो। प्रियतम को अपना तन-मन प्राण सब अर्पित कर दो। वह प्रेम प्यारा पीव अवश्य रीझेगा।

प्रेम पास भँवरो बंधे, पिव तो बंधे अवस।
सैना पिव ने बाँध ल्यो, प्रेम पास में कस॥ 33॥

सैन कहते हैं- जब प्रेमपाश में भँवरा बंध सकता है, तब प्रियतम तो अवश्य बाँध सकेगा। इसलिए अपने प्रिय को प्रेमपाश में कसकर बाँध लो।

सीस राख पीव ने चहे, या तो जुगति न होय।
सैना दो-दो चोपड़ी, देत न देखी कोय॥ 34॥

सैन कहते हैं– शीश बचाकर प्रियतम को प्राप्त करना चाहे, यह तो युक्ति ठीक नहीं है। ऐसा कैसे सम्भव है कि घी चुपड़ी भी चाहे और दो भी चाहे, अर्थात् शीश भी बचाकर रखे और प्रियतम भी बचाकर रखे।

रूप न रेख न गुण कहूँ, सब निरख्या अवगाहि।
सैना जण से मन रुचे, सोई पिव घट माँहि॥ 35॥

सैन कहते हैं– रूप, नक्श (देहयष्टि) या गुण, ये सब नहीं देखे जाते, जिससे मन रुच (रीझ) जाये, वही हृदय में बैठ जाता है।

एक-एक का जोग ती, दो मिल दूना होय।
(सैना) जीव पीव दोई मिल्या, दो नहिं भाखे कोय॥ 36॥

एक और एक के योग से दो हो जाते हैं, किन्तु जीव और पीव दोनों के मिलने पर कोई दो नहीं बखानता। दोनों एकमेव हो जाते हैं।

सैना सोई दिन सोवतो, प्रीतम की गल बाँह।
साँस-साँस प्रीतम बसे, देख-सूण कछु नाँह॥ 37॥

सैन कहते हैं– वही दिन सुहाना होता है, जिस दिन प्रीतम की बाँह गले में हो। यदि साँस-साँस में प्रियतम बस जाएँ, तब कुछ भी देखने-सुनने के लिए नहीं रह जाता।

बलत दूध राधा पियो, पड़ी न हिरदै आल।
सैना पिव हिरदै बसें, जण के पड़गी झाल॥ 38॥

सैन कहते हैं– राधा ने उबलता हुआ गर्म दूध पिया, तो उनको तनिक भी आल (प्रभाव) नहीं पड़ा, किन्तु प्रियतम (कृष्ण) हृदय में बस रहे थे, उनके फफोले पड़ गये।

विस पीतां परलाद ने, कर्‌यो न तनक विचार।
सैना जिन घट हरि बसें, विस-अमरत की धार॥ 39॥

प्रह्लाद ने विष पी लिया, तनिक भी चिन्ता नहीं की, क्योंकि जिसके हृदय में हरि (पीव) का वास हो। उसके लिए तो विष अमृत की धार हो जायेगा।

पीव मिले सिर के दियाँ, लेओ तुरत मुलाय।
सैना सोच विचारतां, औसर बीत्यो जाय॥ 40॥

सैन कहते हैं- यदि सिर के बदले पीव मिल जाये, तो तुरन्त ले लो। सोच-विचार करते-करते अवसर बीत जायेगा।

सूरो सिमरण करि सके, सूरो पिव चित धार।
सैना कायर नी डटे, साहिब के दरबार॥ 41॥

सैन कहते हैं- कोई शूरवीर ही पीव का स्मरण कर सकता है। वही पीव को चित्त में धारण कर सकता है। कायर सहिब (ईश्वर) के दरबार में नहीं टिक सकता।

सैना सज्जन के रिदै, बैर नहीं रह पाय।
जहाँ प्रेम तहँ पीव हे, अन्तरघट सरसाय॥ 42॥

सैन कहते हैं- सज्जन के हृदय में बैर नहीं रह पाता। जहाँ प्रेम है, वहीं पीव (स्वामी / ईश्वर) भी हैं। वे अन्तर्घट को रसमय करते रहते हैं।

अन्तर घट पिव थरप लूँ, कर लेऊँ बंद कपाट।
सैना नित दरस्याँ करूँ, न कोई हटक न हाट॥ 43॥

सैन कहते हैं- पीव को अन्तर्घट में स्थापित कर लूँ, फिर आँखों के कपाट बंद कर लूँ। नित्य प्रति दर्शन करूँ। कोई रोक-टोक नहीं रहेगी।

भीतर झलके सूरजो, चन्दो झलक दिखाय।
सेना जे पिव राच्या, तिनके नजराँ आय॥ 44॥

सैन कहते हैं- भीतर सूरज और चन्द्रमा चमक रहे हैं। वे उन्हीं को दिख सकते हैं, जिनके मन में पीव है तथा जो पीवमय हो गये हैं।

विरह

सुण पपिहा मेरे मते, पिव को नाम न हाल।
सैना सुणतां जिव उठे, ब्रह्म अगन की झाल॥ 45॥

सैन भगत कहते हैं- मेरे मत से पिव-पिव मत बोल। तेरे पिव-पिव बोलने से ब्रह्म अग्नि की लपटें उठने लगती हैं।

नोट - एक मौखिक साखी में 'ब्रह्म अगन की झाल' के स्थान पर 'पीव मिलन की झाल' भी सुनने को मिला है।

सैना नींद न आ सके, तीन जणा सच जाण।
अति नेही अर अति रिणि, बैरी ऊबो भाण॥ 46॥

सैन भगत कहते हैं- तीन लोगों को नींद नहीं आ सकती, यह सच है। अति स्नेह करने वाला, अधिक ऋणवान तथा वह जिसके दरवाजे पर बैरी खड़ा हो।

सेना कागो बाँवलो, बैठे पँजर जाय।
रगत मांस रह्यो नहीं, चूँट-चूँट कई खाय॥ 47॥

सैन कहते हैं- कौआ बावला है, जो सूखे पंजर पर जाकर बैठता है। विरहन के पँजर पर रक्त, मांस तो रहा नहीं, चूँट-चूँटकर क्या खायेगा?

सेना बिरहा अगन में, तन मन जोबन खाक।
लू की लपटां चालतां, बाकी बची न राख॥ 48॥

सैन कहते हैं- विरह की अग्नि में तन-मन और यौवन तीनों ही राख हो गया है। विरह रूपी लू की लपटों ने सब जला दिया है। शेष केवल राख ही बची है।

सैना बरछी बिरह की, गई कालजे लाग।
लोहू तो सब बहि गयो, चूटन लागा काग॥ 49॥

सैन कहते हैं- विरह की बरछी कलेजे में ऐसी लगी है कि सारा रक्त बहकर तन पिंजर बन गया। कौए माँस नोच रहे हैं।

सैना बिरह बरछियाँ, रोम-रोम गई छेद।
मल्लम पट्टी सेवतां, थाक्यो बपुरो वेद॥ 50॥

सैन कहते हैं- विरह की बर्छियों ने रोम-रोम छेद दिया है। मलहम-पट्टी करते-करते बेचारा वैद्य भी थक गया है।

विरह की लागी लपट, दीयो तन मन जार।
सैना पीर मिटे तदां, पीव दरस की ठार॥ 51॥

सैन कहते हैं- विरह की लपटों ने तन मन जला डाला है। इसकी पीड़ा तभी मिट सकेगी, जब प्रिय के दर्शन की शीतलता मिलेगी।

बिरहो मछुरी की जबर, बिछुरत ही मर जाय।
सैना बिछुर्याँ पीव ती, जीव घमेरा खाय॥ 52॥

सैन कहते हैं- विरह तो मछली का जबरदस्त है, जल से बिछुड़ते ही मर जाती है। प्रियतम से बिछुड़ने पर जीव हिचक रहा है। न निकल रहा है, न चैन से रह पा रहा है।

सैना यो जिव वई गयो, पक्को डीठ निलज्ज।
पिव बिछुरियाँ निकरो नहीं, अतरी नहीं समझ्झ॥ 53॥

सैन कहते हैं– यह जीव बहुत ढीठ और निर्लज्ज हो गया है। प्रिय से बिछुड़ने के बाद भी यह निकला नहीं, इसे इतनी भी समझ नहीं है।

सैना जिव बज्जर वियो, पिव बिछुरन की बार।
ना रोयो ना तलफ्यो, भीतर लगी कटार॥ 54॥

सैन कहते हैं– यह जीव प्रिय के बिछुड़ने पर वज्र हो गया। न तो रोया, न तड़पा, जबकि भीतर कटार (विरह की) लगी। उसे सह गया।

सैना लंका जरी बुझी, बुझी न हिव की आग।
चिनगारी पिव बिरह की, सुलग रही हतभाग॥ 55॥

सैन कहते हैं– लंका जली भी और जलकर बुझ भी गयी। इस हृदय की आग आज तक नहीं बुझ सकी। विरह रूप चिंगारी आज भी सुलग रही है। यही दुर्भाग्य है।

काची प्रीत करो मती, बिछुरन कलपे जीव।
सैना तलफन नी मिटे, जब लग मिले न पीव॥ 56॥

सैन कहते हैं– कच्ची प्रीत नहीं करना चाहिये। प्रीत टूटने और प्रियतम के बिछुड़ने पर जीव कलपता रहता है। यह तड़प तभी मिटती है जब प्रिय मिल जाये।

आन मिले फेर बीछुरे, बिछुर्याँ मले न कोय।
सैना बिछुर्याँ तद मिले, प्रीत साँचली होय॥ 57॥

प्रीतम मिल जाये, फिर बिछुड़ जाये। बिछुड़ने पर कभी मिलन सम्भव नहीं होता। सैन कहते हैं– यह तभी सम्भव होता है, जब प्रीत सच्ची हो।

सैना प्रीत करो मती, मति करजो कोई चूक।
अलप काल को मीलनो, उठे कालजे हूक॥ 58॥

सैन कहते हैं– कोई भूलकर भी प्रीत मत करना। थोड़े समय का मिलना होता है और कलेजे में विरह की हूक उठती रहती है।

जो पिव घट भीतर रमे, बिरहो किसतर होय।
सैना चेतन्यो रहे, पल-पल सिमरे कोय॥ 59॥

सैन कहते हैं- यदि प्रियतम घट के भीतर निवास करे, तब विरह कैसे हो पायेगा? इसलिए चैतन्य रहकर पल-पल उसका स्मरण करते रहो।

प्रेम

सैना प्रेम अमोल हे, नहिं मोहर की सांट।
रावण धणी सुबर्न को, दिया सीस दस काट॥ 60॥

सैन कहते हैं- प्रेम अनमोल है। उसे मोहर (स्वर्ण-मुद्रा) के बदले नहीं खरीदा जा सकता। रावण स्वर्ण का स्वामी था, फिर भी उसने दस सिर काटकर हरि से प्रेम प्रकट किया।

सैना प्रीत चकोर की, ससि निरखत निस जाय।
वासर के हर जीव में, तनिक नहीं पतियाय॥ 61॥

सैन कहते हैं- प्रीत तो चकोर की है, जो चन्द्रमा को निहारते हुए रात बिता देता है। दिन में किसी पर भी भरोसा नहीं करता।

सैना प्रीति पपीहरा, नवे न नीचे नीर।
कै तो जावे सुरपुरी, कै दुख सहे सरीर॥ 62॥

सैन कहते हैं- प्रीत पपीहे की सच्ची है, जो धरती पर पड़ा जल नहीं पीता। केवल स्वाति नक्षत्र में बरसा जल ही चोंच में धारण करता है। स्वाति जल नहीं मिलने पर या तो वह सुरपुर चला जाता है या दुख झेलता रहता है।

सैना तोड़ जुड़े नहीं, जुड़े गठीला होय।
गाँठ-साँठ चुभ्यां करे, अंत किरकिरी होय॥ 63॥

सैन कहते हैं- प्रेम का तागा टूटने पर फिर जुड़ता नहीं है। यदि जोड़ा जाये तो गठान लगेगी। वह गठान सदा चुभती रहेगी। बहुत फजीहत होती है।

सैना नेह एसो करे, छूट्याँ छुटे न रीत।
कोई कतरोइ छल करे, झूठो पड़े न मीत॥ 64॥

सैन कहते हैं- स्नेह ऐसा करना चाहिए कि वह छूट नहीं पाये। कोई कितना भी छल करे, प्रेमी नहीं माने।

सैना गाँठ परेम की, परी जो काहूँ फेर।
चतुर सयाने पचि मुए, कढ़ी नहीं उरझेर॥ 65॥

सैन कहते हैं- यदि प्रेम की किसी कारण गाँठ पड़ जाये, तब वह खुलती नहीं। कई चतुर और सयाने पच गये, किन्तु उलझन नहीं सुलझी।

सिर के साँटे प्रेम है, जो चाहे ले जाय।
सैना जण के मन रुचे, सिर दे झट ले जाय॥ 66॥

सैन कहते हैं- सिर के बदले प्रेम मिल रहा है। जिसे चाहिए वह ले जाये। जिसके भी मन में रुच रहा हो, झटपट आकर ले जाये।

दस सिव के दस राम को, रावण अरप्या सीस।
सैना प्रेम सनेह बस, काट समरप्या सीस॥ 67॥

सैन कहते हैं- रावण ने दस सिर शिव को और दस सिर राम को प्रेमवश अर्पित कर दिये। उसके मन में प्रेम था।

रावण ने सिर अरप्या, एक नहीं दस बीस।
सैना दस सिवजी शरण, दस रघुपति जगदीस॥ 68॥

रावण ने बीस सिर अर्पित कर दिये। दस शिवजी को और दस रघुपति को। यह उसका आन्तरिक प्रेम ही था।

रावण मले तो पूछजो, क्युँ सौंप्या सिर बीस।
सैना दस कैलास पे, दस समदर के ईस॥ 69॥

सैना कहते हैं- रावण मिले तो पूछना उसने बीस सिर क्यों अर्पित किये। दस कैलाश पर दस समुद्र तट पर।

प्रेम बिबस रावण हुओ, घट भगती मुख रीस।
सैना रहनी प्रेम की, सौंप दिया सिर बीस॥ 70॥

सैन कहते हैं- रावण ने प्रेम के वश में होकर अपने बीस सिर अर्पित कर दिये। यह उसके प्रेम की रहनी थी। उसके घट में प्रेम एवं भक्ति थी और मुँह पर क्रोध था।

धन्य-धन्य सेऊ कहूँ, उपज्यो पूत सपूत।
सैना प्रेम निबाह की, कर ली साँची कूत॥ 71॥

सैन कहते हैं- सेऊ सच्चा सुपुत्र उत्पन्न हुआ। उसने प्रेम निर्वाह की सच्ची कूत की (मूल्यांकन किया)। सिर देकर भी प्रेम निर्वाह कर लिया।

सेऊ ने सिर दे दियो, सेना संतन काज।
(सैना) संत न भूखे रेह सकें, मिटे न घर की लाज॥ 72॥

सैन कहते हैं- सेऊ ने संतों के प्रति प्रेम के कारण अपना सिर न्यौछावर कर दिया। उससे ऐसा किया कि न तो संत भूखें रहें, न घर की इज्जत (यश) जाने पाये।

प्रेम हरि को रूप हे, प्रेम रम्मैया राम।
सैना जिस घट प्रेम हे, वो घट तीरथ धाम॥ 73॥

सैन कहते हैं- प्रेम हरि का ही रूप है। प्रेम ही राम है। जिस घट में प्रेम है, वह घट तीर्थधाम जैसा पावन है।

जिण घट नेहो संचरे, तिन घट कोप न आय।
सैना तन पुरक्यो फिरे, दुई भाव मिट जाय॥ 74॥

सैन कहते हैं- जिस घट में प्रेम संचरित होता है, उस घट में क्रोध नहीं ठहर सकता। तन पुलकित रहता है। दुई का भ्रम मिट जाता है।

प्रेम पास में बंधि गयो, भँवर कँवल की पाँख।
सैना सुध-बुध भूल ग्यो, जतरे खुली न आँख॥ 75॥

सैन कहते हैं- भँवर प्रेमपाश में बँधकर कमल की पंखुड़ियों में बँध गया। जब तक कमल की आँख नहीं खुली, कमल प्रातः विकसित नहीं हुआ, तब तक सुध-बुध बिसार कर कमल पंखुडियों में बंद पड़ा रहा।

जिन घट प्रेम न ऊपजा, नहिं जिन सरस सुभाव।
सैना वो घट मरघटो, बलती चिता अलाव॥ 76॥

सैन कहते हैं- जिस घट में प्रेम संचरित नहीं होता, वह घट मरघट के समान है। ऐसे व्यक्ति का स्वभाव सरस कैसे होगा। उसके घट में चिता की अग्नि धधक रही है।

तिरवेणी अमरत झरे, टप-टप अमरत सार।
सैना जिण घट प्रेम हे, सोई पीवण हार॥ 77॥

सैन कहते हैं- त्रिवेणी में अमृत टपक रहा है। जिसके हृदय में प्रेम भरा है, वही उस अमृत रस का पान करने का अधिकारी है।

प्रेम पगो मन चित्त करो, लेओ आँखाँ मीच।
सैना अमरत कुण्ड भर्‌यो, तिरवेणी के बीच॥ 78॥

सैन कहते हैं- पहले अपने हृदय (मन-चित्त) को प्रेमपूरित कर लो, फिर आँखें मीच लो, त्रिवेणी में अमृतकुण्ड भरा है, उसका पान करो।

ना कोई हटकणहार हे, ना कोई बरजनहार।
सैना पी लो धाप ने, वेवे अमरत धार॥ 79॥

सैन कहते हैं- न कोई रोकने वाला है, न टोकने वाला। भीतर घट में अमृत धार बह रही है, तृप्त होकर पी लो।

जण ने पीओ प्रेम रस, सब रस करुआ लाग।
सैना जिन छक पी लियो, तिनके मोटे भाग॥ 80॥

सैन कहते हैं- जिसने प्रेमरस पी लिया है, उसके लिए सभी रस कड़वे हैं। जिसने छककर प्रेमरस पी लिया, उनके धन्य भाग हैं।

पारख

एकहि बार परीखिए, परख न बारम्बार।
सेना जो छाण्या करे, सो नर निपट गँवार॥ 81॥

सैन कहते हैं- परीक्षा एक बार में ही पूरी पक्की कर लेना चाहिए। बार-बार नहीं। जो व्यक्ति बार-बार छानता रहता है, वह निपट गँवार है।

आकुलता

पंख होय ती उड़ चलूँ, मृग वे तो धाय।
सैना पंख न पाँव बल, रहूँ नाम लिव लाय॥ 82॥

पंख हों तो उड़ जाऊँ और मृग जैसे तीव्रगति हों तो दौड़ जाऊँ। मेरे मन में प्रिय मिलन की आकुलता तीव्र है, किन्तु न तो पंख हैं और न ही मृग सा पाँव। केवल नाम का भरोसा है। उसी में लीन हूँ।

सैना हरि के दरस की, नहिं जिन हिरदै चाह।
भूल भटक भमतो फिरे, मिले न साँची राह॥ 83॥

सैन कहते हैं- जिनके मन में हरि मिलन की उत्कण्ठा नहीं होती, वे भ्रमवश भटकते रहते हैं। उन्हें सच्चा मार्ग नहीं मिल पाता।

वेश

भेख धर्‌याँ वाजे अवस, हर कोई संत फकीर।
सैना घट नहिं प्रेम रहा, हरे नहीं पर पीर॥ 84॥

भेष धारण कर लेने पर कोई भी संत या फकीर तो कहला सकता है। सैन कहते हैं- यदि घट में प्रेम रहा नहीं है तथा परपीड़ा हरण करने की चाहत नहीं है, तो भेष धारण करना व्यर्थ है।

मान

सैना संता बावरा, झिक-झिक माँगे मान।
माँग्याँ मान मिले नहीं, मान नहीं कोई दान॥ 85॥

सैन कहते हैं- संतजन बावरे हैं, जो सप्रयत्न माँगने के लिए व्याकुल होते रहते हैं। मान माँगने से नहीं मिलता, मान कोई दान तो नहीं कि कोई दान में अर्पित कर दे। वह अपने शुद्ध आचरण से अर्जित करना पड़ता है।

मंगतपन

सैना मति जाजो कदै, माँगन को परद्वार।
माँगन को हे बाप घर, साई को दरबार॥ 86॥

सैन कहते हैं- कभी भी किसी परद्वार पर भीख माँगने मत जाओ। यदि माँगना ही है तो अपने बाप अर्थात् परमात्मा के घर-दरबार पर जाकर माँगो।

सब ते ओछो माँगनो, हाथ सीस झुक जाय।
सैना मुख टेड़ो बणे, वाणी झोला खाय॥ 87॥

सैन कहते हैं- सबसे निम्न स्तर का काम है। माँगना, मंगतपना, माँगने वाले का हाथ (कर्म) और शीश (प्रतिष्ठा) झुक जाता है। मुखमुद्रा टेढ़ी हो जाती है, वाणी लड़खड़ा जाती है। दयनीय हो जाती है।

माँगन गये तो मरि खुटे, कहतो फिरे हजूर।
सैना माँगन ती भलो, मरि जाणो मंजूर॥ 88॥

सैन कहते हैं- माँगने गये तो मानो मर गये। बिना लज्जा किये निर्लज्ज होकर (मान गँवाकर) सबको दाता और हुजूर कहते फिरते हैं। इससे तो अच्छा है, मर जायें। माँगने से मरना अच्छा है।

बहुत गई तनकी बची, वा भी जस-तस जाय।
सैना आखिर उमर में, माँगन क्युँ भटकाय॥ 89॥

सैन कहते हैं- बहुत बीत गयी है, थोड़ी-सी उम्र शेष बची है। इस आखिरी उम्र में माँगने क्यों भटकूँ?

माँगन को तो एक हे, राम हरि को नाम।
सैना सतगुरू चरण रज, सिमरण जगपति राम॥ 90॥

माँगने के लिए केवल हरि का नाम ही है। सैन कहते हैं- सतगुरू की चरणरज और स्मरण के लिए जगत्पिता का नाम है। इसी की याचना करो।

कटुक वचन

कटुक वचन मति बोलिये, मति करजो या भूल।
सैना कड़वे वचन से, लगे हृदय में शूल॥ 91॥

सैन कहते हैं- कड़वे वचन मत बोलो। कड़वे वचनों से हृदय में शूल चुभ जाता है। ऐसी भूल कभी भी मत करना।

सैना घाव जो सेल को, दिन दस पिराई।
लाग्यो घाव कुजीभड़ी, जीवहिं न भराई॥ 92॥

सैन कहते हैं- भाले (बरछे) का घाव तो दस दिन ही दुखता है, किन्तु कटुक जीभ के कड़वे वचन का घाव जीवनभर नहीं भरता।

वचन

मीठ वचन अमरत समां, सरसावे तन मन्न।
सैना केहता-सूणता, दोनई हृदय प्रसन्न॥ 93॥

सैन कहते हैं- मीठे वचन अमृत के समान हैं, तन और मन को सरसित कर देते हैं। वक्ता और श्रोता दोनों का हृदय प्रसन्न हो जाता है।

मीठ वचन वे कह सकें, जिनके रिदै सनेह।
सैना जिनके मन कपट, रीस करें पछतेह॥ 94॥

सैन कहते हैं- मीठे वचन केवल वही कह सकता है जिसके मन में स्नेह है, जिनके मन

में कपट होता है, उसके वचन छलयुक्त होते हैं। ऐसा व्यक्ति केवल क्रोध करता है और फिर पश्चाताप करता है। क्रोध का अन्तिम फल पश्चाताप ही होता है।

पीपा की वाणी अजब, मधरी अमरत धार।
सैना निको कंठ ती, पड़े रिदै में ठार॥ 95॥

सैन कहते हैं– पीपाजी की वाणी अद्‌भुत व मीठी अमृत धार जैसी है। कण्ठ से निकलते ही हृदय को शीतल कर देती है।

नीति

सैना पर घर जाइ के, दुख न कहिये रोय।
लोग हँसे दुख सूणताँ, संग न रोवे कोय॥ 96॥

सैन कहते हैं– परघर जाकर अपना दुख मत रोइये। सुनकर लोग केवल उपहास ही करेंगे। साथ कोई भी रोने नहीं बैठेगा।

सैना जब जग मीत कर, बैर न काहू ठान।
घर-घर मीत न कर सके, एक-एक कर गाम॥ 97॥

सैन कहते हैं– सारे जगत से मित्रवत् व्यवहार करो। किसी से भी बैर मत ठानो। यदि घर-घर में मित्र नहीं बना सकते, तो प्रत्येक गाँव में एक मित्र अवश्य बनाओ।

सैना तहाँ न जाइए, जठे कपट को हेत।
जैसी कली कनेर की, तन राता मत सेत॥ 98॥

सैन कहते हैं– वहाँ मत जाइए, जहाँ कपट का व्यवहार हो। दोहरा चरित्र हो, जैसे कनेर की कली बाहर से लाल और अन्दर से सफेद होती है।

सेना खीरा को मिलन, बातां लागे छीन।
ऊपर को मिलनो कपट, भीतर पाखाँ तीन॥ 99॥

सैन कहते हैं– खीरे जैसा मिलन व्यर्थ है। ऐसी बात क्षीण है। बेमतलब है। ऊपर से एक और भीतर से तीन भाग बँटा होता है।

सैना सुई सुजान नर, फाटा एक करै।
करवत क्रूर सुजान नर, फाटा एक धरै॥ 100॥

सैन कहते हैं- सुई और सुजान नर फटे हुए को एक करते हैं। सुई सीकर और सुजान नर प्रेमपूर्वक। करवत की क्रूरता को सुजान नर फिर से एक कर देता है।

पीपे ज्ञान दियो सूई को, कह दी मोटी वात।
सैना सूई सीव दे, खड़्ग करे झट घात॥ 101॥

सैन कहते हैं- संत पीपाजी ने यही बात कही है। उन्होंने सुई का ज्ञान दिया है। यह बहुत महत्त्व की बात है। सुई सी देती है, खड्ग घात करके काटता है।

सैना सम्पति लोभ वश, गये समंदर पार।
तां भी मिल्या संखड़ा, विधना लिखो ललार॥ 102॥

सैन कहते हैं- सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए समुद्र पर कई लोग गये (परदेस हीरे-जवाहरात लेने), किन्तु उन्हें शंख ही मिले। जो विधाता ने भाग्य में लिखा है, वही मिलेगा।

सैना सम्पति विपति को, जो धिक्के सो कूर।
राईं घटे न तिल बढ़े, विधि लिख्यो अंकूर॥ 103॥

सैन कहते हैं- सम्पत्ति और विपत्ति के समय जो निराश या प्रसन्न होते हैं, सब झूठ है। विधाता ने जो अंकोरे (भाग्य) में लिख दिया है, उसमें न राई घट सकती है न तिल बढ़ सकता है।

काचो तो मीठो लगे, गदरायो रसदार।
सैना सो फल कौन सो, पाक गयां कटुसार॥ 104॥

सैन कहते हैं- वह फल कौन-सा है, जो कच्चा रहते मीठा लगता है, गदरा जाने पर रसदार तथा पक जाने पर कड़वा लगता है? उनका संकेत है- वह फल मनुष्य है। बचपन में मीठा, जवानी में रसीला तथा वृद्धावस्था में कड़वा लगता है।

केस कनौती ऊजली, सपट सेनसो देय।
सैना समयो आ पुग्यो, राम नाम भज लेय॥ 105॥

सैन कहते हैं- कनौटी (कनपटी) तथा सिर पर सफेद बाल आ जाएँ तो उसे सीधा-स्पष्ट समझौता मानना चाहिए कि समय आ गया है (संसार से विदा का), राम नाम में चित्त लगा लो।

केस पक्या दृस्टि गई, झर्या दंत और धुन्न।
सैना मिरतू आ पुगी, करले सुमरन पुन्न॥ 106॥

सैन कहते हैं- जब केश पक गए, दृष्टि चली गई, दाँत झड़ गए और ध्वनि मंद पड़ गई, तो जान लो- मृत्यु निकट है। स्मरण का पुण्य कर लो।

आत्म-कथ्य

पीपा तर्‌या सद्‌मता, तरसी संत कबीर।
सैना धन्ना तिरि गयो, रैदासो मति धीर॥ 107॥

सैन कहते हैं- सद्‌मति पीपाजी तिर गये (उद्धार हो गया), संत कबीर भी अवश्य तिरेंगे। धन्ना तिर गया, रैदास धीर मति है। वह भी अवश्य तिरेगा।

सब तिर्‌या सब तिरैंगे, सेनो भव नद बीच।
सैना सतगुरू की कृपा, तरसी आँखाँ मीच॥ 108॥

सैन कहते हैं- सबका उद्धार हो जायेगा। सैना तो भवसागर के बीच है। उस पर सद्‌गुरू की कृपा है। वह निश्चित रूप से तिर जाएगा।

ना तो घर की सुध है, न कोई रिस्तादार।
सैना सतगुरू साहिबा, अखल जगत परवार॥ 109॥

सैन कहते हैं- मुझे न तो घर की सुधि है, न कोई रिश्तेदार है। मेरा स्वामी सद्‌गुरू (रामानन्द) है और परिवार सारा जगत् है।

काना सुणि के सेऊ ने, धर्‌यो फकीरी भेस।
सैना दोई कुल तार्‌या, बण सद्‌मत दरवेस॥ 110॥

सैन कहते हैं- मैंने सुना है सेऊ (उनका पुत्र सेवाराम) ने भेष ले लिया है। वह सद्‌मति दरवेश (संत) हो गया है। उसने दोनों वंश (माता-पिता) तार दिये हैं (उबार दिये हैं)।

सैना रोऊँ किण सुमर, देख हूँसू किण अब्ब।
जो आए ते सब गये, हैं सो जैहें सब्ब॥ 111॥

सैन कहते हैं- मैं किसे याद करके रोऊँ और किसे याद करके हँसूँ? जो आये थे, वे सब चले गये। जो हैं, वे सब चले जायेंगे (यह संसार नश्वर है)।

अमृत कलश

सैना कलसो प्रेम रस, पड़ो आँगणा बीच।
जण के जतरी तरस वे, पीवे आँखाँ मीच॥ 112॥

सैन कहते हैं– प्रेमरस का कलश आँगन में पड़ा हुआ है, जिसमें जितनी प्यास हो, वह निश्चिन्त होकर उतना प्रेमरस पी ले।

सैना अमरत प्रेम को, जिन पीयो बड़भाग।
रिदै तैतरी बज उठे, गूँजें छत्तीस राग॥ 113॥

सैन कहते हैं– जिस-जिस ने भी प्रेमामृत का पान किया है, वे बड़भागी हैं। इस अमृत रस के पीते ही भीतर की हृदय तैतरी (तंत्री) बज उठती है और मधुर-मधुर छत्तीसों राग गूँजने लगते हैं।

संत सैन भगत की पदावली

पद

मुझ पे सद्‌गुरु कृपा करी॥ टेक॥
सूधो हाट बताओ सद्‌गुरु सूधी गेल करी॥ 1॥
ना कोई ऊबड़ ना कोई खाबड़, ना टेड़ी-सकरी।
ना कोई साँस रोकणी होई, ना कोई षट्चकरी॥ 2॥
सीधो नाम बताओ सद्‌गुरु, साँस-साँस सतरी।
रामानंद गुरु पूरा पाया, मनख देह उघरी॥ 3॥
राम ती बड़ो नाम बताओ, गेल नहीं वकरी।
सैन भगत साहिब दरवाजे, राम नाम छकरी॥ 4॥

– सौजन्य : श्री साँवरलाल तंवर-बीकानेर (राज.)

सद्‌गुरू ने मुझ पर बहुत कृपा की है। सद्‌गुरू ने मुझे सीधी हाट (सत्संग का संग) बताया और वहाँ का सहज मार्ग भी प्रशस्त किया। वह मार्ग न तो ऊबड़-खाबड़ है, न टेढ़ा/ मेढ़ा और न सकरा है, अर्थात् निर्बाध है। न तो साँस रोककर समाधी लगाने का मार्ग है, न षट्साधना। उन्होंने सहज रूप से नाम का ज्ञान बता दिया है। मेरी साँस-साँस सकारथ हो गई है। मेरी मनुष्य देह (जन्म) सफल कर दिया है। सद्‌गुरू रामानन्द मुझे समर्थ एवं पूरे सद्‌गुरू के रूप में मिल गए। उन्होंने मुझे ज्ञान दिया और सुझा दिया कि राम से भी उनका नाम बड़ा है। उनकी यह गेल (मार्ग) टेढ़ी (कठिन) भी नहीं है। मैं राम नाम के छकड़े में बैठकर साहिब के द्वार पर पहुँचने में सफल हो गया हूँ।

सैन धन्ने खूब करी सेवकाई॥ टेक॥
राछ-पीछ को थेलो टांग्यो, वाज्यो सेनो नाई॥ 1॥

दर-दर हाँक लगातो फिर्‌यो, करन गयो सेवकाई।
ठाकर-ठाकुर करे तुकारो, पीड़ा बरनि न जाई॥ 2॥
राम नाम की ताड़ी लागी, नी पौच्यो सेवकाई।
भेस बणा राम खुद पौंच्या, धन रे सेनो नाई॥ 3॥
राछ-पीछ सब परमा फैंक्या, राम नाम चितलाई।
सैन भगत हिरदै पट खुल्या, सद्‌गुरु की करुनाई॥ 4॥

अरे सैन! तूने खूब सेवकाई कर ली] औजारों का थैला टाँगकर। सैन कहते हैं- मैं द्वार-द्वार आवाज लगाता फिरा और सेवकाई करता फिरा। लोगों ने तुकारा देकर बुलाया। उस पीड़ा को व्यक्त करना कठिन है।

राम नाम की ऐसी धुन लगी कि ठाकुर (राजा) की सेवकाई में जाना भूल गया। मेरा मान बचाने के लिए स्वयं प्रभु मेरा रूप धारणकर के पहुँचे और राजा की सेवकाई निभाई। अरे सैन! तू धन्य हो गया। यह लीला ज्ञान होते ही सब औजार आदि फ्ह्यडु क दिए। राम नाम में चित्त स्थिर किया। हृदय के पट खुल गए। ऐसी कृपा सद्‌गुरू की हुई।

किण विध ठाकुर के ढिग जाऊँ॥ टेक॥
गेल नी जाणूं, गमत नी जाणूँ, जाणूं नहीं उपाऊं।
कबीर पौंच्या पीपा पौंच्या, रहि गयो सैनो नाऊं॥ 1॥
धन्नो पौंच्यो रैदास पौंच्यो, सबको बड़ो सुभाऊं।
म्हारी भगति ओछी होई, मदद करी न काऊं॥ 2॥
सद्‌गुरु की किरपा बिन पायाँ, पौंच नी पावे राऊं।
सैन भगत के निहचो पूरो, चरण कमल चित लाऊं॥ 3॥

मैं ठाकुर के द्वार किस विधि से जाऊँ। मुझे तो न विधि ज्ञात है न ज्ञान है। पीपा, धन्ना, रैदास सब तो वहाँ पहुँचने में सफल हो गए। कबीर भी अवश्य पहुँचेंगे। सबका स्वभाव महान था। वैसा मेरा कहाँ है।

मेरी भक्ति तो बहुत कमजोर है। किसी ने सहायता भी नहीं की। सद्‌गुरू की कृपा प्राप्त किए बिना ठाकुर के दरबार तक कोई नहीं पहुँच सकता। सैन कहते हैं- मुझे पूरा विश्वास है कि मैं प्रभु के चरण कमल में चित्त लगा लूँगा।

सद्‌गुरु ने साहिब दरसायो॥ टेक॥
दक्खन ती उत्तर तई भरम्यो, पूरब ती पच्छिम में आयो।
चौपाला अर चौक चौकड़े, ऊँचा सुर में हरिगुण गायो॥ 1॥

वेद पुराण सुण्या अर गुण्या, मन मूरखड़ो हमज नी पायो।
दरसन परसन करतो फरयो, डेहरी द्वारे सीस नमायो॥ 2॥
साहिब का दरसन नी होया, पंडे मौलवी नहीं बतायो।
भटक-भटक गुरु सरणा आयो, सेना सद्गुरु दरस करायो॥ 3॥

सैन कहते हैं- मुझे सद्गुरू की कृपा से प्रभु के दर्शन हुए। मैं दक्षिण से उत्तर और पूर्व से पश्चिम तक भ्रम पूर्वक जाता-आता रहा। चौपालों और चौक चौराहों पर ऊँचे स्वर में खूब हरिगुण गाए। वेद-पुराण सुने, उन्हें समझा-जाना, फिर भी यह मूर्ख मन कुछ भी नहीं समझ पाया। खूब दर्शन, चरण स्पर्श किए। खूब मत्था टेका। देहरी-देहरी, द्वार-द्वार जाकर शीश नवाया। साहिब के दर्शन नहीं हुए। पंडे और मौलवी ने भी नहीं बताया, न स्वरूप साकार पूजने वाले पंडे दर्शन करा सके और न निराकार को मानने वाले मौलवी दीदार करवा सके। भटक-भटककर अन्ततः निराश होकर सद्गुरू की शरण गया। सद्गुरू ने साहिब के दर्शन करवा दिए।

साहिब तो भीतर घट बैठ्या, मैं भरमू चहुँ देस॥ टेक॥
जग माया घण सुन्दर लागे, सुन्दर रूप रूपेस।
जें देखूँ आँखाँ करमावे, नजर न आवे लेस॥ 1॥
भाँत-भाँत का गेहणा बत्ता, भाँत-भाँत का वेस।
होड़म-होड़ मची जग भीतर, होवे खूब करेस॥ 2॥
म्हारो मंदर ऊँचो जाणू, थारो घणो छरेस।
म्हारी मूरत हे अत सुन्दर, थारी घणी घरेस॥ 3॥
सुन्दर छवियाँ मंदर दीसे, रघुपति राम रमेस।
मूरत में हंकार थोपयो, मंदर में बड़वेस॥ 4॥
घट-घट शाम समाया साधौ, कण-कण राम रमेस।
निरख-निरख चित हरसित होवे, रोम-रोम हरसेस॥ 5॥
सैना सतगुरू किरपा कर दी, संग मल्या दखेस।
भीतर घट का द्वार उघार्‍या, चानण चलक नभेस॥ 6॥

सैन कहते हैं- साहिब तो भीतर बैठा हुआ है और मैं दूसरे देश घूम-घूम कर उसे खोज रहा हूँ। इस संसार में विस्तृत माया बहुत सुन्दर दिखती है। इसका रूप और छवि लुभावनी है। जिधर भी मैं देखता हूँ, आँखें चकाचौंध हो जाती है। कुछ भी दिखाई नहीं देता।

भाँति-भाँति के आभूषण, भाँति-भाँति की वेश सज्जा। सब तरफ सुन्दर बनने और दिखने की होड़ मची हुई है। इसी कारण खूब कलेश हो रहे हैं।

मेरा मन्दिर ऊँचा है, भव्य है। तुम्हारा मन्दिर छोटा है, असुन्दर है। मेरे मन्दिर में स्थापित मूर्तियाँ अति सुन्दर हैं। तेरे मन्दिर की मूर्तियाँ सुन्दर नहीं हैं।

सचमुच मन्दिर में स्थापित मूर्तियाँ जो राम-रामेश की हैं, बहुत सुन्दर छवियों वाली हैं। किन्तु लोगों ने उन सुन्दर मूर्तियों में भगवान की जगह अपना अहंकार स्थापित कर दिया है। मन्दिर में छोटे-बड़े का भाव स्थापित कर दिया है।

हे साधो राम और श्याम तो घट-घट और कण-कण में समाए हुए हैं। उन्हें निरख कर चित्त हर्षित हो जाता है। रोम-रोम उमंगित-रोमांचित हो जाता है।

सैन कहते हैं- मुझ पर सद्‌गुरू ने कृपा कर दी। उनके साथ और भी दरवेश (साधू) आए और सद्‌गुरू ने मेरे हृदय के कपाट खोल दिए। भीतर घट में सूर्य का प्रकाश फैल गया।

चहुँ दिस निरखूँ एक सरूप॥ टेक॥
सगुण-निगुण के भरम न भटकूँ, मन्दिर मसजिद बीच न अटकूँ।
नी रेहूँ अंध के कूप। चहुँ दिस निरखूँ एक सरूप॥ 1॥
एक सरूप राम को जाणू, पूरन परमानंद पिछाणू।
सद्‌गुरु दरस्यो सोइ परमाणू, अणगण नामा एकहि रूप॥
चहुँदिस निरखूँ एक सरूप॥ 2॥
ना वो सोवे ना जो जागे, ना वो ढबे ना वो भागे।
ना वो पाछे ना वो आगे, ना अनुरागे ना वीरागे॥
सैन भगत को छाया-धूप, चहुँदिस निरखूँ एक सरूप॥ 3॥

मैं चारों ओर राम का ही स्वरूप देखता हूँ। मैं सगुण और निर्गुण के भ्रम-भटकाव में नहीं पड़ता। मैं मन्दिर और मस्जिद के फर्क में भी नहीं भटकता। या रुकता। मैं अँधकार अज्ञान या रूढ़ियों के अंधकूप में नही भी रहता। मैं नहीं तो चारों दिशाओं में एक ही स्वरूप के दर्शन करता हूँ।

मैं राम का एक स्वरूप जानता हूँ। एक पूर्णपरमानन्द को मैं पहचानता हूँ। मैं दुई के भ्रम में नहीं भटकता। मुझे जैसा सद्‌गुरू ने दरसाया है, उसे ही प्रमाण जानता हूँ। अनगिनत नाम का रूप एक ही है। नाम अनन्त हैं, प्रभु एक ही है। मैं चारों ओर एक ही स्वरूप के दर्शन करता हूँ।वह प्रभु न तो सोता है, न जागता है, न रुकता है, न भागता है, ना वह पीछे है, न आगे है। वह तो सब तरफ है। वह न तो अनुरक्त होता है और न ही विरक्त होता है। सैन भगत कहते हैं- वह तो धूप और छाया की भाँति सर्वत्र व्याप्त है, मैं उसे सब तरफ देखता हूँ।

- सौजन्य : पद क्र. 1 से 6, श्री साँवरलाल तंवर-बीकानेर (राज.)

सुख-दुख तन-मनि लावणा, रघुनाथ न लिखाया॥ टेक॥
कोई टाल्यां नंई टले, नल सरिका राज वई।
जिन घट दमिता हो राणी, चीऊ लई बाज गई॥
मछ कूद्या जल पाणी, हरिचन्द सरिका राज वई।
जिन घर तारामती राणी, सीता सरखी सतवंती॥
जिनका राम चन्द्रजी स्वामी।
रावण की दृष्टि लेगई सुन्दर बिलखाणी॥
महावीर सरखा महाबली सीता की सोध लगाई।
सनीदन मरदन हो रया, पाय तेल लंगोटा॥
अणहद बाजा बाज्या, सद्‌गुरु के दरबार।
सैन भगत थारी वीनती, राखो सरन लगाय॥

सुख-दुख तो तन-मन के भोग हैं। ये विधाता रघुनाथ के लिखे लेख हैं। इन्हें कोई टाल नहीं सका। नल जैसा राजा हुआ, जिनकी दमयंती जैसी सतवंती सुन्दर रानी थी। पंछी पकड़ते उनका (नल का) चीर (धोली) शिकार पक्षी ही ले उड़े। नंगे खड़े रह गए। हाथ की मृत मछलियाँ जीवित होकर जल में गायब हो गईं। भूख से दोनों व्याकुल हो गए।

राजा हरिश्चन्द्र हुए। सत्यवादी राजा। सत्य पर अडिग, जिनकी सतवंती रानी तारामती। लिखा लेख नहीं टला। असहनीय दुख भोगा। सीता सरीखी सतवंती, जिनके स्वामी रामचन्द्र। उन्हें रावण हरण करके ले गया। सुन्दर सतवंती सीता बिलखती रह गई।

महावीर हनुमान जो समुद्र पार कर सीता की खबर लाये। शनि ने उन्हें पीड़ा पहुँचा दी, लाल लंगोट ही तन पर शेष रह गई।

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू के दरबार में अणहद नाद बज उठा है। मैं उन्हीं की शरण हूँ। सद्‌गुरू ही तेरी विनती सुनेंगे और अपनी शरण में ले लेंगे।

मन रे मांधाता बिच जई रह्यो, माया जाण न देवे॥
पचमड़ी पांडो बसे, पाँची करे असनाना।
छत्तीस मूरत जाँ बसि रह्या, उनका अम्मर नाम।
आसी बड़ जीव जाणतो, वाली सीतल छाया।
ज्यां रे मादेव तपसी बेठ्या, उणकी अगण्या बुझाय।
मड़प हाथी जोत्या, गड़प पांडयो छरोल।

अबीर कंकू प हांसी निसर्या, गड़प हुई चगा बोल।
रेवा कँवरे व्यऊं झरमले, जिस घर कपला हो गाय।
गऊ मुख अमरत वां झरे, झरे गंगा जी के माँय।
अणहद बाजा बाज्या जी, सद्गुरु के दरबार।
सैन भगत थारी वीनती, जी राखो सरण लगाय॥

मालवा के दक्षिण में नर्मदा नदी बहती है। यह तीर्थ की भाँति पूज्य एवं पतित पावनी हैं। रेवा के प्रवाह में मुक्ति की कामना से कितने ही शरीरों की भस्म इसमें युगों-युगों से प्रवाहित होती चली आ रही है। मांधाता के अंक में ओंकारेश्वर की ओर असंख्य यात्रियों का जाना, रेवा के प्रति आस्था का प्रतीक है। इसीलिए मन का मांधाता की ओर दौड़ना अस्वाभाविक नहीं है।

सयना (सैना) भगत कहते हैं- कि जहाँ पाँचों पाण्डवों ने निवास किया था। पाँचों ने रेवा (नर्मदा) में स्नान किया। छत्तीसों मूर्तियों का जहाँ (स्थित) निवास है। उनका नाम अमर है। यहाँ पंचवटी में पाण्डवों ने रहवास कर नित्य स्नान किया, तभी से यह पंचवटी कहलाई। यहीं अक्षय वट है, जिसकी छाया शीतल है। वहीं भगवान महादेव तप में बैठे हैं। वे यहाँ अपनी तापाग्नि शाँत करते हैं। सामने पर्वत शिखर पर हाथी खड़ा है। अद्भुत दृश्य है। गढ़ पर अबीर, कंकू उड़ रहा है। खूब चहल-पहल, रेलम-पेल मच रही है। रेवा के उस तट पर ओंकारेश्वर भगवान की ध्वजा फहरा रही है। रेवा में कपिला गाय के दूध सा अमृत जल झर रहा है। गोमुखी से रेवा रूपी गंगाजल झर रहा है। यहाँ आनन्द ही आनन्द है।

सद्गुरू के दरबार में अणहद नाद बज रहा है। सयना (सैन) भगत उनके चरणों में बारम्बार प्रणाम करता है। हे सैन! तेरी विनती सद्गुरू अवश्य सुनेंगे। वे ही तुझे अपनी शरण में लेकर तेरा उद्धार करेंगे।

- सौजन्य : पद क्र. 7 व 8 - डॉ. प्रह्लादचन्द्र जोशी, लोक की भक्ति, पृ.-694-95. श्री बाबूलाल जी सेन, महेश्वर.

राग घनाक्षरी

मंगल हरि मंगला, नित मंगलु राजा राइ कौं॥ टेक॥
धूप दीप घ्रित साजि आरती, जाऊँ वारने मंगलापति॥ 1॥
उत्तम दिअसरा निरमल बाती, तुहि निरंजनु कंवलापति॥ 2॥
राम भगति रामानन्दु जाणैं, पूरन परमानंद बखाणैं॥ 3॥
मंगल मूरति भौ तारि गोविंद, सैन भणे भजि परमानंद॥ 4॥

- सौजन्य : गुरुग्रन्थ साहब में संग्रहित है। ग्रन्थांक-497, पृ.-556-57.

सदा मंगल रहे, राजा राय का मंगल रहे। सर्वमंगल रहे। धूप, दीप, घृत की आरती सजाकर कमलापति की आरती करने जाता हूँ। आरती में उत्तम दीपक और उत्तम बाती सँजोई है। हे कँवलापति! तू ही निरंजन है। राम की भक्ति रामानन्द जानते हैं। वे उसे पूर्ण परमानन्द का बखान कर सकते हैं। भव तारनहार गोविन्द ही मंगलमूर्ति हैं। सर्वमंगल और शुभ करने वाले हैं। सैन कहते हैं- उस परमानन्द का भजन करो।

राग गौड़ी

दास नहीं छाड़िये हो, तेरो जन जे अपराधी होई ॥ टेक ॥
अमृत अनूप सरोदिका, संतति भीतरि वास।
एक बूँद प्रापति नहीं, जन क्युँ पावे विसवास ॥ 1 ॥
हूँ तुझ कारनि बीनऊँ, निसि दिन खरौ उदास।
उदिक तीर पसु बाँधियो, बिन खसमहिं मरे पियास ॥ 2 ॥
और नहीं अवलंबना, जन सेन कहे समझाय।
तुम ठाकुर मैं सेवगा, कृपा करो रामराय ॥ 3 ॥

सौजन्य-डॉ. ब्रजेन्द्र कुमार सिंघल (दादूधाम नारायणा के ग्रन्थांक-496, 497, 561, 2, 4 एवं राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान-जयपुर के ग्रन्थांक-12, पद-76 पर संकलित है।)
(पद क्र.-8 से 10 ललित शर्मा द्वारा सम्पादित पुस्तक संत शिरोमणि सैनजी में भी संकलित है। पृ.-71-72)

हे देव! इस दास का परित्याग मत करना। भले ही यह अपराधी हो। घट भीतर अमृत की अनुपम सरोदिका से झरण हो रही है। भीतर ही उसकी निरन्तर सुगन्ध फैल रही है। उस अमृत झरण की एक बूँद भी यदि प्राप्त नहीं हो जाये, तब मन में धैर्य और विश्वास कैसे स्थिर रहे? मैं हे प्रभु! आपके समक्ष उदास मन आपकी विनती करने के लिए आर्त भाव से खड़ा हूँ। जिस प्रकार जलाशय के किनारे कोई बँधा पशु स्वयं अपनी प्यास नहीं बुझा सकता। वह बिना खसम (स्वामी) के प्यासा ही रहता है। (मेरे गले में भी माया, मोह की डोर बँधी है।) हे प्रभु! मुझे केवल आपका ही सहारा है, और कोई सहारा नहीं है। हे रामराय! आप ठाकुर (स्वामी) और मैं सेवक हूँ। मुझ पर कृपा कर मुझे भवबंध से मुक्त करो।

चंचल मन कबजे नहीं आवे ॥ टेक ॥
मन माया की मदिरा पीवे, बार-बार मदकावे।
झूमें झुके झकोरा खावे, बेमतलब बिलमावे ॥
सुरत गँवावे सद्मत खोवे, गेल डगर ठुकरावे।
मनमत होयो बेगत्यो वै, भमरा ने भरमावे ॥
सूकर स्वान गदेड़ा जेसो, गलियाँ में घुमरावे।

चंचल चित्त कबजे नहीं आवे॥
दुरमत दुगन दुस्ट संग होई, मगन मोज मरजादा खोई॥
कड़वी बेल काकड़ी बोई, विस बोयाँ ती विस फल होई॥
करनी कर पाछे पछतावे, चंचल चित कबजे नहीं आवे॥
चार चुमेरां भटके-अटके, ठाँव-ठोर नी पावे।
अछतावे-पछतावे मूरख, पड़्यो पछीटा खावे॥
बिलख-बिलख सिर धुने बावलो, धीरज कूण बँधावे।
पास-पड़ोसी समधी साथी, कोई नहीं वतरावे॥
सैन भगत कोई पुण्य उग्यो जद, सद्गुरु शरणा आवे।
एक झाप सद्गुरु की पड़याँ, साध चरित बण जावे॥

यह चंचल मन वश में नहीं आता है। यह मन माया की मदिरा पीकर बार-बार मदमस्त हो उठता है। कभी झूमता है, कभी झुकता है, कभी डगमगाता है। अकारण ही भ्रम का वातावरण बनाता है। सुरति को गँवाकर, सद्मति को खोकर मार्ग में ठोकरे खाता फिरता है। मन मस्त होकर दुर्गति को प्राप्त कर अपने विवेक को भटकाता रहता है। यह ग्राम शूकर (भंडूरा) श्वान और गदहे की तरह गलियों में घूमकर अभद्रता और अमर्यादा का व्यवहार करता है।

इसकी यह गति कुसंग के कारण हुई है। इसी कारण मौज में मदमस्त होकर यह अमर्यादित हो गया है। इसने कड़वे बीज वाली ककड़ी बोई है। विष वपन करने से विष ही तो उगेगा। अब यह अपनी करनी पर पछता रहा है। अब यह चारों ओर भटकता फिर रहा है, इसे कहीं भी ठाँव-ठौर नहीं मिल रहा। यह मूर्ख अब पश्चाताप में जल रहा है और तड़प कर व्याकुल हो रहा है। इसके सभी मित्र, पड़ोसी, समधी, साथी इससे नाता तोड़ चुके हैं। सैन कहते हैं- इसका कोई पुण्य उदय हो गया, तब इसे गुरूशरण प्राप्त हो गई। सद्गुरू ने आशीर्वाद की एक थपकी पीठ पर लगा दी। सद्गुरू की एक थपकी सारे कलुष दूर कर साधु स्वभाव प्रदान कर देती है।

सद्गुरु दियो जी मारग खोल॥ टेक॥
सद्गुरु के वचना चले, चौरासी कट जाय॥ 1॥
एसो मंतर दियो म्हारा सतगुरू, पारख ज्ञान कराय।
तन-मन-चित्त एक तार बाँध्यो, तनक नहीं भरमाय॥ 2॥
भीतर बाहर संसो नास्यो, अज्ञान धुंध नहीं राखी।
साहिब के दरबार हाजरी, सतगुरु कर दी साखी॥ 3॥
सयना झट फरमा दियो, सतगुरु साँचो बोल।
सतगुरू दियो जी मारग खोल॥ 4॥

सैन भगत कहते हैं- सद्‌गुरू ने मेरा अवरुद्ध मार्ग खोल दिया है। जो व्यक्ति सद्‌गुरू के वचनों पर चलता है, उसकी चौरासी (नरक) से मुक्ति हो जाती है। मुझे सद्‌गुरू ने पारख ज्ञान देकर ऐसा मंत्र दिया है। सद्‌गुरू ने मेरा तन-मन और चित्त एक तार में बाँध दिया (तीनों में लयात्मकता उत्पन्न कर दी है)। मेरे भीतर और बाहर का संशय नष्ट हो गया है। अज्ञान रूप कुहरा समाप्त हो गया है। सद्‌गुरू ने मुझे साहिब के दरबार में पहुँचा दिया और स्वयं की जमानत देकर तथा कृपा करके सत्य वचन फरमा दिया।

साधौ भाई राम नाम चित धारो॥ टेक॥
चंचल चित कबजे नहीं रेहवे, मदवयो मन मतवारो।
मन-चित दोई कबजे होवे, तन कई करे बिचारो॥ 1॥
सुन्दर स्याम अद्‌भुत छब राजे, रूप रंग को कारो।
घट के भीतर रास रचावे, कान्हों मुरली वारो॥ 2॥
राम रमैयो क्रसन कन्हैयो, अनत नाम निरधारो।
नाग नथैयो नाथ रह्यो हे, मदक्यो मन पटबारो॥ 3॥
आँख मूँद ने एक रस होओ, एसो मतो हमारो।
किरपा कर सद्‌गुरु परबोध्यो, मिटि गयो तमसो भारो॥ 4॥
सैन भगत साँसाँ की सरणी, एकई नाम उचारो।
साधौ भाई राम नाम चित्त धारो॥ 5॥

सैन भगत कहते हैं कि- हे साधु भाई! चित्त में राम का नाम धारण कर लो। यह चंचल चित्त वश में नहीं रहता है। यह मद में चूर होकर मतवाला हो रहा है। यदि मन और चित्त दोनों वश में हों, तो बेचारा तन क्या कर सकता है? वह तो स्वत: ही वश में हो जायेगा। सुन्दर श्याम की अद्‌भुत छवि है। उसका रूप रंग श्याम होकर भी मोहक है। वह मुरलीधर कन्हैया घट के भीतर रास रचा रहा है।

उस राम रमैये और कृष्ण कन्हैया के अनन्त नाम निर्धारित हैं। वह नाग नथैया मेरे मन रूपी विषैले नाग को (परबाराह) स्वयं ही वश में करने का प्रयत्न करने में संलग्न है।

हे साधु भाई! मेरा ऐसा विचार है कि आँख मूँदकर एक रस होकर उस राम प्रभु के नाम जाप में लीन हो जाओ। सद्‌गुरू जी ने यही प्रबोधन किया है। इसी से हमारे भीतर का गहन कलुष अज्ञान अंधकार मिट जायेगा।

सैन भगत कहते हैं- साँसों की सरणी (माला) में एक ही नाम का उच्चारण करने में संलग्न हो जाओ।

भगत जनों के कारण करी नहीं ठकुराई ॥ टेक ॥
जाति बरन कुल नहीं जाणे, लोग करे चतराई।
शबरी जात भीलनी होई, बेर तोड़ने लाई ॥
प्रेम सहित वण का फल खाया, रामचन्द्र रघुराई।
करमा कसो आचरण कर्‌यो, मन हरि भक्ति बसाई ॥
छप्पन भोग कर भोजन कर्‌यो, रुच-रुच खिचड़ी खाई।
नामा पीपा धन्ना रैदास, दास कबीर गुरुभाई ॥
सब पर एक सरीखी मेहर, महिमा बरनि न जाई।
सैन कहे प्रभु लाज बचावा, खुद बण आया नाई ॥

प्रभु ने भक्तों के कारण कभी भी श्रेष्ठता नहीं दिखाई। सदा सहज सामान्य बने रहे। जाति, वर्ण और कुल नहीं माना। सबको अपने निकट मानकर कृपा की। लोग ऐसी चतुराई दिखाते हैं। प्रभु नहीं दिखाते।

शबरी भील थी। वन से बेर तोड़ लाई। भगवान राम ने रुचि के साथ खाये। करमा ने ऐसा कौन-सा बड़ा तप किया था? उसने मन में हरि-भक्ति बसा ली थी। प्रभु ने प्रकट होकर उसकी खिचड़ी छप्पन भोग मानकर खा ली। (टीप- यह पद सम्भवत: लोक कण्ठ से जुड़ा है। करमा और सैन में काल गणना का अन्तर है।)

नामदेव, पीपा, धन्ना, रैदास और कबीरदास मेरे गुरूभाई हैं। सबके सब ऊँचे वर्ग के नहीं हैं। प्रभु ने सब पर समभाव से कृपा की। प्रभु की महिमा अपरम्पार है। मेरी लाज बचाने नाई बनकर स्वयं आये। उनकी कृपा का वर्णन सम्भव नहीं है।

साधौ भाई कै जनम्या कै मर्‌या ॥ टेक ॥
राम नाम रटयो नहीं रसना, बिरथा सबद उचर्‌या।
मीठा सबद कह्या नहीं जिव्हा, जे कह्या विस भर्‌या ॥
परहित कारण जनम लियो हे, निज सुवारथ सँभर्‌या।
जनम अकारथ बीत चल्यो रे, नी चेतयो संकर्‌या ॥
दान दियो नहीं पाई-धेला, पर धन रुच-रुच हर्‌या।
जतरो धन भर लियो कोथरी, छल करतां संघर्‌या ॥
अंत समै भवसागर फँसयो, ना डूबा ना तर्‌या।
सैन भगत जद डूबण लागो, सतगुरू नाम सिमर्‌या ॥

साधु भाई! क्या तो जन्म लिया और क्या मर गये? जिह्वा से कभी मीठे शब्द नहीं कहे,

व्यर्थ के शब्द ही कहे। जो भी शब्द कहे, वे विषबुझे शब्द कहे। यह जन्म परहित के कारण हुआ है, किन्तु सदा स्वार्थ साधने में लगे रहे। अरे शंकर्‌या! तेरा जन्म व्यर्थ ही बीत गया है। (शंकर्‌या, एक सम्बोधन मात्र है। किसी व्यक्ति विशेष के प्रति नहीं है।)

अरे! तूने कभी पाई-धेला (सबसे छोटा सिक्का) तक दान में नहीं दिया। दूसरे के धन को हरण करने में ही लगा रहा। जितना भी धन संग्रह करके अपनी कोथरी (थैली) में भरा है, सब छल द्वारा संग्रहित है।

अन्त समय में भवसागर में फँस गया। न डूब सका, न तिर सका। अधोगति में पड़ गया। सैन कहते हैं- जब डूबने लगा, तब सद्‌गुरू का स्मरण किया। तब जाकर उद्धार हो सका।

प्रभु जी रहिजो सदा सहाई॥ टेक॥
अनगन भगतां तार दिया, प्रभु मुझ पे कृपा बणाई।
धन्ना नामदेव तार्‌या, दास कबीर सुखदाई॥ 1॥
रैदास की साखी राखी, गंगा ठाम परगटाई।
भगतां की सेवा व्रत पालन, खूब करी सेवकाई॥ 2॥
अणीदास की लाज बचावा, बण आया प्रभु नाई।
चक्र सुदरसन छोड़ प्रभु नापी, धारी ठाकुर की सेवकाई॥ 3॥
ठाकुर ने तो तार दियो प्रभु, ठाकुर की पुण्याई।
म्हारो पुण्य कदां उगसी प्रभु, किरपा करो कनहाई॥ 4॥
सैन भगत सद्‌गुरु किरपा, सबदां कही न जाई।
प्रभु रहिजो सदा सहाई॥ 5॥

हे प्रभु! आपने अनगिनत भक्तों को तार दिया है। धन्य कर दिया है। मुझ पर भी आपकी असीम कृपा है। धन्ना और नामदेव तथा कबीर को आपने धन्य किया है। रैदास की साख बचाई। उनके बर्तन (कठौती) में गंगा प्रकट कर दी। अपने भक्तों की सेवा और व्रत का पालन करने के उद्देश्य से आपने उनकी खूब सेवा की। मुझ दास की लाज बचाने के लिए ठाकुर (राजा) की खवासी (चाकरी) करने नाई बनकर वहाँ मेरे रूप में जा पहुँचे। सुदर्शन चक्र त्याग कर उस्तरा धारण किया। हे प्रभु! आपने उस ठाकुर को दर्शन देकर उसका उद्धार तो कर दिया। मेरे पुण्य का सूर्य कब उदित होगा?

सैन भक्त कहते हैं- सद्‌गुरू की कृपा का बखान शब्दों में सम्भव नहीं है। हे प्रभु! आप मेरी सहायता करो।

प्रभुजी म्हारी सुण लो आरत पुकार॥ टेक॥
ऊमर पाकी नाव जरजरी, भवनद हे पुरजार।
खेवण नाव न जाणू हरिजी, नी हे सगत सम्हार॥
एक आसरो एक सहारो, एक ही अटल सहार।
बणो खेवटिया खेवण हारा, नाव लगा दो पार॥
सद्गुरु कृपा खेवटो पायो, नाव करे संतार।
सैन कहे मन पाको राखो, तारे क्रसन मुरार॥

हे प्रभु! मेरी आर्त पुकार सुन लो। उमर पक गई है। नाव जर्जर हो गई है (देह वृद्ध हो गई है)। भवसागर पुरजोर है। खूब गहरा है। मुझे तो नाव खेना भी नहीं आता। उसे खेने की शक्ति भी नहीं है। केवल एक ही आसरा और सहारा आपका अटल है।

हे प्रभु! आप खेवटिया (नाविक) बनकर आ जाओ। हे खेवणहार! आप मेरी नाव भवसागर से पार उतार दो।

सैन भगत कहते हैं- मुझे सद्गुरू की कृपा से पूरा-पक्का खेवट्या मिल गया है। सद्गुरू ही मेरे खेवटिया हैं। वे ही मेरी नाव पार लगायेंगे। सैन भगत कहते हैं- अटल विश्वास रखो। सद्गुरू की कृपा से कृष्ण मुरारी अवश्य उद्धार करेंगे।

मो पे सद्गुरु कृपा करी॥ टेक॥
मन भटक्यो तन भटक्यो, कितहुँ न ठौर धरी।
भटक-भटक तन हार गयो, मन में दुई भरी॥ 1॥
ना निरगुण ना सरगुण जाणू, बात सदा बिगरी।
ना कोई जाणे ना समझावे, खूब पड़ी भमरी॥ 2॥
भीतर देखूँ जोति सरूपों, बाहर सोई खरी।
भीतर बाहर एकहि दीखे, लीला अजब करी॥ 3॥
सैन कहे सद्गुरु परचायो, संसा दूर करी।
मो पे सद्गुरु कृपा करी॥ 4॥

मुझ पर सद्गुगुरू ने कृपा की है। मन और तन दोनों भटकाव में हैं। इन्हें कहीं भी ठौर नहीं मिल रहा। भटक-भटक कर तन हार गया है। मन में दुई का भाव भर गया है।

मैं न तो सगुण जानता हूँ, न निर्गुण। इसी विवाद ने सदा भटकाया है। न तो कोई इस भेद का जानने वाला है, न समझाने वाला। खूब भँवरी पड़ रही है। (भँवरी जब नदी में पड़ती है, तब उसमें फँसने के बाद निकलना सम्भव नहीं होता।)

सैन भगत कहते हैं- जब मैं भीतर अन्तर्घट में देखता हूँ, तब एक ज्योति स्वरूप दिखता है। बाहर भी वही ज्योति स्वरूप दिखता है। बाहर-भीतर एक ही छवि देखता हूँ। प्रभु की छवि लीला अद्भुत है।

अन्ततः सद्गुरू ने प्रबोधन किया। सारी शंका दूर हो गई। मुझ पर सद्गुरू ने ऐसी कृपा की।

मोरे मन उपज्यो हरस अपार॥ टेक॥
अमरत वेला आ पहुँची हे, मन चित में उजियार।
ना चित्त चिंता ना मन मंसा, ना कोई दरकार॥
ना तिरिया ना पूत परवरा, ना नाती ना नातेदार।
सबको संग छोड़यो बरसां, तोड़यो मोह मकार॥
समचित्त रिंदै तन व्याधि न कोई, रसना राम रकार।
सद्गुरु साहिब सामे ऊबा, रलक-झलक उणियार॥
चलती वेलां दरसन दीया, सुण ली आरत पुकार।
नाव जरजरी भवनद गेहरो, खेवटियो दमदार॥
पार उतारे सद्गुरु साहिब, धन-धन तारणहार।
सैना परमानंद मिलन की, लाग चुकी हे तार॥

सैन भगत कहते हैं- मेरे मन में अपार हर्ष उपजा है। आज अमृत बेला आ पहुँची है। मन और चित्त में उजाला हो गया है। सभी चिन्ताएँ, कामनाएँ, इच्छाएँ और आवश्यकताएँ समाप्त हो गयी हैं। मन में अपार शान्ति है। न पत्नी है, न पुत्र है, न परिवार, न नाती, न नातेदार। सबका संग छोड़े कई वर्ष बीत गये हैं। सबसे मोह और माया समाप्त कर ली है। हृदय समचित्त है। तन में कोई व्याधि नहीं है। रसना में राम की रकार (ध्वनि) है। सद्गुरू समक्ष खड़े हैं। उन्होंने मेरी आर्त पुकार सुनकर मुझे इस अन्तिम क्षणों में दर्शन दिये हैं। उनका आभायुक्त मुख मेरे समक्ष है।

भले ही मेरी नाव जर्जर है, भले ही भवनद गहरा है, किन्तु मेरा खेवटिया बहुत दमदार है। सद्गुरू साहिब धन्य हैं। वे मेरी नाव पार उतारने में सक्षम हैं। सैन कहते हैं- अब तो मुझे परमान्द से मिलने की लय लग चुकी है।

साधौ भाई यो जग माया जाल॥ टेक॥
जो दीसे ऊ साँचो नाहीं, कर देखो पड़ताल।
जो जनम्यो सो अवस विनासे, क्युँ मन करो मलाल॥ 1॥
मकड़ी जाल बुने श्रम करतां, अद्भुत करे कमाल।

वो ही काल बणे मकड़ी को, एसो मक्कड़ जाल॥ 2॥
माया का हे बाग-बगीचा, माया नदिया ताल।
माया सूरज चंदा ऊगे, माया काल अकाल॥ 3॥
माया खिंड्यो कमल ताल में, माया वण की नाल।
माया औचक माया कौतक, माया हे खुसहाल॥ 4॥
माया सिरजन करे जगत को, माया ही महाकाल।
सैना माया बाँधे खोले, माया हे जंजाल॥ 5॥

साधौ भाई ! यह जग माया का जाल है। इससे निकलना कठिन है। हमें जो भी दिख रहा है, वह सच नहीं है। माया का खेल है। चाहो तो जाँच करके देख लो। जो पैदा हुआ है, वह अवश्य नष्ट होगा। यह सारी सृष्टि नाशवान है। इस नश्वरता पर मलाल मत करो। मकड़ी बहुत श्रम करके एक अद्‌भुत विचित्र जाल बुनती है। अन्तत: वह उसी मक्कड़ जाल में उलझ कर मर जाती है। उसी का कमाल उसका काल बन जाता है।

ये बाग-बगीचे, ये नदियाँ, ये ताल-तलैयाँ सब माया के खेल हैं। यह चाँद, सूरज का उदय होना और अस्त हो जाना, माया का ही खेल है। यह काल-अकाल भी माया की ही लीला है। तालाब में खिले कमल भी माया की ही लीला है। उनकी नाल माया ही है। जगत में सब आश्चर्य, सब कौतुक, सब माया ही के कारण हैं। माया के ही कारण खुशहाली है और माया के ही कारण उदासी। माया ही सृजन करती है, माया ही महाकाल भी है। माया वशीभूत करती है। माया ही उन्मुक्त भी करती है। सैन भगत कहते हैं- यह सारा जंजाल माया का ही है।

साधौ भाई भीतर का छब न्यारा॥ टेक॥
भीतर सूरज भीतर चंदो, भीतर नवलख तारा।
भीतर बाग-बगीचा मेहके, भीतर अमरत धारा॥ 1॥
भीतर सबद ब्रह्म को गूँजे, नाद-निनाद इकतारा।
सात समंदर लहरां लेवे, कोई मीठा कोई खारा॥ 2॥
भीतर गंगा जमना वेवे, सुरसत नरमद धारा।
चामल सिपरा सिवना वेवे, काँवेरी गोमत झारा॥ 3॥
छोटी-मोटी अणगण वेवे, कोई नदी कोई नारा।
झर-झर झर-झर झरना झरता, अद्‌भुत उड़े फुव्वारा॥ 4॥
बारहों सिवजी, सातहों तीरथ, सगत पीठ सतवारा।
जेसी सृष्टि बाहर दीसे, वेसो घट बीच नजारा॥ 5॥
भीतर घट झलमल उजियारा, जिण बिच सिरजणहारा।

वीण बजावे सरसद नारद, बंसी बंसीवारा॥ 6॥
सैन भगत घट भीतर बेठ्या, सद्गुरु राम हमारा।
बाहर भीतर एक राम हे, उसका जगत पसारा॥ 7॥
साधौ भीतर का छब न्यारा॥

साधौ भाई! भीतर की छवि अद्भुत है। वह अनुपम है। घट के भीतर ही चाँद, सूरज और नौ लाख तारे जगमगा रहे हैं। घट के भीतर ही बाग-बगीचे महक रहे हैं और घट के भीतर ही अमृत झर रहा है। भीतर ही शब्द ब्रह्म गूँज रहा है। उसका नाद, निनाद और अनहद नाद इकतारा बज रहा है।

भीतर घट में ही सात समुद्र लहरा रहे हैं। कोई मीठा और कोई खारा है। घट भीतर ही गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, चम्बल, शिप्रा, शिवना, कावेरी और गोमती बह रही हैं। अनेक झरने झर रहे हैं। उनकी छवियाँ अद्भुत हैं। घट के भीतर बारहों शिव पीठ, सातों तीर्थ और समस्त सतवन्त शक्तिपीठ स्थित हैं। जैसी सृष्टि बाहर दिख रही है, वैसी ही घट के भीतर भी दृष्टिगोचर है।

घट के भीतर एक ज्योति झिलमिला रही है, उसी में हमारा साईं (ईश्वर-साहिब) है। घट भीतर ही सरस्वती और नारद वीणा वादन कर रहे हैं। बंशीवाला (कृष्ण) बंशी बजा रहा है। घट के भीतर ही हमारा सद्गुरू और राम विराजित हैं। सैन कहते हैं- यह सारी सृष्टि भीतर-बाहर एक ही राम का विस्तार है।

लीला सिरजन हार की, कोई जाण नी पावे॥ टेक॥
काची माटी गारो लावे, काचो पिंड बणावे।
कहाँ पिंड कहाँ प्राण जाणिए, कहाँ ते रगत रचावे॥
हाड़ माँस मज्जा को तदबो, माटी से उपजावे।
पाँच तत्त को मेलो करतां, पुतलो अजब बणावे॥
अपणो तत्त भरे घट भीतर, जण में प्राण सिरावे।
सैन भगत सिरजणहारा की, लीला समझ नी आवे॥

सैन भगत कहते हैं- सृजनहार की लीला किसी के समझ में नहीं आती है। वह सृष्टा कच्ची मिट्टी का गारा लाकर कच्चा पिण्ड बनाता है। कहाँ से वह पिण्ड, कहाँ से प्राण और कहाँ से रक्त बनाता है। वह उसी मिट्टी से हाड़, माँस और मज्जा का निर्माण करता है।

वह सर्जक पाँच तत्त्वों (अग्नि, आकाश, वायु, जल और पृथ्वी) के योग से अजब पुतला बनाता है। फिर उसमें अपना तत्त्व (जीव) स्थापित करता है। सैन कहते हैं- उस सृजनहार की लीला को कोई भी नहीं समझ सकता।

साधौ भाई गाठो रखो बिसास॥ टेक॥
सगुण-निगुण मन क्युँ भटकावो, रेवो मती उदास।
साई तो भीतर बेठ्या हे, उचरो साँस-उसाँस॥ 1॥
आँखा मीच निहारो भीतर, चलके अजब उजास।
भीतर-बाहर एकहि जाणो, एकहि राम निवास॥ 2॥
दुई को क्युँ भरम भरावो, एकहि इस्ट सुवास।
सैन भगत सद्‌गुरु की मेहर, एक राम की आस॥ 3॥

सैन भगत कहते हैं- विश्वास दृढ़ रखो। सगुण-निर्गुण में मन मत भटकने दो। व्यर्थ की इस दुई में मन में उदासी मत आने दो।

साईं तो घट के भीतर बैठा है। उसकी ज्योति फैल रही है। उस अद्‌भुत ज्योति में ही साईं है। वही ज्योति साईं स्वरूप है। वही सुगण भी है, निर्गुण भी है। भीतर भी वही है, बाहर भी वही है। इस दुई के भ्रम से मुक्त हो जाओ। एक इष्ट में निष्ठा रखो। सैन भगत कहते हैं- सदगुरू की कृपा तथा एक राम की आस ही होना चाहिए।

रात भर का है डेरा, सवेरे जाना है॥ टेक॥
यो जीवन सदन सराय, सवेरे जाना है।
कोई आए कोई जाए, सवेरे जाना है॥
यां जोगी वालो डेरो अलख जगाए, सवेरे जाना है।
राज पाट महल माड़ियाँ, दौलत माल खजाना है॥
चलती वेरा संग नहिं जाए, क्युँ इतना इतराना है।
ना कुछ तेरा ना कुछ मेरा है, सवेरे उठकर जाना है॥
रात भर का है डेरा, सवेरे जाना है।
यो जीवन सदन सराय, सवेरे जाना है॥
साँसां को पंछी कब उड़ जाए, कोई जान न पाय।
कद जाणे माटी की काया, माटी में मिल जाय॥
तेरा नहीं है अटल बसेरा, सवेरे जाना है।
माया मोह के चक्कर फंस्यो, यो तो देस बेगाना है॥
सैन कहे सद्‌मतया रेहवो, अंत अकेले जाना है।
रात भर का है डेरा, सवेरे जाना है।
यो जीवन सदन सराय अकेले जाना हो॥

सैन भगत कहते हैं- यह संसार एक सराय है। रात-भर रुककर अगले दिन सवेरे प्रस्थान करना है। वे कहते हैं- यह जीवन ही सराय का एक कक्ष है। इसे खाली करना पड़ेगा। इस सराय में कोई आता है, कोई जाता है।

यह तो जोगी वाला डेरा है। रात को मुकाम किया। अलख जगाई और सवेरे चल दिए। ये राजपाठ, ये महल-मेड़ियाँ, यह धन-दौलत, माल-खजाना सब यहीं रह जाएगा। यहाँ से चलते समय कुछ भी साथ नहीं आएगा। यह धन, यह सम्पदा जब तुम्हारे साथ नहीं जाने वाली है, तब इस पर इतराना कैसा। यह न तो कुछ मेरा है, न कुछ तेरा है। सब छोड़कर सवेरे जाना है।

यह साँसों का पंछी कब उड़ जाय, यह कोई नहीं जानता। पता नहीं यह मिट्टी की काया कब मिट्टी में मिल जाए। हे प्राणी! तेरा यहाँ अटल बसेरा नहीं है। तुझे तो सवेरे प्रस्थान करना है। तू व्यर्थ ही माया मोह के चक्कर में फँसा है। यह देश तो बेगाना है। इसलिए सद्मति रहो। अन्त में अकेले ही जाना है। तेरा यहाँ रात भर का डेरा है। सवेरे प्रस्थान करना है।

साधौ भाई जगत देख बौरायो॥ टेक॥
भीतर थो जद साँस उसाँसा, तू ही तू दोहरायो।
बाहर आतां जगत रूप लख, माया वस बौरायो॥
तू-तू करतां दरसन करतो, मैं-मैं नजर नी आयो।
बाहर को जग सुन्दर देख्यो, माया बस बिलमायो॥
गर्भवास की जातना भूल्यो, ऊँचे माथ लटकायो।
मल-मूतर में भर्‌यो लपेटो, रगत कीच लपटायो॥
लख चौरासी पार करी जद, मनख जमारो पायो।
सैन भगत गुरु शरण गयां बिन, सुरत ज्ञान नहीं आयो॥

साधौ भाई! तू संसार की रूप माया देखकर बौरा गया है। जब तू भीतर था, तब तेरे मुँह से तू ही तू की ध्वनि निकलती थी। माँ के उदर से बाहर आते ही संसार की लुभावनी छवि देख कर तू माया के भ्रम में वशीभूत हो गया।

तू गर्भवास की वह यातना भूल गया, जब तू उल्टे सिर लटका हुआ था। मल-मूत्र और रक्त में लिपटा हुआ था। सैन कहते हैं- लख चौरासी भोगने के बाद मनुष्य जन्म मिलता है। तू ने 'तू-तू' अर्थात् ईश्वर को भुलाकर 'मैं-मैं' कहना शुरू कर दिया। भगवान को भूलकर अहंकार में लिप्त हो गया। सैन भगत फिर कहते हैं- गुरू की शरण गए बिना तुझे सुरति नहीं आएगी।

म्हारी नाव फँसी मझधार, सतगुरू तारे तो तरे॥ टेक॥
नाव पुरानी वजन घनेरो, नहीं कोई खेवनहार।

सागर गेहरो मच्छ बढेरा, लेहरां घणो गुबार॥
खेतां-खेतां हाथ दूखिया, डांडो हुआ बेकार।
अणभौ काचो मारग भटक्यो, नी होवे निरधार॥
नाव तड़कगी डूबण आई, होवण लगी खुवार।
बड़ा भयानक मच्छ घिर आया, जीव हुओ घनच्चार॥
सतगरु साहिब तुरतां आओ, नाव लगाओ पार।
एक आसरो एक भरोसो, सतगुरू तारनहार॥
सतगुरू सायक नी होया, तद नाव नहीं उबरे।
सयना नाव फँसी मझधार, सतगुरू तारे तो तरे॥

– सौजन्य : श्री साँवरलाल तँवर-बीकानेर (राज.)

सैन कहते हैं- मेरी नाव मझधार में फँस गई है। इसे तो अब स्वयं सद्‌गुरू ही उबार सकते हैं। नाव बहुत पुरानी हो गई है। इसमें वजन (पाप) बहुत भारी है। कोई खेवनहार भी नहीं है। भवसागर बहुत गहरा है। इसमें बड़े-बड़े मच्छ (काम, क्रोध, मोह आदि) भी है। सागर में लहरें भी हैं, तूफान (अनास्था, अविश्वास आदि) भी हैं। इसे पार लगाने में खेते-खेते हाथ दुखने लगे हैं। (मुक्ति के सभी प्रयास असफल होने लगे हैं) अनुभव कच्चा है। मार्ग भटक गया हूँ। कुछ निर्धारण नहीं कर पा रहा हूँ। नाव तड़क गई है, (शरीर जर्जर हो चुका है) डूबने लगी है। नष्ट होने वाली है। बड़े-बड़े मच्छों ने इसे घेर लिया है। जीव घनचार (व्याकुल) हो उठा है।

हे सद्‌गुरू ! आप शीघ्र आओ, मेरी नाव को पार लगाओ। मुझे उबार लो। अब तो मुझे केवल आपका ही भरोसा और आसरा रहा है। आप ही तारनहार हैं। जब तक सद्‌गुरू सहायक नहीं होंगे, तब तक नाव नहीं उबर सकेगी। हे सद्‌गुरू! मेरी नाव मझधार में फँसी है। आप इसे तारेंगे, तभी यह पार हो सकेगी।

रसना सोई जो राम रस पागी॥ टेक॥
जिस रसना नाम रस पीयो, सुरती राम संग लागी।
काम क्रोध लोभ नी व्यापे, माया दूरी भागी॥
रसना सोई जो राम रस पागी॥
अणहद नाद बाजे घट भीतर, मन चित वे अनुरागी।
अमरत झरन झरे रस मीठो, मज कुंडलनी जागी॥
रसना सोई जो राम रस पागी॥
जिनकी नहीं चाह नहीं तृसना, द्वेस ईरसा त्यागी।
जिनके हिरदै राम बिराजें, वे जन हैं बड़भागी॥
रसना सोई जो राम रस पागी॥

तीन लोक घट भीतर बसते, रागी और बैरागी।
सैन भगत सद्‌गुरु की किरपा, सुरत राम संग लागी॥
रसना सोई जो राम रस पागी।

– सौजन्य : श्री साँवरलाल तँवर–बीकानेर (राज.)

सैन भगत कहते हैं– रसना वही धन्य है, सार्थक है जो राम रस में तृप्त है। जिस रसना ने राम का पान किया है, जिसकी सुरति राम के साथ लगी है, उसे काम, क्रोध, लोभ आदि नहीं व्यापते। माया उससे दूर चली जाती है।

उसके भीतर निरन्तर अनहद नाद बजता रहता है। मन–चित्त राम का अनुरागी हो जाता है। उसके भीतर कुण्डलिनी के जागृत होने पर अमृत रस झरता है। जिनकी इच्छाएँ, कामनाएँ, तृष्णाएँ, द्वेष, ईर्ष्या समाप्त हो गई है। जिन्होंने इनका त्याग कर दिया है। जिनके हृदय में राम विराजित हैं। वे बड़भागी हैं।

ऐसे राम अनुरागी के घट भीतर तीनों लोक बसते हैं। वह राग और वैराग को भी अपने भीतर अनुमानता है। सैन भगत कहते हैं– सद्‌गरू की कृपा से मेरी सुरत राम से जुड़ गई है।

साधौ कर लो सहज उपाया॥ टेक॥
एक राम त्रिकुटी में बैठा, दूजा कौसल्या जाया।
तीजो जग का पालन हारा, चौथा पालन आया॥
एक राम का जगत पसारा, एक राम की माया।
चारइ राम हे एक सरूपा, कारण भेद दिखाया॥
एक राम ने माया राची, अणगण नाम धराया।
राम नाम की महिमा न्यारी, पाथर समंद तराया॥
सद्‌गुरु सबद ज्ञान जद दीयो, भेद अरथ समझाया।
परमब्रह्म की लीला न्यारी, कोई जाण न पाया॥
ना वो जनमे ना मर जावे, ना वो करम बंधाया।
मात-पिता कुल-वंस न कोई, ना कण जननी जाया॥
वेद पुराण में वचन सुण्यो हे, ब्रह्म रची खुद माया।
ज्ञानी ध्यानी ध्यान लगावें, भेद न कोई पाया॥
लिख-लिख थाका पढ़-पढ़ हारा, आखिर में भरमाया।
पोथी पतरी छोटी पड़गी, भरम नहीं कढ़ पाया॥
अन्त न जाण्यो वे अन्ता को, सबने यूँ फरमाया।

कोटि ज्ञान तें न्यारा साहिब, सतगुरुजी दरसाया॥
सहजो ज्ञान दियो म्हारे सतगुरु, पारख ज्ञान कराया।
सैन भगत सतगुरू की किरपा, अन्तरघट उपजाया॥

– सौजन्य : श्री साँवरलाल तँवर–बीकानेर (राज.)

साधू भाई! सहज उपाय कर लो। व्यर्थ के विवादों तथा झमेलों में मत पड़ो। एक राम वह जो त्रिकुटी में बैठा है। दूसरा वह जो कुसलानन्दन है। तीसरा वह है जो जगत् का सृजनहार है। चौथा वह जो जगत् का पालक है।

सम्पूर्ण सृष्टि के विस्तार में भी एक राम ही विस्तारित हैं। जब सद्‌गुरू ने शब्द ज्ञान प्रदान किया, तब सारा भेद समझ में आ गया है। परमब्रह्म की लीला न्यारी है। उसे कोई भी नहीं समझ पाया। वह न तो पैदा होता है, न मरता है। न वह कर्म बंधन में बँधा है। उसका न कोई, कुल है, न वंश है, न वह किसी जननी के गर्भ से आया है।

मैंने वेद–पुराणों में वचन सुने हैं, यह सारी माया परमब्रह्म ने स्वयं रची है। ज्ञानी, ध्यानी, चिन्तक, विचारक कोई भी उसके भेद को नहीं जान–समझ सका है। सब लिख–लिखकर थक गए, पढ़–पढ़कर थक गए। फिर भी कोई उसका भेद नहीं जान सका। वे और भी भ्रम में फँसते चले गए। उनकी पोथी–पत्री छोटी पड़ गई, फिर भी न उस परब्रह्म का कोई बखान ठीक से कर पाया, न भ्रम निकाल पाया। उस बेअन्त का अन्त कोई नहीं जान सका–ऐसा सभी ने अन्ततः कहा। 'नेति–नेति' कहकर हार गए।

वह साहिब तो करोड़ों ज्ञानवानों और ज्ञानों से भी न्यारा है। उसके को मेरे सद्‌गुरूजी ने दिखाया– समझाया। सद्‌गुरू ने सहज ज्ञान देकर पारख ज्ञान का बोध करवाया। सैन कहते हैं– सद्‌गुरू की कृपा से अन्तर्घट में सत्य का प्रबोधन हो गया।

साधौ भाई माया भरम बढ़ाया॥ टेक॥
माया अद्‌भुत जाणो भाई, अजब गजब की माया।
एक मिलावे राम हरि संग, एक राम बिलमाया॥
माया को परदो नहीं खोल्यो, माया खूब पचाया।
ना तो दीखे ना पतरीखे, ना छाया ना काया॥
हाथ पकड़ मारग लै चाले, माया वाट भुलाया।
तीन देव माया के पंजे, माया खूब नचाया॥
माया विश्वामित ने मोहयो, नारद ने भरमाया।
पाण्डे कर ली घर की घरनी, हँस–हँस खूब लुभाया॥

भोग भरम में सब धन लुट्यो, तन धन मान गँवाया।
सतगुरू ने जद आँख उघाड़ी, तो पाछे पछताया॥
बिलख-बिलख ने बक्का फाड़े, सद्‌गुरु धीर बँधाया।
माया की करणी ना जाणी, जिण जाय तिण खाया॥
माया नागण बण घट भीतर, बाम्बी विवर बणाया।
सद्‌गुरु अणहद नाद बजायो, झट बाहर ले आया॥
सैन भगत सद्‌गुरु किरपा ने, माया भरम नसाया।
साधौ भाई माया भरम बढ़ाया॥

– सौजन्य : श्री साँवरलाल तँवर-बीकानेर (राज.)

साधौ भाई! इस माया ने बहुत भ्रम उत्पन्न किया है। यह अद्‌भुत है। माया की माया भी अद्‌भुत है। माया के दो रूप हैं- एक सकारी दूसरा नकारी। एक माया राम-हरि से मेल करवाती है। वही माया हरि से विलग करवाती है।

माया का परदा कोई नहीं खोल सका। इस माया ने सबको खूब छकाया है। यह न तो नजर आती है और न विश्वास योग्य है। यह न छाया है न काया है। यही हाथ पकड़कर सुमार्ग पर चलाती है। यह मार्ग से भटकाती है। तीनों देव इसी माया के वश में हैं। माया के बिना उनका प्रभाव समाप्त हो जाता है। उन्हें भी माया ने खूब नाच नचाया है।

माया ने ही विश्वामित्र को मोह लिया और उसी माया ने नारद को भटका दिया। दोनों महाऋषि माया के वशीभूत हो गए। पाण्डे ने उसे अपनी घरवाली बना लिया और हँस-हँसकर खूब लुभाता रहा। भोग-भ्रम में सब धन खुट गया। तन-धन और मान गँवा बैठा।

जब सद्‌गुरु ने आँखें खोलकर भान करवाया, तब फिर पछताने लगा। किन्तु सब खोकर पछताने से क्या लाभ? बिलख-बिलखकर जोर-जोर से विलाप करके रोने लगा। सद्‌गुरू ने धैर्य बँधवाया। माया की करणी अद्‌भुत है। इसे कोई नहीं जान सकता। यही माया उत्पन्न करती है, यही विनाश भी करती है। सृजन विनाश की लीला इसी की है। यह तो नागिन की तरह घट-घट में बैठ जाती है और वह मुकाम लगा लेती है। सद्‌गुरु अनहद नाद बजा कर इसे बाहर निकाल सकते हैं।

सैन कहते हैं- सद्‌गुरू की कृपा ने ही माया का भ्रम दूर किया है।

साधौ भाई राम बसें जिन हिरदै, तिन घट धीरज होय॥ टेक॥
जे जन राम रटें संग साँसाँ, तिन जिह्वा रसना होय।
ईरस ताप जरै नहीं भीतर, हिरदा सीतल होय॥ 1॥

काम क्रोध लोभ नहीं व्यापे, सुख संतोस समोय।
मोह नहीं व्यापे द्रोह नहीं आवे, भरम न बीजे कोय॥ 2॥
चाह मिटे अर चिंता जावे, पातक आतक धोय।
एक राम में समचित रेहवे, एकहि तार पिरोय॥ 3॥
सदा रहे तिनके घट हरसा, हरसावे सब कोय।
सद्‌गुरु की किरपा जद होवे, तन-मन चानण होय॥ 4॥
सैन भगत सद्‌गुरु परबोध्यो, खबर पड़ी जद मोय।
साधौ भाई राम बसें जिन हिरदै, तिन घट धीरज होय॥ 5॥

साधु भाई! जिनके हृदय में राम का निवास होता है। उनके हृदय में धीरज का भी निवास अवश्य होता है। वे तृप्त काम हो जाते हैं। जो लोग साँस-साँस के साथ राम-राम का जाप करते हैं, उन्हीं की जिह्वा सच में रसना कहलाती है।

इस प्रकार के व्यक्तियों के मन में ईर्ष्या की आग नहीं जलती है। उनका हृदय सदा शीतल बना रहता है। काम, क्रोध, लोभ और द्रोह (अनास्था) का प्रभाव नहीं पड़ता है। उनके हृदय में सदा सुख और संतोष बना रहता है। वह कभी किसी के प्रति भ्रम के भाव नहीं उत्पन्न करता। उसकी इच्छाएँ और चिन्ताएँ समाप्त हो जाती हैं। समस्त पाप धुल जाते हैं। वह सदा एक राम में ही लीन रहता है। एक ही नाम की माला, पिरोता है जपता है। उसके मन में सदा हर्ष का भाव रहता है, तथा वह सबको भी हर्षित करता है। जब सद्‌गुरू की कृपा हो जाती है, तब तन और मन दोनों शुद्ध हो जाते हैं।

सैन भगत कहते हैं- मुझे जब ऐसा ज्ञान सद्‌गुरू ने प्रदान किया, तब समझ पड़ी। हे साधु भाई! जिनके हृदय में राम का निवास होता है, उनके मन धीरज होता है।

अण तन को कई माजनो, यो तन काचीगार॥ टेक॥
पंचतत्त को बण्यो फूतरो, जीव फँस्यो बिच कार।
हूड़ो बेठ्यो टें-टें बोले, खुल्या हुआ दस दुवार॥ 1॥
दूधां-रोटी मीठा मेवा, खूब मले सतकार।
गार फूतरो मौजां माणे, खूब करे सिणगार॥ 2॥
परमतत्त ने भूल गयो हे, भूल्यो सिरजणहार।
माया मोह लोभ में बिलम्यो, किसतर निकले बाहर॥ 3॥
चार दिनाँ की मुद्दत पूरी, लिख्यो कोलकरार।
परमानन्द राम मिलन की, करले सुरत सम्हार॥ 4॥

सैन भगत उड़ जा रे हूड़ा, खुला सुरत दुवार।
पूरन परमानंद मिल्यां बिन, नी हे तार नितार॥ 5॥

सैन भगत कहते हैं- इस तन का क्या अस्तित्व है। यह तो कच्ची मिट्टी से बना है। यह पुतला पाँच तत्त्वों से बना है, इसकी कारागार में जीव फँस गया है। वह जीव रूप तोता भीतर बैठकर टें-टें कर रहा है। इस तन रूपी पुतले के दस द्वार हैं। यह तोता दूध-रोटी, मीठे मेवे और स्वागत-सत्कार के मोह में पड़कर अपने परमतत्त्व तक को भूल गया है। उस सृजनहार को भी भूल गया है। माया, मोह और लोभ की वशीभूत हुआ, यह जीव तोता बाहर कैसे निकले? इसकी चार दिनों की मुद्दत थी। ऐसा विधाता ने लेख लिखा था। यह सब कुछ भूल चुका है।

सैन भगत कहते हैं- अरे तोता! अब तू इस देह का मोह त्याग दे। परमानन्द से मिलने की युक्ति विचार। इस देह रूप कारा के दसों द्वार खुले हैं। पूरन परमानन्द से मिले बिना तेरा उद्धार नहीं है।

यों संसार फूल सेमर को, बूर-बूर उड़ जावे॥ टेक॥
चार दिनां की मिली कोठरी, बेमतलब पोमावे।
समय बीतयाँ खाली करने, हाट-बाट उड़ जावे॥ 1॥
बाहर पोते भीतर पोते, भाँत-भाँत चितरावे।
वेश कीमती सज्जा साजे, मन ही मन इतरावे॥ 2॥
भरा हाट में उमगो-उमगो, बणज बणजवा आवे।
खाली मुट्ठी आयो मूरख, कसतर बणज कमावे॥ 3॥
पुण्य कमाई करी न मासा, तोला भर ले जावे।
बंधी मुट्ठी आयो बाँवला, खाली हाथा जावे॥ 4॥
खरी कमाई करी न कोई, गाँठ कटा घर आवे।
बे अरथां की सोच सोचतां, काल कतरतो जावे॥ 5॥
खरी कमाई कर ले मूरख, सोई संग में आवे।
सैन भगत बड़भाँगा पायो जन्म अकारथ जावे॥
यो संसार फूल सेमर को, बूर-बूर उड़ जावे॥

– सौजन्य : श्री देवी सिंह परमार, भानपुरा (म.प्र.)

सैन भगत कहते हैं- यह संसार सेमल का फूल है। पहले बहुत सुहाना लगता है। फिर उसमें फल आते हैं। तोता इत्यादि पक्षी उन फलों को खाने की लालसा रखते हैं, किन्तु वह फल तो पकने पर तड़क जाता है। उसमें न गुदा होता है न रस। केवल रुई जैसे बूर होते हैं जो हवा के

साथ उड़कर उन सब पक्षियों की आशाओं को भी उड़ा ले जाते हैं। यह देह कोठरी चार दिनों के लिए मिली है। तू इसे प्राप्त कर बेमतलब गुमान कर रहा है। समय बीतने पर यह कोठरी खाली कर तुझे हाट की बाट लग जाना पड़ेगा यानी प्रस्थान करना पड़ेगा।

तू इस देह रूपी कोठरी को बाहर-भीतर रंग लगाकर भाँति-भाँति के चित्र बनाकर, बेशकीमती साज-सज्जा से श्रृँगारित कर रहा है। मन ही मन इतरा रहा है। तू इस संसार रूपी भरे हाट में बड़ी उमंग के साथ व्यापार करना चाहता है, किन्तु तेरी मुट्ठी तो खाली हो चुकी है। कैसे तू हाट में कमाई करेगा? तूने पुण्य की कमाई तो एक मासा (पुराना तौल) भी नहीं की और तोला भर ले जाने का प्रयास कर रहा है।

तू संसार में बँधी मुट्ठी आया था और खाली हाथ जाना पड़ेगा। तू व्यर्थ की सोच में डूब रहा है। समय रूपी काल तेरी आयु को कुतर रहा है। फिर पछताने से कुछ नहीं होगा। इसलिए सैन भगत कहते हैं- यह मनुष्य जीवन बड़े भाग्य से तुझे मिला है। यह जन्म अकारथ मत जाने दे। यह संसार तो सेमल का फूल है। बूर-बूर यानी रोयाँ-रोयाँ होकर हवा में उड़ जाएगा।

सिरजन हारी की कला, मोसो बरनि न जाई॥ टेक॥
बाजीगर ज्युँ खेल रचावे, लीला समझ न आई।
नजर न आवे लीला राचे, अजबो राम रमाई॥ 1॥
एक बूँद ती जगत रचावे, एक बीज चरनाई।
खुद ही राचे विनासे खुद ही, खूब करे चतराई॥ 2॥
माया झूठ माया पति साँचो, मन चित की भरमाई।
सैन भगत मायापति अद्‌भुत, लीला अजब रचाई॥ 3॥

सैन भगत कहते हैं- सृजनहार की कला का बखान मुझसे हो पाना कठिन है। जिस प्रकार बाजीगर खेल रचाता है, उसकी बाजीगरी की लीला समझ नहीं आती है। वैसे ही इस सृजनहार की लीला भी किसी को समझ नहीं आती। यह सृजनहार नजर नहीं आता, फिर भी लीला रचाता है। यह राम-रमाई अद्‌भुत है।

एक बूँद से सृष्टि का निर्माण करता है। एक बीज से हरियाली पैदा करता है। यह खुद ही सृष्टि का सृजन करता है तथा फिर उसे नष्ट भी कर देता है। बड़ी चतुराई से लीला रचाता है।

सैन भगत कहते हैं- यह माया झूठ है। मायापति सच है। यह सब मन और चित्त का भ्रम ही है। सैन भगत कहते हैं- मायापति की लीला अद्‌भुत है। उसने इसे अद्‌भुत ढंग से रचाया है। मैं तो इसका वर्णन नहीं कर सकता।

नित प्रत करूँ हजामताँ, रटू राम को नाम॥ टेक॥
दरपण साँच विवेक को, कैंची विरत विराम।
जल छिड़कूँ सुख शाँति को, मुँडन करूँ तमाम॥
लम्बी चोटी गरब की, बाँधूँ गाँठ दुराम।
अगल-बगल का रुगचा, लोभ ईरसा काम॥
करूँ सफाई ध्यान ती, नाखूँ खोरे हाम।
हेडूँ माया को मारग, रगडूँ गुठली आम॥
लोभ मोह अर क्रोध का, नख छाटूँ बिन दाम।
सहजो समचित भाव रख, सेवा करूँ हजाम॥
भेदभाव राखूँ नहीं, ऊजल नाई काम।
सैन राजा रंक ने, जाणू एक समान॥

सैन भगत कहते हैं- मैं प्रतिदिन हजामतें करता हूँ और राम का नाम रटता हूँ। सत्य और विवेक का दर्पण दिखाता हूँ और कैंची से बाल काटता हूँ। सिर पर सुख और शाँति का जल छिड़क कर मुँडन करता हूँ। लम्बी चोटी जो गर्व का प्रतीक है। उसे दोहरी करके गाँठ लगाकर बाँध देता हूँ। बगलों के बाल ऐसे काटता हूँ मानो लोभ, ईर्ष्या और काम के प्रभाव को समाप्त कर देता हूँ। सब काम सफाई से करता हूँ और सारी केश राशि का जजमान की गोदी में उसके सामने डाल देता हूँ। अर्थात् समस्त दोषों का निवारण कर देता हूँ। सिर पर मुँडन के पश्चात् आम की गुठली रगड़कर सारा मैल हटा देता हूँ, अर्थात् समस्त रहे-सहे दोष भी हटा देता हूँ। लोभ, मोह और क्रोध के नाखून छाँट देता हूँ।

सैन कहते हैं- मैं सहज और समभाव से सभी वर्णों-राजा, रंक को एक भाव से जानता हूँ। भेदभाव नहीं करता, नाई का काम उज्ज्वल काम है।

निस दिन सिमरूं राम ही राम॥ टेक॥
राम सिमरतां भव भय भागे, सीत न लागे घाम।
भूख नी लागे तरस नी व्यापे, नहीं थकान विसराम॥ 1॥
एक लगन एक मन लिवता, एक रटन एक नाम।
अंत समै गुरू दरसन होवे, काशी गुरू सुख धाम॥ 2॥
गागनोन ती ओंकारेसर, नहीं लागो विसराम।
साधू संगत भली सुभागां, कासी कर्‌यो पयाम॥ 3॥
पाँच बरस में कासी पौंच्या, गुरू आसरम सुख धाम।
अब नहीं छोडूँ अन्त समै सुद, पाको करूँ मुकाम॥ 4॥

सैन भगत सद्‌गुरु के दरसन, मिट्या सकल विसकाम।
निस दिन सिमरूँ, राम ही राम॥ 5॥

मैं दिन-रात राम नाम का ही स्मरण करता हूँ। राम नाम के स्मरण से संसार के सभी भय दूर हो जाते हैं। न भूख लगती है। न प्यास लगती है। न थकान का अनुभव होता है। एक ही धुन, एक ही लय की तल्लीनता रहती है कि अन्त समय में सद्‌गुरू के दर्शन हो जाएँ। शीघ्र काशी सुखधाम पहुँच जाऊँ।

गागरोन से चलकर ओंकारेश्वर पहुँचा। वहाँ मन नहीं लगा। विश्राम नहीं किया। सौभाग्य से साधु-संतों का संग मिल गया। उनके साथ काशी के लिए प्रस्थान कर दिया। काशी पहुँचने में पाँच बरस बीत गए। अन्ततः मैं गुरू आश्रम काशी सुखधाम पहुँच गया। अब मैं अन्त समय तक काशी नहीं छोडूँगा। यह स्थाई मुकाम रखूँगा।

सैन भगत कहते हैं- सद्‌गुरू के दर्शन से सभी विष कामनाएँ समाप्त हो गई। मन उज्ज्वल हो गया। मैं काशी में रहकर राम नाम का स्मरण करता हूँ।

दो कौड़ी का सेना नाई, सतगुरु कृपा करी। टेक॥
ना कोई ठौर ठिकानो पूरो, ना कोई धिरत धरी।
मन निरमल चित्त ऊजल राख्यो, आँख नहीं उघरी॥ 1॥
सतगुरु साहिब आँख उघारी, धीर हुई सबरी।
सूधी वाट लगाई सतगुरु, रिदै हुई खबरी॥ 2॥
रामानंद गुरु पूरा मिलिया, सिवजी की नगरी।
दास कबीरा पीपा धन्ना ने, झट अँगुरी पकरी॥ 3॥
रैदास की छपरी बैठ्यो, संगत खूब करी।
साहिब के दरबार नी पौंच्यो, हेर बड़ी सकरी॥ 4॥
पीपा ने सति सीता के संग, मुझ पे कृपा करी।
सीता सति जी सरग सिधार्‌या, टोड़ा में छतरी॥ 5॥
सति सीता की करी परकमा, सरधा अरज करी।
सयना जतरी संगत लिखी, सन्त नेम गुजरी॥ 6॥

कर परनाम छोड़ दियो, सिद्ध टोड़ा को धाम।
सत संगत करता चल्या, मारग गामो गाम॥ 7॥
छै मइना में पौंच्या, गागरोन सुखधाम।
आहू-काली सिंध के, संगम कर्‌यो मुकाम॥ 8॥

पीपा के संग गागरोन में, संगत खूब करी।
पाँच बरस मुक्काम लगायो, रसना राम सरी॥ 9॥
सबद-सबद सत संगत होई, कही-सुणी सब री।
ना कोई लेणो ना कोई देणो, मेहर बड़ी रब री॥ 10॥
संगम की खोह ताड़ी लागी, पीपे देह छरी।
मिल्यो पौन में पौन देह, धरती पे रही धरी॥ 11॥
साठ घड़ी तईं हिरदै भीतर, व्यापी बे सबरी।
रहूँ मुकामी कै चल जाऊँ, सत संगत बिगरी॥ 12॥
आँख मूँद ने सतगुरु ध्यायो, आरत विनय करी।
सयना सतगुरु परचो दीयो, दुवधा विपद हरी॥ 13॥

साधू तो चलता भला, बहता सुच्चा नीर।
सयना माया मोह तजे, साधू संत फकीर॥ 14॥
ठाँव ठौर मुकाम को, छूट गयो सब मोह।
सयना सतगुरु की क्रपा, रह्यो नहीं कोई भोह॥ 15॥
राम धर्‌यो घट भीतरा, सुमरूँ साँस उसाँस।
सयना झोलो खाँद के, हाथाँ धर्‌यो बाँस॥ 16॥

सरधा राखी हिरदा भीतर, सतगुरु साख भरी।
धोग लगाई साध समाधी, ऊबी वाट पकरी॥ 17॥
साँत सुवानी मालव माटी, चीतूँ घरी-घरी।
पाकी उमर सितत्तर होई, देह हुई जजरी॥ 18॥
सयना भगत सतगुरु चरणा में, सुरती लाग परी।
अंत समै में दरसन दीजो, सतगुरु हाम भरी॥ 19॥
दो कौड़ी को सेना नाई, सद्‌गुरु कृपा करी।
कै सद्‌गुरु कै साहिब दाता, जामिन ले उतरी॥ 20॥

सैना नाई की कोई हैसियत नहीं थी। दो कौड़ी कीमत भी नहीं थी। सद्‌गुरू ने मुझ पर अपार कृपा कर दी। वे धन्य हैं। न तो मेरे पास कोई ठौर-ठिकाना और ही धैर्य था। यद्यपि मेरा मन और चित्त निर्मल था प्रभु में तल्लीन थे। फिर भी आँखें बंद थी। अज्ञान छाया था। सतगरू साहिब ने ज्ञान प्रदान किया, धैर्य और सबूरी प्राप्त हुई। सद्‌गुरू ने सीधी वाट दिखा दी। हृदय में भाव हो गया। सारी खबर हो गई। मुझे पूरे गुरू के रूप में सद्‌गुरू रामानन्द जी मिल गए हैं। उनके दर्शन शिवजी की नगरी (काशी) में हुए।

दास कबीर, पीपाजी, धन्ना भगत ने झट मुझे विश्वास दिया और मुझे सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। मैंने संत रैदास की कुटिया में बैठकर खूब सत्संग किया। तब भी मैं साहिब (प्रभु, ईश्वर) के दरबार तक नहीं पहुँच पाया। ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग बहुत जटिल और हेर (मोहल्ला, मुकाम, गली) बहुत संकड़ी है। उसमें प्रवेश बहुत कठिन है।

संत पीपाजी ने मुझ पर बहुत कृपा की। वैसी ही कृपा सती सीता जी ने भी मुझ पर रखी। टोड़ा में सती सीताजी स्वर्ग सिधार गई। वहीं उनकी समाधि बनी। छतरी बनी। संत पीपाजी और मैंने सती सीताजी की समाधि की परिक्रमा की और विनती की कि जितनी संगत विधि ने लिखी थी। उतनी सत्य और नियम द्वारा व्यतीत हो गई। अब विदा।

सती सीताजी की समाधि को प्रणाम कर टोड़ा का सिद्ध धाम त्याग दिया। छह महीनों में गाँव-गाँव सत्संगत करते हम गागरोन के सुखधाम पहुँचे। आहू और कालीसिंध नदी के संगम पर मुकाम हुआ। मैंने पाँच बरस तक वहाँ संत पीपाजी के साथ मुकाम लगाया। वहीं राम रस से रसना तृप्त हुई। वहाँ शब्द-शब्द खूब सत्संग होने लगा। खूब कही और सबकी खूब सुनी। यहाँ मन को बहुत शाँति मिली। न किसी से लेना न देना। अपनी मौज में राम भजन करना और सबके साथ सत्संगत करना। रब (ईश्वर) की बहुत कृपा बनी रही।

संगम की गुफा में संत पीपाजी ने समाधि लगाकर प्राणों का त्याग कर दिया। पवन-पवन में मिल गया। देह धरती पर धरी रह गई। संत पीपाजी के महाप्रयाण के बाद साठ घड़ी तक मन व्याकुल रहा। मन में बेसब्री का भाव बना रहा। व्याकुलता यह थी कि मैं अब यहीं मुकाम रखूँ अथवा गागरोन त्याग कर चल पड़ूँ? कुछ तय नहीं कर पा रहा था। मन में अनिश्चय का भाव था। इसी बात की बेसब्री थी। सत्संग बिगड़ गया था। मैंने आँखें मूँदकर सद्‌गुरू जी का ध्यान लगाया। सद्‌गुरू जी से विनय कर आर्तस्वर में उन्हें पुकारा। सद्‌गुरू जी ने मेरी आर्त पुकार सुन ली और परचा दिया (भाव रूप से दर्शन देकर समस्या समाधान करना)। सारी दुविधा की विपत्ति को दूर कर दिया।

सद्‌गुरू ने बोध करवाया कि साधू चलायमान ही अच्छा लगता है। जल बहता हुआ ही निर्मल रहता है। साधू, संत, फकीर कभी स्थान विशेष का मोह या माया बंधन नहीं मानते। उनके लिए सारी धरती उनका मुकाम है। सद्‌गुरू जी के प्रबोधन से ठाँव-ठौर और मुकाम का मोह छूट गया। सद्‌गुरू की कृपा से सारी चिन्ताएँ दूर हो गईं। मैंने राम प्रभु को हृदय में धारण किया। साँसों में नाम को धारण किया। झोले को कंधे पर धारण किया तथा बाँस को हाथों में धारण कर प्रस्थान के लिए तत्पर हो गया।

मन में सद्‌गुरू साहिब के प्रति तथा संत पीपा जी के प्रति श्रद्धा धारण कर संत पीपाजी की समाधि को धोक लगाकर खड़ी राह पकड़ ली। कहाँ जाना है। किधर जाना है, कुछ तय

नहीं किया। मालवा की पुण्यभूमि बहुत सुहानी व शान्त है। मुझे यह बात बार-बार याद रहती है। मेरी उम्र पक चुकी है। सतहत्तर वर्ष की उम्र के कारण देह भी जर्जर हो गई है। सैन कहते हैं- अब तो सद्गुरू के चरणों की सुरति लग गई है। हे सद्गुरू! साहिब ने हामी भर ली है। इस दो कौड़ी के सैना नाई पर सद्गुरू साहिब ने बहुत कृपा की है। इतनी जामनी (जमानत) तो केवल सद्गुरू और साहिब (ईश्वर) ही दे सकते हैं।

साधौ भाई गुरु दरसन लिव लागी॥ टेक॥
देही थकी पंथ बड़ेरो, सुरत रिदै की जागी।
मन चित्त लाग्यो गुरु चरणा में, मारग की भिक भागी॥
ना कोई पूत नहीं कोई दारा, नहीं समधी अनुरागी।
सबको मोह छोड्यों बरसां, मन चित्त हे बैरागी॥
या धरती घर बार हमारो, सकल जीहे सागी।
सद्गुरु साहिब धणी हमारो, सेना घण बड़भागी॥
सैन भगत घट राम बिराज्या, मोह माया सब त्यागी।
अंत समै गुरु दरसन होवें, तां सेना सतभागी॥

साधौ भाई! गुरू दर्शन की इच्छा प्रबल है। लय लग गई है। देह थक चुकी है। पंथ लम्बा है। हृदय की सुरति जागृत है। मन-चित्त गुरू चरणों में लग चुका है। मार्ग का भय समाप्त हो गया है। अब न तो मेरा कोई पुत्र है, न बेटा, न रिश्ते-नातेदार, न कोई अनुरागी मित्र। सबका मोह त्याग दिया है। वर्षों पहले सबके मोह से मुक्त हो चुका हूँ। मन बैरागी बन चुका है। संसार के सभी जीव मेरे सगे हैं। यह धरती ही मेरा घर परिवार है। मेरा स्वामी तो अब केवल सद्गुरू साहिब है। सैना बहुत भाग्यशाली है। सैन कहते हैं- घट में राम बिराजते हैं। सब मोह-माया त्याग दी है। अन्त समय सद्गुरू के दर्शन हो जाएँ, यही इच्छा है। तभी सैना का भाग्य सत्य होगा।

राम नाम में नहीं रे लाग्यो मन तेरा॥ टेक॥
चाम की छुरहरी चाम की बाँधी, चामी लागा डेरा।
चामे मूँडे चार मुडावे, समुझि देख मन मोरा॥
कंधो टूट्यो तेल ढरकायो, होई गया साँझ सेवरा।
देनों होय सो दे दे झटपट, आई घर की वेरा॥
चिमटा नहरन और कतरनी, दरपन साहब तेरा।
सैन भगत मुजरे को आवे, आद-अंत का चेरा॥

अरे प्राणी! तेरा मन राम नाम में नहीं रमा। तू दिन-भर चमड़े की छुरी और चमड़े की बाँधनी लेकर, चमड़े के ही डेरे में व्यस्त रहता है। चमड़े को ही मूँड़ता, मुँड़ाता रहता है। यह बात तू भलीभाँति समझ ले। तन की साज-सज्जा में ही व्यस्त रहता है। मन को सजाने में तेरा ध्यान नहीं है।

अन्त समय में तेरा कंधा टूट जाएगा। तेल ढरक जाएगा। यह शीघ्र ही साँझ-सवेरे होने ही वाला है। हे भाई! जो भी सुकर्म करना हो सो कर ले। खरी कमाई कर ले, वरना वापिस घर लौटने की बेला (महाप्रयाण का अवसर) आने ही वाली है।

साधू भाई आदि अनादि भज लीजै॥ टैक॥
तन-मन-चित सब अर्पण करता, गुरु चरणा सुख लीजै।
गुरु शरणा म्हारो साहब मलसी, साँची बात पसीजै॥
लुर-लुर होया एक धुन लाग्याँ, परमानंद रस पीजै।
आपो मेट एक रस होयाँ, अन्तर राम पसीजै॥
अलख पुरुख घर विरत हमारी, नत दन फेरी दीजै।
सैन भगत सद्‌गुरु रामानंद, चरण शरण वई रीजै॥

साधू भाई! आदि-अनादि को भज लो। तन, मन और चित्त को अर्पित करते हुए गुरू के चरणों में सुख प्राप्त कर लो। गुरु की शरण में जाने से मुझे मेरे उस आदि-अनादि परमात्मा के दर्शन हो जाएँगे। यदि आपा (अहंकार) तथा अस्तित्व मिटाकर परमात्मा में लीन हो जाएँगे और राम को हृदय में बसा लेंगे, तभी परमात्मा पसीज कर अपना लेंगे।

हमारा घर तो अलख पुरुष के निकट है। रात-दिन वहाँ आना। सैन भगत कहते हैं- मैं सद्‌गुरू रामानन्दजी की चरण-शरण में रहकर सुख प्राप्त करता हूँ।

सैन भगत का ननिहाल पंजाब के अमृतसर, गाँव सोहाल में हुआ था। उन्होंने नाई का काम लाहौर में रहकर अजीम नाई से सीखा था। लाहौर के निकट एक गाँव में उनका विवाह साहबाँ (निक्की) के साथ हुआ था। वहाँ उनका युवा होने तक का समय व्यतीत हुआ। इस कारण वे पंजाबी भाषा और गुरुमुखी लिपि से भिज्ञ थे। पंजाबी उनकी मातृभाषा थी।

बाद में भी वे पंजाब क्षेत्र में अपने संन्यासी जीवन में गए। इस कारण वहाँ उनके पंजाबी में पद मिलना स्वाभाविक है। इसी प्रकार वे अपने प्रारम्भिक संन्यास काल में महाराष्ट्र बीदर क्षेत्र में लगभग साल-सवासाल रहे और वहाँ उन्होंने अभंग भी रचे। अभंग इसी ग्रन्थ में संकलित है। इस प्रकार सैन भगत पंजाबी, दशौरी, राजस्थानी और मराठी भाषाएँ बोलते-समझते थे। तीनों भाषाओं में उनके पद उपलब्ध हैं। लोक वाचिक परम्परा में अभी भी उनकी वाणी की खोज होना चाहिए। होते रहना चाहिए।

पंजाबी पद

चार दिनां दी जिंदगी, करलई खरच खुवार॥ टेक॥
इक दिन बाल पणे विच बीत्यो, दूजो विच मुटियार।
तीजो मौजां माणन बीत्यो, चौथो हे अनिहार॥
ना कुझ बीज्या ना कुझ कतया, ना तिनका ना तार।
कम्म किसे दे आयो नाहीं, न सुच्चा विपार॥
जिभड़ी राम रट्यो नहीं कदयाँ, ए जई जिभड़ी ने धिणकार।
टोटे-टोटे बेड़ी होई, ना कोई आयो तारणहार॥
आख ओए सैण भगत की खट्या, क्युँ आयो संसार।
सद्गुरु दी शरणा विच झल्या, होसी बेड़ापार॥

सैन भगत कहते हैं- चार दिनों का जीवन मिला था। उसे भी व्यर्थ में खर्च कर दिया। एक दिन तो बचपन में, एक दिन जवानी में और तीसरा दिन मौजें करने में बीत गया। चौथा दिन वृद्धावस्था है। इसमें सब तरफ अँधेरा ही अँधेरा है। सारी पूँजी व्यर्थ गँवा दी। वह किसी भी काम नहीं आई। सच्चा व्यापार (भक्ति) भी नहीं कर पाया। जिह्वा ने राम नाम का स्मरण नहीं किया। ऐसी जिह्वा को धिक्कार है। नाव टुकड़े-टुकड़े हो गई है। कोई पार उतारने वाला भी नहीं है। अरे सैन! सोच तूने इस संसार में आकर क्या कमाया? तू इस संसार में क्यों आया? अरे! तेरा तो केवल सद्गुरू की शरण में जाने से ही बेड़ा पार हो सकेगा।

बंदया कर लै करम कमाई॥ टेक॥
शबरी अते अहिल्या कीती, पीपे-सीता माई।
जंगलां दे विच होके देन्दा, खुद आया रघुराई॥
करम कमाई कबीर ने कीती, नामदेव चित्त लाई।
धन्ने भगत कंकर बीज्या, खेती होई सवाई॥
रैदास दा सबद सुचन्या, गंगा कछोटी आई।
करम कमाई परल्हाद ने बीती, हरि चित्त दिल विच लाई॥
भगतां दा प्रभ रक्खा हारा, छोड़ दिती ठकराई।
सच्चा सौदा जिस-जिस कीता, कदां न घाटा पाई॥
सद्गुरु पूरा रामानंदा, बार-बार शरणाई।
सैन भगत दी भगति कच्ची] राम नाम चित लाई॥

हे बंदे! कर्म की कमाई कर ले। यह कमाई शबरी, अहिल्या, पीपाजी और उनकी सहचरी सीता ने की। भगवान राम ढूँढते-ढूँढते स्वयं ही दर्शन देने आ पहुँचे।

कर्म कमाई कबीर ने की। ऐसी ही कमाई नामदेव ने की। धन्ना भक्त ने अपने खेत में कंकर बोए। परमात्मा की कृपा से कंकर सच्चे बीज बन गए और सवाई फसल हुई। रैदास के शब्द शुद्ध थे। उनके शब्दों को मान कर गंगाजी उनकी कछौटी में प्रकट हो गई।

ऐसी ही कर्म कमाई प्रह्लाद ने की। हरि को चित्त में बिठाकर उनकी भक्ति की। प्रभु अपने भक्तों के रक्षक हैं। अपना आसन छोड़कर प्रह्लाद की रक्षा करने आ पहुँचे। जिस-जिसने भी सच्ची भक्ति की, उसे कभी नुकसान नहीं हुआ। सच्चे व्यापार में लाभ ही हुआ। सैन कहते हैं- सैन की भक्ति कच्ची है। बार-बार राम रटकर पकाता रहता है। सद्‌गुरू रामानन्दजी सच्चे गुरू हैं। सैन बार-बार उन्हीं की शरण में जाता है।

ओए झलया किस दा करे गुमान।
पंझ ततवां दा बण्या पिंजरा, रब ने कर्‌या मिलान।
पृथ्वी अगन जल पवना कहंदे, पञ्झवां तत आसमान॥
इस पिंजरे विच पंछी बैठ्‌या, कुहु-कुहु करदा गान।
पंछी उड्ड्‌या पिंजरा खाली, पंञ्जई तत्त गरकान॥
ए संसार सुपने दी माया, कआं न सच्चा जान।
कूड़ा धन परवार ओए झलया, कूड़ा दिसे जहान॥
सैना कूड़ कमांदा फिरदाएँ, कूड़ा करदाएँ जखाण।
सतगुरु सच्चा साहेब मिलिया, दिता नाम फरमान॥

संत सैन भगत कहते हैं- अरे बावले! तू किस बात का गुमान करता है? यह पाँच तत्त्वों का पिंजरा परमात्मा ने बनाया है। पृथ्वी, अग्नि, जल, पवन और आकाश। इस पिंजरे में एक पंछी (प्राण) बैठा है, जो कुहु-कुहु मीठे गान कर रहा है। इस पक्षी के उड़ते ही पिंजरा खाली हो जाएगा। पाँचों तत्त्व नष्ट होकर अपने-अपने मुख्य तत्त्व में मिल जाएँगे। यह संसार तो स्वप्न की माया है। इसे कभी भी सत्य मत मानना। यह धन, परिवार- अरे बावले! सब झूठ है। अरे सैन! तू तो झूठ कमाई करता फिरता है। और झूठ पद गाता है। सच्चा गुरू मिल गया, उसने नाम दान दे दिया।

मृत्युगीत

निमाड़ में कायागीतों का वैसा ही महत्त्व है, जैसा मालवा और राजस्थान में पूर्वज गीतों का है। इन गीतों में वैराग्य भाव के साथ षड्‌रिपुओं को त्यागकर सत्य-शील भाव को ग्रहण करने का संदेश भी निहित रहता है। पूर्वजों के प्रति श्रद्धा भी इन गीतों का भाव होता है।

श्री रमेशचन्द्र तोमर 'निमाड़ी' ने अपने संग्रह में से 13 कायागीत (मृत्युगीत) भेजकर सैन भगत की वाणी को सम्पन्न किया है। निमाड़ में संत सैन के पदों की प्राप्ति उनके निमाड़ में लोकप्रिय होने की पुष्टि करती है। श्री तोमर जी के प्रति मैं वंदित हूँ।

काया जीव से येऊ कहे, जीव सुणो म्हारी बात॥
हाऊँ जाणू संग कई जासे, काया मलमल धोये॥
जवऽरे हंसा उड़ी गयो, काया रई रे पछताया॥
काया जीवन से येऊ कहे.....................॥

काया मनुष्य से कहती है- मेरी एक बात सुनो। मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि यह शरीर साथ नहीं जायेगा। इस शरीर को मलमलकर धोने से कोई फायदा नहीं है। जब शरीर से आत्मा रूपी हंस उड़ जाता है तो शरीर यही पड़ा रह जाता है। तन से आत्मा के निकल जाने के बाद पछताने से कोई फायदा नहीं है।

राजपाट छोड़ी गया, छोड़ा कुटुम परिवार॥ टेक॥
तो नवरंग थारी गेली सजाई, हीरालाल मऽ लाल।
डोली मऽ पिताजी बैठिया, उड़ी रया लाल गुलाल॥
माय रोव थारी जलम जोगणी, बेन्या वार तिवार।
तिरिया रोवे थारी तेरा दिन, लागी सयसर पार॥
भाई रे बन्दू थारा आसपास, कहाँ लाग्यो संगात।
सारो कुटुम छोड़ी गया, पहुँचा सगर द्वार॥ चौक॥
न्हाई धोई सब घर वो आया, सब मिल भगती उपजाया।
बईण भाणिज सब रोवण लाग्या, उनकऽ ग्यान बताओ॥
अणहद बाजा बजीया, वाजा गरू दरबार।
सैन भगत की बिनती, राखो शरण लगाय॥

मृत्यु के पश्चात् सारा पसारा, राजपाट, माल-असबाव सब यहीं छूट जाता है। सारा कुटुम्ब-परिवार सब यहीं रह जाता है। आदमी के मरते ही शवयात्रा के लिए नवरंगी डोली सजाई जाती है। उसमें पिताजी यानी शरीर को बैठाया गया। उस पर अच्छा अबीर, गुलाल उड़ाया जाता है।

हे प्राणी! तेरी माता तेरे नाम से जन्म भर रोयेगी और तेरी पत्नी तेरे नाम लेकर केवल तीन दिन ही रोयेगी। तेरी बहिन तुझे याद करके प्रत्येक त्योहार पर रोयेगी। तेरी तो जिन्दगी पार लग गई, लेकिन तेरी पत्नी की जिन्दगी किस प्रकार बसर होगी? भाई-बन्धु तुझे श्मशान घाट तक

लेकर जायेंगे। इन लोगों का बस यहीं तक साथ है। सभी पारिवारिक जनों को छोड़कर तुझे अकेले ही जाना है। श्मशान घाट से आने के बाद वे स्नान करेंगे और सब ज्ञान-ध्यान की बातें करेंगे। बहन भानिज सब रोते रहेंगे। यदि तूने अच्छे कर्म किये होंगे तो उनकी भी चर्चा करेंगे। इसलिए हे प्राणी! तू अच्छे कर्म कर जिससे तुझे दुनिया याद करे। सैन भगत कहते हैं- गुरू की कृपा से उस परमतत्त्व के दर्शन हो गये, जहाँ निरन्तर अनहद नाद बजता रहता है। मैं तो उसी की शरण में सदैव लगा हूँ।

मन सागर दरिया बहे, उड़े रंग फुहारा॥
ब्रह्म बीज निज बोवजो, अंत-तंत का क्यारा॥
प्रेम पिरथ जल छिचजो, खड़ा बाग तुम्हारा॥
मन सागर दरिया.................॥
कलक बीज करता रहे, मोती लागे रे जाला॥
उन्डो कुवो मुख साकरो, नीर हेरे पैयाला।
पढ़ो रे पोपट श्रीराम ....॥
आठ फुली बारी बनस्पती, फुली डाळम-डाल।
सैन भगत की बिनती, राखो शरण लगाय॥

हे आत्मा रूपी तोते! तू श्रीराम का भजन कर। जिस प्रकार सीता ने तोते को राम-राम रटन सिखाया, उसी प्रकार तू भी राम नाम का स्मरण कर। हे आत्मा रूपी तोते! तेरे लिए भगवान ने देह रूपी पिंजरा बनाया है। उसमें लाल रंग के खून का संचार किया है।

जिस प्रकार चम्पा, चमेली, दवणा, मोगरे पर बहार आती है। उसी प्रकार तू भी मनुष्य जीवन पाकर भगवान को भूल मत जाना। वरना भगवान किसी भी दिन फूल के समान तोड़ लेंगे। हे भाई तोते! तेरे ही कारण मैंने कुआँ खुदाया है। यह ज्ञान रूपी कुआँ बड़ा ही गहरा है और इसका मुँह सकरा है और इस कुएँ में ज्ञान रूपी पानी अथाह भरा है। इस ज्ञान रूपी पानी को उलेचकर अपने जीवन को धन्य कर, भगवान का भजन कर, जिससे तेरा जीवन धन्य हो जाये और तेरा आवागमन मिट जाये। सैन भगत कहते हैं- मनुष्य जीवन दुर्लभ है। इसका उपयोग भगवत् प्राप्ति में ही लगाना चाहिए।

भक्ति ग्यान मकऽ दइ देओ, देव मऽ का देवा॥ टेक॥
सास नऽ घड़ो लइ नऽ दइ भेजा, ववर प्राणी कऽ जाय।
उण्डो कुवो मुख साकरो, लेज पूरयो नी जाय॥
भक्ति ग्यान ....॥
अगर चंदन की पालकी, पान फूलों से छाई।

मालेण फूल लई गई, जाकी वास नी आई॥
भक्ति ग्यान ....॥
जोई-जोई चंपो सिचियो, चंपो पान नी फूल।
लई चल्यो चंपा बाग मऽ, आळम देखण आया।
भक्ति ग्यान ....॥
अणहद बाजा बजाया, बाजा गरू दरबार।
सैन भगत की बिनती, राखो शरण लगाई॥
भक्ति ग्यान ....॥

सौजन्य : श्री सीताराम कुशवाह, दवाना (म.प्र.)

हे प्रभु! मुझे भक्ति का दान देना। हे देवों के देव! मेरे मन में तुम्हारी भक्ति उत्पन्न करना। सास रूपी शक्ति ने शरीर रूपी बहू को इस संसार रूपी कुएँ पर पानी लेने के लिए भेजा।

आज मृत्यु के समय भी आपको दुःख दे रहा हूँ। दुःख देकर मैं जा रहा हूँ। आप आनन्दपूर्वक रहना। पिताजी आपको मेरा अन्तिम प्रणाम है।

एक संदेशा मेरी माताजी से कहना। मेरी मृत्यु पर मेरी माता आँसू न बहाये। माँ को मेरा अन्तिम प्रणाम कहना। आपके घर में जो तुलसी का पौधा है। उसकी सेवा करना। भगवान का ध्यान करना, जिससे तुम्हारा उद्धार होगा। आपका जीवन सफल होगा। आपको मेरा अन्तिम प्रणाम। आपके घर में जो आपकी बहू है, उसे मेरी मृत्यु के बाद दुःख मत देना। उसकी गलती माफ कर देना। भगवान ने सैन भगत को मृत्यु के पश्चात् सीधे स्वर्ग में स्थान दिया। अन्त भला तो सब भला।

भगती दान मोहे दीजिए, करूँ संत की सेवा॥ टेक॥
सुत सुन्दर सुत सायबी, सुन्दर वर नारी।
इतना रे माँगू नहीं, मोहे आसा तुम्हारी॥
आठ पळक नौ नींद घड़ी, नई धन की रे आशा।
इतना तो माँगू नहीं, जब लग घट में रे आशा॥
देखण का रे बाग उजला, मन मैला रे भाई।
आस मिली मुनीजन भया, मचतिया गह माई॥
अणहद बाजा बजीया, वाजा गुरू दरबार।
सैन भगत की बिनती, राखो शरण लगाय॥

हे भगवान! मुझे सुन्दर और गुणवान पुत्र और पत्नी देना। इतना ही मैं आपसे माँगता हूँ। आठ पल चौसठ घड़ी मुझे स्वप्न में भी धन की आशा नहीं सताये। मन में सन्तोष रहे। बस इतनी

आशा करता हूँ। मुझे भक्ति रूपी सन्तोष प्रदान कीजिये। जब तक शरीर में प्राण हैं, तब तक मेरी यह माँग है। देखने में ऊपर से शरीर उज्ज्वल है, पर भीतर से मन मैला है। मैं आडम्बरों में न उलझूँ। मुझे माया तृष्णा नहीं सताये। सभी से प्रेमपूर्वक व्यवहार करूँ। इतना ज्ञान जरूर देना। ऐसा न हो कि मन में छल-कपट भरा हो। ऊपरी दिखावे में मैं तुम्हारा भजन न करूँ। सैन भगत विनती करते हैं- मेरा मन निर्मल कर देना और निर्मल मन से साधु संत की और आपकी पूजा-अर्चना करता हूँ। बस इतनी आशा करता हूँ।

मयली गोदड़ी साधू धोई, उजलई कर लेणा॥
कायन की बणी रे संता गोदड़ी, कायन केरा धागा।
कोण पुरुष दरजी भया, कोण शिवणे को लागा॥
मयली गोदड़ी साधू................................॥
जल की बणी संता गोदड़ी, पवन केरा धागा।
आप रूप दरजी भया, खुद सीवण को लागा॥
मयली गोदड़ी साधू...............................॥
कहाँ से पवन पधारिया, कहाँ से आयो नीर।
कहाँ से आई सुहागणी, कहाँ थाप थपाणी॥
मयली गोदड़ी साधू...............................॥
आगम से पवन पधारिया, पीछम से आयो रे नीर।
इन्द्रासण से आई सुहागनी, जहाँ थाप थपाणी॥
अणहद बाजा बाजिया, बाजा गुरू दरबार।
सैन भगत की बिनती, राखो शरण लगाय॥

हे संतों! इस शरीर रूपी गोदड़ी को धोकर उज्ज्वल कर लेना। क्योंकि यह पाप कर्म में लिप्त होकर मैली हो गई है। इस शरीर रूपी गोदड़ी का निर्माण किस प्रकार हुआ? जल से इस शरीर रूपी गोदड़ी का निर्माण हुआ है। और हवा का इसमें संचार किया गया है। कहाँ से पवन देवता आये हैं? और कहाँ से जल देवता आये हैं? कहाँ से सुहागन स्त्री आई है? और किस प्रकार मनुष्य का जन्म हुआ है? पूर्व दिशा से पवन देवता आये हैं। पश्चिम से जल देवता आये हैं। इन्द्र के दरबार से सुहागन स्त्री आई है। और उसकी कोख से मनुष्य का जन्म हुआ है। सैन भगत कहते हैं- अनहद नाद को सुनने के लिए मैं परमात्मा की शरण में रहना चाहता हूँ।

जोगी को ढूँढत जुग भया, कोई नी देखा रे भाई॥
जोगी को झोली में पात है, हीरा माणक जड़िया॥
जो माँगे सो देता है, करो गुरू की सेवा॥

एक जोगी दूजो बालको, तीजा मस्तक देवा॥
छोटी-सी मड़िया मऽ रमिया, ढूँढ़ा जमीन-आसमान॥
पान छायो जोगी की मड़िया मऽ, फल महत अपार॥
जोगी कऽ अवता देखिया, मेरा हरि जी का द्वार।
अणहद बाजा बाजीया, बाजा गुरू दरबार॥
सैन जी की बिनती, राखो शरण लगाय॥

जोगी को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते युग बीत गया है। किसी ने उन्हें देखा है? योगी की झोली में पत्ते ही पत्ते हैं, पर झोली हीरे माणिक मोती से जड़ी है। योगी जो माँगते हैं, देते हैं। गुरू मानकर योगी की सेवा कीजिये। बालक, योगी, ज्ञानी इन तीनों की बातों को मानना चाहिये। यह योगी अपनी कुटिया में मस्त रहता है। इस योगी को जमीन-आसमान ने ढूँढ़ा, लेकिन वह कहीं नहीं मिला। पान पत्तों से योगी की कुटिया ढँकी हुई है। उस पर्ण कुटीर में वह अलमस्त रहता है। ऐसे योगी राज को हमने आते हुए देखा है। वह योगी सीधे भगवान के द्वार पर पहुँचता है। बड़े ही शुभदायक अनुभव होते हैं।

चलो गुरूजी का देश मऽ, अपुण दर्शणा पावां॥
गुरूजी का घर मऽ ग्याना बाजा, अपुण सरवण सुणां॥
आठ पयर चवसठ घड़ी, बैठे देव पूजावां॥
चलो गुरूजी ....॥
गुरूजी का घर मऽ मटका भरा, जल ठण्डा पाणी॥
भर-भर लोटा पी गया, आ तीस ना बुझाणी॥
चलो गुरूजी ....॥
गंगा जमना नीर बहे, अपुण मली-मली न्हावां॥
पाप कटे सारी देह का, जिवता वैकुण्ठ जावां॥
चलो गुरूजी ....॥
ब्रह्मगिर ब्रह्मा का ध्यान है, मन रंग बाग लगाया॥
उनकी छाया में बैठीया, गुरू को शीश नमावां॥
चलो गुरूजी ....॥
अणहद बाजा बाजीया, बाजा गुरू दरबार।
सैन भगत की बिनती, राखो शरण लगाय॥

हे मन! हे प्राणी! गुरूजी के देश में चलें और गुरूजी के दर्शन पाकर धन्य हो जायें, तर जायें। अपने गुरूजी के घर ज्ञान रूपी बाजे बज रहे हैं। हम जाकर सुनें और अपने जीवन से मुक्त हो जायें।

आठ पहर चौसठ घड़ी देवता की तरह पूजित गुरूजी के घर ज्ञान रूपी जल से भरा हुआ मटका है, जिसमें अनन्त ज्ञान भरा है। उस ज्ञान को प्राप्त करें, जितना भी ज्ञान पी सकें-पीयें, लेकिन प्यास फिर भी नहीं बुझेगी, क्योंकि ज्ञान की सीमा अनन्त है और मनुष्य की आत्मा सदा अतृप्त है। ज्ञान रूपी गंगा और जमुना नदी बह रही है। इस ज्ञान गंगा में अपने शरीर को धोकर आत्म-शुद्धि कर लें, स्नान कर लें, तेरे पाप नष्ट हो जायेंगे। गुरू की छत्रछाया में रहना, जिससे तेरे अवगुण मिट जायेंगे और गुरू को प्रणाम करना मत भूल जाना। गुरू का स्थान भगवान से भी बड़ा है। गुरू का आदर करना।

सैन भगत विनती करते हैं- ऐसे गुरूजनों की कृपा से परमात्मा के निकट पहुँचा जा सकता है, जहाँ अनहद नाद निरन्तर बजता है।

दुख-सुख मन मऽ नी लावणा, सुख सागर भरिया॥
हरिश्चन्द्र सरीखा राजवी, जिनकी तारावती राणी॥
अपणे सत के कारण, भरऽ डोम घर पाणी॥
दुख-सुख मन ....॥
राजा नल सरीखा राजवी, जिनकी दमयन्ती राणी॥
बारा बरस बनवास मऽ, जिनऽ खायो अन्न नी पाणी॥
दुख-सुख मन ....॥
मोरध्वज सरीखा राजवी, जिनकी वीस्वा की नारी॥
अपने सत के कारणे, दिया पुत्र चिराय॥
दुख-सुख मन ....॥
अणहद बाजा बाजिया, बाजा गरू दरबार॥
सैन भगत की बिनती, राखो शरण लगाय॥

सुख-दुख दोनों ही एक परछाईं की तरह आते हैं और चले जाते हैं। दुख है तो सुख भी आयेगा ही। दुखों से मनुष्य को घबराना नहीं चाहिये। दुख तो अच्छे-अच्छे राजा-महाराजाओं को भी उठाना पड़े हैं। सुख-दुख के बारे में मन में सोचना ही नहीं चाहिए।

हरिश्चन्द्र जैसे राजा, जिनके घर तारावती रानी थी। सत्य के कारण राजा-रानी बिक गये। राजा को डोम की सेवा करते हुए पानी भरना पड़ा। नल जैसे राजा भी दुख से अछूते नहीं रहे हैं। राजा नल जिनके यहाँ पर दमयन्ती जैसी रानी थी। अपने भाग्य के कारण राजा नल जुए में सभी कुछ हार गये और बारह वर्ष का वनवास झेलना पड़ा। वनवास के समय में वे अन्न-पानी के लिए तरस गये थे। मोरध्वज राजा जिनके यहाँ विस्वा रानी थी। उन पर दु:खों का पहाड़ टूटा था, लेकिन सत्य के कारण उन्होंने अपने बेटे ताम्रध्वज को आरे से सीधा काटकर अपने वचन का

पालन किया। दुख-सुख तो आते-जाते रहते हैं। सैन भगत कहते हैं- प्रभु के ध्यान में अपना मन लगा, वही सत्य है।

मनसा मिरगणी मारिया, येसा कौन सिकारी॥
काया कजली येक बंद है, वहाँ रहता सिकारी॥
रात-दिन घूमता फिरे, फिरे लार की लार॥
भाई-बन्धु का कारणा, उल्टा लोभ कमाया॥
हरिजी का सुमरण नहीं किया, हीरा जलम गमाया॥
काया जीव से येऊ कहे॥
माता रोवे जलम जोगणी, बेन्या वार तिवार॥
तिरिया रोवे रे तीन दिन, दूजा करऽ घरवास॥
काया जीव से येऊ कहे॥
हाड़ जले जैसे लाकड़ी, बाबा बन्द को घास॥
कंचर सरीकी काया जले, कोई आवऽ नई पास॥
काया जीव से येऊ कहे॥
अणहद बाजा बाजिया, बाजा गुरू दरबार॥
सैन भगत की बिनती, राखो शरण लगाय॥

जीव काया (शरीर) से कहता है- तेरा अन्त समय आ गया है। आत्मा अमर है। मैं अमर हूँ और शरीर तेरा नाश होने वाला है। तू नष्ट हो जायेगा। जब आत्मा रूपी हंस उड़ जायेगा, तो तेरा क्या होगा? तब तू पड़ा रहकर पछताता रहेगा। हे प्राणी! तूने अपने कुटुम्ब-परिवार के कारण उल्टा-सीधा काम करके धन कमाया। एक पल भी भगवान का ध्यान नहीं किया। जिस परमात्मा ने तुझे हीरे जैसा जन्म दिया, उसे तूने व्यर्थ ही गँवा दिया। तेरा परिवार भी तेरे कुछ काम नहीं आयेगा। तेरी माँ तो जन्म भर रोयेगी, बहन पर्व-त्योहारों पर रोयेगी और तेरी पत्नी तीन दिन के बाद रो-धोकर दूसरा घर कर सकती है। तेरा शरीर मृत्यु के बाद लकड़ी के समान जल जायेगा। तेरे सिर के बाल जंगल की घास की तरह जल जायेंगे। तेरी कंचन जैसी काया जलेगी, जब तेरा कोई भी रिश्तेदार तेरे पास फटकने वाला नहीं है।

सैन भगत विनती करते हैं- नश्वर काया पर घमण्ड न कर, प्राण निकलने पर शरीर को जला दिया जायेगा।

हाऊँ रे गरीब जन एकळो, दया करो म्हारा नाथ॥
महू फुल्या जसा को फुल्या, फुल्या अमुवा डाळ॥
जां म्हारो चन्दन एकळो, जाकी निरमळ वास॥

हाऊँ रे गरीब जन एकळो..............................॥
तारा मंडळ दल छाई र्‌यो, छाई र्‌यो रे आकाश॥
जां म्हारो चन्द्रमा एकळो, जाकी निरमळ जोत॥
हाऊँ रे गरीब जन एकळो..............................॥
नौ लाख पंछी बैठिया, बैठिया पंख पसार॥
जाँ म्हारो हंसा एकळो, मोती चुग-चुग खाय॥
हाऊँ रे गरीब जन एकळो..............................॥
कहे सैन जाकी बिनती, उतरो भव पार॥
कहने वाळा यो कहे, लीला अपरमपार॥

सौजन्य : श्री सीताराम कुशवाहा-दवाना (म.प्र.)

हे स्वामी! मुझ पर दया कीजिये- मैं गरीब, अनाथ, अकेला हूँ। मुझ पर दया बनाये रखें। मैं तुम्हारे भक्तिमार्ग में अकेला ही चलने वाला हूँ। जिस प्रकार महुआ का पेड़ फलों से लद जाता है और आम का पेड़ भी बौर और आम से लद जाता है। इस तरह हजारों तरह के पेड़-पौधे, वनस्पतियाँ पृथ्वी पर हैं, पर उनमें मैं चन्दन का पेड़ अकेला हूँ, जिसकी निर्मल सुगन्ध से सारा जंगल महकता है।

आकाश मण्डल में लाखों तारे हैं, जिनका झिलमिल प्रकाश फैलता है, लेकिन उन लाखों तारों में चन्द्रमा के समान अकेला हूँ, जिसका प्रकाश सारी पृथ्वी पर चाँदनी बनकर छिटक जाता है। मेरी भक्ति चन्द्रमा के समान स्वच्छ, निर्मल और शीतल है। इसे मैं बहुत ही विनम्र भाव से स्वीकार करता हूँ। सृष्टि में नौ लाख प्रकार के पंछी यानी जीव-जन्तु प्राणी विद्यमान हैं, जो अपने-अपने पंख फैलाकर कर्म करने में लगे हुए हैं। उनके जीवन में नीर-क्षीर विवेकी हंस अकेला हूँ, जो मोती चुग-चुगकर खाता है। यानी ज्ञान के एक-एक मोती चुनकर मगन रहता है, ठीक उसी प्रकार मैं ज्ञान के श्रेष्ठ सार को ग्रहण करता हूँ।

सैन भगत कहते हैं- जिन्होंने परमात्मा का भजन नहीं किया, गुरू दीक्षा नहीं ली, वे इस भवसागर से पार नहीं हो सकते हैं। जिन्होंने हरि का ध्यान किया, गुरू का आदर किया है, वे इस भवसागर से बिना संकोच के निस्सन्देह पार हो सकते हैं।

मनवा रे भीतर बायर नहीं जाणा॥ टेक॥
मन भीतर देव देवता भीतर पंडित काजी॥
बिना जिरभा पोथी बाचणा, ऐसी करम की लागी॥
मनवा रे भीतर ....॥
दस दरवाजा बंद किया, चारी किया कुलूप॥

दो दरवाजा छोड़िया, आशा रे सुर पाया॥
मनवा रे भीतर ....॥
आ रे तू सागर दरियाव है, ऊपर कमल हो तिरिया॥
ऊपर आप बिराजे, प्रभु दीन दयाला॥
मनवा रे भीतर ....॥
अणहद बाजा बाजिया, बाजा गुरू दरबार॥
सैन भगत की बिनती, राखो शरण लगाय॥

हे मन! अपने भीतर ही या अपनी हद में ही रहना। अपनी चंचलता छोड़ देना। शरीर के भीतर ही सारे देवी-देवता, पंडित-काजी विजराते है। बिना जीभ के जहाँ पोथी (सुमिरण) बाँची जा सकती है। शरीर के दसों दरवाजों (दसों इन्द्रियों) को बंद करके, वश करके चारों दिशाओं में भ्रमण किया जाता सकता है, भीतर की यात्रा उर्ध्वगामी हो सकती है, जहाँ त्रिकुटी और सहस्रार के द्वार खुल सकते है, जहाँ प्रभु मिलन का आस जाग सकती है।

शरीर के भीतर अमृत का सागर भरा है, जिसमें खिले कमल तैरते है, उसी के ऊपर हमारा परमेश्वर विराजमान है। हे मन! तू शरीर के भीतर की ही यात्रा कर।

सैन भगत कहते हैं- जहाँ अनहदनाद के बाजे बजते रहते है, वहीं सच्चा गुरू (ईश्वर) का दरबार है। इसलिये- हे मन! तू ईश्वर की भक्ति में लीन हो जा।

स्वामी म्हारो बसे अमरपुरी, कैसा मिळण होय॥
गुरु बिन पंथ सूजे नहीं, मन समझावो तोय॥
स्वामी म्हारो बसे..........................॥
जेठ जिठाणी पागळा, सासु करण कुँवारी।
ससरा हमारा थिगल्या भरऽ, ववु पाणी कऽ चाळी।
स्वामी म्हारो बसे..........................॥
सासू कुँवारी ववर परणेळी, घर नात्या को याव॥
ससरा की मुँडन भई, परवारी घर आया॥
स्वामी म्हारो बसे..........................॥
सासू बैठी बहू पाणी गई, गई अवगढ़ घाट।
नीर घागर फूट गई, घर काई ळई जाय॥
स्वामी म्हारो बसे..........................॥
पतिबरता सत पर ठाढ़ी, कोई देखो रे भाई॥
यहाँ का गया पाछा नहीं आया, घड़ी काय को गमाई॥

स्वामी म्हारो बसे..........................॥
अणहद बाजा बाजियो, बाजा गुरू दरबार।
सैन भगत की बिनती, राखो शरण ळगाय॥
स्वामी म्हारो बसे..........................॥

सौजन्य : श्री सीताराम कुशवाहा-दवाना (म.प्र.)

मेरा स्वामी यानी वह परमतत्त्व अमरापुर अर्थात् अमर्त्यनगर (स्वर्ग) में निवास करता है। उससे मिलना किस प्रकार हो सकता है? बिना सद्‌गुरू के उस कठिन मार्ग पर चलना कौन बता सकता है? इसलिए सबसे पहले सद्‌गुरू का मिलना जरूरी है। कोई समर्थ गुरू ही उस परब्रह्म को मिला सकता है। हे मन! तुझे मैं समझाती हूँ। मन को आत्मा कहती है।

मेरे जेठ-जेठानी पागल हैं। यानी रिश्तेदारों को इसकी जानकारी नहीं है। मेरी सास चिर-कुँवारी है। मतलब उन्हें आत्मा और परमात्मा के बारे में जरा भी ज्ञान नहीं है। यहाँ की उलट रीति है। ससुर अभी चलना सीख रहे है, अबोध हैं। बहुएँ पानी भरती हैं। ईड़ा, पिंगला, सुषुम्ना में निरंतर जीव द्रव्य बहता है। सास कुँवारी है और बहू परिणिता है। घर में पोते का विवाह है। इधर ससुर की मुँडन हो गई है। वे अभी मरघट से लौटकर आये हैं। सास बैठी है और बहू अवघट घाट पर पानी लेने गई है। पानी से भरी गागर फूट गई है, वह घर में पानी किसमें लाये? है भाई! यह आत्मा कैसी पतिव्रता है, जो अपने सत्य पर अडिग है। इस संसार से जो भी गया, वह वापिस नहीं आया। यह जीवन व्यर्थ ही गँवाया है। सैन भगत कहते हैं- जहाँ अनहदनाथ के बाजे बजते रहते हैं, वहीं सच्चा गुरू (ईश्वर) का दरबार है, इसलिए ईश्वर की भक्ति का मार्ग ही ठीक है।

संत सेना न्हावी

मराठी अभंग

1.

विटेवरी उभा नीट कहावरी कर। वाट पाहे निरंतर भक्ताची गे माये।
श्रीमुकुट रत्नाचा ढाळ देती कुंडलांचा। तुरा खाविला मोत्याचा तोगे माय।
कंठी शोभे एकावळी। तोडर गर्जे भूमंडळी। भक्तजनाची माउली तो गे माय
सोनसळा पीतांबर। ब्रीद वागवी मनोहर। सेना वंदि निरंतर तो गे माय।

भक्तजनों की राह देखते, खड़े हैं कबसे परमेश्वर।
रत्नमुकुट कुण्डल मोती की, तुर्रा शीश पर है सुन्दर।
पग में पेंजन कंठी गले में, पीत वसन है पीताम्बर।
वसो सैन के हृदय मनोहर, रूप अलौकिक विश्वम्भर।

2.

विटेवरी उभा नीट देखिलागे माये। निवाली कांती हरपला देहभाव।
तें रूप पाहतां मन माझें वेधले। नुठेचि कांही केलें तेथूनि गे माये।
अवघे अवघियाचा विसर पडियेला। पाहतां चरणाला श्रीविठोबाच्या।
सेना म्हणे चला जाऊं पंढरीसी। जिवलग विठ्ठलासी भेटावया।

देहभाव खो गया अलौकिक, रूप जो देखा मन मोहन।
प्रीति भक्ति में सुध बुध भूला, नहीं रहा मन अपनापन।
स्मृति विस्मृति हुई, देह का भान न कोई सैन के मन।
चलो चलें पंढरपुर जहाँ पर, पांडुरंग के पग पावन।

3.

जो हा दुर्लभ योगिया जनासी। उभाचि देखिला पुंडलीकापासी।
हारपलें दुजेपण फिटला संदेह। निमाली वासना गेला देहभाव।
विटेवरी उभा पंढरीचा राणा। सेना म्हणे बहु आवडतो मना।

जो योगी जन को भी दुर्लभ है, उसे पुंडलिक ने पाया।
दूर हुई वासना, परायापन नहीं लौट कभी आया।
सैन हरि में हरि सैन में, ब्रह्म से लिपटी ज्यों माया।
नहीं समाता कोई नयन में, नाथ पंढरी मन भाया।

4.

जातां पंढरीसी सुख वाटे जीवा। आनंदें केशवा भेटतांचि।
या सुखाची उपमा नाहीं त्रिभुवनीं। पाहिली शोधोनी अवघी तीर्थे।
ऐसा नामघोष ऐसे पताकांचे भार। ऐसे वैष्णव डिगर दावा कोठें।
ऐसी चंद्रभागा ऐसा पुंडलीक। ऐसा वेणुनादीं काला दावा।
ऐसा विटेवरी उभा कटेवरी कर। ऐसें पाहतां निर्धार नाहीं कोठें।
सेना म्हणे खूण सांगितली संती। यापरती विश्रांती न मिळे जीवा।

जहाँ चन्द्रभागा सरिता का, पावन नीर बहे कल-कल।
मधुर वेणुका नाद मनोहर, मन मोहक करता पागल।
सुख की उपमा नहीं त्रिभुवन में, वैष्णवजन का अन्तःस्थल।
खड़ा कटी पर युग्म हाथ रख, पांडुरंग का रूप अचल।

5.

समचरण विटेवरी। पाहतां समाधान अंतरीं।
चला जाऊं पंढरीसी। भेटुं रखुमाई वरासी।
होती संतांचिया भेटी। सांगू सुखाचिया गोष्टी।
जन्ममरणाची चिंता। सेना म्हणे नाही आतां।

समाधान अन्तर का स्वामी, रखुमाई का हृदयेश्वर।
चलो चलें पंढरपुर जहाँ है, घट-घट व्यापी परमेश्वर।
सुख-दुख भोग चढ़ाकर बाँटें, जन्म मरण चिन्ता चक्कर।
भक्त सैन कह रहे भक्ति की, बँधी रहे यह गाँठ अमर।

6.

विटेवरी उभा। जैसा लावण्याचा गाभा।
पायीं ठेउनियां माथा। अवघी वारली चिंता।
समाधान चित्ता। डोळा श्रीमुख पाहतां।
बहू जन्मी केला लाग। सेना देखे पांडुरंग।

सुन्दरता की अप्रतिम प्रतिमा, प्रगट खड़ी लेकर।
शक्ति भक्ति से शीश झुके, सबके प्रतिमा के पग पर।
चित से चिन्ता बिसराई तो, प्रेम का रूप चढ़ा मन पर।
भक्त सैन की प्यास बुझी, ज्ञान से विठ्ठल को पाकर।

7.

जेथें वेदा न कळे पार। पुराणासी अगोचर।
तो हा पंढरीराणा। बहु आवड़तो मना।
सहा शास्त्र शिणलीं। मन मौनचि राहिली।
सेना म्हणे मायबाप। उभा कटी ठेउनी हात।

जिसे वेद भी बता न पाये, जान न पाये जिसे पुराण।
पंढरी का वह पांडुरंग है, मन भावन मेरा भगवान।
थके शास्त्र गुण गाथा गाकर, मौन उपनिषद् हुआ महान्।
भक्त सैन कह रहे शारदा, थकी स्वयं गाकर प्रभु गुण गान।

8.

ब्रह्मादिक पड़ती पायां। जे शरण पंढरीराया।
मोक्ष मुक्ती लोटांगणीं। उभ्या तिष्ठती आंगणीं।
सूर्यसुत शरणागत। येउनी चरणीं लागत।
काया मनें वाचा। सेना शरण विठोबाचा।

ब्रह्मा जिसके शरण गये, वह पाप हरण मुक्ति दाता।
पावन पुण्य का दाता है, वह पांडुरंग जग का त्राता।
जग का आत्मा सूर्य स्वयं, शरणागत जिसको है जाता।
भक्तसैन कह रहे विठोबा, पिता मेरा, प्रिय है माता।

9.

मोक्ष आणि मुक्ति। हे तो तुम्हांसी आवड़ती।
एका नामावांचून कांही। नसे आवड़ी आम्हां पाही।
तुम्ही करावा जतन। तुमचा आहे ठेवा राखून।
सेना म्हणे देई भेटी। कृपावंता जगजेठी।

मोक्ष-मुक्ति की चाह तुझे है, मुझे प्रभु प्रियनाम स्मरण।
जग निर्माण काल का ज्ञात मेरा, फकत प्रिय काम स्मरण।
मेरा विठ्ठल उनका दाता, मेरा प्रिय घनश्याम स्मरण।
भक्त सैन कह रहे हमारा, सुखद सवेरा-शान स्मरण।

10.

शरण जाऊँ कोणासी। तुजविण ऋषीकेशी।
पाहतां नाहीं त्रिभुवनी। दुजा तुज ऐसा कोणी।
पाहिला शोधुनी। वेदशास्त्र पुराणीं।
सेना म्हणे पंढरीराया। शरण सांभाळी सखया।

प्रभु बिन शरण कहाँ मैं जाऊँ, कौन करे भवपार मुझे।
बिना तुम्हारे नहीं कोई, तिनके का आधार मुझे।
प्रभु तेरे बिन कौन जगत में, देगा ममता प्यार मुझे।
ज्ञान चक्षु के बिना ये जीवन, सारा अँधकार मुझे।

11.

देहूडे ठाण सुकुमार गोजिरें। कल्पद्रुमातळीं उभा देखिलारे।
मनीं वेध लागला त्या गोपाळाचा। जो जिवलग गोपगोपिकेचा।
जी सावळी सगुण घनानंद मूर्ति। पाहतां वेधली माझी चित्तवृत्ती।
जो उभाचि राहिला व्यापुनी सकळ। भेटिलागीं सेना व्हावी उतावळी।

कदम वृक्ष के तले खड़ा सुकुमार, सलोना श्यामल तन।
गोप-गोपियों का गोपाला, देवकी नन्दन मन मोहन।
सगुण रूप सत्-चित-आनन्द का, मेघ वर्ण सम श्यामल तन।
विश्व व्यापी प्रभु विश्वनाथ, चितचोर बसे हैं सैन के मन।

12.

धन्य महाराज पुंडलीक मुनी। वैकुंठीचा सखा आणिला भूतळालागोनी।
केला उपकार जग तारिलें सकळ। निरसली भ्रांति माउली स्नेहाळ।
आली चंद्रभागा गर्जना करीत। तुझिया भेटीलागी उतावीळ धांवत।
जोड़ोनिया पाणी सेना करी विनवणी। म्हणे धन्य पुंडलीका माथा ठेविला चरणीं।

पुंडलिक मुनी धन्य जिन्होंने, प्रभु को धरती पर पाया।
भोले भक्त की भक्ति से भी, भोग थाल का था खाया।
भक्तों का दासत्व स्वीकारा, नीर नदी से था लाया।
पुंडलिक वर दे 'सैन को' हरि जिस तरह अपनाया।

13.

उदार तुम्हीं संत। मायबाप कृपावंत।
केवढ़ा केला उपकार। काय वाणूं मी पामर।
जड़जीवा उद्धार केला। मार्ग सुपंथ दाविला।
सेना म्हणे उतराई। होतां न दिसे कांही।

उदार कितने मुनी-संत हैं, कृपावंत हैं जन जन पर।
पत्थर को भी मोम बनाते, प्यार से वास करे मन पर।
सुबुद्धि सत पथ सहज दे दिया, भटके जीवन को अपनाकर।
'सैन कहे' मैं शरणागत हूँ, योग्य संत जग में पाकर।

14.

तुम्ही संत दयानिधी। तारा सांभाळा दुर्बुद्धि।
तुम्हां आहे शरणागत। तरी तारावा पतित।
अधिकार नाहीं। न कळे भक्तिभाव कांही।
वागवा अभिमान। सेना आहे याती हीन।

दया निधी तुम साधु सज्जन, संत शिरोमणी मुक्तामाल।
दुरबुद्धि सत् बुद्धि में बदली, शरणागत हूँ दीनदया।
पतित पावन नाम तिहारो, बाल गुपाला हे नन्दलाल।
सैन की अखियाँ दरस की प्यासी, हे जगदीश्वर हे जगपाल।

15.

आजि सोनियाचा दिवस। दृष्टी देखिलें संतांस।
जीवा सुख झालें। माझें माहेर भेटलें।
अवघा निरसला शीण। देखता संतचरण।
आजि दिवाळी दसरा। सेना म्हणे आले घरा।

संत समागम स्वर्ण दिवस सम, सुखकर प्यारा पीहर धाम।
संत चरण बहु वंदनीय है, सेवा संत की हो निष्काम।
संतों के घर सदा दिवाली, बारह महिने वसंती शाम।
सैना के मुख नाम स्मरण हो, जिव्हा ना पाये आराम।

16.

म्हणविलों विठोबाचा दास। शरण जाईन संतांस।
सदा सुकाळ प्रेमाचा। नासे दुष्ट मळ बुद्धीचा।
ऐकतां हरीचें कीर्तन। अभक्त भक्ति लागे जाण।
उभा राहे कीर्तनांत। हर्षे डुले पंढरिनाथ।
सेना म्हणें हेंचि सुख। नाहीं ब्रह्मयासि देख।

संतों का हूँ दास भक्त मैं, पांडुरंग का कहलाया।
प्यार-भक्ति का संचित सागर, हृदयस्थल में है पाया।
हरि का कीर्तन सुखद श्रवण कर, अपने आपमें मैं खोया।
सैन कहे मैं जागृत सेवक, जाग या फिर क्या सोया।

17.

मायबाप कृपावंत। तुम्हीं दयाळू संत।
घातला भार तुमच्या माथा। आवड़े तें करा आतां।
चितुनि आलों पायांपाशी। न धरी वेगळें मशी।
सेना म्हणे पायीं मिठी। घातली न करा हिंपुटी।

कृपावंत है संत दास पर, तो पाया सुखमय संसार।
जन्म-मरण की हेराफेरी, दुख का सिर से उतरा भार।
चिन्ताओं की चिता जलाई, धूल हो गया अहंकार।
तप-तप कंचन कुंदन होकर, निखरा रूप में अलंकार।

18.

तेचि एक संत जाणा। आवड़ती नारायणा।
पांडुरंगावांचोनि कांहीं। न जाणे दुसरे पाही।
मुखीं नाम अमृतवाणी। धाले मनीं डुल्लती।
सेना म्हणे पायीं माथां। त्यांच्या ठेवियला आतां।

श्रेष्ठ संत वह जो करवाता, नर-नारायण से पहिचान।
सुधा सुरस हरिनाम बोल का, घोल पिलाता सुबह और शाम।
संत सैन कह रहे न लगता, हरि नाम में कोई दाम।
सेवक धर्म स्वीकारा हमने, सेवा हो लेकिन निष्काम।

19.

संतसंगतीने थोर लाभ झाला। मोह निरसला मायादिक।
घातले बाहेरा काम क्रोध वैरी। बैसला अंतरीं पांडुरंगा।
दुजियाचा वारा लागूं नेदी अंगा। ऐसें पांडुरंगा कळो आलें।
संतांनी सरता केला सेना न्हावी। ब्रह्मादिक पाही नातुड़े जो।

संत संगती और समागम, मानव मन शुद्धि का सार।
काम क्रोध मद लोभ शत्रुहित, संत दुधारी है तलवार।
दिव्य दृष्टि है संत दिखाते, ब्रह्म रूप जग को साकार।
सैना सेवक कहे संत-कुल का, मत समझो लघु विस्तार।

20.

उदार तुम्ही संत। मायबाप कृपावंत।
केवढ़ा केला उपकार। काय वाणूं मी पामर।
जड़ जीवा उद्धार केला। मार्ग दाखविला सुपंथ।
सेना म्हणे उतराई। होता कांहीं दिसेना।

संत वह सौरभ अद्वितीय है, मधुकर जिस पर मंडराते।
कृपावंत और उदार इतने, गंध सुरस देते जाते।
सुपथ बताते पार लगाते, भवसागर जो फँस जाते।
सैन सेवक कहे संत ही, प्रभु से परिचय करवाते।

21.

हित व्हावें मनासी। दवड़ा दंभ मानसीं।
अलभ्यलाभ येईल हातां। शरण जावें पंढरिनाथा।
चित्त शुद्ध करा। न देई दुजियासी थारा।
हेंचि शस्त्र निर्वाणीचें। सेना म्हणे धरा साचें।

प्रभु से परिचय होते ही सब, दंभ-मैल मन से निकला।
मन में जो दुरजन छुपा था वह, अपने पन से निकला।
भक्ति से चित्त की शुद्धि हुई, अज्ञान मलिन मन से निकला।
बरबस पावन जल बरस पड़ा, मैल काले धन से निकला।

22.

करिसी खटपटी। पोटासाठीं आटा आटी।
नाम घेतां विठोबाचें। काय तुझ्या वाचें वेंचे।
धनाचिया आशा। वाउगा फिरसी दाही दिशा।
जावें हरिकीर्तना। आवड़ेचि तुझ्या मना।
सेना म्हणे ऐसा नरा। जवळूंनि दूर करा।

जीवन का सारा स्वर्ण-समय, इस पेट के हित बेकार किया।
मैला कुचला काला धोला, लालच में व्यापार किया।
हरि कीर्तन हित अपने मन को, मनवाने नहीं तैयार किया।
तन ढोता बोझा मरा मनुज, नहीं जीवन का उद्धार किया।

23.

धन कोणा कामा आलें। पहा विचारुनि भले।
ऐसें सकळ जाणती। कळोनियां आंधळे होती।
स्त्रिया पुत्र बंधु पाही। त्याचा तुझा संबंधु नाहीं।
सखा पांडुरंगाविण। सेना म्हणे दुजा कोण।

जीवनभर दौड़ा धन जोड़ा और अंत समय सब यहाँ छोड़ा।
हरि नाम स्मरण भक्ति का धन, जोड़ा होता थोड़ा-थोड़ा
सतसंग से जिसने मुख मोड़ा, भक्ति बंधन धागा तोड़ा।
अपनी मुक्ति के लिए बता ले, गया साथ क्या यहाँ छोड़ा।

24.

रामें अहिल्या उद्धरिली। रामें गणिका तारिली।
म्हणा राम श्रीराम। भवसिंधु तारक राम।
रामें जटायु तारिलें। रामें वानरा उद्धरिलें।
ऐसा अयोध्येचा राजा। सेना म्हणे बाप माझा।

राम ने अहल्या उद्धारी, पापिनी ताड़का को मारी।
ले राम नाम सेवक वानर, जल गई स्वर्ण लंका सारी।
था भक्त जटायु उद्धारा, सुग्रीव राज पाया सारा।
प्रभु राम नाम पाषाण तिरे, श्रीराम स्मरण है मन हारी।

25.

मुखीं नाम नाहीं। त्याची संगती नको पाही।
ऐसियाचे मुखी माउली। वार घालितां विसरली।
जया नावड़े संतसंगती। अधम जाणावा निश्चिती।
नाम घेतां लाज वाटे। रंभे निर्लज्ज भेटें।
जातां हरिकीर्तना। नावड़े ज्याच्या मना।
सेना म्हणे त्यास। कुलासुद्धां नर्कवास।

मुख नाम न हो जिसके हरि का, वह योग्य नहीं साथी जन में।
वह धन्य है माँ जिसने शिशु के मुख, राम बसाया बचपन में।
संतों के संत समागम का जो, रसिक नहीं है प्रियजन में।
वह अधम और निर्लज्ज है जन, प्रभु को भूला अपनेपन में।

26.

स्वहित सांगावें भले। जैसें आपणासि कळे।
त्यांच्या पुण्या नाहीं पार। होय अगणित उपकार।
मोहपाशें बांधिला। होता तोहि मुक्त केला।
जेणें वाट दाखविली। सेना म्हणे कृपा केली।

जो स्वहित मेरा बतलाता है, प्रभु निकट मुझे ले जाता है।
जो पाप-पुण्य का भेद मेरे मन, मानस को बतलाता है।
उपकार वह अगणित करता है, सत् पथ का मार्ग दिखाता है।
था मोह पाश में बंधा हुआ, अब बंधन मुक्त कराता है।

27.

रामकृष्ण नामें। ऐसी उच्चारावीं प्रेमें।
तेणें काळ दुरी पळे। जाती दोष ते सकळे।
ऐसा नामाचा प्रताप। मागें निवारिला ताप।
मुखीं रामनाम उच्चारी। सेना म्हणे निरंतरी।

राम-कृष्ण के सुमिरन से भय, काल सदा टल जाता है।
है महाशक्ति सम नाम स्मरण, एक सदाचारी अपनाता है।
दुख शोक ताप पीड़ा सारी, भगवान भक्त ही हरता है।
कर रहे कथन श्री संत सैन प्रभु को, जो नियमित स्मरता है।

28.

मानिसी देहाचा भरंवसा। केला जाईल नकळे कैसा।
सार्थक कर हो कांहीं। जेणें हरी जोड़े पायां।
धनसम्पत्ति पाही। ही तो राहील ठायीं।
शरण रिघा पंढरिराया। सेना न्हावी लागे पायां।

है नहीं भरोसा इस तन का, यह रहे-रहे या नहीं रहे।
अस्थिर हाल भी है धन का, यह रहे-रहे या नहीं रहे।
सब नाशवंत सुख-चैन यहाँ, हरिनाम एक अविनाशी है।
प्रभु शरण तिहारे भक्त 'सैन', यह प्राण रहे या नहीं रहे।

29.

वाट धरितां पंढरीची। चिंता हारे संसाराची।
ऐसे कोठें नसे पायीं। धुंडितां ब्रह्मांड पाही।
पाहिलीं शोधूनीं। तीर्थे आणि देवस्थानी।
मोक्ष मुक्ती पाही। सेना म्हणे लागा पायीं।

त्याग के सब संसार की चिन्ता, पंढरी के पथ चलो सुजन।
मोह-मुक्ति का स्थान वही है, पिया मिलन की लगी लगन।
खोज लिया ब्रह्माण्ड-तीर्थ मन, रमा राम कहीं नहीं मिला।
'कहे सैन' पंढरीनाथ मेरा जीवन, धन है अनमोल रतन।

30.

येथें सुखाचिये राशी। पार नाहीं त्या भाग्यासी।
झालें आलिंगन। कांती निवाली दर्शनें।
उपकार उत्तीर्णता। सेना म्हणे नाही आतां।

जहाँ कमी नहीं सुख की कोई, नहीं भाग्य का पारावार जहाँ।
जहाँ आलिंगन ही पांडुरंग का, अहो भाग्य है एक महा।
जहाँ विश्वनाथ को पाकर के, क्यों चाह करूँ नश्वर सुख की।
जो पारस है पंढरपुर में, वह मुझे मिलेगा और कहाँ।

31.

करितां योगयाग। न भेटेची पांडुरंग।
एका भावावांचोनि कांही। देव जोड़े ऐसा नाहीं।
धूम्रपानादि साधन। करितां व्यर्थ होय शीण।
करितां साधनें शिणलीं। सेना म्हणे वायां गेली।

योग-भोग-सेवा पूजा से, किसे मिला है परमेश्वर।
भाव-भक्ति निष्काम श्रेष्ठ है, जग में पाने को ईश्वर।
धूप-दीप-नैवेद्य-पुष्प से, प्रभु को यदि पाया जाता।
सैन कहे दक्षिणा-दान से, किसे मिले हैं हरि और हर।

32.

बैसोनि कीर्तनांत। गोष्टी सांगतो निश्चित।
दुष्ट अधम तो खरा। येथुनियां दूर करा।
तमाखु ओढूनि सोड़ी धूर। दुष्टबुद्धि दुराचार।
पान खाय कीर्तनांत। रुधिर विटाळशीचें पीत।
त्याची संगती जयास। सेना म्हणे नर्कवास।

हरि कीर्तन में कथन कहानी, कहता है जो कीर्तनकार।
अनमोल समय जीवन का वह, अपना-सबका करता बेकार।
हरि कीर्तन में जो पान तमाखू, खाते और चबाते हैं।
वे श्रोता-कीर्तनकार स्वयं, खोलते जा रहे नर्क द्वार।

33.

नलगे योग तप। करणें साटोप आम्हांसी।
सोपें साधन आमुचें। नाम गाऊं विठोबाचें।
जो नातुड़े धूम्रपानी। राहे संपुष्टि येऊनि।
जया नाहीं रूप। आम्हां कीर्तनीं समीप।
सेना म्हणे लड़िवाळ। जाणो हरीसी निर्मळ।

जप तप योग कठिन राहे हैं, प्रभु का पाने अंतस्थल।
सस्ता-सुन्दर नाम स्मरण है, मुक्ति प्राप्ति का मार्ग सरल।
निर्मल तन से महा श्रेष्ठ है, निर्मल मन-सात्विक जीव।
सैन कहे मानस मन से, दूषित दूर हो अपना पन।

34.

म्हणा हरी हरी। अवघे सकळ नरनारी।
येणें तुटेल बंधन। भाग निवारिल शीण।
प्रेमें घ्यारे मुखी नाम। हरे सकळही श्रम।
सेना म्हणे चित्तीं धरा। बळकट रखुमाईच्या वरा।

हरि-हरि का नाम स्मरण कर, पार करो जीवन सागर।
जन्म मरण के फेरे काटो, नाम मधुर लेकर श्रीधर।
चित से किंचित भी न दूर हो, विठ्ठल-रखुमाई का रूप।
सैन कहे नर नारायण हो, नाम स्मरण मुख से लेकर।

35.

कशासाठीं करितां खटपट। तप तीर्थ व्रतें अचाट।
नलगे शोधावें गिरिकानन। भावें रिघा विठ्ठला शरण।
विभांडक शृंगी तपस्वी आगळा। क्षण न लागत रंभेनें नागविला।
जाणोनि सेना निवांत बैसला। केशवराजा शरण रिघाला।

जप तप तीर्थाटन से नर को, नहीं मिलेगा नारायण।
गिरी-गुफा कंदरा वनों में, भले नष्ट कर लो जीवन।
जब तक मन में काम-विषय के, जहरीले अहिफण होंगे।
सैन कहे रंभा-ऋषियों को, ले डूबा है पापी मन।

36.

सिद्ध ब्रह्मज्ञान बोलतां नोहे वाचें। शांतवन क्रोधाचें झालें नाहीं।
पाल्हाळ लटिका करणें तो काय। शरण पंढरीराया गेला नाहीं।
जंव नाहीं गेली अज्ञानाची भ्रांती। जंव नाहीं विरक्ती बाणली आंगी।
जीवाची तळमळ राहिली सकळ। मग ब्रह्मज्ञान कळे सेना म्हणे।

ब्रह्म-ज्ञान की चर्चा से, क्रोध शान्त नहीं हो जाता।
क्रोधाग्नि हरने ज्ञानी, शीतल मन जल अपनाता।
षड़रिपुओं को गले लगाना ही, तो कहलाता अज्ञान।
सैन कहे हैं श्रेष्ठ विरक्ति, ज्ञानी जश जग में पाता।

37.

घरासी आले संत देखोनिया। म्हणे यासी खावया कोठुनी घालूं।
ऐसा हा निर्धारीम दुष्ट दुराचारी। जन्मोनियां झाला भूमि भारी।
दासीचें आर्जव करोनि भोजन। घाली समाधान करी तीचें।
आणि आवड़ीनें करी तिची सेवा। म्हणे सुख जीवा फार माझ्या।
संतानी पाणे मागतां म्हणे काय। मोड़ले की पाय जाय आणि।
सेनां म्हणे कारे गाढ़वा नेणसी। कुंभपाक वस्तीसि केला आहे।

सत्य शील और संतों से, जो घृणा कर रहा जीवन भर।
वह अज्ञानी भूमि-भार है, यथार्थ में इस धरती पर
भूखे-प्यासे की आत्मा को, शान्त नहीं जो कर पाता।
सैन कहे वह नर्क लोक में, बना रहा है अपना घर।

38.

येऊनि गर्भासी मेलो उपवासी। नाहीं सखी ऐसी भेटली कोणी।
देह जाणे अनित्य करावें स्वहित। मोहापासुनि निश्चित सोड़वील।
न होय अनारिसा पाळी तोंडिच्या घासा। सोड़वी ना ऐसी परी देखो।
वाटलो मीपणें धनमान कांही। सेना म्हणे नाही लाभ अलाभ।

विषय वासना मोह-माया से, गर्भ प्राप्ति का दुख दारूण।
नर्क सहा नौ मास उदर में, प्रभु ने सुनी पुकार करुण।
विष्टा-मैल से पेट भरा, सुग्राह अन्न से दूर रहा।
जन्म प्राप्ति ले बाहर आया, नहीं चुकाया प्रभु का ऋण।

39.

तुज ऐसें वाटे देह व्यर्थ जावा। द्यूतकर्म खेळावा सारीपाट।
मग नाहीं नाम निजल्य जागा राम। जन्मोनि अधम दुःख पावे।
दासीगमनीं धीट विषयी लंपट। जावया वाट अधोगती।
नर्का जावयासी धरसील चाड़। तरी निंदा गोड़ वैष्णवांची।
सेना म्हणे नामाचें लावीं करि पिसें। जन्माल्या सायासें व्यर्थ जासी।

महा मानव सा जनम गँवाया, वैष्णव जन की निंदा कर।
स्वास्थ्य सुख पाने को कितने, किये धूर्त कारज सत्वर।
नश्वर देह के हित दुनिया में विषय-वासना में खोया।
सैन कहे रतनारा जीवन, खोया कुमार्ग पर जाकर।

40.

जे म्हणविती न्हावियाचे वंशी। तेणें पाळावें स्वधर्मासी।
येर अवघे बटकीचे। नव्हे न्हावियाचे वंशीचे।
शास्त्रें नेम नेमियला। सांडोनि अनाचार केला।
जन्मलों ज्या वंशांत। धंदा दोन प्रहर नेमस्त।
सत्य पाळारे स्वधर्मासी। सेना म्हणे आज्ञा ऐसी।

श्रेष्ठ ही सेवक-धर्म सैन हैं, जन का व्रत पालन।
घट-घट व्यापी विश्वंभर की, सेवा ही प्रभु का पूजन।
शास्त्र रूप ही शस्त्र हो पैने, प्रभु पाने को विकल नयन।
सेवा है परमार्थ मुक्ति पथ, संत सैन के श्रेष्ठ वचन।

41.

न्हावीयाचें वंशी। जन्म दिला ऋषीकेशी। प्रतिपाळावें धर्मासी। व्यवहारासी न सांडी।
ऐका स्वधर्मविचारी। धंदा करी दोन प्रहर। सांगितलें साचार। पुरणांतरीं ऐसें हैद्ध
करुनियां स्नान। मुखी जपे नारायण मागुती न जाण। शिवूं नये धोकटी।
ऐसे जे कां न मानिती। ते जातील नरकाप्रती। सकळ पूर्वज बुड़विती। शास्त्रसंती ऐसी हे।
शिरी पाळावें आज्ञेसी। शरण जावें विठोबासी। सेना म्हणे त्यासी। ऋषीकेशी सांभाळी।

सैन वंश में जन्म लिया, क्षौर कर्म है इस कुल-हित।
हेय नहीं यह कर्म सुजन हित, वर्णाश्रम के अनुकूल रीत।

दो प्रहर तक धंधा करना, बाद स्नान कर हो पावन।
मोक्ष प्राप्ति हित नाम स्मरण कर, यही शास्त्र के श्रेष्ठ वचन।

42.

करितों विनवणी। हात जोड़ोनियां दोन्ही।
हेंचि द्यावे मज दान। करा हरीचें चिंतन।
जातो सांगूनियां मात। पांडुरंग बोलावित।
सोड़ा द्वादशी पारणें। सुखें करावें कीर्तन।
दिवस मध्यान्हीं आला। सेना वैकुंठासी गेला।

नम्र विनय यह निज कुल के, हित संत सैन अमर वचन।
यही दान चाहूँ निज कुल से, करो अहर्निश हरि चिन्तन।
हेय नहीं यह वंश-कर्म, सेवा भी है भक्ति स्वरूप।
सेना नाई मोक्ष पा गये, पांडुरंग ले नाम स्मरण।

43.

आलिंगन भेटी। मग चरणीं घाली मिठी।
ऐसा माझा भोळा भाव। पंढरिराव जाणता।
घेतलें हिरोनी। सीणभाग चक्रपाणी।
सेना म्हणे मायबापें। द्यावें भातें है आतां।

आलिंगन कर पैर पखारूँ, भक्ति भाव से नित्य स्मरूँ।
मेरा प्रभु अन्तर्यामी है, फिर मुख से क्या माँग करूँ।
दाता भी वह त्राता भी वह, जीवन का वही खेवन हार।
सैन कहे विठ्ठल को अर्पित, है मेरा सारा संसार।

44.

नाहीं सुख त्रिभुवनीं। म्हणुनि मनी धरिलें।
पायीं ठेवियला भाळ। कंठी माळ नामाची।
पावली विश्रांती। सेना म्हणे कमळापती।

त्रिभुवन में सुख नहीं मिला, तो आया पास त्रिलोकीनाथ।
सबने छोड़ा भँवर में, दीनादयालु थामों हाथ।

नाम स्मरण की कंठी गले में, धारण की है जगदीश्वर।
सैन कहे प्रभु शरणागत हूँ, तारो या मारो प्रभुवर।

45.

ऐसी आवड़ी आहे जीवा। कैं पाहीन केशवा।
माझी पुरवा वासना। सिद्धी न्यावी नारायणा।
नलगे वित्त धन। मुखीं नाम नारायण।
सेना म्हणें कमळापती। हेंचि द्यावें पुढ़ती-पुढती।

विठ्ठल चरणों में अर्पण है, जीवन और सारा संसार।
चित विचलित नहीं हो पाये, अब करो प्रभु मेरा उद्धार।
सासों के ही साथ चले, जीवन भर प्रभु का नाम स्मरण।
सैन कहे सुन लो कमलापति, आपके सिर पर भक्त का भार।

46.

संती सांगितलें। तेंचि तुम्हां निवेदिलें।
मी तों सांगतसें निकें। येतील रागें येवों सुखें।
निरोप सांगतां। कासया वागवावी चिंता।
सेना आहे शरणागत। विठोबा रायाचा दूत।

जो संतों ने कहा, किया वह मैंने चरणों में आकर।
पाया है संज्ञान, जगत की चोटें और ठोकर खाकर।
भक्ति बंधन प्रभु के पग में, बाँधा संत की सेवा ने।
सैन कहे प्रभु तुम्हें किया वश, संत को स्नेह की शक्ति ने।

47.

करा हाचि विचार। तरा भवसिंधु पार।
धरा संतांची संगती। मुखीं नाम अहोराती।
अजामीळ पापराशी। पार पावविलें त्यासी।
नका धुरें भरुं डोळा। सेना सांगे वेळोवेळां।

भव सिंधु पार करने अपना, सत्संग करो संतों का जन।
सत्संग श्रेष्ठ गंगा जलसा, जो करता है तन-मन पावन।

वह क्रूर अजामिल भी मुख से, हरि नाम स्मरण कर पाप हरा।
यह सैन वचन कर रखो जतन, प्रभु नाम करे सार्थक जीवन।

48.

करितां परोपकार। त्याच्या पुण्या नाहीं पार।
करितां परपीड़ा। त्याच्या पापा नाही जोड़ा।
आपूलें परावें समान। दूजा चरफड़े देखून।
आवड़े जगा जें कांही। तैसें पाहीं करावें।
उघड़ा घात आणि हित। सेना म्हणे आहे निश्चित।

परोपकार सा पुण्य नहीं है, परोपकारी जन हैं महान।
परोपकारी सजन जन में, महा श्रेष्ठ है संत सुजान।
दीन-दुखी जन देख के जिस, मन में व्यथा उपजती है।
सैन कहे वह नर नारायण, धर्मात्मा पाता सम्मान।

49.

शरणागत आहे वैभवाचा धनी। सत्य भावें मानी अर्पिले तें।
आपणा वेगळें नेदी उरो कांही। भावेंचि दावी आपणामाजी।
दशा आपली अंगा नेणें जाणे कांही। आपणाचि होय इच्छा त्याची।
धाकुट्यासी माता करी स्तनपान। सेना म्हणे जिणें बरें हेंचि।

वैभवता का वह अधिकारी, शील नम्रता हो जिसमें।
शरणागत गुण श्रेष्ठ सुजन का, घृणता पाता हो जिसमें।
लघुता में होती है प्रभुता, गर्व न मन में आ पाता।
सैन कहे स्तनपान वह करता, शिशुरूपता हो जिसमें।

50.

अंतरीचें पुरें काम। घेतां नाम विठोबाचे।
नाम साराचेंही सार। शरणागत यमकिंकर।
पाहिले वेदान्त। निश्चय केला निगमांत।
सेना म्हणे न वेचा कांही। लाभ नाहीं या ऐसा।

वेद और वेदान्त बताते, महा श्रेष्ठ है नाम स्मरण।
महामंत्र का जप और तप, नाम स्मरण का प्रथम चरण।

नाम स्मरण से महाकाल, यम-क्लेश दूर हो जाते हैं।
सैन कहे हरिनाम काल का, श्रेष्ठ विजेता है जीवन।

51.

करितां योगयाग। सिद्धी न पवेचि सांग।
देव एक भावाविण। नाही व्यर्थ शीण।
केल्या तपाचिया राशी। तरि न मिळेची त्यासी।
करितां धूम्रपान। न भेटे नारायण।
सेना म्हणे नको कांही। एका वीण दुजे नहीं।

योग याग और मंत्र-तंत्र से, नहीं मिलेंगे नारायण।
केवल श्रद्धाभाव के भूखे, नित रहते हैं श्री भगवन।
यज्ञ-कर्म-वेदान्त-पठन, यह ज्ञान-पुण्य के हैं साधन।
सैन कहे सद्भाव बिना नहीं, होते हैं प्रभु के दर्शन।

52.

घेतां नाम विठोबाचें। पर्वत जळती पापांचे।
ऐसा नामाचा महिमा। वेद शिणला झाली सीमा।
नामें तारिलें अपार। महा पापी दुराचार।
वाल्हा कोळी ब्रह्महत्यारी। नामें तारिला निर्धारीं।
सेना बैसला निवांत। विठ्ठल नाम उच्चारीत।

नाम स्मरण पंढरी का पावन, अगणित पाप का नाशक नाम।
वेद और वेदान्त थक गये, पांडुरंग के गा स्तुति गान।
वाल्या कोकी ब्रह्म पातकी, नाम स्मरण से तिरे कई।
सैन कहे हरिनाम न बिसारो भले बिसारो चारों धाम।

53.

नामाचें चिंतन श्रेष्ठ पैं साधन। जातील जळोनि महापापें।
न लगे धूम्रपान पंचाग्निसाधन। करितां चिंतन हरी भेटे।
बैसुनि निवांत करा एकचित्त। आवडी गायें गीत विठोबाचें।
सकळाहुनि सोपें हेंची पैं साधन। सेना म्हणे आण विठोबाची।

महाश्रेष्ठ है चिन्तन साधन, नाम स्मरण की महिमा अपार।
महा पातक भी जल जाते हैं, पावन सुखमय होय विचार।
एक चित्त से भजन व चिन्तन, करले सुमिरन आत्माराम।
सैन कहे सत् नाम सरल है, हरिगुण जीवन का आधार।

54.

काही न करी रे मना। चिंती या चरणा विठोबाच्या।
ठाव नाहीं कल्पनेसी। राशी सुखाची अमूप।
पाहिलें श्रीमुख। नासे दुःख महाताप।
होईल विसावा। सेना म्हणे सुख जिवा।

चित्त में चेतन हरी बसाओ, तजो-तजो सब नीच विचार।
ज्ञान की ज्योति जला बिसराओ, मन से माया का अंधार।
महाश्रेष्ठ है सुख-धन श्री मुख, विठल रखुमाई का नाम।
सैन कहे दुख महा तापका, निरसन करता भक्ति विचार।

55.

सुखें घालीं जन्मासी। हेंचि बरें कीं मानसीं।
वारी करीन पंढरीची। जोड़ी ही माझी साची।
हरिदासाची करीन सेवा। तेणें सुख थोर जीवा।
सेना म्हणे सर्व संग। केला त्याग यासाठीं।

सुखद जन्म का सार एक है, पांडुरंग का नाम श्रवण।
श्रेष्ठ प्राप्ति जीवन की पालो, हरी-सा पास में रखो जतन।
हरी सेवक की सेवा निशिदिन नित्य कर्म पूजा अर्चन।
सैन कहे नित संत समागम, सार्थक है मानव जीवन।

56.

आम्हां हेंचि अळंकार। कंठीं हार तुळशीचें।
नाम घेऊं विठोबाचें। म्हणवूं डिगर तयाचें।
चित्तीं चाड़ नाहीं। न धरु आणिकाची कांहीं।
सकळ सुख त्याचे पायी। मिळे बैसलिया ठायीं।
सेना म्हणे याविण कांही। मोक्ष युक्ति चाड नाहीं।

तुलसी माला गले मंजरी, प्रभुपद रज कण शीश पे धार।
वसा हृदय जो नाथ पंढुरी, वह रतन धन अलंकार।
सुख जीवन का मुक्तिदाता, आत्म समर्पण प्रभुचरण।
सैन कहे हर श्वास नाम हरि, हो जीवन में यह व्यापार।

57.

आम्ही विष्णूचे दास। न मानूं आणिक देवास।
स्तुति आणिकांची करिता॥ ब्रह्महत्या पड़े माथा।
तुजविण देव म्हणतां। अवघी पापें पड़ो माथा।
नय करी पूजा आणि सेवन। सेंना म्हणे तुझी आण।

हम विष्णु के दास, हमारा नाथ एक है पंढरीनाथ।
बिना नाथ के सैन ये बालक, हो जायेगा जग में अनाथ।
चरण हरि के रम्य स्थान है, कल्प वृक्ष के सुन्दर वन।
जन्म-मरण तक रहे शीश पर सैन कहे यशदायी हाथ।

58.

प्रेमसुखें कीर्तन। आनंदें गाऊं हरीचे गुण।
धरिला वैष्णवांचा संग। नाहीं लाग कळीकाळा।
स्वल्प मंत्र हाचि जाण। राम कृष्ण नारायण।
वाचे न उच्चारी कांही। याविण आणिक नाहीं।
सेना म्हणे रंगलें ठायीं। माझें चित्त तुझें पायीं।

हरि भजन का रंग अनोखा, हो कीर्तन के संग।
वैष्णव जन सब वृंद साथ, हो नाद करे मृदंग।
मधुर भजन से मुग्ध हो श्रोता, चढ़े भक्ति का रंग।
सैन कहे अब पांडुरंग बिन, लगे जगत भदरंग।

59.

सांडोनि किर्तन। न करी आणिक साधन।
पुरवा आवड़ीचें आर्त। तुम्हां आलों शरणागत।
मुखी नाम वाहीन टाळी। नाचेन निर्लज्ज राउळी।
सेना म्हणे नुपेक्षावें हेंचि मागें जीवें भावें।

राम कृष्ण गोविन्द हरि, जयघोष करो कीर्तन में।
लाज की मर्यादा को लांघों, मस्त हो अपने पन में।
नशा भक्ति भगवान भजन का, चढ़े भक्त के लोचन में।
सैन कहे जय घोष सुनाई, देवे धरा गगन में।

60.

चित्ती पाय रुप डोळां। मुखी नाम वेळोवेळा।
हेंचि मागे तुजपाशी। भाव खरा की जाणसी।
हें उचित तुमचें। कोड प्रवा बालकाचें।
नको देऊं अंतर। सेना लोखे पायांवर।

चित्त–चिन्तन में बसे मधुकर, मुख में बसे मुरारी।
शरण हितारे प्रभु मैं आया, ले मन आशा सारी।
अन्तर्यामी भाव भक्त के, तू जाने है सारे।
सैन कहे शरणागत हूँ प्रभु, राधा–कुंज बिहारी।

61.

चित्त नाही हातीं। करुं जाता हरिभक्ति।
मज इतुली वासना। भेटी द्यावी नारायणा।
कोण जाणे दानधर्म। नव्हे स्वतंत्र कैचें कर्म।
सेना म्हणे सांगें मात। जेणें माझें होय हित।

हरि भक्ति में रमा रहे मन, खोये चित्त चिन्तन में।
चाह यही मेरी है प्रभुवर, बसा रहे तू मन में।
दान धर्म से दूर रहा मैं, तन तुझ पर है अर्पण।
सैन कहे सतसंगी मेरा तू, मैं तेरा हूँ दर्पण।

62.

संताचे पाय मस्तकीं। सरता झालों तिहीं लोकी।
लोळेन चरणावरी। इच्छा फिटेल तोंवरी।
नाहीं सेवा केली। मूर्ती डोळां म्यां देखिली।
कृतकृत्य झाला सेना न्हावी। ठेविली पायांवरी डोई।

तीन लोक त्रिभुवन को पाया, संतों की सोहबत से।
सैन कृतार्थ हुआ जीवन में, गुरू के मधुरामृत से।
शरण तिहारे आया हूँ मैं, प्रभु विठ्ठल नट नागर।
प्रभु चरणों में शीश रहे नित, केवल यह देना वर।

63.

कळेल तैंसे गाईन तुज। नाहीं जनासवें काज।
स्तुती करीन आवड़ी। जैसी जीवा वाटे गोड़ी।
नाम गाईन आनंदें। नाचेन आपुलाले छंदें।
सेना म्हणे नाहीं। जनासवें काज कांही।

मनमौजी सम जी भरके, मैं गाऊँगा मैं नाचूँगा।
प्रभु चरणों पर आज मस्त हो, सोऊँगा मैं लोटूँगा।
रूप अलौकिक मूर्तरूप में, देखा आज नयन से।
सैन कहे मैं सुध-बुध भूला, मिला आज प्रियतम से।

64.

अन्यायी अन्यायी। किती म्हणोन सांगो काई।
तूं तो उदाराचा राणा। क्षमा करी नारायणा।
काम क्रोध लोभ मोहो। नाड़िलों याचेनि पहाहो।
नावडे संतसंगती। नाहीं केली हरिभक्ती।
निंदा केली भाविकांची। चित्तीं आस धनाची।
सेना पायांचा पुतळा। तुज शरण जी दयाळा।

काम क्रोध मद लोभ शत्रु को, भक्ति शस्त्र से मारा।
जब निंदाकर कहा जगत ने, मैं तो हूँ हत्यारा।
संत संगति जिसे न भाती, वह दानव-दुर्जन है।
सैन कहे वह संत दयालु, जिसका कोमल मन है।

65.

कटी ठेऊनियां कर। रूप पाहिलें मनोहर।
तेणें समाधान चित्ता। पायीं ठेवियेला माथा।

वाहो टाळी गातो गीत। सुखें नाचे राउळांत।
सेना म्हणे नामा पुढें। तुच्छ सकळ बापुड़ें।

कटी पर रखकर खड़ा पंढरी, विश्वरूप देखा मनहर।
समाधान चित हुआ चरण पर, शीश रखा अपना सत्वर।
अभिवादन के गीत को गाये, करतल के सुस्वर ध्वनी पर।
मन मयूर नाचा मस्ती से, मेघ श्याम तन को पाकर।

66.

तूं जीवीचें जाणसी। मुखें बोलावें मानसीं।
आतां भाकितों करुणा। नको मोकलूं नारायणा।
आपुले केलें न चले कांहीं। साधन वाउगें पाहीं।
सेना म्हणे आशा कांही। नाहीं देहाची पाहीं।

अन्तर्यामी तू है, मेरे मन की व्यथा-कथा जानें।
दिव्य दृष्टि के ज्ञाता, लोचन बंद किये ही पहिचाने।
करुणा के आगार, भक्त की करुणा को तूने जाना।
सैन कहे श्रीनाथ, पंढरी ने सत्सेवक पहिचाना।

67.

बुड़तो भवसागरी। मज काढीं बा म्रारी।
आतां न मानी भार कांही। माझी पाही माऊली।
करी जतन ब्रीदावळी। वागविशी ते सांभाळी।
मी महादोषी चांडाळ। सेना म्हणे तूं दयाळ।

भव सागर में मेरी नैय्या का, तू ही है खेवनहार।
प्रभु किनारे बैठा है तू, भक्त डुबता है मझधार।
मैं मानव चांडाल, वासना का पुतला हूँ भू पर भार।
सैन कहे तू पतित-पावन है, मेरा करदे उद्धार।

68.

आतां ऐसे करीगा देवा। तुझी घड़ो पाय सेवा।
मनामाजी दुर्बुद्धी। न यावी माउलिये कधीं।

चित्तीं भाव जो धरिला। सिद्धी न्यावाजी विठ्ठला।
सेना म्हणे याविण कांही। लाभ दुसरा नाहीं।

तीन लोक के व्यापी, तेरा तीन लोक में है विस्तार।
तेरे चरणों में तिनके भर, नहीं दे रहा क्यों आधार।
मेरे मन में वास तिहारा, दुर्बुद्धि को त्वरित बुहार।
सैन कहे रखुमाई पंढरी, आ सम्हाल अपना संसार।

69.

वाचे म्हणतां निवृत्ति। अवघी निरसली भ्रांती।
हें तो माझ्या अनुभवा। प्रत्यया आलें जीवा।
गुंतलों होतो मोह आशा। स्मरतां पावलों नाशा।
ऐसा अनुभव नामाचा। सेना न्हावी स्मरे वाचा।

तजूँ गृहस्थी क्यों मैं अपनी सम्पूर्ण विश्व तेरा परिवार।
तनिक गृहस्थी मेरा छोटा घर, निवास स्थल तेरा संसार।
मेरे घर का तू रखवारा, कौन तेरा रखवारा है।
मेरा तो तू प्रभु सहारा, तेरा कौन सहारा है।

70.

अगा पंढरीनाथा। शरण आलों कृपावंता।
याचा धरी अभिमान। सत्य करवें वचन।
गीता भागवतीं। स्वयें बोले रमापती।
म्हणती दीनानाथ। हेंचि सांभाळी की व्रत।
मोकलिता दुरी। सेना न ठेविची उरी।

शरण तिहारे हूँ मैं प्रभुवर, नाथ पंढरी ओ भगवन।
गीता में जो कथन किया है, सत्य करो वह स्वयं वचन।
कर्म योग को श्रेष्ठ बताया, दिया भक्ति को अनुपम स्थान।
स्वधर्म पालन श्रेष्ठ बताया, सैन धर्म को क्यों लघु स्थान।

71.

उतरलों पार। संसारसिंधू हा दुस्तर।
कृपा केली पांडुरंगें। सर्व निवाली आंगे।

सुख संतोषा पडे मिठी। आवड़ी पोटीं होती तें।
उपाधी वेगळा। सेना राहिला निराळा।

संसार महा सिन्धु दुस्तर, भव पार किया मैंने प्रभुवर।
संतोष हुआ मुझको मेरे, निष्काम कर्म और सेवा पर।
जो माँग वह पाया मैंने, बिन माँगे सब कुछ दे डाला।
यह सैन कहे आश्चर्य महा, हो गई सुधा निंदक हाला।

72.

माझा केला अंगीकार। काय जाणे मी पामर।
देव दीनाचा दयाळ। शरणागता पाळी लळा।
प्रल्हाद कारण। प्रगटला नारायण।
मीराबाईसाठीं। केवढ़ी केली आटाआटी
शरण रिघा पंढरीराया। सेना न्हावी लागे पाया।

कर अंगीकार इस पामर को, दे दिया हृदय में श्रेष्ठ स्थान।
लोहे को पारस छूते ही, वह लोह हो गया मूल्यवान।
प्रह्लाद के रक्षक नारायण, मीरा का मतवाला मोहन।
सैना नाई का धन्य किया है, हे पांडुरंग तुमने जीवन।

73.

हाचि माझा शकुन। हृदयीं देवाचे चिंतन।
होईल तैंसे हो आतां। काय वाहूं याची चिंता।
पडियेली गांठी। याचा धाक वाहे पोटी।
सेना म्हणे हीनपणें। देवा काय माझें जिणें।

शुभ शकुन बसा है मेरे मन, है हृदय नित्य हरि का चिन्तन।
कुछ सुखद कर्म होगा निश्चित, यह बता रहा है भाविक मन।
भक्त की प्रभु से गाँठ बंधी, हो गया प्रभु जीवन साथी।
कह रे सैन जन-जन मन को, प्रभु करे पतित चाहे पावन।

74.

लेकुराची आळी मायबापा पुढें। पुरवी लाड़े कोड़े लळे त्याचें।
करावा सांभाळ सर्वस्वी गा आतां। कांहो अव्हेरितां जवळीचा।

आम्हांवरी चाले सत्ता आणिकांची। थोरी व तुमची काय मग।
आला सेना न्हावी पायांपें जवळी। आतां टाळाटाळी नकां करुं।

अति आर्त रुदन शिशु का सुनकर, बह निकला स्तन से क्षीर सागर।
ममतावश माँ दौड़ी आई, मुखपान कराया जी भरकर।
हो गया तृप्त शिशु दूर किया, कैसी माया-ममता माँ की।
काल के दाढ़ दे भक्त सैन, क्या यही प्रभु सेवा आँकी।

75.

योगियाचा राजा कैलासवासी गे माये। गाती नारद तुंबर पुढ़ें बसवा आहे।
गळां रुंडमाळा वासुकीचें भूषण। गजचर्म पांघुरला। अंगी भस्माचें लेपन।
वास अंगी गिरिजा देवी जटा गंगा वाहे। भोंवतें गण गंधर्व जोड़ोनि पाणि उभे राहे।
सेना म्हणे जेणें भाळी चंद्र धरियेला। नमस्कार माझा तया आदि नाथाला।

योगीराज कैलाशपति, सिर जटाजूट भोला शंकर।
देवी पार्वती वामांगी, नारद सन्मुख ले तुंवर।
भस्म लेप गज-चर्म स्वतन पर, सी है गंगा सिर पर।
सैन कहे महा मृत्युंजय हूँ, शरण तिहारी है शंकर।

76.

शिणसो भरोवरी। वांया कासया येरझारी।
वेद मंथोनियां। नाम काढिलें लवलाह्या।
आणिक साधन। नाहीं नाहीं नामाविण।
सेना म्हणे केला नेम। वस्ती राहे पुरुषोत्तम।

कर लिये वेद सारे मंथन, नवनीत सार निकला श्रीधन।
हरिनाम बिना नहीं श्रेष्ठ सरल, महामंत्र तंत्र कोई पावन।
हरिनाम अहिर्निश मानव मन, मुख वास करे नित आठ पहर।
श्री सैन कहे ऐसा केवल, हरिनाम जाप सस्ता साधन।

77.

तरी का माझा केला अंगिकार। आतां विचार करिसी वायां।
तुज मी ठाऊक होतों अन्याई। हा खरा तेव्हा कां विचार केला नहीं।
आमुचें तें आम्ही केलेंस जतन। अंतर तुम्हांकूण न पडावा।

समर्थाचें असे वचन प्रमाण। शरणागत जाण जतन जीवी।
तुझा म्हणविलों सांभाळी जी आतां। न घे अपेश माथा सेना म्हणे।

मैं भला बुरा हूँ-हूँ तेरा, या खोटा-खरा तिहारा हूँ।
तू पालक है मैं बालक हूँ, मधुमाल मधुर या खारा हूँ।
हरि ते तो बहु बड़ा दाता, है कमी नहीं तेरे घर में।
मैं याचक हूँ तू दाता है, मैं तेरे आँख का तारा हूँ।

78.

अन्यायी अपराधी लड़िवाळ संतांचा। तेथें कळिकाळाचा रीघ नाहीं।
समर्थाचे बाळ समर्थचि जाणें। वागवी अभिमान म्हणतां त्याचें।
अन्यायाच्या राशी उदंड केल्या जरी। तरी क्षमा करी मायबापा।
कल्पतरु छाया बैसला सेना न्हावी। दया ते वागवी बहु पोटी।

अन्यायी हूँ अपराधी हूँ, मैं कली काल पापी दुर्जन।
तू समरथ है मैं शक्तिहीन, दुर्बलतम मेरा है तन मन
मैं जो भी हूँ जैसा भी हूँ, तेरा हूँ तेरे ही कारन।
तू अगर जन्म नहीं देता तो, मैं क्यों पाता बचपन-यौवन।

79.

ठेविला पाय माथा संतजनी। तिन्हीं लोकी जाण सरता केला।
घालीन लोटांगण वंदीन पाय माथा। पुरेल माझी इच्छा धणीवरी।
सेना म्हणे धन्य-धन्य झालों देवा। न करितां सेवा भेटी दिली।

मैं खड़ा हूँ तेरी चौखट पर, चुपचाप बुला मुझको अन्दर।
तू विश्वरूप विश्वेश्वर है, तू अन्तर्यामी है ईश्वर।
मेरे बिना कहे तू समझ मुझे, मैंने तुझको पहिचान लिया।
तू छुईमुई-सा है बहार, तेरा निवास मेरा अन्तर।

80.

ऐकिलें मागें तारिले बहुता। धांवसी की आतां नाम घेतां।
बरव्यापरी मज ऐसे कळों आलें। म्हणउनी विठ्ठलें करी धावा।
पड़िला विसरु माझा तुजलागी। आतां पांडुरंगी करणें काय।
तुजलागि माझी नयेचि करुणा। धरिलें की जाण दुरीं मज।
सेना म्हणे आतां सांभाळी नारायणा। जाऊं पाहे प्राण तुजसाठीं।

कितने ही तेरे नाम तिरे, कितनों ने मुझसे मुँह फेरे।
कई देर सवेरे जागे हैं, तेरे दर पर डाले डेरे।
हे दयानिधे प्रभु करुणाकर, सैन को सहारा दे आकर।
बिरहा के छाये जो बादल, वे तोड़ घेरने अंधियारे।

81.

पुत्राचिया ओढ़ी बाप करी जोड़ी। वाळवुनि कुरवंडी आपणा करी।
मिरासीचा धनी करुनी ठेविला। भार तो वाहिला कड़िये खांदी।
घाली अलंकार कौतुक डोळा पाहे। ठेवा दावी काय आहे तोचि।
दुजियांनी कोणी गांजितां तयासी। उदार जीवासी सेना म्हणे।

पिता-पुत्र सा मिलन प्रभु, तेरा मेरा भी हो जाये।
तू नाथ अनाथों का है तेरा, पुत्र अनाथ न हो पाये।
पालक से बालक की पीड़ा, क्या कोई देखी जायेगी।
यह बात पते की है लेकिन, कैसे समझायी जायेगी।

82.

आम्हां एकविध भाविकांची जाती। न जाणे निश्चिती दुजें कांही।
खूण जाणे चित्ती क्षोभ उपजेना। कळवळुनि स्तना लावी पाळी।
अवघे होऊं येतें तुज वाटे चित्तें। उपासने परतें नावड़े कांही।
डोळा मुख पाहूं मुखी नाम गाऊं। सेना म्हण पाहूं जळीस्थळीं।

भावुक संतों की जात एक, सारे संतों की राह एक।
कैसा भी हो जग में रोगी, सारे रोगी की आह एक।
स्तन-पान कराती माँए शिशु को, माताओं का दुग्ध एक
वात्सल्य एक सब माता का, पीड़ा-प्रसव सब माँ की एक।

83.

असतां वैकुंठासी। काय सांगे ऋषीकेशी।
जाऊनि मृत्युलोकाशी। जन भक्तिसी लावी कां।
आज्ञा वंदुनीया शिरी। जन्मलो न्हावीयाचे उदरीं।
वाचे नाम निरंतरी। रामकृष्ण गोविंद।

कलियुगामाजी जाण। सोपें हेंचि साधन।
रामकृष्ण नारायण। ऐसें पुरुषोत्तम सांगत।
सेना म्हणे देवाधिदेवा। आम्हीं करावी तुझी सेवा।
हेंचि मागतों केशवा। नित्य रहावें मजपाशीं।

सैन सकून में जन्म दिया, प्रभु इसमें दोष नहीं मेरा।
श्रेष्ठ-कनिष्ठ सुकुल हो लेकिन, नाम स्मरण प्रभु है तेरा।
भक्त ने भक्त में भेद किया, प्रभु ने नहीं भक्तों में भेद किया।
जिसकी जैसी श्रद्धा-भक्ति, वैसा ही उसको स्थान दिया।

8.

स्वभावें गाईन। आवड़ीनें तुझें नाम।
हाचि माझा निर्धार। न करी आणिक विचार।
लोळेन तुझिये आंगणीं। निर्लज्ज होउनि मनीं।
रंगी नाचेन मना ऐसें। पाहिन श्रीमुख सरिसें।
सेना म्हणे संकल्प जीवा। हाचि निर्धार हेवा।

सुमुख सुधा वाणी दी प्रभु ने, कर उपयोग करूँ कीर्तन।
हरि कीर्तन में रम जाऊँ मैं, जन-मन स्वयं करूँ पावन।
दीन-हीन मैं निर्धन सेना मैं, तेरा तू प्रभु अमिट है धन।
जिव्हा वाचा मनसा से मैं, हुआ हरि को हूँ अर्पण।

85.

मान करावा खंडण। दुर्जनाचा सुखें करुन।
लाथा हाणुनि घाला दुरी। निंदकासी झड़करी।
त्याचा जाणावा विटाळ। लोकां पिड़ीतो चांडाळ।
त्याची संगती जयास। म्हणे नर्कवास।

दुर्जन को वंदन करके ही, सज्जन सम्मानित करना।
भरी सभा में अपने को, दुर्जन से अपमानित करना।
दुर्जन को सज्जन करने की, है कला श्रेष्ठ एक वाणी मधुर।
दूर से निहारो दुर्जन को, सदा रखो अपने से दूर।

86.

हंबरोनि येती। वत्सा धेनु पान्हा देती।
तुम्ही करावा सांभाळ। माझा अवघा सकळ।
विसरली भूकतान। तुमचें देखिल्या चरण।
सेना म्हणे प्रेम भातुकें। द्यावें आतां हें कौतुकें।

गाय का बछड़ा देख के जैसे, मिलने को व्याकुल होता।
वही स्थिति है भक्त की प्रभुवर, स्तन से सुधार रस चाहता।
लगन लगी प्रभु से मिलने की, भूख-प्यास को भुला दिया।
सैन कहे पी हरि मुखामृत, क्षुधा-तृषा को तृप्त किया।

87.

तुम्ही करा कृपादान। येइन धाऊन पायापें।
घेईन संतांची भेटी। सांगेन सूखाचिये गोष्ठी।
जैसे माते पाशी बाळ। सांगे जीवीचें सकळ।
सेना म्हणे हरे ताप। मायबाप देखुनी।

कृपादान देना प्रभु सैन को, संतों से ही नित सत्संग।
पांडुरंग के कीर्तन में नित, रंग रंगीला हो मनरंग।
जैसे बालक माँ से कहता हो, कहानी अपने अनुभव।
सैन कहे वैसे ही हरि तू, कीर्तन सुन हो जाना दंग।

88.

आजि फळा आलें पुण्य। गेलें भेदोनि गगन।
संत झालेति कृपाळ। माझा केलाजी सांभाळ।
संचित वोळलें। तुमचीं देखिलीं पाउलें।
सेना म्हणे नेणे। कृपा केली नारायणें।

आज सफल हो गई प्रभु, भक्ति मेरी सेवा सारी।
गई हीनता मन से सारी, दूर हो गई लाचारी।
भक्ति का सत् बीज था बोया, हुआ अंकुरित सैन के मन।
सैन कहे मैं धन्य हो गया, मुझे मिल गये नारायण।

89.

उच्चारीत कोडें। नाम आबद्ध वांकुडें।
मना आवड़े त्यावेळी। भलत्या काळीं उच्चारी।
कैसें नाम ठेवूं आतां। कोठें न मिळे पाहतां।
सेना म्हणे आनन्दे धालो। सुख लाधलों। परिपूर्ण।

मरा मरा रट नाम वाल्मिकी, उलटा जपकर हुआ महान।
श्रद्धा से जो लिखा नाम, वे जल पर तैर रहे पाषाण।
इन्द्रिय को आदत-लत पड़ गई, नींद-जागरण में हरि नाम।
सैन कहे अन्तर में जागृत, स्वयं हो गया आत्माराम।

90.

असाल तेथें नामाचें चिंतन। याहुनि साधन आणिक नाहीं।
सोडवील माझा भक्ताचा कैवारी। प्रतिज्ञा निर्धार केला आम्ही।
गुण दोष याती न विचारी कांही। धांवे लवलाही भक्तकाजा।
अवघे काळी वाचें म्हणा नारायण। सेना म्हणे क्षण जाऊं न द्या।

नाम स्मरण का चिन्तन, खाते पीते सोते जागते, कर।
जीवन के हर राह-मोड़ पर, चलते थकते उठते कर।
दोष निवारक मुक्तिदायक, सुलभ-सरल है हरी का नाम।
अन्त समय में यही है साथी, साथ न देगा सुन्दर चाम।

91.

अंगिकार केला। भार चालवी विठ्ठला।
संती सांगितलें। तें म्यां हृदयीं धरिलें।
तारिला अजामिळ। महापापी की चांडाळ।
पतितपावन। करी नाम हें जतन।
वागवी अभिमान। सेना न्हवी यातिहीन।

मधुर नाम हरी बोल, सुमुख से नहीं लगे है मोल।
संतों पर विश्वास न हो, तो नाम शक्ति तूल तोल।
सैन कहे मैंने संतों से, पाया यही वरदान।
जीवन कब मृत्यु को वर ले, दो दिन का मेहमान।

92.

ऐशी आवड़ी आहे माझ्या जीवा। तुजसि केशवा निवेदिलें।
पांडुरंगा ऐसें वाटतसे जीवा। करिन संतसेवा अहर्निशी।
नलगे वित्त गोत वैकुंठी राहणें। साज्युता सदनीं चाड़ नाहीं।
करुणास्वरें सेना बहात विठ्ठला। हेतु पुरविला आवड़ीचा।

नाम स्मरण का स्वाद चखा, है मैंने मेरे अन्तर मे।
मेरा तो संसार सुधारा, मेरे स्वामी हरि-हर ने।
मेरा तो परिवार संत जन, मेरे मार्ग प्रदर्शक।
मेरा पथ सम्पूर्ण भक्तिपथ, प्रभु मेरे हैं रक्षक।

93.

करिता नित्य नेम। रायें बोलाविलें जाण।
पांडुरंगें कृपा केली। राया उपरती झाली।
मुख पाहतां दर्पणीं। आतं दिसे चक्रपाणी।
कैसी नवलपरी। वाटीमाजी दिसे हरीं रखुमादेवीवर। सेना म्हणे मी पामर।

नित्य नेम में लीन रहा, मैं हरिमय हुआ ये जीवन।
कृपा हुई प्रभु पांडुरंग की, दिया नाथ ने दर्शन।
नयन हुए हैं तृप्त, चक्रपाणी को पाकर।
सैन कहे रखुमाई वल्लभ, खड़े सामने आकर।

94.

म्हणवितों दास। तरी सांभाळी ब्रिदास।
शुद्ध नाहीं भाव। तूं जाणशी पंढरीराव।
केलेंस जतन। धोकटी आरसाची जाण।
करितों व्यवसाय। माझ्या जातीचा स्वभाव।
सेनां करितो विनवणी। हात जोड़निया दोन्ही।

हाथ जोड़ शरणागत, प्रभु के दास खड़ा मैं पामर।
क्या वह माँगू भ्रम में, भूला हे रखुमाई के वर।
शुद्ध भाव-भक्ति है मेरी, कर्म अशुद्ध है मेरा।
सैन कहे मैं निंद्य कहाऊँ, तो अपमान है तेरा।

95.

चिंतन चित्ताला। लावी मनाच्या मनाला।
उन्मनी सुखांत। पांडुरंग भेटी देत।
ऐसा आहे श्रेष्ठाचार। वेद शास्त्राचा निर्धार।
कवटाळूनि पोटीं। सेना म्हणे सांगूं गोष्टी।

चित में चिन्तन हरि स्मरण का, कभी टूट न पाये।
ये कल तक परिवार के प्यारे, अब हम हुए पराये।
रखुमाई का वर मेरा वर, हुआ मैं उसको अर्पण।
आत्म समर्पित हुआ प्रभु मैं, कर तन मन यह जीवन।

96.

पांडुरंग दास। म्हणती सांभाळी ब्रीदास।
नाहीं भाव आंगीं। भूषण मिरवितो जगीं।
व्रत आचरण। नाहीं केलें तुझे ध्यान।
स्थिर नाहीं मन। सदा विषयाचें ध्यान।
सेना आहे अपराधी। सांभाळावें कृपानिधी।

पांडुरंग का दास हुआ, दायित्व स्वीकारा मैंने।
प्रभु शरण में आ करके, जीवन न्यौछारा मैंने।
मैं प्रभु का प्रभु अन्तर्यामी, बसा है मन में मेरे।
सैन कहे अब नहीं फिरूँगा, जन्म-मृत्यु के फेरे।

97.

स्तुति करुं ऐसा नाहीं अधिकार। शिणला फणिवर वर्णवेना।
तेथें मी सरता होईन कैशापरी। वर्णावया हरी कीर्ति तुझी।
आठराही भागले सहाही शीणले। चाव्ही राहिले मौन्यची।
रुक्मादेवीवरें अंगिकार केला। निवांत राहिला सेना न्हावी।

स्तुति गीत गुण गाते प्रभु के, थका विश्व यह सारा।
ज्ञानोदय भक्ति का हुआ, हट गया अह्म अंधियारा।
सुकीर्ति प्रभु की कीर्तन रूप में, बहती है सरिता सी।
भाव विभार सुरस रस भीनी, सुधार मधुर कविता सी।

98.

वेद वर्णिता शीणला। मग मौन्यची राहिला।
तेथें माझी वैखरी। कैशी पूर्ण पावे हरी।
नेणती गोरा की सावळा। त्याचि न कळेचि लीला।
हा सगुण की निर्गुण। गुणातीत परिपूर्ण।
माथा ठेऊनि चरणीं। सेना पाहे विलोकुनी।

वेद भी वर्णन नहीं कर पाया, थकी वीणा वरदायी।
कौन जीवन ऐसा है जिसमें, प्रभु प्रतिमा न समायी।
रंग रूप रस गंध सुतन को, कोई देख न पाया।
अन्तर्यामी आत्मा को हर, जीव ने है अपनाया।

99.

धन्य धन्य दिन। तुमचें झालें दरुषण।
आजि भाग्य उदया आलें। तुमचें पाऊल देखिलें।
पूर्व पुण्य फळा आलें। माझें माहेर भेटलें।
सेना म्हणे झाला। धन्य दिवस आजि भला।

आज सुदिन है धन्य, जीव-शिव एक रूप में पाये।
एकात्मा हो रूप भिन्न तम, दोनों ही हरसाये।
भक्ति बीज का कल्पवृक्ष भी, फूला नहीं समाया।
पुष्प फटने के साथ श्रेष्ठतम, सौरभ था बिखराया।

100.

माझें अंतरीचें। जाणे पांडुरंग साचें।
जीवभाव त्याचे पायी। ठेउनी कांही न मागों।
स्ख संत समागम। घेऊं नाम आवड़ी।
सेना म्हणे चुकलो साचें। आणिक वाचे न सेवी।

अंतरंग तो मेरा केवल, पांडुरंग ही जाने।
संत समागम में क्या सुख है, भक्त भोगी पहिचानें।
सैन कहे सत्संग बिना है, सारा जन्म निरर्थक।
घड़ी दो घड़ी संत समागम, है जीवन का सार्थक।

101.

देई मज जन्म देवा। करीन सेवा आवड़ी।
करीन संतांचें पूजन। मुखीं नाम नारायण।
असो भलते ठायीं। सुख दुःखा चाड़ नाहीं।
मोक्षं सायुज्यता। सेना म्हणे जिवा चित्ता।

चाह मोक्ष की नहीं मुझे, नर-जन्म पुनः मैं पाऊँ।
संतों की सेवा-हरि-भक्ति, जीवन भर तक चाहूँ।
सुख-दुःख दोनों के धर्मों को, समता स्वरूप स्वीकारूँ।
श्रेष्ठ सुजीवन को मृत्यु के, आगे कभी न हारूँ।

102.

नाम साधनाचें सार। भवसिंध् उतरी पार।
तिहीं लोकी श्रेष्ठ। नाम वरिष्ठ सेवी हे।
शिवभवानीचा। गुप्त मंत्र आवड़ीचा।
सेना म्हणे इतरांचा। पाड़ कैचा मग येथें।

नाम स्मरण सब भक्ति, साधनों का सुसत्व है माखन।
नाम स्मरण से सरल नहीं, सुख शान्ति हित कुछ साधन।
गुप्त मंत्र है शिवा, भवानी का जीवन आधार।
सेन कहे यह मंत्र, श्रेष्ठ है शत्रुहित संहार।

103.

त्रैलोक्य पाळतां। नाहीं उबग त्मच्या चित्ता।
तया आमुची चिंता। नसे काय रुक्मिणीकांता।
दुर्दर राहे पाषाणांत। तया चारा कोण देत।
पक्षी अजगर। तया पाळी सर्वेश्वर।
सेना म्हणे पाळुनी भार। राहिलो निर्धार उगाची।

त्रिलोक का जो पालनकर्ता, नाम त्रिलोकी जग चालक।
सृष्टि रचयिता सृष्टि पालक, वही सृष्टि का संचालक।
अणु रेणु में बसा कौन है जीवों का अन्नदाता कौन।
सैन कहे हम सब कठपुतली, कौन हमारा है शासक।

104.

सुखें घाली जन्मासी। हेंचि बरें कीं मानसीं।
वारी करीन पंढरीची। जोड़ी साची ही माझी।
हरिदासाची करीन सेवा। तेणें सुख फार जीवा।
सेना म्हणे सर्व संग। केला त्याग यासाठीं।

जन्म-जन्म तक पंढरी का मैं, वारकरी वन फिरा करूँ।
महाकाल मुझ तक ना पहुँचे, जन्म-जन्म तक जिया करूँ।
नाम सुमिरन भजन व कीर्तन, पंढरपुरर में करूँ त्रिकाल।
पांडुरंग का दास कहाऊँ, हरी हृदय स्थल का भू पाल।

105.

ही माझी मिरासी। पांडुरंग पायापासी।
करीन आपुलें जतन। वागवितों अभिमान।
जुनाट जुगादीचें। वडिलें साधियेलें साचें।
सेना म्हणे कमळापती। पुरातन हे माझी वृत्ती।

श्रेष्ठ स्वर्ग का सुख सारा है, पंढरपुर श्री चरणों में।
कल्प वृक्ष हरी जहाँ बसा है, पंढरपुर वासी जन में।
चार मुक्ति का वास जहाँ है, वैष्णव जन का अन्तःस्थल।
पतित जन को पारन करता, चन्द्रभाग सरिता का जल।

106.

स्वहिताकारणें सांगतसे तुज। अंतरीचें गुज होतें कांहीं।
करा हरीभजन तराल भवसागर। उतरील पैलपार पांडुरंग।
कृपा नारायणें केली मजवरी। तुम्हालागी हरी विसंबेना।
सेना सांगूनियां जातो वैकुंठासी। तिथि ते द्वादशी श्रावणमास।

स्वहित स्वार्थ परमार्थ कि, हित हरी भजन सुख साधन है।
भवसागर तर जाने हित हरि, नाम-स्मरण अति पावन है।
पांडुरंग की कृपा बोझ से, दबा सैन तन तजता है।
तिथि द्वादशी सावन महिना, मुक्ति पथ पर चलता है।

(सैन भगत कृत मराठी अभंग, अनुवादक- स्व. श्री पांडुरंग लोहोकरे)

अध्याय 7

संत सैन भगत

जीवन दर्शन

भारत में मध्यकाल सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं पारिवारिक क्रान्ति का युग माना जाता है। यह सामाजिक पुनरुत्थान का युग था। इसे भक्तिकाल कहना अधिक समीचीन है।

भारत में अवतारवाद की अवधारणा स्वीकृत है। वस्तुत: अवतारों ने प्रकट होकर किसी न किसी जटिल समस्या का समाधान ही किया था। वेदों के ज्ञान को सरलतम बनाने की कोशिश में अवतारवाद की कल्पना की गई। जिसमें दस और चौविस अवतार शामिल किये गये हैं। इसलिए अवतारों ने यह आश्वासन दिया कि–

यदा-यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारतः
अभ्युत्थानंधर्मस्य तदाऽत्मनं सृजाम्यहमः॥
परित्राणाम साधूनां विनाशाय च दुस्कृताम।
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे-यगु॥[1]

यह 'धर्म' विशाल अर्थ वाला शब्द है। उसी बहुअर्थी धर्म की रक्षा का वचन उन सभी अवतारों ने अपने-अपने स्तर पर दिया।

समाज में व्याप्त विकृतियों को समाप्त कर पुन: लोक कल्याणी समाज की स्थापना करना ही धर्म की रक्षा करना है।

मध्यकाल आते-आते धार्मिक पाखण्ड, कर्मकाण्ड, जातिगत वर्णभेद, छुआछूत, धार्मिक भेदभाव, बालविवाह, विधवा, परित्यक्ता और नारी जाति की दुर्दशा, सतीप्रथा, बालिका हत्या,

ऊँच-नीच, बलिप्रथा, विलासिता, पर्दा प्रथा आदि धार्मिक एवं सामाजिक कुप्रथाओं के अतिरिक्त मुस्लिम आक्रान्ताओं द्वारा भारतीय आस्था-विश्वास एवं सामाजिक व्यवस्था को खण्डित करने का आतंक भी सर्वत्र व्याप्त था।

इन संत भक्तों ने इन्हीं सामाजिक एवं धार्मिक विसंगतियों को दूर कर एक लोक कल्याणी समाज की पुनर्स्थापना करने का संकल्प लेकर पूरे भारत में भ्रमण किया और सत्संग के माध्यम से अपने उद्देश्य को सफल बनाने में प्रयत्नशील बने रहे।

डॉ. हजारी प्रसाद आदि संत साहित्य के अध्येताओं ने कबीर की इस वाणी-

भक्ति द्राविड़ उपजी, लाए रामानंद।
परगट किया कबीर ने, सप्तद्वीप नवखण्ड॥

को स्पष्ट करते हुए कहा था- दक्षिण से उत्तर में भक्ति का आगमन हुआ, जो बिजली की चमक की भाँति इस विशाल देश में इस कोने से उस कोने तक फैल गई। इसका श्रेय हम रामानन्द के लोकव्यापी व्यक्तित्व को दे सकते हैं।

वस्तुत: यह भक्ति की भावना वैदिक काल से उपजी। नारदीय भक्ति का महत्त्व सर्वविदित है। नारायण-वासुदेव की भक्ति को शूरसेन के वंशज दक्षिण ले गए। दक्षिण में पाँचवीं शताब्दी से नौवीं शताब्दी के मध्य आलवार संतों ने भक्ति का व्यापक प्रचार-प्रसार किया, जिसके फलस्वरूप दसवीं से चौदवीं-पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य तक आचार्य रामानुज ने श्री सम्प्रदाय, मध्वाचार्य ने ब्रह्म सम्प्रदाय, निम्बार्काचार्य ने सनक सम्प्रदाय, आचार्य विष्णु स्वामी ने रुद्र सम्प्रदाय का प्रवर्तन कर सगुण भक्ति को उत्तर भारत में प्रवाहित किया। उसी भक्ति भागीरथी की निर्गुण-सगुण भक्ति की धारा सम्पूर्ण भारत में प्रवाहित होने लगी।[2]

मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन के सूत्रधार स्वामी रामानन्द एवं उनके शिष्यों का लक्ष्य एक ऐसे सामाजिक वातावरण का निर्माण करना एवं उन मानव-मूल्यों की पुनर्स्थापना करना था, जो अब भारतीय जनजीवन को त्रस्त और अस्त-व्यस्त करने में लगे थे।

स्वामी रामानन्दजी के द्वादश शिष्यों जिनमें कबीर, पीपा, रैदास, सैन, धना आदि थे- उन्होंने सामाजिक एवं धार्मिक क्रान्ति को शान्ति-सद्भाव, जन सहभागिता स्वयं के सदाचारी आचरण के बलबूते पर सत्संग के माध्यम से गतिमान किया। सत्य, निष्ठा, शील, शुचिता, परस्पर भाईचारा तथा धार्मिक सद्भावना उन संत-भक्तों के क्रान्ति मंत्र थे।

उत्तर-दक्षिण, पूरब-पश्चिम और मध्यभाग में रहकर इन संत भक्तों ने अपना उद्देश्य पूरा करने का प्रयत्न किया, इसमें उन्हें पर्याप्त सफलता भी मिली। संत सैन भक्त उन्हीं संत भक्तों में से एक सर्वमान्य एवं प्रमुख संत भक्त थे।

इन संत भक्तों ने सद्‌गुरू, ब्रह्म, जीव-जगत, माया, सत्संग, नाम स्मरण, पारख, नाद, सगुण-निर्गुण, समर्पण, मानव देह, नश्वरता, नुगर, करनी-कथनी की सभ्यता-विषमता, धैर्य, सद्‌भाव, निष्ठा, निर्दम्भता, अहंकार, सत्पुरुष, मन ,सत, परनारी, सतवंती, विनम्रता, षड्‌रिपु, स्वार्थ, निन्दा, ईर्ष्या, दुर्वचन, लोभ, कुमार्ग, सद्‌नारी, विरह, आडम्बर, दया, आर्तभाव, पाप, भक्ति, जल, प्रकृति, माता-पिता, बेटी, बलि, मदिरा सेवन आदि अनेक विषयों पर अपने विचार अपनी वाणी में प्रकट किए हैं। वे गाँव-गाँव गए और लोक में एकमेव होकर अपना संदेश लोक भाषा तथा सहज शैली में सत्संग के माध्यम से दिया। उन्होंने लोक मानस की सहभागिता अर्जित की। केवल उपदेश देकर आगे बढ़ने के बजाए इन संतों ने जन मानस और साधारण मानस को भी अपने साथ शामिल कर विचारों का आदान-प्रदान करते हुए उनकी समस्याओं का समाधान भी किया। उन्होंने जो भी कहा या किया वह 'हरि' ने किया, ऐसा भाव सदा बनाए रखा। कबीर यही बात कहते हैं।

ना कछु किया न कर सका, न करने जोग सरीर।
जो कछु किया सो हरि किया, भया कबीर-कबीर॥

सभी संतों ने यही भाव अपने आचरण में बनाए रखा। इन संतों ने वचन की प्रमाणिकता सदा बनाए रखी। वही कहा जो लोक कल्याणी था। प्राणों से भी अधिक मूल्यवान उन्होंने अपने 'शब्द' को समझा। सैन कहते हैं-

प्राण जाय तो जाण दे, सबद न जावण देय।
सैना सद्‌गुरु की कृपा, सबद रिदै धर लेय॥

ये सभी संत अधिक पढ़े-लिखे नहीं थे। इसीलिए इन्होंने पण्डितों जैसा ज्ञान नहीं ढोया। जो कुछ कहा, सहज भाव से कहा। कबीर ने तो मसि-कागद भी नहीं छुआ था। सैन कहते हैं- उन्होंने भी वेद पुराण या पोथी ज्ञान प्राप्त नहीं किया था। जैसा सद्‌गुरू ने 'सबद' दे दिया, वही लोक तक पहुँचा दिया।

वेद पुराण पढ्या नहीं, पढ़यो न पोथी ज्ञान।
सेना सद्‌गुरु के सबद, पायो सहजो ज्ञान॥

यही सहज ज्ञान उनकी सहजी वाणी में निहित है। इन संतों ने आँखन देखी कही है, पोथी लेखी या कागद लेखी नहीं कही। संत सैन भक्त की वाणी में यह भाव स्पष्ट एवं सहज रूप से हमें दिखता है-

संत भक्तों ने सबसे अधिक महत्त्व सद्‌गुरू को दिया है, वही तारणहार खेवट्या (नाविक)

है, जो भवसागर से पार उतार सकता है। वही राम तारक मंत्र दे कर सबद का ज्ञान प्रदान करता है तथा वही साहिब (परमात्मा) से मिलाने का मार्ग प्रशस्त करता है। उसी की कृपा से चित्त की चंचलता में 'स्थिरता' आती है तथा वह पारख ज्ञान देकर आँखन देखी कहने की सूझ प्रदान करता है। इसीलिए गुरू और सद्‌गुरू सदा प्रथम वन्द्य एवं पूज्य है। सुगरा व्यक्ति तर जाता है तथा नुगरा व्यक्ति अधोगति को प्राप्त हो जाता है।

सद्‌गुरू

चित्त चंचल मन मात्यो, ढबे न एकै ठाँव।
सैन भगत थिरता मिली, सतगुरू चरणा छाँव॥

सद्‌गुरु की कृपा से मन की चंचलता स्थिर हो पाती है। उनकी चरण शरण छाँव सदा कल्याणकारी होती है।[3]

रामानन्द पूरा गुरू, दियो परख को बोध।
सैन भगत हिरदै हुओ, साहिब को परबोध॥

रामानन्दजी पूरे गुरू हैं, उन्होंने मुझे पारख ज्ञान का बोध करवाया है। उन्हीं की कृपा से मुझे साहिब की पहचान हुई है।

कबीर, पीपा ने हृदय में सद्‌गुरू को स्थापित कर लिया। वे साहिब के दरबार में पहुँचने में सफल हुए। वे धन्य हैं।

धन्न कबीरा पीपा हुआ, हिरदै सद्‌गुरु नाम।
सैन भगत जा पौंच्या, साहिब चरणा धाम॥[4]

मैं नाई के घर पैदा हुआ, सैन हजाम कहलाया। सद्‌गुरू की थापी लगी तो ठेठ मुकाम मिल गया। ज्ञान प्राप्त हो गया।

जन्मयो नावी के घरे, वाज्यो सैन हजाम।
सद्‌गुरु की थापी लगी, पायो ठेठ मुकाम॥[5]

सैन नाम को तुकारा देकर सब बुलाते रहे। कोई सयना कहता था। कोई सैना और कोई सैन्या। मेरे कान यह तुकारा सुनकर पक गए थे। सद्‌गुरू की कृपा से ज्ञान प्राप्त हो गया।[6]

सपना में साईं मिल्या, सद्‌गुरु रामानंद।
सैन उजालो वई गयो, दरस्या परमानंद॥

सैना सरग न चाहिए, न मुगती को धाम।
सद्गुरु की किरपा भली, भलो राम को नाम॥
सैना सतगुरु के हुकुम, आयो दक्खन देस।
ना ठाकर की चाकरी, ना कोई कलह कलेश॥ [7]

सद्गुरू ने मुझ पर बहुत कृपा की है। मुझे सीधी बाट सुझा दी। उन्होंने सहज मार्ग दिखाया। रामानन्दजी के रूप में मुझे पूरा सद्गुरू मिल गया है। उन्होंने मुझे राम तारक मंत्र का बोध करवाया और बताया कि- राम से बड़ा राम का नाम होता है-

मुझ पे सद्गुरू कृपा करी॥ टेक॥
सूधो हाट बतायो सद्गुरू सूधी गेल करी॥ 1॥
न कोई ऊबड़ ना कोई खाबड़, ना टेड़ी सकरी।
न कोई साँस रोकणी होई, ना कोई षडचकरी॥ 2॥
सीधो नाम बतायो सतगुरू साँस-साँस सतरी।
रामानंद सतगुरू पूरा पाया, मनख देह उधरी॥ 3॥
राम ती बड़ो नाम बतलायो, गेल नहीं वकरी।
सैन भगत साहिब दरवाजे, राम नाम छकरी॥ 4॥[8]

ब्रह्म

सैन का ब्रह्म निराकार है। निर्गुण और सर्वव्यापी है। वह अगम और अपार है। सभी जीवों में वह विद्यमान है-

साहिब नखतरां रमे, कण-कण में परमान।
जित देखूँ तित साहिबा, सैन रखजो ध्यान॥
भीतर अजब उजास हे, बाहर रूप सुजान।
भीतर बाहर हरि रमे, सैना रखजो ध्यान॥
रूप रंग सुगंध में, दरसूँ ब्रह्म प्रमान।
कीड़ी कुंजर में रमें, सैना रखजो ध्यान॥
ज्युँ सागर में लेहरा, लहरे मनोरम गान।
त्युँ साहिबा ने जाणजो, सैना रखजो ध्यान॥[9]
नहिं करता सिरजन करे, करे खान अर पान।
करता धरता राम है, सैना रखजो ध्यान॥

ब्रह्म सर्वत्र है। वह कण-कण में व्याप्त है। उसका उजास भीतर और बाहर प्रकाशित है। कीड़ी और कुंजर तक में वही विद्यमान है। जैसे सागर में लहरें हैं। लहरों में गीत-गान की गुँजार

है। ब्रह्म भी उसी प्रकार सर्वव्यापी है। वह दिखता नहीं, परन्तु है। वह कर्ता नहीं, किन्तु सृजनकार है। वह खाता है, पीता है, वही सब कर्ता-धरता है। वह सूर्य-चन्द्र और नक्षत्रों में व्याप्त है।

जीव

जीव ब्रह्म का सृजन है। वही प्राणी है। वही पंचतत्त्व के पिंजरे (देह) में रहकर उसे प्राणवान बनाए रखता है।

एक बूँद ती सिरजयो, जीव जगत ब्रह्माण्ड।
सैना सब माटी घड़े, ज्युँ कुम्हार को भांड॥

सृजनहार ने एक बूँद से जीव, जगत और ब्रह्माण्ड का निर्माण किया है। सब मिट्टी से घड़े हुए हैं, जैसे कुम्हार का भांड होता है।

बूँद समंद ती ऊपजी, गई समंद समाय।
सैना तेसई जीव, ब्रह्म मिले और बिलगाय॥

बूँद समुद्र से पैदा होती है। फिर समुद्र में मिल जाती है। उसी प्रकार जीव ब्रह्म से उत्पन्न होकर ब्रह्म में विलीन भी हो जाता है।

पंचतत्त को पींजरो, जण में हूड़ों जीव।
सैना कलपे भीतरां, कघां मिले जा पीव॥

यह पंचतत्त्व का पिंजरा (देह) है। इसमें जीव पक्षी के समान बैठा है। भीतर रहकर कलपता रहता है। कब पुनः अपने प्रिय (ब्रह्म) से मिलन होगा।

जीव ब्रह्म ती नीसरे, भांतक रूप धराय।
सैन कहे परब्रह्म में, मिले ब्रह्म वई जाय॥

जीव ब्रह्म से उत्पन्न होता है। भाँति-भाँति के रूप धरता है। फिर ब्रह्म में विलीन होकर ब्रह्म हो जाता है। जीव तो ब्रह्म का ही अंश है।[11]

जगत

जीव, जगत और ब्रह्म में अभेद है। सब एक ही हैं-

जीव जगत और ब्रह्म में, भेद अभेद बखान।
मूल असल में एक है, सैना रखजो ध्यान।

यो जग जाणे पींजरा, माया मोह चुगान।
चातुर काल बहेलिया, सैना रखजो ध्यान॥[12]

यह जग माया जाल है। जो दिखता है, वह है नहीं, इसे माया का प्रपंच जानना चाहिए।

साधौ भाई यो जग माया जाल॥ टेक॥
जो दीसे ऊ साँचो नाहीं, कर देखो पड़ताल।
जो जनम्यो सो अवस विनासे, क्युँ मन करो मलाल॥ 1॥
मकड़ी जाल बुने श्रम करतां, अद्‌भुत करे कमाल।
वो ही काल बणे मकड़ी को, एसो मक्कड़ जाल॥ 2॥
माया का हे बाग बगीचा, माया नदिया ताल।
माया सूरज चन्द ऊगे, माया काल अकाल॥ 3॥
माया खिंड्यो कमल ताल में, माया वण की नाल।
माया औचक माया कौतक, माया हे खुसहाल॥ 4॥
माया सिरजन करे जगत को, माया ही महाकाल।
सैना माया बाँधे-खोले, माया हे जंगाल॥ 5॥[13]

यह जगत माया का खेल है। यही माया इसका सृजन करती है तथा माया ही विनाश भी करती है। यह जगत तो मिथ्या है।

माया

माया तो ठगनी है। वह कब किसे ठग ले, कोई नहीं जानता। माया से कोई नहीं बच सकता–

माया तो ठगनी बड़ी, पलक झपयाँ ठग जाय।
सैन भगत जो जाग्यो रहे, तिस को नी ठग पाय॥
ब्रह्मा-विसनू सीवजी, माया के आधीन।
सैना माया के मते, तीनई के मन छीन॥

माया महाठगनी है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तक उसके आधीन हैं। जो जागृत रहता है, वह माया से बच पाता है, वरना वह पलक झपकते ही ठग लेती है।

माया जहाँ ठगनी है, वहीं वह जगत की संचालक भी है। माया मर्यादा भी है। मायाधीश की माया किसी के समझ में नहीं आ सकती।

माया-माया क्युँ करो, माया जगत चलाय।
सैना माया के वसे, जीव ढवे तन माँय॥।
माया मरजादा बणे, माया राखे लाज।
सैना माया सोभती, सदा सँवारे काज॥
माया मायाधीश की, सहजां समझ नी आय।
सैन भगत साँची कहूँ, सतगुरु होय सहाय॥

राम

सैन भगत के राम अन्य समकालीन द्वादश संतों के अनुसार निर्गुण और निराकार हैं। राम, हरि, घनश्याम सब एक ही रूप हैं।

राम हरि घनश्याम सब, एक हरि का नाम।
रूप अरूप एकै सबै, सैना रखजो ध्यान॥
राम कहूँ तो स्याम हे, स्याम कहूँ हरि जान।
सबै ब्रह्म के नाम हैं, सैना रखजो ध्यान॥[15]

जिस प्रकार बादल में बिजली, वृक्षों में प्राण होकर भी दिखते नहीं, उसी प्रकार राम भी सर्वव्यापी हैं, किन्तु दिखता नहीं है। निराकार है।[16]

राम नाम जिव्हा रटे, घट में अणहद गान।
सचर अचर नरतन करे, सैना रखजो ध्यान॥[17]

राम नाम जिह्वा रटती है, तब भीतर अणहद नाद बजने लगता है। सचर और अचर नृत्यमय हो जाते हैं।

पीव

प्रीतम (पीव) ही ब्रह्म है। उससे मिलाप बहुत सुखद है। वही परमानंद है। उसी परमानन्द के लिए कबीर ने कहा है-

बजा नगाड़ा ब्रह्म का, मेरे मन आनन्द।
कब मरिहों कब भैंटिहों, पूरन परमानंद॥

उस पूरन परमानन्द का मिलन आत्मा-परमात्मा का मिलन है। वह बहुत आनन्ददायी है।

पीव मिल्याँ जीणो सुभो, पिव बिछड़्याँ नहीं मान।
पीव बिछोड़ो नहिं बणे, सैना रखजो ध्यान॥

पीव से विलग होना बहुत दु:खद है। पीव से मिलना शुभ है। पीव से विरह नहीं हो तो ही ठीक है।

पीव जड़ेली जीव की, पिव आतम संधान।
पिव बिन कलपे आतमा, सैना रखजो ध्यान॥
पीव-पीव पपिहो रटे, धरे पीव को ध्यान।
पिव परमानंद जाणजो, सैना रखजो ध्यान॥[18]

पीव तो जीव की प्राण रक्षक औषधि है। उसके बिना आत्मा कलपने लगती है। पपिहा पीव-पीव रटकर सदा पीव का ही ध्यान करता है। पीव परमानन्द है। पीव के प्रति समर्पण आवश्यक है। वह तो घट के भीतर विद्यमान है।

पिव तो घट के भीतर बसे, तपसे गुफा पहार।
सैना भीतर झाँक ले, चलक नूर करतार॥[19]

प्रियतम तो घट के भीतर बस रहा है। तू पहाड़ों की गुफाओं में तपस्या कर रहा है। भीतर झाँक ले और देख तेरा पीव-तेरा साईं भीतर बैठा है।

नाम स्मरण

नाम स्मरण का महत्त्व संतों-भक्तों ने सर्वोपरि बताया है, किन्तु वह अन्तर्मन में ही हो तो ठीक है।

माला तो कर में फिरे, मन नहीं चाले संग।
सैना जिव्हा बापड़ी, बिरथा करे उतंग॥
जिव्हा रटती राम ने, मन में उमढ़े काम।
सैना मन कबजे करो, फेर उचारो नाम॥[20]

हाथ में माला फिरती रहे, किन्तु यदि मन साथ नहीं दे तो वह स्मरण व्यर्थ है। बिचारी जिह्वा व्यर्थ ही थकती रहती है-

जिव्हा रटती राम ने, मन में उमढ़े काम।
सैना मन कबजे करो, फेर उचारो नाम॥[21]

जिह्वा राम रटे और मन में इच्छाएँ उमड़ती रहे, यह तो उचित नहीं है। पहले मन को कब्जे में करो, फिर नाम का स्मरण करना उचित है। इसलिए सैन कहते हैं बाहर का मोह त्यागकर दत्त चित होकर भीतर घट में रमकर साँस-उसाँस से राम का स्मरण करना चाहिए।[22]

रात-दिन माला जपता रहे और तृष्णा मन भटकाती रहे तो वह स्मरण व्यर्थ है। यदि मन शुद्ध हो। अन्तर्मन में तल्लीन हो तभी स्मरण का लाभ है तथा तभी हरि के दर्शन हो सकता है-

रात दिनाँ माला जपे, तृस्ना मन भटकाय।
सैन कहे मन शुद्ध वे, जद हरि दरसन पाय॥[23]

सत्संग

मध्यकालीन संत-भक्तों का सबसे प्रमुख आधार सत्संग था। सत्संग के माध्यम से ही वे संत अपना संदेश लोक तक पहुँचाते थे। सैन कहते हैं- जहाँ भाव और भक्ति हो, चाहे भोजन का एक कौर भी न हो, वहाँ अवश्य जाना चाहिए। संतों के लिए वहीं ठौर उचित है।

भावभगति दीखे जठे, भले मिले न कौर।
सैना वां जाजो अवस, हे संता को ठौर॥
साँच जुड़े संगत जुड़े, जुड़े साँचली वात।
सैन कहे सदमत जुड़े, पारख ज्ञान निजात॥
सत्संगत के कारणे, त्यागू सरग मुकाम।
सैन भगत सत्संग में, चारों तीरथ धाम॥[24]

जहाँ भाव और भक्ति हो, भले ही भोजन का एक कौर भी न हो। जहाँ सत्य की चर्चा हो। सच्ची बातें हों। जहाँ सद्बुद्धि वाले लोग जुड़े, जहाँ पारख ज्ञान की चर्चा हो, वहाँ जाना उचित है।

सैन कहते हैं- मैं सत्संगत के कारण स्वर्ग तक का त्याग कर सकता हूँ। इसी बात की पुष्टि में संत कबीर ने कहा है-

बजा नगाड़ा काल का, दिया कबीरा रोय।
सत्संगत से ऊपराँ, सरग न दीखे मोय॥[25]

पारख ज्ञान

निर्गुणी संत-भक्तों में पारख ज्ञान का बहुत महत्त्व माना गया है। 'पारख' अर्थात् अच्छी तरह परखकर किसी बात पर कायम होना। सैन कहते हैं-

सैना मन तो खोलिए, वे पारख को ज्ञान।
खोट-खोट न्यारो करे, करे खरो संजान॥[26]

मन को चेतमान करके पारख ज्ञान प्राप्त हो सकेगा। जब मन सचेत होगा, तब वह खोट-खोट को त्याग कर खरी बात सामने ले आएगा।

देखे भोगे जाण ले, साध करे निरधार।
सैना पारख ज्ञान बिन, नी होवे निरधार॥[27]

देखकर, भोगकर, जानकर ही साधु जन निर्णय करते हैं। बिना पारख ज्ञान के निर्णय नहीं हो सकता।

नाद

नाद, कुण्डली जागरण का प्रतिसाद है। जब कुण्डली जागरण होता है, तब अणहद नाद सुन पड़ता है। अणहद नाद परमात्मा में तन्मयता प्रदान करता है। सैन कहते हैं-

नाद बजे माया हटे, इरसे दीन दयाल।
सैना ज्युँ मंदर बजे, घंटी अर घड़ियाल॥
सैना सबद निनाद में, सगुण-निर्गुण को राग।
बाहर भीतर झिलमिलो, जाग सके तो जाग॥[28]

जब नाद बजता है, तब माया का प्रभाव समाप्त हो जाता है। जैसे मन्दिर की घंटी-घड़ियाल बजने पर बाहर का माया मोह समाप्त होकर चित्त एकाग्र हो जाता है तथा शब्द के निनाद से निर्गुण और सगुण दोनों का अन्तर मिट जाता है। बाहर और भीतर झिल-मिल प्रकाश फैल जाता है।

भीतर बाजे बाँसुरी, उमगे अणहद नाथ।
सैन भगत अणहद झरे, आनंद भर्‌यो सुवाद॥[29]

सगुण-निर्गुण

सगुण और निर्गुण के भ्रम को मध्यकालीन संत-भक्तों ने मिटाकर लोक में निर्गुण की स्थापना की, किन्तु पीपा, सैन जैसे संतों ने निर्गुण की स्थापना के बावजूद सगुण का खण्डन भी नहीं किया। संत पीपाजी ने कहा है-

सरगुण मीठो खाण्ड सों, निर्गुण करुओ नीम।
पीपा सतगुरु परस दें, निरभ्रम हो अर जीम।।[30]

सगुण मिश्री के समान मीठा है तथा निर्गुण नीम की तरह कड़वा है किन्तु नीम की भाँति वह रक्त शुद्धि भी करता है। समस्त कषायों को समाप्त कर मन-चित्त को शुद्ध कर देता है। सैन कहते हैं-

सगुण-निर्गुण का भरम में, पच-पच हार्‌या साध।
सैना सद्‌गुरु बोध्यो, सोई नाम अराध।।

जैसा सद्‌गुरु प्रबोध दें, वही सत्य है।

नश्वरता

सैना जगत सराय हे, आवण जावण होय।
चार दिना मेलो करे, थिर मुकाम न कोय।।[31]

सैन भगत कहते हैं- यह जगत एवं जगत के समस्त साधन नश्वर हैं। यह जगत तो सराय है। इसमें आना-जाना लगा ही रहता है। चार-दिन का मेला होता है। यहाँ कुछ भी स्थिर नहीं है।

सैन भगत ने अनेक विषयों पर अपने विचार अपनी वाणी में प्रगट किए हैं। यथा- करनी, कथनी, धैर्य, नुगरापन, समभाव, निष्ठा, निर्दम्भता, अहंकार, सत्पुरुष, नीचपुरुष, मन, सृजनहार, सत, परनारी, सतवन्त आदि। वे सतवन्ती नारी के विषय में कहते हैं-

सतवन्ती सत नी तज, तज दे भले पिरान।
सैना एसी नारी को, जुग-जुग मिले सम्मान।।[32]

सतवन्त नारी प्राण तो त्याग सकती है, किन्तु सत् नहीं त्याग सकती।

विनम्रता

विनम्रता मनुष्य का सबसे श्रेष्ठ गुण है-

आपा तो अर्पण करे, तरपण करे हंकार।
सेना नमतो वै रहे, जद पावे करतार।।[33]
संत चरित नमतो रहे, मान-पान वे खूब।
सेना ज्युँ हरसित रहे, नदी-किनारे दूब।।[34]

सत्य, षड्रिपु, स्वार्थ, निन्दा, दुर्वचन, लोभ, कुमार्ग, मित्र, कटुवचन, सदनारी जैसे चारित्रिक विषयों पर भी संत सैनजी ने अपनी वाणी में अनेक स्थानों पर अपने विचार व्यक्त कर समाज का मार्गदर्शन किया है।

जुआ खेलने पर उनका मत देखिए-

जुओ धन समन को, करदे अवस विनास।
सैना हगरा खोट को, हे जुआ में वास॥[35]

जुआ में सभी बुराई निहित है। चोरी, जारी, हत्या, मदिरा पान, धन-नाश, प्रतिष्ठा-नाश आदि सभी बुराइयाँ जुए में हैं। पाण्डवों ने जुआ खेला, नल राजा ने जुआ खेला। राज भी गया। सम्मान भी गया।

जुओ खेल्यो पाण्डवाँ, सरबस बैठ्या हार।
सैना नल राजा रम्यो, जिनगी वई खुवार॥[36]

सदनारी

सात पीढ़ियाँ तार दे, नारी होय सुजान।
सैना सिच्छा खूब दो, खूब बणे बलवान॥[37]

नारी यदि शिक्षित हो, शक्तिवान हो तो वह सुजान नारी सात कुलों का उद्धार कर देती है।

आडम्बर

आडम्बर पर उन्होंने बहुत गहरी चोट करते हुए कहा है-

नित न्हावे पूजा करे, लाम्बो तिलक लगाय।
सैन दया हिरदै नहीं, नत-दन पाप कमाय॥
महादेव को नाम ले, नत-दन पीवे भाँग।
सैना बदमस्ती करे, देवे मुर्गा बाँग॥
गाँजो पीवे रात-दन, और कहावे साध।
सैना मदमस्ता रहे, केहवे लगी समाध॥
दारू पी दुरमत करे, भोगे पंच मकार।
सैना एसा साध ने, बार-बार धिक्कार।
भगवा पेहरे भरम का, भोगे रागस भोज।
सैना ठगी-ठगोर कर, खूब उड़ावे मौज॥[38]

प्रतिदिन स्नान करे, लम्बा तिलक लगाये, मन दया नहीं रखे, महादेव का नाम लेकर भाँग और गाँजा पिये। बदमस्तियाँ करे। दारू पीवे। माँस भक्षण करे। मस्ती में, नशे में, झूमता रहे और कहे समाधि में मस्त है। पंच मकारी-मदिरा, मछली आदि पंच मकारों का सेवन करे, भगवा वस्त्र धारण करे और ठगी-ठगोरी करे, ऐसे साधुओं को धिक्कार है।

संत सैन भक्त ने प्रकृति सुरक्षा के विषय में भी अपने विचार व्यक्ति किये हैं।

जल

नदी तलैयाँ हाँपड़े, करे शौच पेशाब।
सैना एसा मूढ़ ने, लागे बड़ो अजाब।।[39]

वृक्ष

वृछ काटे मछली हने, वन में करे सिकार।
सैना जल गंदो करे, उस जन ने धिक्कार।।[40]

जो वृक्ष काटता है, ताल नदी में मछली मारता है, वन में निरीह पशुओं का शिकार करता है, जल गंदा करता है, उस व्यक्ति को धिक्कार है।

बिरछ बचे नदियाँ बचे, बचे अनाथ गरीब।
जलवायु सुध-सुध मिले, वेद न आए करीब।।[41]

× × ×

फल देवे मन भावता, सीतल देवे छाँव।
सैना दुख दीजो मती, बिरछाँ साध सुभाव।।
घर-घर में तुलसां लगे, बाड़े लागे नीम।
सैन कहे साँची कहूँ, दोई बड़ा हकीम।।[42]

माता-पिता

मात-पिता सेवा करें, तिनके सँवरे काम।
सैना इन चरणा बसे, हगरा तीरथ धाम।।
जिन घर में जामण बसे, बाड़े होवे गाय।
सैना नगरी संत वे, ऊ तीरथ क्युँ जाय।।[43]

जिस घर में माता हो, बाड़े में गाय हो, नगर में संत का वास हो, वैसा व्यक्ति तीर्थ क्यों जाये? उसके तो सभी तीर्थ वहीं माता-पिता के चरणों मौजूद हैं।

मदिरा पान

दने पिये राते पिये, पी-पी झोला खाय।
सेना ऐसो अधम नर, जींदो ही मर जाय॥[44]
दारू पी पड़यो रहे, मैला में खरड़ाय।
सैन भगत साँची कहूँ, शूकर जोनी पाय॥[45]

विविध

तोड़ावे रिश्तो बण्यो, छल कर चुगली खाय।
सैन भगत साँची कहूँ, घोर नरक में जाय॥[46]

जो व्यक्ति किसी का बना-बनाया रिश्ता भंग करवा दे, वह निश्चित रूप से नरकगामी होगा।

शील हरे हत्या करे, कुल कूँ दाग लगाय।
सैन भगत साँची कहूँ, वेताँ ही मर जाय॥[47]

जो पुत्र किसी कन्या, स्त्री का शील हरण करे, ऐसा कुल को दाग लगाने वाला होते ही मर जाये तो अच्छा है।

मूरतकारो एक हे, माटी एक समान।
सैन भगत साँची कहूँ, अन्तर करे जहान॥
एक बाप ती ऊपजे, एकहि माँ का पूत।
सैन भगत साँची कहूँ, एकहि रुई का सूत॥[48]

सृजनहार एक है, माटी एक है, एक बाप और एक माँ के सभी पूत हैं। सब एक ही रुई के सूत हैं। लोग अन्तर करते हैं।

बेटा-बेटी में अन्तर

छोरो तो सीरो भखे, छोरी खावे घाट।
सैन भगत साँची कहूँ, अण में झूठो ठाठ॥
छोरो तो वारिस बणे, छोरी पर घर जाए।
सैन भगत साँची कहूँ, दोनों वंस तराय॥[49]

बेटा तो सम्पत्ति और जायदाद का उत्तराधिकारी बनता है, किन्तु बेटी परघर जाती है। वह दोनों कुलों को यश देती है।

करो खवासी मान ती, करो न ओछी बात।
सैन कहे जजमान की, सम सरखी औकात॥
ठाकर तो दारू पिये, आप करो पदचाप।
सैन कहे दुरमत गणू, जाणू सामिल पाप॥
दारू से दुरमत बणे, उपजे अणगण पाप।
सैन कहे मति पीवजो, मति कमाजो पाप॥
करम करो सुभ भाव ती, नहिं कोई ओछो काम।
सैन कहे हाथां करम, मन में राखो राम॥[50]

वे अपने समाज को उपदेश देते हैं। खवासी का काम मान के साथ करो। ओछी बात मत करो। जजमान और आप एक सामन ही हो।

ठाकुर दारू पीता रहता है, आप जी हुजूर कहते हुए चरण चाप करते रहते हैं, यह बुराई है। मैं इसे शामिल पाप मानता हूँ। दारू में बहुत बुराइयाँ हैं। उसे मत पीना। अपना काम शुभ भाव से करते रहो। मन में राम का वास रखो।

प्रकृति

अजब-गजब सृष्टि रची, लीलाधर अनजान।
सैन कहे दीखे नहीं, जगत करे गुणगान॥
ताल कूप नद बावड़ी, समदर झरन पहार।
सैन कहे सब गंग सम, जीवन राखणहार॥
ब्रछ ब्रह्म को रूप हे, सदमत राखो ज्ञान।
सैन कहे ब्रछ देवता, करे सकल कल्यान॥
विस पीवे अमरत झरे, करे जगत कल्यान।
सैन कहे सिंचन करे, शंकर संभु समान॥[51]

यह प्रकृति अजब है। लीलाधारी की लीला अद्‌भुत है। ताल, कुएँ, बावड़ी, समुद्र, झरने, पहाड़ सब गंगा के समान हैं। वृक्ष ब्रह्म का रूप हैं। विष पीकर अमृत देते हैं। इन्हें महादेव स्वरूप मानना चाहिए।

वे स्वयं के विषय में कहते हैं-

नाई के घर जनम्यो, छौर करम को काज।
सैन कहे ऊजल करम, नहीं पाप को काम॥

सेवा करूँ समाज की, राजा रंक समान।
सैन कहे समचित रहूँ, तनक नहीं अभमान॥
संत चरण तीथर गणूं, पूरे मन की आस।
सैन कहे तन मन बणे, ऊजल मिटे पियास॥
वेद पुराण पढ़या नहीं, नी जाणू गुणगान।
सैन कहे सद्गुरु कृपा, हिरदै आयो भान॥[52]

मैंने नाई के घर जन्म लिया है। हजामत करना मेरा काम है। नाई का काम उज्ज्वल काम है। इसमें पाप नहीं है। मैं पूरे समाज की एक भाव से सेवा करता हूँ। संतों की सेवा करता हूँ। मैंने वेद-पुराण नहीं पढ़े। गुरू कृपा से ही मुझे ज्ञान प्राप्त हुआ है।

संत सैन भगत विक्रम संवत् 1472 से संवत् 1479 तक गागरोन (झालावाड़) से ओंकारेश्वर (निमाड़ क्षेत्र) कालीसिंध और नर्मदा क्षेत्र में रहे। यह सम्पूर्ण मालवा अंचल उन्होंने भलीभाँति देखा-समझा, यहाँ की जलवायु, नदियाँ, रहन-सहन व्यवहार तथा भाषा तक को आत्मसात किया। यहाँ के मनुष्यों की सहजता जानी और भोगी। इसी कारण उन्होंने कहा-

चम्बल नर्मद सीपरा, करतो फिरूँ सनान।
मालव अत प्यारो लगे, सैना राखूँ ध्यान॥
उत्तर दक्खन पंचनद, म्हारो खास रहान।
मालव अत प्यारे लगे, सैना राखूँ ध्यान॥
दसपर में सतसंग सुण्यो, कथ्या सुण्या वखाण।
जिण सुण्या तिण लीखियाँ, सैना राखूँ ध्यान॥
गागरोन का मुलक में, कथ्या खूब बखाण।
किण सुण्या किण लीखिया, सैना राखूँ ध्यान॥

मालवा में वे अपने संत जीवन की परिपक्व आयु में रहे। उस समय उनकी आयु 79 वर्ष थी। वे 72 वर्ष की आयु में गागरोन आये। पीपाजी के साथ पाँच वर्ष रहे।

हम सैन जी के जीवन-दर्शन को दो भागों में बाँटकर देख सकते हैं-

(1) आध्यात्मिक विचार

(2) समाज सापेक्ष विचार

उनके युग में धर्म ही जनजीवन पर प्रभाव डाल सकता था। वैसे धर्म का प्रभाव आदिकाल से मानव पर बना हुआ है। सदाचारी को पुण्यात्मा, धर्मात्मा तथा दुराचारी को पापात्मा

अथवा अधर्मी कहा गया है। अध्यात्म के माध्यम से सामाजिक पुनरुत्थान करने का मार्ग सभी संतों, महात्माओं, भक्तों, फकीरों, पीरों और ऋषि-मुनियों ने अपनाया। वे उसमें सफल भी हुए।

संत सैन भक्त ही ऐसे संत हुए जिन्होंने अपने बारे में अपनी वाणी (पदों) में स्पष्ट एवं निस्संकोच भाव से कहा है- स्वयं को दो कौड़ी का बताकर लाखीणा हो जाने का भाव एवं क्षमता केवल सैन भगत में ही थी।

उन्होंने कहा है-

दो कौड़ी को सैन थो, हाट बिके नहिं बाट।
सैन भगत साँची कहूँ, तन मन उपज्यो ठाठ॥[54]

× × ×

ज्ञान ध्यान जाणू नहीं, करूँ ज्ञान की बात।
सैन कहे सद्गुरु कृपा, सत्संगियाँ की दात॥[55]

मैं तो दो कौड़ी का भी नहीं हूँ। सद्गुरू और सत्संगियों ने मुझे ज्ञान दिया है।

ऐसे अनेक प्रसंग संत सैन भगत की वाणी में हमें मिल जाते हैं, जो उन्हें महनीयता प्रदान करते हैं। वे न पंजाब के थे, न महाराष्ट्र के, न कर्नाटक के, न राजस्थान के और न मालवा के- वे तो समग्र भारत के सर्वमान्य संत थे। आज भी उनका जीवन-दर्शन आध्यात्मिक एवं सामाजिक पुनरुत्थान के लिए अपना श्रेष्ठतम महत्त्व रखता है। उनके जीवन-दर्शन को कुछ पृष्ठों में समेट पाना बहुत कठिन है। उन पर पृथक से शोध किया जाना चाहिए। किसी भी विश्वविद्यालय के शोधार्थियों को यह शोध कार्य करने की प्रेरणा दी जा सकती है। मैं तो संत सैन भगत का भक्त हूँ। संत पीपाजी के साथ मैंने उन्हें ही अपने मन-मन्दिर में आस्था-पुरुष की तरह जीवित रखा है।

संत सैन जी का जीवन मेरे लिए सदा प्रेरणा का स्रोत रहा है। संत पीपाजी पर मेरी शोध-यात्रा संत सैन भगत की शोध-यात्रा बनती रही। मैंने 45 वर्षों तक संत सैनजी को अपनी आत्मा में बसाकर रखा। अब तो उन्हें निकाल पाना कठिन ही है। संत पीपाजी एवं संत सैनजी सदा-सदा मेरे प्रेरणा स्रोत एवं आराध्य रहेंगे।

संत भक्त किसी विशेष समाज अथवा वर्ग के कैसे हो सकते हैं। वे तो सर्वपूज्य होते हैं।

स्वामी रामानन्दजी जिस भक्ति गंगा को दक्षिण से उत्तर में लाये थे। उस भागीरथी को इन द्वादश संत भक्तों ने पूरे भारत में प्रवाहित कर रस-प्लावित कर दिया। भारत ही क्यों इस भागीरथी की पावनता तो अखिल विश्व में व्याप्त है।

संत सैन भगत की वाणी लोक कण्ठों में लुप्त होती चली गई। उनके पदों-साखियों को न व्यवस्थित पोथियाँ मिलीं, न लोक चर्चा। इन संतों का जीवन-दर्शन अब लोकार्पित है। आशा है यह अब जन-जन को प्रेरित कर समाज को एक नई दिशा प्रदान करेगा।

अंत में उनके गुरु भाई रैदास की एक साखी के आधार पर कह सकते हैं-

हाथ सहारो बाँस को, साँस सहारो राम।
रैदासा सैनो भगत, चलतो-फिरतो धाम॥

संत धनाजी ने कहा है-

पीपा और सैना भगत, एक संगत एक धाम।
धना हिरदै सतगुरु, मुख सों सुमरे राम॥

और संत पीपाजी ने कहा है-

पीपा सैनो सूथरो, नहीं मैल रो नाम।
बाहर-भीतर समथिरो, सिमरे निस दिन राम॥

उनके गुरु भाइयों ने उन्हें जो महनीयता प्रदान की है, वह उनके जीवन, जीवन-दर्शन एवं सहजतापूर्ण व्यवहार के लिए बहुत बड़ा सम्मान है। वे आज भी हमारे प्रेरणास्रोत हैं। उस कालजयी भीष्म संत सैन जी के प्रति उनकी वाणी एवं जीवन-दर्शन के प्रति वन्दन।

सन्दर्भ :

1. श्रीमद्भगवद्गीता, श्लोक-4/7-8.
2. मीरायन, चित्तौड़गढ़ अंक, मार्च 2013, श्री सत्यनारायण समदानी का लेख, भक्तिकाल के मानव मूल्य : आदान-प्रदान का अंश.

3-7. इसी ग्रन्थ में लोकवाणी प्रसंग, साखी क्र.-1, 6, 4, 14, 16, 15, 16, 19, 18.

8. संत सैन की पदावली, यही ग्रन्थ, पदावली क्र.-1.
9. यही ग्रन्थ, सैना रखजो ध्यान प्रसंग, साखी क्र.-25, 26, 30, 28, 31.
10. यही ग्रन्थ, साखी क्र.-62, 64, 65, लोकवाणी प्रसंग.
11. यही ग्रन्थ, सैन कहे प्रसंग, साखी क्र.-29.
12. यही ग्रन्थ, सैना रखजो ध्यान प्रसंग, साखी क्र.-94-95.
13. यही ग्रन्थ, पदावली, पद क्र.-19.
14. यही ग्रन्थ, लोकवाणी प्रसंग, साखी क्र.-69-71.
15. वही, साखी क्र.-72, 73, 74.
16. यही ग्रन्थ, सैना रखजो ध्यान, साखी क्र.-33, 34, 35, 36.
17. वही.
18. वही, साखी क्र.-37, 38, 39.

19. यही ग्रन्थ, संत सैन का प्रेमामृत कलश, साखी क्र.–23.
20. यही ग्रन्थ, लोकवाणी प्रसंग, साखी क्र.–86.
21. वही.
22–23. यही ग्रन्थ, सैन कहे प्रसंग, साखी क्र.–48, 50.
24. यही ग्रन्थ, लोकवाणी प्रसंग, साखी क्र.–77, 78, 79.
25–27. वही, साखी क्र.–103, 104, 105.
28. वही, साखी क्र.–106–107.
29. वही, साखी क्र.–108.
30. वही, साखी क्र.–113.
31. वही, साखी क्र.–123.
32. वही, साखी क्र.–171.
33. वही, साखी क्र.–176.
34. वही, साखी क्र.–179.
35. वही, साखी क्र.–201, 202.
36. वही.
37. वही, साखी क्र.–203.
38. वही, साखी क्र.–208 से 210 एवं 212, 214.
39. वही, साखी क्र.–224.
40. वही, साखी क्र.–225, 227.
41. वही, साखी क्र.–226.
42. यही ग्रन्थ, सैन भगत साँची कहूँ, साखी क्र.–39.
43. यही ग्रन्थ, लोकवाणी प्रसंग, साखी क्र.–228, 250.
44. वही, साखी क्र.–233.
45. यही ग्रन्थ, सैन भगत साँची कहूँ, साखी क्र.–83.
46. वही, साखी क्र.–86.
47. वही, साखी क्र.–90.
48. वही, साखी क्र.–99, 102.
49. वही, साखी क्र.–106, 107.
50. वही.
51. यही ग्रन्थ, सैन कहे प्रसंग, साखी क्र.–130, 131, 133, 135.
52. वही, साखी क्र.–145 से 149.
53. यही ग्रन्थ, सैना रखजो ध्यान प्रसंग, साखी क्र.–109 से 112.
54. यही ग्रन्थ, सैन भगत साँची कहूँ, साखी क्र.–10.
55. यही, सैन कहे प्रसंग, साखी क्र.–150.

परिशिष्ट

संत सेनान्हावींचे अभंग

सासवड़ महात्म्य

1.

नामयाचा धरुनि हात। सांगे संवत्सराची मात।
विठोजि म्हणे देई चित्त। ऐक गुह्यार्थ सांगतो॥ 1॥
ही पुण्यभूमी पवित्र देखा। याची मूळ आदि पीठिका।
सिद्धश्वर नागेन्द्र देखा। पुरातन नांदती॥ 2॥
या इन्द्रनील पर्वतीं। तप तपिन्नले अमरपती।
आणि सूर्यमूखा वरुती। प्रत्यक्ष मूर्ति श्रीशंकराची॥ 3॥
ही स्मशानभूमिका आधीं। येथें सोपान देवा समाधी।
पुढें राहिला कैलासनिधी। सन्मुख वाहे भागीरथी॥ 4॥
इची करितां पंचक्रोशी। चुके जन्ममरण चौव्यांशी।
चारी मुक्ती होती दासी। येउनि चरणासी लागती॥ 5॥
तो हा सोपान निधान। याचे करितां नामस्मरण।
सेना कर जोडून। जाती जळून महादोष॥ 6॥

2.

वाचे सोपान म्हणतां। चुके जन्ममरण चिंता॥ 1॥
वस्ती केली कव्हे तीरीं। पुढें शोभें त्रिपुरारी॥ 2॥
सोपानदेव सोपानदेव। नाहीं भय काळाचें॥ 3॥
सोपान चरणी ठेउनि माथां। सेना होय विनविता॥ 4॥

3.

ब्रह्मियाचा अवतर। तो हा सोपान निर्धार। याचें घेतां मुखीं नाम। हरे सकळही श्रम॥ 1॥
समाधीपासुनी भागीरथी। स्नानालागी नित्य येती॥ 2॥
अष्ठोत्तर तीर्थाचा मेळा। नाम कव्हाबाई वेल्हाळा॥ 3॥
वैष्णवांमाजी डिगर। सेना तयाचा किंकर॥ 4॥

4.

वैकुंठवासिनी कृपावंत माउली। जगा तारावया अळंकापुरा आली॥ 1॥
शिव तो निवृत्ति आदिमाया मुक्ताई। ब्रह्मा तो सोपान विष्णु ज्ञानदेव पाहीं॥ 2॥
येउनी प्रतिष्ठानी पशुवेद बोलविला। पंडित ब्रह्मज्ञानी यांचा गर्व हरिला॥ 3॥
तप्तीतीरवासी चौदाशें वर्षांचा होता। तयाचा अभिमान गर्व हरी आदिमाता॥ 4॥
वाळिलां ब्राह्मणीं स्वर्गाचे पितर आणविले। सेना म्हणे जगीं पूर्वब्रह्म अवतरलें॥ 5॥

करितां देवपूजा। नित्य नेम सारलिा वोजा।
मग आठविलें अधोक्षजा। ध्यानस्थ बैसलों॥ 1॥
दूत आले लवलाही। राये बोलाविले पाहीं।
कोठें आहे मज दावी। उरी न ठेवी याची कांही॥ 2॥
जाणुनि संकट श्रीहरी। धोकटी घेतली खांद्यावरी।
त्वरें आला राजदरबारी। देखुनि हरी क्रोध निमाला॥ 3॥
राया सन्मुख बैसून। हातीं दिधलें दर्पण।
मुख पाहे विलोकून। मूर्ती दिसे चतुर्भुज॥ 4॥
हात लाविला मस्तका। वृत्ती हरपली देखा।
राम म्हणे प्राणसखा। नित्य भेटे मजलागी॥ 5॥
मग केलें तेलमर्दन। घाटी बिंबला नारायण।
विसरला कार्य आठवण। वेधलें मन रुपासी॥ 6॥
भोंवतां पाहे विलोकून। अवघा बिंबला नारायण।
तटस्थ पाहती सभाजन। नाहीं भान रायासी॥ 7॥
राव म्हणे हरीसी। तुम्हीं रहावे मजपाशीं।
तुजविण न गमे दिवसनिशी। हरी म्हणे भाकेसि न गुंतें मी॥ 8॥
मग प्रधानें काय केलें। राया स्नानासी पाठविलें।
रायें सोने दिधलें। हरीनें ठेविलें धोकटींत॥ 9॥
शुद्ध नाहीं याती। नाही केली हरिभक्ति।
शिणविला कमळापती। नाहीं विरक्ति बाणली अंगी॥ 10॥

नाहीं अपराधा गणीत। देखोनि सोने ब्राह्मणा देत देवास घाली संकटांत।
आण वाहत विठोबाची॥ 11॥
सेना म्हणे ऋषीकेशी। मज कारणें शिणलासी।
म्हणूनि लागलों चरणासी। संसारासी त्यागिलें॥ 12॥

आळंदी माहात्म्य

1.

पुण्यभूमी आळंकावती। प्रत्यक्ष नांदे कैलासपती।
आणि सिद्ध साधकां वस्ती। ब्रह्म अमरपती आदिकरुनी॥ 1॥
ऐका अळंकापुरीची मात। स्वयें वर्णीत श्रीभगवंत।
उपमेसि न पूरे निश्चित। वैकुंठ आदिकरुनी॥ 2॥
येथें तिन्ही मूर्ति अवतार। धरुनि करिती जगाचा उद्धार।
मूळ अदि माया साचार। दही अवतार मुक्ताबाई॥ 3॥
या चौघांचे स्मरणी। महापापा होय धुणी।
येऊनि मुक्ती लागती चरणीं। ऐसें चक्रपाणी सांगत॥ 4॥
नामया सांगे जगज्जीवन। या भूमीचें न करवें वर्णन।
सेना घाली लोटांगण। वंदी चरण ज्ञानदेवाचें॥ 5॥

2.

धन्य अलंकापुर धन्य सिद्धेश्वर। धन्य ते तरुवर पशुपक्षी॥ 1॥
धन्य इन्द्रायणी धन्य भागीरथी। तेथें स्नान जे करिती धन्य जन्म॥ 2॥
धन्य ते प्रयाग धन्य ते त्रिवेणी। वहाती येऊनि गुप्तरूपें॥ 3॥
धन्य ते भूमी धन्य ते प्राणी। देखती नयनीं ज्ञानदेवा॥ 4॥
धन्य ते भाग्याचे होती अळंकापुरी। तयाचा निर्धारी धन्य वंश॥ 5॥
धन्य दासानुदास अळंकापुरीचा। सेना न्हावी त्याचा रज:कण॥ 6॥

3.

नामयाच्या नारायणें घेतली आळी। या भूमीचें महिमान सांगे म्हणे वनमाळी॥ 1॥
धन्य-धन्य अलंकापुर धन्य-धन्य सिद्धेश्वर। धन्य इन्द्रायणि तीरी राज्य करी ज्ञानेश्वर॥ 2॥
या भूमीचें वर्णन करुं न शके चतुरानन। महाक्षेत्र पुरातन पातकें नासती स्मरणें॥ 3॥
सेना म्हणे जगज्जीवन सांगतसे जीवींची खूण। महादोषा होय दहन ज्ञानदेव दरुशनें॥ 4॥

4.

नाम हें अमृत भक्तासी दिधलें। ठेवणें ठेविलें होतें गुप्त॥ 1॥
प्रत्यक्ष अवतार धरिला अलंकापुरी। मार्ग तो निर्धारी दाखविला॥ 2॥
कृतयुगामाजी वरिष्ठ जाणता। नाम तो घेतां नारद मुनि॥ 3॥
कलियुगामाजी न घड़े साधन। जातील बुड़ोन महा डोहीं॥ 4॥
रामकृष्ण हरी गोविन्द गोपाळ। स्मरा वेळोवेळां सेना म्हणे॥ 5॥

5.

धन्य महाराज अलंकापुरवासी। साष्टांग तयासी नमन माझें॥ 1॥
या ज्ञानदेवाचे नित्य नाम घेती वाचें। उद्धरती तयाचें सकळ कुळें॥ 2॥
इन्द्रायणी स्नान करिती प्रदक्षिणा। त्टती यातना सकळ त्याच्या॥ 3॥
सेना म्हणे त्याचें धन्य झालें जिणें। ज्ञानदेव दरुशनें मुक्त होती॥ 4॥

6.

वाचें उच्चारी जो ज्ञानदेवाशी। तयाच्या सुकृतासी नाहीं पार॥ 1॥
पूर्वीचे सुकृत फळासि आलें। वाचें उच्चारिलें ज्ञानदेवा॥ 2॥
या अलंकापुरी आला जन्मांसि। पूर्वज तयासी मानिती धन्य॥ 3॥
सेना म्हणे त्यानें उद्धरिलें कुळ। पूर्वज सकळ आशिर्वाद देती॥ 4॥

7.

येउनी नरदेहासी वाचें उच्चारी ज्ञानेश्वर। तयाचा संसार सुफळ झालागे माये॥ 1॥
प्रत्यक्ष परब्रह्म येऊनी अवतारासी। तारिलें जगासी नाममात्रें॥ 2॥
जयाचें आंगणीं पिंपळ सोनियाचा। सिद्ध साधकाचा मेळा तेथें॥ 3॥
तयाचे स्मरणें जळती पातकें। सांगत पंढरीनाथ सेना म्हणे॥ 4॥

त्रिंबक माहात्म्य

1.

पुण्यभूमी गंगातीरीं। धरी अवतार त्रिपुरारी।
नाम त्रिंबक निर्धारी। मागें ब्रह्मगिरी शोभत॥ 1॥
पार्वतीसी सांगे कैलासराणा। येथें नांदेल निवृत्ति निधान।

त्याचेनि ठाव हा पुण्यपावन। जीवा उद्धरण म्हणता निवृत्ती॥ 2॥
जुनाट जुगादीचें गुप्त ठेविलें। तेंचि निवृत्ति नाथा दिधलें।
ज्ञानदेवें प्रगट केलें। जगा दाविलें निधान॥ 3॥
या भूमिकेचें वर्णन। करुं न शके चतुरानन।
कैलासाहून पुण्यपावन। तुजला पूर्ण सांगितलें॥ 4॥
तो हा निवृत्तिनाथ निर्धारी। स्मरतां तरती नरनारी।
सेना म्हणे श्रीशंकरी। ऐसे निर्धारी सांगितले॥ 5॥

2.

शिवाचा अवतार। स्वामी निवृत्ति दातार॥ 1॥
तया माझा नमस्कार। वारंवार निरंतर॥ 2॥
सव्य नांदे कैलासराणा। मागें गंगा ओघ जाणा॥ 3॥
सेना घाली लोटांगण। वंदि निवृत्तिचे चरण॥ 4॥

3.

निवृत्ति निवृत्ति। म्हणतां पाप नुरेची॥ 1॥
जप करितां त्रिअक्षरीं। मुक्ती लोळे चरणावरी॥ 2॥
ध्यान धरितां निवृत्ती। आनंदमय राहे वृत्ती॥ 3॥
सेना म्हणे चित्तीं धरा। स्मरता चुके येरझार॥ 4॥

4.

सिद्धांमाजी अग्रगणी। तो हा भोळा शुळपाणी॥ 1॥
धन्य-धन्य त्रिंबक राजा। तया नमस्कार माझा॥ 2॥
जटी गंगा वाहे। तो हा त्रिगुणात्मक पाहे॥ 3॥
भोंवता वेढा ब्रह्मगिरी। मध्यें शोभे त्रिपुरारी॥ 4॥
सेना घाली लोटांगण। उभाहर के जोड्डुन॥ 5॥

5.

धन्य-धन्य निवृत्तिराया। शरण आले तुझियां पायां॥ 1॥
नको पाहूं दुसरें आतां। गुण दोषाची वारता॥ 2॥
नाहीं माझा अधिकार। यातीहीन मी पामर॥ 3॥
अपराधाचा केलों। सेना म्हणे काय बोलों॥ 4॥

गौळणी

1.

गोपिका वेल्हाळा। अवघ्या मिळोनी सकळा।
चालिल्या यमुना जळां। तवं सन्मुख देखिला सांवळा वो॥ 1॥
राधा म्हणे बहु चालक होसी। नसतां आळ कां आम्हांवर घेसी।
त्यां देखिलें यशोदेसी। हां लबाड़ा लटका ऋषीकेशी बा॥ 2॥
यशोदा म्हणे कवटाळिणी। नसती खोड़ा करितां देखूनी।
सांगतां गाव्हाणें येऊनी। गुणातीत हा चक्रपाणी वो॥ 3॥
राधा म्हणे यशोदा सुंदरी। चोरटा शिंदळ तुझा मुरारी।
आम्हां ठाऊक अंतरी। हा न करी तें करी काय सांगु वो॥ 4॥
हा ब्रह्मांडनायक। येणें मोहिले तिन्ही लोक।
सेना म्हणे यदुनायक। कर्मातीत परिपूर्ण वो॥ 5॥

2.

दूती जाणवित स्वामिनी। काम दाटला ह्रदयभुवनी।
कोपा नयेची सारंगपाणी। सेजे पाहतां न दिसे नयनी॥ 1॥
मज भेटवागे श्रीहरी। लागला वेध त्याचा अंतरी।
ध्यानी बिंबलागे मुरारी। प्राण रिघो पाहे जरी॥ 2॥
गोड़ न लगे काम धंदा कांही। नावरे चीर चोळी पाही।
सुमनसेज रुपती बाई। चित्त वेधलें हरी पायीं हो॥ 3॥
वृत्ति स्वानंदी निमग्न। गेली देहभाव विसरुन।
रंगीं रंगीली परिपूर्ण। धन्य-धन्य सेना म्हणे॥ 4॥

3.

गाय चारी घननीळा। सवैं गोपाळांचा मेळा।
मोहिलें वेणुनादें सकळां। स्वानंदे गाई नाचती।
गोपिका परमानंदें गाती। गोपाळ प्रेमें डुल्लती॥ 1॥
भला-भला तूं श्रीहरि रे॥ ध्रु.॥
वेडे वांकुडे पांगुळे। बोबड़े मुके आंधळे।
धांवतां पड़े अड़खळे। हरी म्हणे गोपाळांसी।
तुम्ही वैसा मजपाशी। मिळवितों गाईसी॥ भला....॥ 2॥
नसो संगती ऋषीकेशी। आम्हां गाई वळी म्हणसी।
आम्हां दुरी दवड़ीसी। मज ठाऊक अंतरी। तुज ओळखी खरीच॥ भला....॥ 3॥

गाय पाळुनी दुधासी। आपण सगळेची खाशी।
आम्हां धमकावुनी ठेविसी। काय सांगूं तुझी मात।
भेद नाहीं तुम्हां आम्हांत। सेना म्हणे गोपीनाथ। समाधान कर्तारे॥ भला....॥ 4॥

4.

पोवा घोंगड़ी घेऊनी पाही। संगें गोपाळ घेउनि गाई।
वृंदावनी आले लवलाही। वेणू वाजविला सुस्वरें बाई हो॥ 1॥
उतावेळ झाल्या गौळणी। वेणुनाद पड़ियेला कानीं।
भोवत्या पाहती अवलोकुनी। नयना न दिसे सारंगपाणी हो॥ 2॥
विसरल्या कामधंदा। सास् सामन्याची नाहीं मर्यादा।
कोण जाणे त्या कोण जावा नाणंदा। वृत्ति वेधली परमानंदा हो॥ 3॥
अवघा हरपला देहभाव। पुसिला जन्ममरणाचा ठाव।
वृत्ति स्वानंदें मुराली पहावो। सेना म्हाणे भाग्य उदया हो॥ 4॥

5.

जाती मिळोनि पांच सात गवळणी। गोरस विकूं मथूरे लागोनी।
वाटे आड़वोनी। दान मागे चक्रपाणी॥ ध्रु.॥
सोड़ी सोड़ी मज जाऊं दे हरी। नको वाटा आड़वूं म्हणे मुरारी।
घरीं जावा नणंदा जाचिती कीं भारी॥ 1॥
म्हणती गवळणी हरिसि हसुनी। देऊं तुज लागि नवनीत चोरुनी।
जाऊं पाहती ठकवूनी हरीसी गवळणी॥ 2॥
ब्रह्मांडाचा नायक म्हणे गोपिकांसी। ब्रह्मज्ञानी महान चाळविले ऋषी।
गाई गोपाळ रिघात्या शरण। वृत्तिसहित बिंबल्या अवघ्या परिपूर्ण।
सेना म्हणे विसरल्या कार्य आठवण॥ 3॥

6.

ऐक येश्वदे साजणी। या कृष्णाची करणी। दहीं दूध खातो चोरुनी।
टाकी मजाणें फोड़ोनी॥ ध्र.॥ 1॥
सांभाळ आपुला हरी गे। उगा न राहे क्षणभरी गे।
येणें धमकाविल्या पोरिगे। काय सांगों भांडखोरी गे॥ 2॥
करी करणें कळेना गे। हृदयी धरितो सुना गे।
भोग भोगितो शहाणा गे। आंगी लागूं देईना गे॥ 3॥
हा दिसतो भोळा गे। येऊनि घालितो डोळा गे।

सावल करितो गोळा गे। नाही काळ वेळा गे॥ 4॥
सावळा जगजेठी गे। चित्त चोर कपटी गे।
हा न कळे वेद श्रुती गे। येणे हरली काम वृत्ती गे॥ 5॥
हें बाळक नंदाचें। भाग्य फळलें गवळयाचें।
सेना म्हणे धन्य साचें। पुण्य त्या गोपीचें॥ 6॥

7.

राधा जाणवित दूती। कामें व्यापिलें न गमे राती।
कां बा गोवळा नये निश्चिती। यानें वेधली चित्तवृत्ती॥ ध्रु.॥
मज दाखवागे हरिसी। ध्यान लागलें मानसी।
त्याविण न गमे दिवसनिशी। डोळां ऋषीकेशी दावा मज॥ 1॥
मिळोनि गोपीनी मोहिला। कीं सत्यभामेनें दान केला।
नारद हरिसी घेऊनि गेला। नेणों गुंतला सदैव घरीं॥ 2॥
धाडिलें गरुडासी। वेगी आणावे हनुमंतासी।
अभिमान होता सत्यभामेसी। नेउनिया सभेसी विटंबिली॥ 3॥
माया लाघवी सूत्रधारी। बोलतां बोल खूंटती वैखरी।
धरिला गोपिकांनी अंतरी। सेना म्हणे धन्य त्या नगरी हो॥ 4॥

8.

कृष्ण आला ऐकुनि गोपिका सुंदरी। विव्हल झाल्या पहावया हरी।
एकी त्या धांवल्या नगरा बाहेरी। कायावाचा मनें वेधल्या नारी॥ ध्रु.॥
आदल्या गवळणी हरी आला मथुरेसी। मोहियलें मन देखोणी रूपासी।
झाली उतावीळ पहावया ऋषीकेशी। नेत्रिचें काजळ लाविलें मुखासी॥ 1॥
एक ती बैसली होती पति शेजारी। नग्नजि धांवत आली बाहेरी।
विसरुनी चीर ठेवि माथियावरी। देहभाव हरपला देखोनि मुरारी॥ 2॥
एकी त्या ताटक घातलें पायी।
विरुद्या जोड़वी कंठाचे ठाई घेऊनि पाल्होर खोविले डोई।
बाळ्या वाक्या बांधिल्या कानाचे ठायी॥ 3॥
एकीनें कड़िये घेतया दह्याची माथण।
बाळक ठेविलें शिंकीया जाण नाही पुत्रलोभ देखोनी कृष्ण।
निजसु मनीली नाहीं आठवण॥ 4॥
करितां मंथन हरियाला ऐकनि कानीं।

तैशीच धांवली रवी दोर घेऊनी। नाकीचे मुक्ताफळ खेविलें वेणी।
मोतियाची जाळी घाली ग्डघ्यालाग्नी॥ 5॥
कृष्णसखा मीनल्या अवघ्या सुंदरी। लाज भय मोह शंका दड़विल्या दुरी।
सेना म्हणे वृत्ति झाली तदाकारी। परतुनि संसारा नुरेचि उरी॥ 6॥

9.

सोड़िल्या शिदोरी। काला करी दहीं भात॥ 1॥
घ्यारे अवघे समस्त। हरी गोपाळांसि देत॥ 2॥
कांही न ठेवा उरी। आजी देतो पोटभरी॥ 3॥
सेना बैसला द्वारीं। प्रसाद वाटितो श्रीहरी॥ 4॥

10.

श्रीग्रुनिव्त्तिराय सांप्रदाय दाविला। अलंकापुरवासिनी अधिकार तया दिधला॥ 1॥
आदिनाथें मूळ गुप्त होतें ठेविलें। निवृत्तिकृपेनें ज्ञानदेवें प्रगट केलें॥ 2॥
बुड़तां भवसागरीं जगा काढ़िलें बाहेरी। दावियेला तारु विठ्ठल या तीं अक्षरीं॥ 3॥
विटेवरी उभा नीट वैकुंठींचा राणा। दावियली खूण म्हणे न्हावीयाचा सेना॥ 4॥

11.

अळंकापुरवासिनी। ज्ञानाबाई मायबहिनी॥ 1॥
लेक्राची चिंता। वागवावी क्पावंता॥ 2॥
मी तो राहे यातीहीन। माझा राखा अभिमान॥ 3॥
करुनि विनवणी। सेना लागतो चरणीं॥ 4॥

12.

श्रीज्ञानराजें केला उपकार। मार्ग हा निर्धार दाखविला॥ 1॥
विटेवरी उभा वैकुंठनायक। आणि पुंडलिक चंद्रभागा॥ 2॥
अविनाश पंढरी भूमीवरी पेंठ। प्रत्यक्ष वैकुंठ दाखविलें॥ 3॥
सेना म्हणे चला जाऊं तया ठाया। पांडुरंग सखया भेटावया॥ 4॥

वासुदेव

टळोनि गेले प्रहर तीन। काय निजतां झांकोन लोचन।
आलों मागावया दान। नका विन्मुख होऊं जाण गा॥ 1॥

रामकृष्ण वासुदेवा। जाणवितों सकल जिवा।
द्या मज दान वासुदेवा। मागुता फेरा नाहीं या गाँवा गा॥ 2॥
आलों दुरुनी सायास। द्याल दान मागायास।
नका करुं माझी निरास। धर्मसार फळ संसारास गा॥ 3॥
एक भाव देवाकारणें। फारसें नलगे देणें घेणें।
करा एकचित रिघा शरण। हेंचि मागणें तुम्हांकारणें गा॥ 4॥
नका पाहूं काळ वेळां। दान देई वासुदेवा।
व्हां सावध झोपेला। सेना न्हावी चरणीं लागला गा॥ 5॥